ऐसे संत-चरन बलिहारी;

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

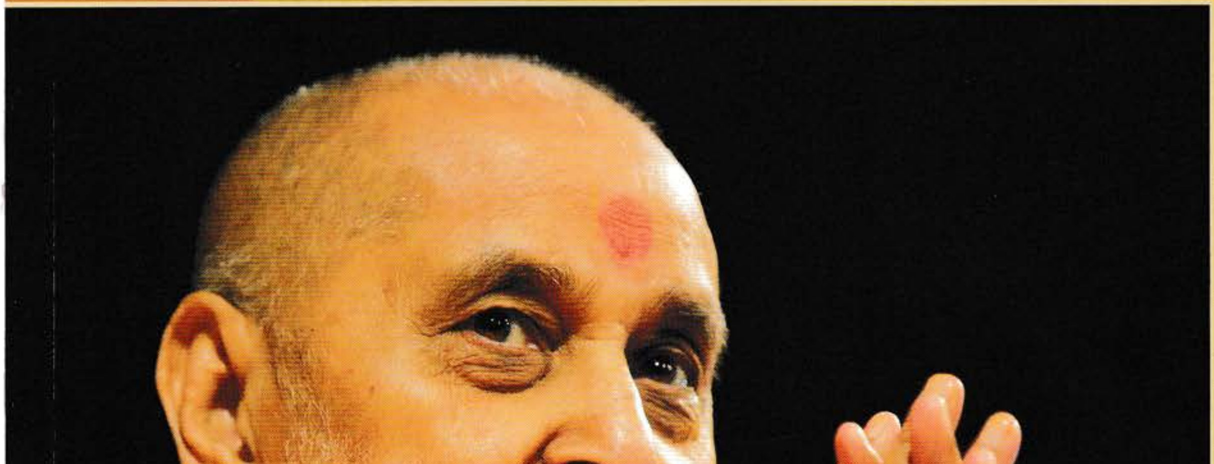

भगवद्‌गुण संपन्न अध्यात्म विभूति

प्रमुखस्वामी महाराज

भगवान श्री स्वामिनारायण
अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी

यह ग्रंथ कोई प्रशस्ति ग्रंथ नहीं,
और न ही कोई स्मारिका।
ग्रंथ के रूप में यह एक ऐसे संत के
चरणों में पुष्पांजलि है; जिनको
उपनिषदों ने ब्रह्मनिष्ठ तथा
श्रोत्रिय महापुरुष कहा है,
श्रीमद्भागवत जिन्हें गुणातीत और
स्थितप्रज्ञ कहता है,
रामायण जिनके लिए कहता है कि
राम से अधिक राम कर दासा तथा
भगवान स्वामिनारायण जिनको
ब्रह्मस्वरूप तथा परम एकांतिक
सत्पुरुष कहते हैं,
उनके चरणों में यह विनय वंदना है...

जिसके अस्तित्व से यह पृथ्वी
धन्य होती है, मानवजाति गौरवान्वित
बनती है, मुमुक्षु कृतार्थ होते हैं,
भारतीय संस्कृति देदीप्यमान होती है,
और
परमात्मा आनन्दित हों
प्रसन्न हो जाते हैं,
ऐसे सद्गुणों से संपन्न संत
प्रमुखस्वामी महाराज की
विनयपूर्ण वंदना है,
जिन्होंने अपने भगवद् गुणों से
समग्र विश्व में 'संत' शब्द को
सही अर्थों में गौरव प्रदान किया है।

ऐसे संत-चरन बलिहारी;

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

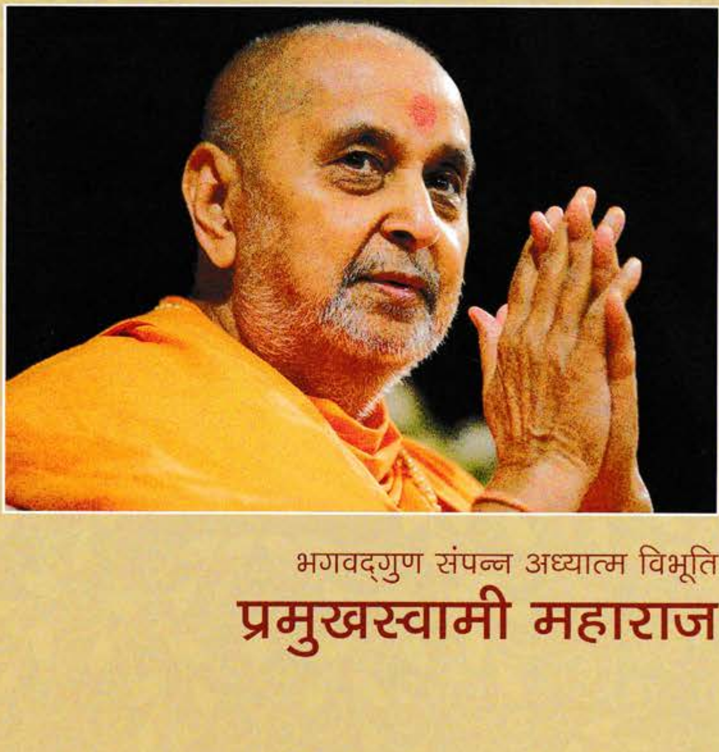

भगवद्‌गुण संपन्न अध्यात्म विभूति

प्रमुखस्वामी महाराज

ऐसे संत-चरन बलिहारी;

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

भगवद्गुण संपन्न अध्यात्म विभूति

प्रमुखस्वामी महाराज

लेखक : साधु अक्षरवत्सलदास

प्रकाशक : स्वामिनारायण अक्षरपीठ, शाहीबाग, अहमदाबाद - **380 004**

ऐसे संत-चरन बलिहारी; जिनके गुण रीझत गिरिधारी...

Spiritual Attributes of Pramukh Swami Maharaj

Presented by: B.A.P.S. SWAMINARAYAN SANSTHA
'Swaminarayan Akshardham', N.H. 24, Akshardham Setu,
Yamuna Kinara, New Delhi - 110 092 India.

Publishers: SWAMINARAYAN AKSHARPITH
Shahibaug, Ahmedabad - 380 004. India.

2nd Edition: September 2012. Copies: 5,000 (Total copies: 10,000)

Copyright: © SWAMINARAYAN AKSHARPITH
All rights reserved. No part of this book may be used or reproduced in any form or by any means without permission in writing from the publisher, except for brief quotations embodied in reviews and articles.

ISBN: 978-81-7526-388-8

प्रस्तुति : बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था
'स्वामिनारायण अक्षरधाम', नेशनल हाईवे 24, अक्षरधाम सेतु,
यमुना किनारा, नई दिल्ली - 110 092.

सूचना : सर्वाधिकार सुरक्षित : © स्वामिनारायण अक्षरपीठ
इस पुस्तक के अंश किसी भी स्वरूप में प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की लिखित सम्मति अनिवार्य है।

प्रथम संस्करण : प्रमुखस्वामी महाराज का 88वां जन्म जयंती महोत्सव,
मार्गशीर्ष शुक्ल अष्टमी, विक्रम संवत 2065, दि. 6 दिसम्बर 2008

द्वितीय संस्करण : सितम्बर 2012

प्रतियाँ : 5,000 (कुल प्रतियाँ : 10,000)

मूल्य : रू. 100-00
(स्वामिनारायण अक्षरपीठ के अनुदान से रू. 150-00 में से रिआयती मूल्य)

कलानिर्देशन : साधु श्रीजीस्वरूपदास

छविकला : साधु योगीचरणदास तथा बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण मंदिर, लंदन

मुद्रक एवं प्रकाशक :
स्वामिनारायण अक्षरपीठ
शाहीबाग, अहमदाबाद - 380 004.

समर्पण

परब्रह्म पुरुषोत्तम भगवान श्रीस्वामिनारायण के
चरणकमलों में समर्पण...
जिन्होंने, इस वसुंधरा को अपने दिव्य कल्याणकारी गुणों से
अलंकृत गुणातीत संत की भेंट प्रदान की...
परमात्मा के दिव्य कल्याणकारी गुणों के धारक
अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी, ब्रह्मस्वरूप भगतजी महाराज,
ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज, ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज के चरणों में समर्पण,
जिन्होंने विश्व को अपने अनुगामी प्रमुखस्वामी महाराज की
भेंट प्रदान करके हमें कृतार्थ किया...

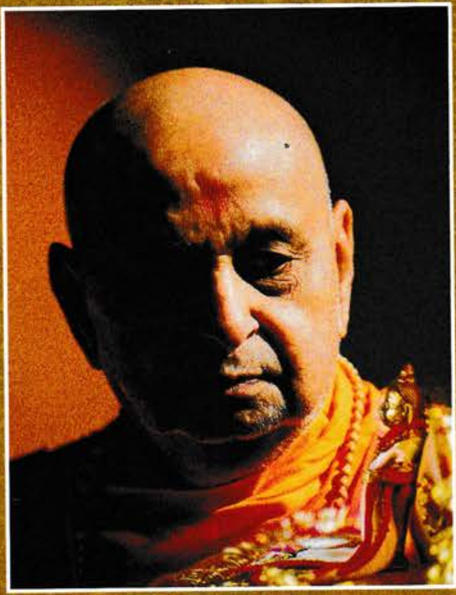

भगवान के कल्याणकारी गुण सन्त में उदित हो जाते हैं...
भगवान जिस प्रकार माया से पूर्णरूपेण निर्बन्ध हैं,
तथा जो चाहे वह करने में समर्थ हैं,
उसी तरह वह भक्त (सन्त) भी अतिशय समर्थ और
माया से निर्बन्ध बन जाता है।

- भगवान श्रीस्वामिनारायण
(वचनामृत गढड़ा प्रथम प्रकरण 62)

सत्यं शौचं दया क्षान्तिस्त्यागः सन्तोष आर्जवम्।

शमो दमस्तपः साम्यं तितिक्षोपरतिः श्रुतम् ॥

ज्ञानं विरक्तिरैश्वर्यं शौर्यं तेजो बलं स्मृतिः।

स्वातन्त्र्यं कौशलं कान्तिर्धैर्यं मार्दवमेव च ॥

प्रागल्भ्यं प्रश्रयः शीलं सह ओजो बलं भगः।

गाम्भीर्यं स्थैर्यमास्तिक्यं कीर्तिर्मानोऽनहंकृतिः ॥

श्रीमद् भागवत : 1/16/26-28

क्रमिका

12 प्राक्कथन

22 सत्यम्
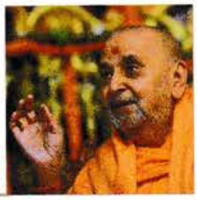

30 शौचम्

34 दया

44 क्षान्तिः
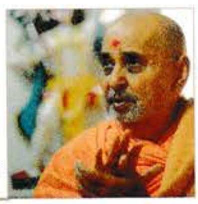

त्यागः 54

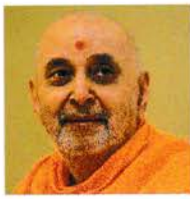
संतोष
आर्जवम् 60

साम्यम् 70

तितिक्षा 78

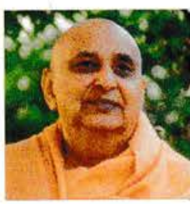
उपरतिः
विरक्तिः 88

श्रुतम्
96 ज्ञानम्

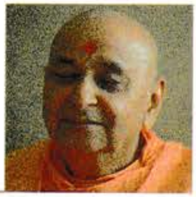
शीलम्
106 शमः दमः तपः

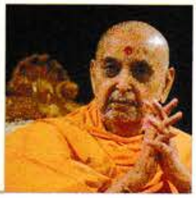
बलम् भगः
112 ऐश्वर्यम्

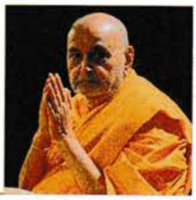
स्वातन्त्र्यम्
128 शौर्यम् तेजः

136 स्मृतिः

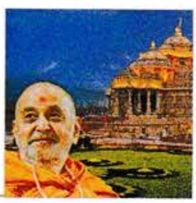
150 कौशलम्

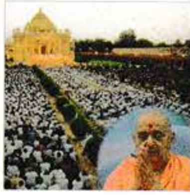
स्थैर्यम्
प्रागल्भ्यम् सहः
धैर्यम् 160

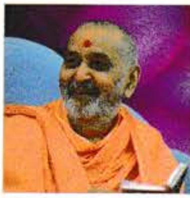
ओजः
कान्तिः 176

प्रश्रयः
मार्दवम् 180

कीर्तिः मानः 190

आस्तिक्यम् 198

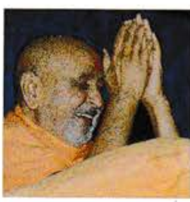
अनहंकृतिः 208

प्रवेश-पूर्व

अलौकिक महापुरुषों का मूल्यांकन शब्दों से नहीं किया जा सकता। शब्दों की एक सीमा होती है। प्रमुखस्वामी महाराज के विषय में कुछ लिखने बैठिये, तो इसका अनुभव अवश्य होता है। अत्यंत ही सादा, सरल और सहज व्यक्तित्व होते हुए भी अध्यात्म-उदधि की असाधारण गहराई एवं मेरु के समान आचरण की ऊँचाई ! कितना शान्त तथा प्रगल्भ है, उनका आध्यात्मिक व्यक्तित्व !

अत्यंत ही मितभाषी, स्वयं के विषय में तो शायद ही कभी उच्चार करते हैं! किन्तु बिना बोले ही, उनके व्यक्तित्व से एक पवित्र सुगंध फैलती रहती है - परम संतत्व की। ऐसे महापुरुष को संत बनना नहीं पड़ता, संतत्व तो इनके लिए जन्मजात सहज होता है। संत कहलाने के लिए अनेक प्रकार की विभावनाएँ हैं !

उपनिषद्, श्रीमद् भागवत, श्रीमद् भगवद्गीता, रामायण तथा अनेक अध्यात्मिक ग्रंथों में इस विषय के लिए हज़ारों शब्द दिए गए हैं। अनेक प्रकार की परिभाषाएँ, लक्षण तथा विभावनाएँ हैं।

भगवान स्वामिनारायण ने वचनामृत के प्रत्येक पृष्ठ पर संतगरिमा का गुणगान किया है।

अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी ने संतमहिमा का अविरत गंगाप्रवाह प्रवाहित किया है।

संतत्व की उन तमाम परिभाषाओं, लक्षणों तथा विभावनाओं का निष्कर्ष अर्थात् - प्रमुखस्वामी महाराज।

सूर्य को अपना परिचय नहीं देना पड़ता। उसका प्रकाश ही उसका परिचय दे देता है। उसी प्रकार प्रमुखस्वामी महाराज कभी भी अपने सद्गुणों की चर्चा नहीं करते, फिर भी उनके नित्य प्रति के जीवन से प्रकट होता सद्गुणों का प्रकाश, सहज ही सभी को आलोकित करता रहता है।

मात्र संत के लक्षण ही नहीं, महर्षि व्यासजी ने श्रीमद् भागवत में परमात्मा के सद्गुणों की प्रशंसा की है।

इस धरती पर यदि परमात्मा विचरण करते हों, तो किन लक्षणों से उन्हें पहचाना जाता है ? श्रीमद् भागवत परमात्मा के सत्यम्, शौचम् तथा दया इत्यादि 39 कल्याणकारी लक्षणों तथा सद्गुणों का गान करता है, वे अद्भुत और अलौकिक हैं।

भगवान स्वामिनारायण ने वचनामृत में ऐसे गुणातीत संत की अपार महिमा कही है, जिसके जीवन में परमात्मा के 39 कल्याणकारी सद्‌गुण स्वतः सांगोपांग सिद्ध होते हैं !

प्रमुखस्वामी महाराज के गुणों का चिंतन करते समय यह अनुभव होता है कि वे ऐसे संत हैं, जिनमें परमात्मा के 39 सद्‌गुण एवं लक्षण पूरी तरह विद्यमान हैं !

यह पुस्तक, प्रमुखस्वामी महाराज के व्यक्तित्व से प्रकट हो रहे परमात्मा के सद्‌गुणों की एक झांकी प्रस्तुत करती है।

उनके प्रत्येक गुण का चिंतन हमें आध्यात्मिकता के उच्च शिखर पर ले जाता है, आत्मोद्धार के सोपान पर ला खड़ा करता है।

स्वामीश्री का जीवन ऐसा महासागर है, जिसके प्रत्येक सद्‌गुण को उजागर करने के लिए एक-एक प्रकरण, स्वतंत्र ग्रंथ की क्षमता रखता है। यहाँ तो कुछ ही पृष्ठों में उसका आचमन मात्र है।

इसके अतिरिक्त, प्रत्येक सद्‌गुण की असीमित विभावनाओं एवं लक्षणों का समावेश वैसे भी संभव नहीं है। यहाँ तो उनका एक परिचयमात्र है। प्रमुखस्वामी महाराज के जीवन की घटनाओं से रचा हुआ प्रत्येक प्रकरण, ऐसा है कि जो कई अकथित प्रसंगों के स्मरण से हमें अध्यात्म-गगन में सैर करा देता है, तथा यह भी प्रतीत कराता है कि अभी बहुत कुछ कहना शेष है ! मुख से बरबस ही 'नेति नेति' का उद्‌गार निकल पड़ता है।

ग्रंथ के प्रत्येक प्रकरण में प्रमुखस्वामी महाराज की मनोरम छवि का अल्प दर्शन मात्र होता है।

वस्तुतः, यह कोई विषयाधारित छविसंग्रह नहीं है, न तो छवियों द्वारा प्रस्तुत किया गया जीवनचरित्र ही, फिर भी सद्‌गुणों के वर्णन के साथ-साथ उनकी प्रासंगिक छवि का दर्शन एक दिव्य आह्‌लाद प्रदान करता है, स्वामीश्री में विशिष्ट स्नेह उत्पन्न करता है।

पुस्तक का एक-एक प्रकरण हमें प्रतीत कराता है कि प्रमुखस्वामी महाराज एक ऐसे संत हैं, जिनके गुणों से रीझ कर परमात्मा प्रफुल्लित हो निरंतर उनके हृदय में निवास करते हैं।

भगवान श्रीस्वामिनारायण कहते हैं कि ऐसे संत, परमात्मा का साक्षात् स्वरूप हैं। उनका दर्शन साक्षात् परमात्मा का दर्शन है।

बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था परम भाग्यशाली है, जिसे इन गुणातीत महापुरुष की छत्रछाया मिली है। किन्तु वे किसी एक संप्रदाय अथवा कोई एक भौगोलिक सीमा के नहीं, बल्कि समग्र विश्व की महान संपत्ति हैं; क्योंकि समग्र विश्व उनसे कल्याण का मार्ग प्राप्त कर सकता है।

◆

प्राक्कथन

उपनिषद् के वचनों से लेकर भगवान श्रीस्वामिनारायण के वचनामृतों एवं भक्तकवियों की कृतियों में जिन संत-लक्षणों का विवरण प्रस्तुत किया गया है, भारतवर्ष के अनेक मूर्धन्य संत, जिनके लिए गौरव की अनुभूति करते हैं, देश-विदेश के असंख्य लोगों ने जिनके दिव्य व्यक्तित्व के एक-एक रंग में सर्वोच्च संत-प्रतिभा का दर्शन किया है; ऐसे संतविभूति हैं - स्वामी नारायणस्वरूपदासजी। लोकहृदय में जिनका नाम - परम पूज्य प्रमुखस्वामी महाराज के रूप में स्थायी हो चुका है।

अठारहवीं शताब्दी के घोर सामाजिक एवं नैतिक अंधकार के युग में बिना शस्त्र उठाये जिन्होंने क्रान्ति करके सदाचार का आलोक प्रसारित किया था, ऐसे परब्रह्म पुरुषोत्तम भगवान श्रीस्वामिनारायण के वे पाँचवें आध्यात्मिक अनुगामी हैं।

शुद्ध उपसाना के वैदिक मूल्यों की स्थापना करके असंख्य मुमुक्षुओं के लिए युगों तक मोक्ष-द्वार खोलनेवाले उनके दिव्य व्यक्तित्व को अंजलि अर्पण करते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, 'जो कार्य एक स्वामी सहजानंदजी (भगवान स्वामिनारायण) ने गुजरात में कर दिखाया, उसे राजदंड भी न कर सका और न तो कर सकता है।'

गुजरात के प्रसिद्ध विद्वान् चन्द्रवदन मेहता कहते हैं, 'सहजानंद स्वामी न होते तो, हम गुजरात को 'गौरवान्वित गुजरात' न कह पाते; गुजरात में जो सदाचार के मूल्य आज दिख रहे हैं, उसके स्थान पर ऐसा बीभत्स दृश्य प्रस्तुत होता, जिसे हम देख भी नहीं पाते।

'समाज को अधम स्थिति से उबारनेवाले तथा आपत्तिकाल के समय गुजरात आकर इसका उद्धार करनेवाले, अधमोद्धारक पतितपावन श्रीसहजानंद स्वामी को प्रत्येक व्यक्ति वंदन करता है। सनातन धर्म का प्रकाश मद्धिम न होने देनेवाले, ज्योतिर्धर के स्वरूप में श्री सहजानंद स्वामी का स्थान प्रथम पंक्ति में है।'

श्रीहरि द्वारा की गई क्रान्ति की एक विशेषता यह थी कि लोककल्याण के लिए उन्होंने एक गुणातीत सत्पुरुष की चिरंजीवी परंपरा भेंट दी; यह उनका महत्त्वपूर्ण अवतारकार्य था।

उनके अनुगामी अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी ने उनकी शुद्ध उपासना एवं लोक-कल्याणकारी कार्यों को जन-जन तक प्रसारित किया; उन्होंने उत्तराधिकार की बागडोर प्रागजी भक्त को सौंपी थी।

संसार को एक आदर्श साधक एवं साधना का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करनेवाले ब्रह्मस्वरूप प्रागजी भक्त ने शास्त्रीजी महाराज (स्वामी यज्ञपुरुषदासजी) जैसे सिंह-समान संत को श्रीहरि के कल्याण-मार्ग का अग्रगामी बनाया। ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज ने भगवान श्रीस्वामिनारायण द्वारा प्रबोधित अक्षरपुरुषोत्तम उपासना के प्रवर्तन हेतु सन् 1907 में बोचासणवासी श्रीअक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण संस्था (बी.ए.पी.एस.) की स्थापना की। कष्टों के कंटीले मार्ग पर चलकर उन्होंने वैदिक उपासना हेतु गगनचुंबी मंदिरों का निर्माण किया। उन्होंने दो महापुरुषों की भेंट दी, ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज एवं प्रकट ब्रह्मस्वरूप प्रमुखस्वामी महाराज।

परब्रह्म पुरुषोत्तम भगवान श्रीस्वामिनारायण (सन् 1781 से 1830), अक्षरब्रह्म श्रीगुणातीतानंद स्वामी (सन् 1785 से 1867)

योगीजी महाराज ने तत्कालीन युवा पीढ़ी को आध्यात्मिक मोड़ देकर धार्मिक जगत में क्रान्ति कर दी थी। उन वात्सल्य मूर्ति की स्नेह-वर्षा में भीगकर लाखों लोग उनके स्वरूप में साक्षात् ब्रह्म का दर्शन कर, उनके ही रंग में रंग उठे थे। योगीजी महाराज प्राय: भक्तों को संबोधित करके कहा करते थे, 'प्रमुखस्वामी मेरे सर्वस्व हैं।'

अनंत आकाश जैसे विराट व्यक्तित्व के धारक प्रमुखस्वामी महाराज की जीवनयात्रा का आरंभ अत्यंत ही सहज और विनम्र था!

इनका जन्म गुजरात के वडोदरा जिले में पादरा तहसील के चाणसद नामक गाँव में हुआ था। पिता का नाम मोतीभाई तथा माता का नाम दीवालीबाई था। खेती और भगवद्भक्ति के अतिरिक्त इस कृषक परिवार के लिए जीवन का अन्य कोई विशिष्ट पहलू नहीं था। इस छोटे से गाँव में पंचायत के चौकवाली गली में बायें हाथ आनेवाले पहले घर में एक छोटे से परिवार में इन महापुरुष का प्राकट्य हुआ था। अत्यंत सामान्य वातावरण में प्रकट हुए असामान्य बालभक्त शान्तिलाल की आँखों में भक्ति एवं अध्यात्म की विशेष चमक दिखाई देती थी। गाँव की सीमा पर स्थित हनुमानगढ़ी मंदिर के साधु हरिदासजी ने बालभक्त शान्तिलाल की परख बहुत पहले ही कर ली थी। 34-35 वर्ष के बाद भी साधु हरिदास बालक शान्तिलाल को भूल न सके थे। हनुमानगढ़ी मंदिर में रामायण, महाभारत, भागवत तथा हिमालय और संतचरित्र के विषय में ढेर सारी वार्ताएँ होती रहती थीं। इन कथाओं को सुनकर शान्तिलाल के मन में बदरीनाथ-केदारनाथ तथा हिमालय की कंदराओं में घूमने और तपस्या करने की उमंग हिलोरें लेने लगती थी।

अंतत: एक ऐसा ही दिन आ पहुँचा। गाँव की सीमा पर ही खेल रहे बालक शान्तिलाल अपने मित्रों के बीच क्रिकेट के सामान खरीदने की तैयारी कर रहे थे कि वहीं पर गुरु शास्त्रीजी महाराज का एक पत्र मिला, 'साधु होने के लिए आ जाओ!'

पत्र पढ़ते ही बिना कुछ सोचे-विचारे गृहत्याग का निर्णय ले लिया गया! गृहत्याग की घड़ी में बिना किसी चहल-पहल और बिना किसी भीड़-भाड़ के माता-पिता ने प्रसन्नचित्त अपने हृदय के टुकड़े को गुरु शास्त्रीजी महाराज के चरणों में समर्पित कर दिया। समर्पण का रक्त इस खानदान की रगों में विरासत के रूप में बह रहा था।

22 नवम्बर सन् 1939 को अहमदाबाद में गुरु शास्त्रीजी महाराज ने किशोरउम्र के भक्तराज शान्तिलाल को पार्षद की प्राथमिक शिक्षा प्रदान की। इसके पश्चात् 10 जनवरी,

ब्रह्मस्वरूप भगतजी महाराज

1940 को गोंडल में भागवती दीक्षा प्रदान की गई, जिसके फलस्वरूप लोगों को 'नारायणस्वरूप स्वामी' प्राप्त हुए। उस समय के प्रत्यक्षदर्शी हरिभक्त प्रभाशंकर पंड्या कहते थे, ''शास्त्रीजी महाराज अटलादरा में थे। अर्जुनभाई मिस्त्री तथा शास्त्रीजी महाराज के बीच सारंगपुर मंदिर के दरवाजे की बातचीत चल रही थी। मोतीभाई भी पास में खड़े थे। मोतीभाई अर्थात् प्रमुखस्वामी महाराज के पूर्वाश्रम के पिताश्री।

मोतीभाई की ओर संकेत करके शास्त्रीजी महाराज ने पूछा, 'इनको पहचानते हैं?'

'नहीं।' अर्जुनभाई ने कहा।

'इन्होंने तो मुझे छत्तीस लक्षणों से युक्त अपना पुत्र समर्पित कर दिया है!' शास्त्रीजी महाराज ने शान्तिलाल की पहचान दी! उस समय मैं पास में ही खड़ा था।''

बाल्यकाल से ही नारायणस्वरूपदासजी के ललाट पर तप, त्याग, तितिक्षा, सहिष्णुता, साधुता, पंचवर्तमान एवं अनन्य गुरुभक्ति की आभा प्रदीप्त हो उठी। मात्र दस वर्ष में वे शास्त्रीजी महाराज के हृदय के दुलारे बन गए।

सन् 1950 में शास्त्रीजी महाराज ने अपनी दूरदर्शिता से विकासशील धार्मिक संस्था बी.ए.पी.एस. के अध्यक्ष के रूप में स्वामी नारायणस्वरूपदासजी को नियुक्त किया। उस समय किसी को कल्पना तक नहीं थी कि यह युवा संत भविष्य में अपने तपोबल से समग्र विश्व की आध्यात्मिक प्रतिभाओं के बीच भी 'प्रमुख' बन जाएगा।

धीर-गंभीर स्वभाववाले प्रमुखस्वामी महाराज के विषय में जैनाचार्य मुनि सुशीलकुमारजी ने कहा था, 'बुद्ध और तीर्थंकर, राम और कृष्ण, कबीर और नानक तथा संतों और विभिन्न अवतारों ने भारत को संवर्धित किया है। अब एक ऐसी शक्ति के आने की बात लोगों के मस्तिष्क में चल रही है, जो भारतीय संस्कृति को गति प्रदान करे तथा प्रजा को पारिवारिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक दृष्टि से पुष्टि प्रदान करे। भगवान की कृपा से ऐसे सत्पुरुष मिल चुके हैं, जिनका नाम है – प्रमुखस्वामी महाराज। भारत को यदि 'एक' रखना हो, तो प्रमुखस्वामी महाराज के नेतृत्व में ही एक रह सकता है। प्रमुखस्वामी महाराज केवल संप्रदाय के ही प्रमुख नहीं, बल्कि समग्र हिन्दू धर्म के प्रमुख हैं। हिन्दू धर्म ही क्या, समग्र भारतीय समाज के प्रमुख हैं!''

एक छोटे से बिंदु-समान बोचासणवासी श्रीअक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण संस्था को विश्वव्यापी स्वरूप देनेवाले प्रमुखस्वामी महाराज के कार्यों का मूल्यांकन शब्दों में करना

असंभव है। साठ वर्षों से भी अधिक समय के उनके निष्कलंक साधु जीवन की यात्रा पर एक दृष्टि डालें, तो अनेक प्रश्न पैदा होते हैं कि उनके दिव्य व्यक्तित्व की अगणित विशेषताओं में सबसे प्रभावशाली विशेषता कौन सी है? हम उन्हें किस तरह पहचानते हैं?

भगवान श्रीस्वामिनारायण तथा वैदिक संस्कृति के सर्वजीव-हितावह संदेशों को विश्व के 50 से भी अधिक देशों में फैलानेवाले, हिन्दूसमाज का पुनरुद्धार करनेवाले ज्योतिर्धर धर्मगुरु के रूप में? युगों तक संस्कृति की भागीरथी को प्रवाहित करनेवाले, 1000 भव्य मंदिरों, राजधानी दिल्ली और गांधीनगर (गुजरात) में भव्य सांस्कृतिक संकुल 'अक्षरधाम' के निर्माता के रूप में? लंदन का विश्वप्रसिद्ध स्वामिनारायण मंदिर तथा देश-विदेश के सैकड़ों मंदिरों और संस्कार भवनों के रचयिता के रूप में? अथवा विश्वव्यापी बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण संस्था के समर्थ सूत्रधार के रूप में?

लाखों नवयुवकों को अध्यात्म के मार्ग पर अग्रसर करके, उनकी शक्ति का रचनात्मक उपयोग करनेवाले युगनिर्माता के रूप में? अथवा देश-विदेश के 950 से भी अधिक सुशिक्षित नवयुवकों को त्याग के मार्ग पर अग्रसर करके, उन्हें आजीवन समाज-उद्धार के कार्यों में जोड़नेवाले एक अनुपम मार्गदर्शक के रूप में?

भव्य विद्यार्थी-संकुलों, पाठशालाओं, सेवारत भव्य अस्पतालों तथा महाविद्यालयों के प्रेरक एवं प्रायोजक के रूप में? अथवा साहित्य, संगीत एवं कला के पुरस्कर्ता अथवा विज्ञान एवं आधुनिकतम तकनीक का सफल प्रयोग करनेवाले एक अद्वितीय युगद्रष्टा के रूप में?

गुजरात, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा तथा महाराष्ट्र पर आ पड़ी प्राकृतिक आपदाओं में सहायता के लिए दौड़ पड़नेवाले करुणामूर्ति संतपुरुष के रूप में अथवा अपने गिरते स्वास्थ्य की चिंता किये बिना दिन-रात 17,500 से भी अधिक गाँवों में विचरण करनेवाले एक महान परिव्राजक के रूप में? पश्चिमी देशों में भारतीय संस्कृति का विजय-ध्वज लहरानेवाले इस युग के संस्कृति-पुरुष के रूप में अथवा अन्त्यजों-आदिवासियों के दुःख में सान्त्वना देनेवाले मसीहा के रूप में?

पराभक्ति में तल्लीन रहकर श्रीहरि के आदेशों में दृढ़ रहकर निष्कलंक जीवन जीनेवाले आदर्श भक्त के रूप में? अथवा संतों में अद्वितीय प्रतिभा संपन्न गुणातीत संत के रूप में?

स्वामीश्री की विविध सेवाओं एवं उनके व्यक्तित्व के अनेक आयामों को दृष्टि में रखकर उपर्युक्त विकल्पों में अभी न जाने कितने और विकल्प जोड़े जा सकते हैं; फिर भी उनके व्यक्तित्व के प्रमुख आयाम का निश्चय करना सरल नहीं है।

पराभक्ति से छलकता हुआ उनका अहंशून्य भक्तहृदयी व्यक्तित्व, उनका सबसे प्रभावशाली पक्ष है। न तो बड़प्पन का कोई तामझाम, न ही शब्दों का कोई आडम्बर। मुख पर आध्यात्मिकता का कोई बोझ नहीं, और न ही उपकार करने का कोई दर्प!

बस, यदि कुछ है, तो उनके समग्र जीवन में एक ही सूत्र, जो आज तक उनकी जीवन-शैली बना हुआ है, 'दूसरों की भलाई में ही अपना भला है, दूसरों के सुख में ही अपना सुख है।' स्वामीश्री के पास आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को अद्भुत आत्मीयता का अनुभव होता है। चाहे वह गरीब आदिवासी हों या अमेरिकावासी धनाढ्य।

विश्वख्यात मल्टीमिडिया दिग्दर्शक प्रो. यारोस्लाव फ्रिच, स्वामीश्री के स्मरणमात्र से गद्गद हो उठते हैं। वे कहते हैं, 'प्रमुखस्वामी विराट अनंतता के महान अंश हैं। वे सच्चे

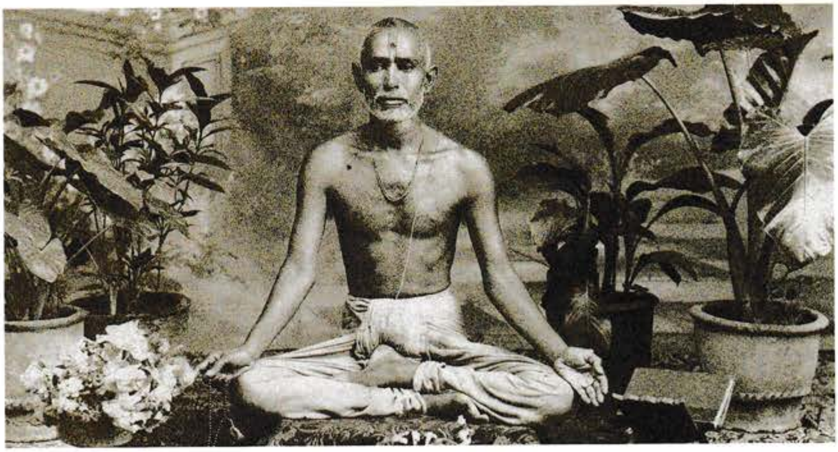

ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज
(सन् 1865 से 1951)

अर्थ में गुरु हैं। इसका मुझे अनुभव है कि उनके द्वारा भगवान स्वामिनारायण प्रकट हैं।'

न्यूयॉर्क में माइकल डुन्ज नामक एक कट्टर अमेरिकी ईसाई को स्वामीश्री में पोप से भी अधिक महानता का अनुभव हुआ था। प्रसिद्ध पत्रकार एवं पुलित्जर पुरस्कार के विजेता श्री रोनाल्ड पटेल, स्वामीश्री में अपने वात्सल्य मूर्ति माता-पिता का अनुभव करते हैं। हॉलैन्ड के डच शिक्षक श्री हनकोप ने स्वामीश्री में योग-क्षेम के वाहक गुरुदेव का दर्शन किया था। केन्या के प्रो. वोशिंग्टन ओकुमु को स्वामीश्री के दर्शन से हृदय में एक अद्‌भुत शान्ति का अनुभव हुआ था। दक्षिण अफ्रीका युनिवर्सिटी के 'रिलिजियन' विभाग के अध्यक्ष प्रो. ब्रायन हचिन्सन ने जगत के एक विलक्षण गुरु के रूप में स्वामीश्री पर अपना शोध महानिबंध तैयार किया है। अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिन्टन को स्वामीश्री की आँखों में विशुद्ध भाव का दर्शन हुआ था।

भारत का साधु-समाज, इन संत विभूति को शिरमौर समझकर धन्यता का अनुभव करता है। आंध्रप्रदेश के धर्मात्मा श्री चिन्ना जियर स्वामीजी को प्रमुखस्वामी महाराज में 'आध्यात्मिक शिल्पी' का दर्शन होता है, तो दिव्यजीवन संघ के अध्यक्ष पूज्य चिदानंदजी महाराज को प्रमुखस्वामी महाराज में 'आधुनिक युग के मर्यादापुरुष' का दर्शन होता है। भारत साधुसमाज के महामंत्री स्वामी श्रीहरिनारायणानंदजी ने उनको 'साधुसमाज का मुकुटमणि' कहा है।

रामकृष्ण मिशन, रायपुर के अध्यक्ष स्वामी आत्मानंदजी ने स्वामीश्री के शान्त परन्तु डायनेमिक प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा था, 'स्वामीश्री कितने दिव्य पुरुष हैं! कितने विनम्र! आज के युग में ऐसे महापुरुष मिलने दुर्लभ है। उन्होंने मेरे हृदय को सर्वाधिक स्पर्श किया है; क्योंकि वे आध्यात्मिक रूप से महान हैं। प्रशान्त गांभीर्य के रहते हुए भी वे आसपास के सहस्त्रों लोगों को गतिशील किये रहते हैं।'

बौद्ध धर्मगुरु दलाई लामा, इजरायल के यहूदी धर्मगुरु लाउ एवं बाकशी डोरन, दाउदी इस्लाम के धर्मगुरु डॉ. सैयद, सिक्ख धर्मगुरु जगजीतसिंह, प्रोटेस्टन्ट ईसाई धर्म के धर्मगुरु आर्कबिशप ऑफ केन्टरबरी, केथोलिक ईसाई धर्मगुरु पोप जॉन पॉल-द्वितीय इत्यादि अनेक धर्मनेताओं ने स्वामीश्री में अद्वितीय आध्यात्मिक प्रतिभा देखी है। भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम से लेकर इंग्लैण्ड के राजा प्रिन्स चार्ल्स एवं पूर्व प्रधानमंत्री टोनी ब्लेर, संयुक्त राष्ट्र संघ के पूर्व महामंत्री कोफी अन्नान तथा बाहरीन के मुस्लिम

शासक शेख इसा बिन सलमान अल खलीफा तथा विश्व के अनेक महानुभावों को स्वामीश्री में एक विभूति पुरुष का दर्शन होता है।

प्रसिद्ध कानून-विशेषज्ञ एवं अर्थशास्त्री नानी पालखीवाला ने यहाँ तक लिखा था कि 'अक्षरपुरुषोत्तम संस्था की सिद्धियों को कलम से लिखना अत्यंत कठिन है। पूज्य प्रमुखस्वामी महाराज की प्रेरणा और नेतृत्व में समर्पित संतों का वृंद अहिंसा, भ्रातृत्वभाव एवं आध्यात्मिक जागृति के प्रसारण में जिस प्रकार समर्पणभाव से सेवारत है, भारतीय संस्कृति के लिए एक अद्वितीय उदाहरण सिद्ध होगा।'

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, दिल्ली अक्षरधाम को देखते ही बोल उठे थे, 'मैं जबसे अक्षरधाम में आया, तभी से मेरे मन में एक प्रश्न उथल-पुथल मचा रहा था कि लाखों लोगों द्वारा केवल पांच वर्ष में ऐसा भव्य एवं दिव्य सर्जन संभव कैसे हुआ ? इसका उत्तर यहीं मिल गया कि स्वामीजी, आपकी आत्मा में भगवान स्वामिनारायण का संपूर्ण प्रवेश है। उन्हीं की शक्ति से यह समग्र अक्षरधाम संकुल सहजरूप में खिल उठा है। मुझे आपके साथ काम करना है, जिससे एक समृद्ध, सुरक्षित और आध्यात्मिक भारत का निर्माण हो सके। आप समग्र आध्यात्मिकता के पुंज हैं। आपमें आध्यात्मिकता का अवतरण हो चुका है। आपके पास ऐसी दिव्य शक्ति है कि यह काम देखकर मुझे लगता है कि इस संसार में सबकुछ संभव है।'

ब्रिटिश तथा केनेडा की पार्लामेन्ट में हुए स्वामीश्री के भव्य सम्मान-समारोहों, अमेरिका के अनेक नगरों द्वारा दी गई 'की टु द सिटी' के सम्मानों तथा कुछ राज्यों द्वारा उन्हें अर्पित की गई मानद नागरिकता तथा विशिष्ट सम्मान में 'प्रमुखस्वामी दिन' घोषित करके दिया गया गौरव इत्यादि हज़ारों सम्मानों की लम्बी सूची स्वामीश्री की वैश्विक प्रतिभा का दर्शन कराती है। यह प्रतिभा पिछले साठ वर्षों से भी लम्बे समय के उनके साधु जीवन में निरंतर किये जा रहे तप, त्याग, समर्पण एवं पराभक्ति के प्रभाव से ही आभामय हुई है।

श्रीहरि ने धर्मधुरा धारण करते समय वरदान माँगते हुए अपने गुरु से प्रार्थना की थी कि 'यदि मेरे भक्त के प्रारब्ध में बिच्छू के डंक के बराबर भी दु:ख लिखा हुआ हो, तो उससे अनंत गुना दु:ख मुझे मिले, किन्तु उसे दु:ख न हो और यदि भक्त के प्रारब्ध में भीख माँगना लिखा हुआ हो, तो वह रामपत्तर (भिक्षा) मेरे भाग्य में आए, किन्तु भक्त को अन्न-वस्त्र की कमी न होने पाए।' स्वामीश्री इस प्रार्थना को प्रत्येक क्षण जी रहे हैं। उन्होंने अपने सुदीर्घ साधु जीवन में लोककल्याण के लिए अपना शरीर समर्पित कर दिया है। कष्टों की चिंता किए बिना भक्तों को प्रसन्न रखने तथा उनके सुख-दु:ख में सहभागी होने के लिए स्वामीश्री ने जो अथक परिश्रम किया है, उसका कोई मूल्य नहीं आंका जा सकता।

सतत विचरण उनकी जीवन-शैली है। स्वामीश्री का पता क्या है ? इस प्रश्न का कोई भी निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सकता। आँख में मोतियाबिंद का रोग, पित्ताशय और गांठ का किया गया ऑपरेशन, पाँव में वातरोग तथा 'हार्टअटैक' के कारण हृदय की हुई बायपास सर्जरी, पेसमेकर की स्थापना आदि अनेक घातक रोगों एवं उससे उत्पन्न कष्टों की चिंता किये बिना गाँवों-कस्बों से लेकर आदिवासियों के झोपड़ों तक 17 हज़ार से भी अधिक गाँवों का विचरण करके, स्वामीश्री ने लाखों लोगों से व्यक्तिगत संपर्क किया है।

सन् 1985 में तीव्र बुखार की स्थिति में भी गुजरात के कानम क्षेत्र के गाँवों में लगातार विचरण करते हुए उन्होंने 20 दिन में 95 गाँवों में लोकसंपर्क किया था। प्रतिदिन लगभग 30 से 40 घरों में स्वामीश्री का पवित्र पदार्पण होता था। वासद में एकादशी के निर्जल

ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज के साथ उनके प्रिय युवा संत नारायणस्वरूपदासजी (प्रमुखस्वामी महाराज)

उपवास में स्वामीश्री को 102 डिग्री बुखार था, फिर भी उन्होंने प्रात:काल से दोपहर 3.30 बजे तक 121 घरों में अपना 'पवित्र पदार्पण' का कार्यक्रम पूर्ण कर लिया!

मही नदी के किनारे दुर्गम्य बदलपुर क्षेत्र में दो-दो किलोमीटर तक पैदल चलते हुए स्वामीश्री ने सुबह से शाम तक एक-एक झोपड़े में पधरावनी की थी। बामणगाम के ऊँचे टेकरों पर बसे हुए एक-एक झोपड़े में स्वामीश्री ने लोक-संपर्क करके अनेक लोगों को प्रसन्न किया है। दूर-दराज के आदिवासी क्षेत्रों में तालाब का पानी पी-पीकर महीनों तक उसी उड़ती हुई रेत और धूल से गुजरते हुए स्वामीश्री भक्तों को प्रसन्न करते रहे हैं।

परिस्थितियाँ चाहे कितनी भी विपरीत हों, प्रकृति-प्रकोप का महासंकट ही क्यों न टूट पड़ा हो, समय की अत्यंत कमी ही क्यों न हो, ऐसे समय में भी स्वामीश्री एक-एक घर घूमते रहे। कभी-कभी तो किसी के दु:खी मन को सांत्वना एवं शीतलता प्रदान करने के लिए स्वामीश्री परोसी हुई थाली को भी छोड़कर प्रचंड दुपहरी में भक्त के साथ उसके घर पधरावनी करने निकल जाते थे।

ऐसे प्रखर विचरण के साथ-साथ उनके द्वारा प्रारंभ की गई मानव-उत्कर्ष की असंख्य प्रवृत्तियों को देखकर बड़ों-बड़ों को भी आश्चर्य होता है। निरंतर प्रवाहित होती उनकी करुणा ने न जाने कितने दीन-दुखियों के जीवन में सांत्वना और साहस का संचार किया है! समाजसेवा का कोई भी ऐसा क्षेत्र बाक़ी नहीं है, जिसे स्वामीश्री ने स्पर्श न किया हो तथा उसको प्रचंड पुरुषार्थ से सफल न किया हो। अकाल या अतिवृष्टि, विनाशकारी चक्रवात तथा भूकंप आदि आपदाओं से प्रभावित एक-एक व्यक्ति के लिए सहायता पहुँचाने हेतु स्वामीश्री ने अद्‌भुत आयोजन किया है। चाहे किसी गाँव-गाँव के बीच में आपसी बैर रहा हो अथवा दो पक्षों के बीच उत्पन्न हुआ वैमनस्य रहा हो, स्वामीश्री उस शत्रुता को समाप्त कर, लोगों के बीच शान्ति और भाईचारा स्थापित कर देते हैं।

जब भी कोई सांप्रदायिक संकट उत्पन्न हुआ हो अथवा दंगे-फसाद हुए हों, शान्ति-स्थापना के लिए स्वामीश्री सदैव सक्रिय होकर लोगों को सांत्वना देते रहे हैं। दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए उन्होंने समाज के विचारों को नया मोड़ प्रदान किया है। छुआछूत के भेदभाव को भी मिटाने में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। साक्षरता अभियान, जलसंचय अभियान तथा व्यसनमुक्ति अभियानों जैसी न जाने कितनी सामाजिक प्रवृत्तियाँ प्रमुखस्वामी महाराज की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से दूर-दराज के गाँवों तक फैली हैं!

अक्षरधाम तथा लंदन के बी.ए.पी.एस. मंदिर जैसे अनेक गौरवशाली सांस्कृतिक संकुलों, सैकड़ों संस्कारधामों एवं मंदिरों का सर्जन, देश-विदेश में सहस्त्रों बाल-किशोर-युवक-युवती तथा महिला मंडलों द्वारा विराट संस्कार-अभियान चलाने में वे सर्वथा सफल एवं अग्रणी रहे हैं। विदेशों में भारतीय संस्कृति का उद्घोष करने में उनकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती। उनके द्वारा की गई विभिन्न सेवाओं की यदि सूची तैयार की जाए, तो संभवत: कई ग्रंथ भर देने की उनमें क्षमता है।

इसके बावजूद वे लाखों व्यक्तियों से सम्पर्क करके, उन्हें व्यसनों से मुक्त कराते हैं तथा व्यक्तिगत समस्याएँ दूर करने के लिए वे प्रतिदिन सैकड़ों लोगों से मिलते हैं। इसके उपरांत असंख्य पत्रों द्वारा भी वे लोगों की समस्याओं का निदान भेजते रहे हैं। गिनती के अनुसार अबतक स्वामीश्री ने सात लाख से भी अधिक पत्रों द्वारा लोगों की समस्याओं का निराकरण किया है तथा उनकी दुविधाओं पर उचित मार्गदर्शन दिया है।

बी.ए.पी.एस. संस्था की विश्वव्यापी मानव-कल्याण प्रवृत्तियों के बीच, विश्व के अनेक देशों में विचरण करते हुए स्वामीश्री ने भगवान स्वामिनारायण के सिद्धांतों के साथ कभी समझौता नहीं किया। विकास को उन्होंने द्रुतगामी अवश्य बनाया है, किन्तु शाश्वत मूल्यों को अक्षुण्ण बनाये रखने के साथ!

भगवान स्वामिनारायण द्वारा संतों को दिये गए पंचवर्तमानों (नियमों) में निष्काम : (अष्टांग ब्रह्मचर्य), निर्मान (मान-अपमान में समानभाव), नि:स्वाद (स्वाद के प्रति उदासीनता), निर्लोभ (स्वयं की धनसंपत्ति का परित्याग) तथा सगे-सम्बंधियों के प्रति नि:स्नेहभाव का समावेश होता है। स्वामीश्री आजीवन इन पंचवर्तमानों के पालन में दृढ़ रहे हैं, यह अनुभव लाखों सत्संगियों का है। अष्टांग ब्रह्मचर्य की आभा उनके मुखारविंद पर स्पष्टरूप से झलकती रहती है। उनके निर्लोभी वर्तमान (नियम) को और स्पष्ट समझने के लिए एक ही वाक्य पर्याप्त है कि विराट संस्था के अध्यक्ष होने के बावजूद संपत्ति के नाम पर उनके पास एक फूटी कौड़ी तक नहीं है!

विश्वभर में हिन्दू संस्कृति के गौरव-शिखर तुल्य प्रसिद्ध स्वामिनारायण मंदिर, लंदन अथवा आधुनिक विश्व का आश्चर्य बन चुका 'स्वामिनारायण अक्षरधाम', दिल्ली के रचयिता के रूप में कभी उनके मन में 'मैं' का भाव उत्पन्न नहीं हुआ। इनकी अहंशून्यता एवं निर्दोषता, हर किसी के हृदय को स्पर्श कर लेती है। एक प्रसिद्ध विद्वान् ने लिखा है - 'कंचन और काम से मुक्त होने के बाद भी अहंकार से मुक्त होने में बड़े-बड़े धुरंधर भी असफल हो जाते हैं। प्रमुखस्वामी महाराज, मनुष्य की सबसे कठिन मानी जानेवाली इस सीमा को भी लांघ चुके हैं। यह वास्तविकता इनके ब्रह्मस्वरूप होने का लक्षण प्रकट करती है।'

सन् 1989 में मुंबई में प्रवास के दौरान ऐक्युप्रेशरिस्ट डॉक्टर सुरेशभाई को स्वामीश्री के सिर पर मसाज करने की इच्छा हुई। भाग्यवश एकबार इच्छा पूर्ण हो गई। उन्होंने बड़े ही भक्तिभाव से स्वामीश्री के सिर पर मसाज किया।

तब सेवक संत ने पूछा, 'क्या आपको लगता है कि सिर हलका हो गया?'

स्वामीश्री ने सहजभाव से कहा, 'सिर पर कोई भार हो तब न? मैंने तो मात्र भगवान को ही रखा है; इसीलिए सदैव सिर हल्का ही रहता है।'

संस्था द्वारा हो रही असंख्य प्रवृत्तियों तथा अनेक सिद्धियों के बीच भी स्वामीश्री नितान्त शान्ति एवं आनन्द का अनुभव करते हैं। उनकी सहज प्रसन्नता का मूल कारण है, उनकी

योगीजी महाराज के साथ उनके अनुगामी प्रमुखस्वामी महाराज

अनन्य पराभक्ति।

बेंगलूर के आदि चुनचुनगिरि मठ के प्रसिद्ध संत स्वामी बालगंगाधरनाथजी ने 19-8-2006 को स्वामीश्री के विषय में कहा था, 'विश्व में एकमात्र उदाहरण आप ही हैं, जिन्होंने इतने अधिक मंदिरों तथा पवित्र संतों का सृजन किया है। यह आपका बहुत बड़ा प्रदान है। ऋषियों-मुनियों तथा वेदों ने तो मात्र ग्रंथ ही प्रदान किए, किन्तु आपने ग्रंथस्थ सिद्धांतों को साकार कर दिखाया है।

भगवान का अवतार ही ऐसा कार्य कर सकता है। आप गाँव-गाँव में जाकर मजदूरों से लेकर एक अदने से आदमी से भी मिलते हैं। गीता में कहा गया है, 'आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति।' आप यही कर रहे हैं। जब मैं आपका दर्शन करता हूँ, तो मुझे लगता है कि साक्षात् भगवान का दर्शन कर रहा हूँ। आप जैसे सत्पुरुष का दर्शन आसान नहीं, किन्तु आज मुझे यह अवसर प्राप्त हो गया है।'

यह सुनकर स्वामीश्री ने विनम्रभाव से कहा, 'भगवान की प्रेरणा है, इसीलिए कार्य होते रहते हैं। भगवान का जैसा आदेश मिलता है, उसी के अनुरूप करता हूँ और प्रेरणा भी मिलती रहती है। जो कुछ करते हैं, भगवान ही करते हैं। काम करने के बाद लोगों का अहंकार बढ़ जाता है कि यह कार्य मेरे द्वारा संपन्न हुआ, किन्तु सभी के द्वारा केवल भगवान ही शुभ कार्य कर रहे हैं।'

30 अगस्त, 2006, को चेन्नई में एक मुमुक्षु स्वामीश्री का दर्शन करने आया। दिल्ली स्थित अक्षरधाम तथा स्वामीश्री की शुभ्र कीर्ति सुननेवाले उस मुमुक्षु ने प्रथम दर्शन करते ही कहा, 'आप तो कलियुग के भगवान हैं! आपने सैकड़ों मंदिरों का सृजन किया है। मेरा सबसे बड़ा भाग्य है कि आज मैंने आपका दर्शन कर लिया।'

पूर्णरूप से अपरिचित उस तमिल मुमुक्षु की भावना सुनकर स्वामीश्री ने कहा, 'सब भगवान की इच्छा से होता है, हम तो 'इन्स्ट्रुमेन्ट' हैं।'

मुमुक्षु ने कहा, 'आपका 'विल पावर' ही ऐसा है।'

स्वामीश्री ने कहा, 'विल पावर तो भगवान और गुरु देते हैं।'

स्वामीश्री ने सहज ढंग से अपनी सारी सिद्धियाँ भगवान और गुरु के चरणों में समर्पित कर दीं। राजकोट में स्वामीश्री का दर्शन करने आए उड़ीसा के गवर्नर यज्ञदत्त शर्मा ने स्वामीश्री से आशीर्वाद माँगते हुए कहा कि 'जिससे जन्म-जन्मांतर तक शान्ति मिल जाए

और इस देश में संतभावना का उदय हो, ऐसा आशीर्वाद दीजिए।'

स्वामीश्री ने कहा, 'हम भगवान से प्रार्थना करते हैं, शान्ति मिल जाए।'

गवर्नर साहब ने कहा, 'आप भगवान से क्यों प्रार्थना करते हैं? भगवान तो आपके चरणों के दास हैं!' इतना सुनते ही स्वामीश्री ने ग्लानि भरे शब्दों में कहा, 'नहीं नहीं, भगवान के दास तो हम हैं!'

गवर्नर ने कहा, 'स्वामीजी! भगवान तो भक्त के बस में होते हैं, आपके बस में भगवान हैं, आप कहेंगे तो वे जरूर सुनेंगे। हम पापी लोग भगवान से कह भी नहीं सकते...'

अंत में स्वामीश्री ने इतना ही कहा, 'हम भगवान से जरूर कहते हैं।'

जिनके साथ भगवान स्वयं वार्तालाप करते हों और जो भगवान के साथ बातें किया करते हों, उनके व्यक्तित्व की महानता को कैसे चुनौती दी जा सकती है?

स्वामीश्री की अहंशून्यता की भावना हर क्षण उनकी पराभक्ति में झलकती रहती है। भगवान स्वामिनारायण की चलमूर्ति के प्रति उनकी आत्मनिवेदी भक्ति को देखकर, दिव्यजीवन संघ के अध्यक्ष स्वामी चिदानंदजी महाराज ने कहा था, 'स्वामीजी को उनके इष्टदेव के साथ देखने का सौभाग्य देवताओं को भी दुर्लभ है। अपने इष्टदेव से कभी भी वे अलग नहीं होते। प्रत्येक महत्त्वपूर्ण अवसरों पर चाहे वे मंच पर हों अथवा व्यासपीठ पर विराजमान हों, प्रत्येक स्थान पर वे अपने इष्टदेव (ठाकुरजी की मूर्ति) को अग्र स्थान पर विराजमान करते हैं और उन इष्टदेव को ही सदैव अग्रताक्रम प्रदान किया जाता है।'

भगवान को अर्पण किये बग़ैर स्वामीश्री को एक बूंद जल अथवा एक पुष्पदल तक स्वीकार नहीं होता, तो इतनी महान उपलब्धियों का यश वे कैसे स्वीकार कर सकते हैं? वे सबकुछ भगवान के चरणों में अर्पण करके सदैव तनावमुक्त और प्रसन्न रहते हैं।

स्वामीश्री की यह आध्यात्मिक स्थिति देखकर वे आगे कहते हैं, 'प्रमुखस्वामी महाराज हमारे देश के अद्वितीय आध्यात्मिक रत्न हैं, जो अध्यात्म के मुकुट में सदैव शोभायमान रहते हैं।' अपनी तमाम सिद्धियों का स्रोत स्वामीश्री 'गुरुकृपा' को बतलाते हैं।

मुंबई में पत्रकारों ने स्वामीश्री से पूछा, 'आपको कभी आध्यात्मिक अनुभूति हुई हो, उसके विषय में कुछ कहेंगे? क्योंकि आज तो भिन्न-भिन्न शक्तियों के पीछे लोग पागलों की भाँति दौड़ रहे हैं।'

स्वामीश्री ने कहा, 'मेरी अनुभूति का मुख्य कारण गुरुकृपा है। शास्त्रीजी महाराज का सुयोग हुआ, यही एक अनुभूति है।'

सन् 1977 में लंदन के प्रसिद्ध वेम्बली कोन्फरन्स हॉल में एक पत्रकार परिषद में स्वामीश्री से पूछा गया, 'आपके जीवन में भगवान का अनुभव कब हुआ?'

स्वामीश्री ने कहा, 'जबसे मेरे गुरु शास्त्रीजी महाराज मिले और उनके प्रति आत्मबुद्धि हुई, तभी से यह अनुभव हुआ।'

प्रस्तुत पुस्तक में उनके दिव्य एवं प्रेरक जीवन के अनेक हृदयस्पर्शी प्रसंग शामिल किये गए हैं। इसे पढ़कर दक्षिण के अडमार मठ के प्रसिद्ध संतवर्य आचार्य विबुधेशतीर्थजी द्वारा लिखे गए शब्द बरबस ही याद आ जाते हैं, 'कदाचित् भगवान अपने सर्वप्रिय व्यक्तियों की सूची बनाने बैठे, तो प्रमुखस्वामी महाराज का नाम प्रथम क्रमांक पर रखेंगे!'

काव्य की यह पंक्ति उन्हीं के लिए है -

ऐसे संत-चरन बलिहारी; जिनके गुण रीझत गिरिधारी...

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

सत्यम्

विश्वभर के तत्त्वज्ञानी तथा चिंतक सत्य को अनेक प्रकार से परिभाषित करते हैं।
भारतीय अध्यात्म परम्परा, सत्य को सर्वोच्च स्थान प्रदान करती है।
छांदोग्य उपनिषद् में कहा गया है, *'तत् सत्यं स आत्मा।'*
अर्थात् 'जो सबकी आत्मा है, वही परमात्मा सत्य है।' (6-8-7)
मुंडक उपनिषद् में कहा गया है, *'सत्यं परं धीमहि। सत्यमेव जयते।'* अर्थात्
परमात्मा ही सत्य है और सत्य की ही सर्वत्र जय-जयकार होती है। (3-1-6)
जिन्हें इस परम सत्य का साक्षात्कार है, वे संत भी सत्य के स्वरूप हैं।

सितम्बर 1998, अमेरिका के एडिसन नगर में प्रसिद्ध समाचार पत्र 'फिलाडेल्फिया इन्क्वायरर' के संपादक एवं पुलित्सर पुरस्कार विजेता श्री रोनाल्ड पटेल स्वामीश्री का 'इण्टरव्यू' ले रहे थे। स्वामीश्री के हृदय की बायपास सर्जरी होने के बाद, वे विश्राम कर रहे थे। रोनाल्ड ने पूछा, 'बायपास सर्जरी के बाद सभानावस्था में लौटते ही जब आपको अनुभव हुआ कि आप पृथ्वी पर हैं, तो सर्वप्रथम आपके मन में कौन सा विचार आया?' पलभर का भी विलम्ब किए बिना स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान का।'

'सर्जरी के बाद जब होश में आए, तब क्या आपको दु:ख नहीं हुआ कि मैं इस धरती पर पुन: लौट आया? किन्तु परमात्मा का सामीप्य नहीं पा सका!'

'नहीं, भगवान निरन्तर साथ में ही हैं।' स्वामीश्री ने सहज उत्तर दिया।

राजकोट(गुजरात) में 2 नवम्बर, सन् 1991 के दिन स्वामीश्री से एक अपरिचित युवक ने कुछ पूछने की इच्छा प्रकट की।

'पूछो।' स्वामीश्री ने कहा।

'आपने भगवान का दर्शन किया है?'

'किया है तभी तो आनंद है, देखा है इसीलिए बात करते हैं।'

'तो आपको, भगवान तादृश्य हैं?'

'हाँ, वे तादृश्य ही हैं।' स्वामीश्री का यह उत्तर सहज था। अनुभूति की प्रतीति कराते उत्तर ने युवक के हृदय को वेध लिया।

दैनिक अखबार 'जन्मभूमि-प्रवासी' के प्रतिनिधि श्री जीतु सोमपुरा ने स्वामीश्री से पूछा, 'आपको भगवान का सर्वप्रथम अनुभव कब हुआ था?' स्वामीश्री ने कहा था, 'पहले से ही उनकी अनुभूति है।' सत्य के साक्षात्कार की यह सर्वोच्च स्थिति है।

जो शब्दातीत तथा मात्र अनुभवगम्य है, ऐसे परमात्मा का जिन्हें साक्षात्कार है, उसी ने

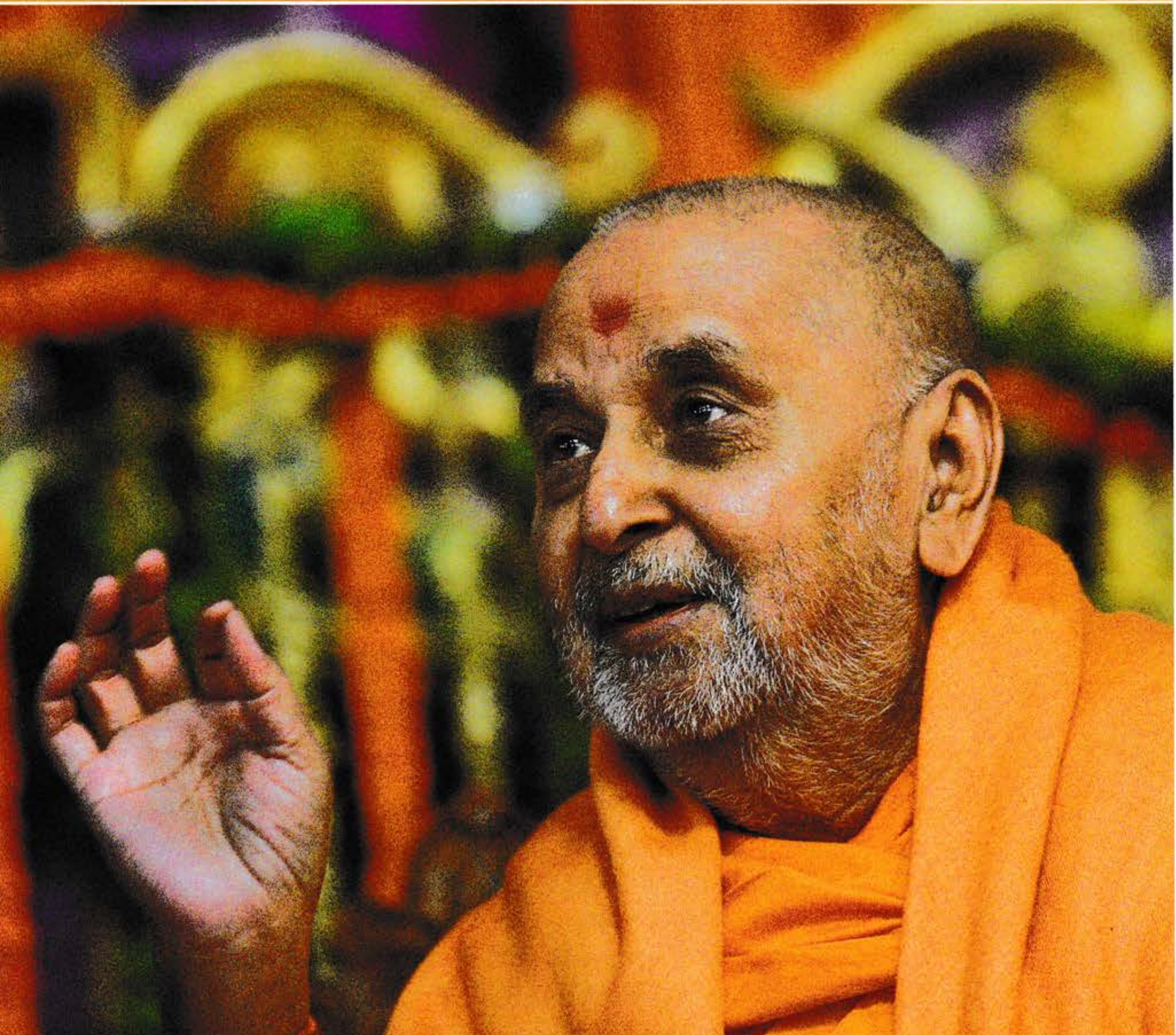

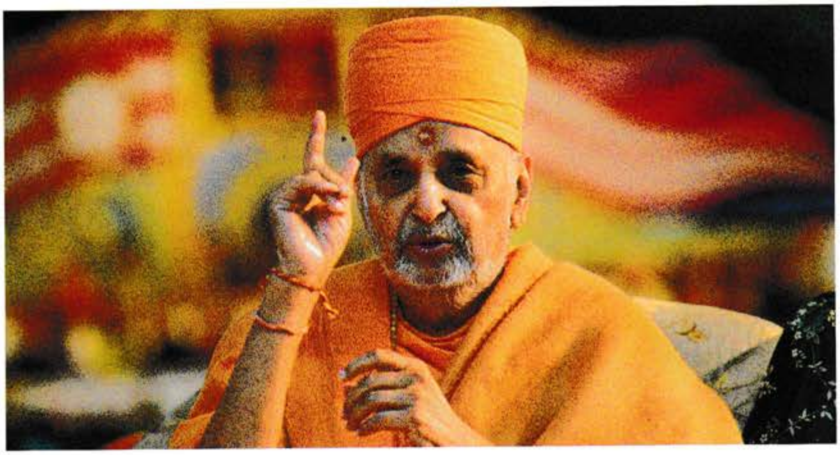

'सत्य एक ही है, जो विविध रूपों में प्रकट होता है...'

आध्यात्मिक सत्य को पाया है, ऐसे महापुरुष का आचरण भी सत्यमय होता है और वे मन-कर्म-वचन से सत्य को अवतरित करते हैं। जैसे सूर्य के प्रकाश में अंधकार संभव नहीं, उसी प्रकार जहाँ सत्य प्रकट हो, वहाँ असत्य कैसे संभव होगा? स्वामीश्री के नित्य व्यवहार तथा उनके समग्र अस्तित्व में सत्य का अनुभव होता है। असत्य वाणी का उच्चारण तक नहीं। झूठे वचन न देना और दिए गए वचन के लिए समर्पित हो जाना, उनके सत्यसंभूत लक्षण हैं।

केनेडा स्थित संजय पटेल ने अपना अनुभव इन शब्दों में व्यक्त किया है, 'मुझे वह दृश्य देखकर अत्यंत आश्चर्य हुआ कि स्वामीश्री प्रात:पूजा कर रहे थे, तब कई लोग आ-जा रहे थे। संगीत तथा हरिभक्तों की बातचीत का शोर मचा हुआ था, किन्तु स्वामीश्री तिलक-टीका करने के बाद नेत्र मूँदकर ध्यान में खो गए। मुझे परम आश्चर्य हुआ कि स्वामीश्री ऐसे बैठे थे, जैसे आसपास कोई है ही नहीं! वे स्वयं और भगवान - केवल दो ही हैं। मुझे लगा कि यह उनकी प्रामाणिक एवं सत्यनिष्ठ भक्ति का ही परिणाम था... इस अनुभूति के बाद मैं नियमित सत्संग करता हूँ... मुझे बड़ा आनन्द मिलता है।'

स्वामीश्री की स्वाभाविक प्रकृति है कि वे किसी को दिखाने के लिए कुछ भी नहीं करते। न तो उनके व्यवहार एवं वाणी में कहीं मिथ्या आडंबर का अंश मिलेगा, न ही उनकी संगत में कोई पाखंड अथवा बनावट का मुखौटा दिखेगा! उनके जीवन का यही सत्य सभी को सहज प्रभावित करता है।

सन् 1985 में इंग्लैण्ड की धरती पर संस्था द्वारा आयोजित 'भारतीय सांस्कृतिक महोत्सव' धूमधाम से मनाया गया था। लाखों ब्रिटेनवासी यहाँ पधारे थे; परन्तु लंदन स्थित 'भारतीय विद्याभवन' के अध्यक्ष श्री माणेक दलाल, साधु-संन्यासियों के प्रति पूर्वाग्रही होने के कारण नहीं आए। एक दिन स्वामीश्री को भारतीय विद्याभवन में उपस्थित रहने का आमंत्रण मिला। श्री माणेक दलाल यहाँ उपस्थित थे। उन्होंने स्वामीश्री का संभाषण सुना, तो विस्मित रह गए; क्योंकि उनकी वाणी में कहीं भी अपमानित होने का रोष लेशमात्र भी नहीं दिखाई दिया। माणेकभाई को सत्य का साक्षात्कार हो गया। पूर्वाग्रह से मुक्त होकर उस दिन उन्होंने कहा, 'स्वामीश्री की वाणी कैसी निर्मल है! न कोई आडंबर, न कोई राग-द्वेष! प्रवचन तो मैंने बहुत सुने हैं, किन्तु ऐसी निर्दंभ और पवित्र वाणी कभी नहीं सुनी।'

प्रमुखस्वामीजी महाराज सचलरूप में नारायण हैं।
उनका तेजस्वी व्यक्तित्व, नीतिमय आदर्श जीवन का दिव्य प्रकाश फैलाता है,
मानवजाति को आचरण की शुद्धता तथा भगवन्मय
जीवन-शैली का मार्गदर्शन देता है। उनके चारों ओर साधुता,
सुहृदयता एवं विश्वप्रेम का आभा-मण्डल फैला रहता है।
हम भगवान श्रीराम को 'मर्यादा पुरुषोत्तम' कहते हैं।
परन्तु प्रमुखस्वामी महाराज में अपने समय के 'मर्यादा पुरुष' का दर्शन होता है।

- ब्रह्मलीन पूज्य स्वामीश्री चिदानन्दजी महाराज

(दिव्यजीवन संघ, हृषीकेश)

पूर्वोक्त संवाददाता रोनाल्ड पटेल ने एडिसन में एक सभा में कहा था, 'एक जर्नलिस्ट के रूप में स्वामीश्री से मैंने कई प्रश्न पूछे, उनके उत्तर में जो बात उभरकर आई, वह है प्रमुखस्वामीजी की आत्मा की पवित्रता एवं निर्मलता। एक पत्रकार होने के नाते मैंने अनेक महानुभावों के साक्षात्कार लिए हैं, किन्तु स्वामीजी की निर्मलता मुझे किसी में भी नहीं मिली। उनके उत्तरों में मलिनता के स्थान पर शुद्ध प्रेम एवं निरी पवित्रता झलक रही थी। कभी भी और कहीं भी आप उनसे कोई भी प्रश्न पूछें, उत्तर मिलेगा, तो अत्यंत पवित्र! न कहीं प्रसिद्धि की लालसा, न तो स्वार्थवृत्ति का भाव!' (18-9-1998)

सत्य का स्थायीभाव होने पर स्वार्थ एवं दंभ का नितान्त अभाव होता है।

काल्पनिक प्रभाव फैलाकर किसी को अभिभूत कर देना, वे स्वप्न में भी नहीं सोचते।

सन् 1971 में गुरु योगीजी महाराज के देहत्याग के बाद स्वामीश्री गुरुपद पर आरूढ़ हुए। उनकी गंभीर प्रकृति को देखकर सेवक संत देवचरण स्वामी ने विनम्रतापूर्वक कहा, 'स्वामीजी, अब तो आप योगीजी महाराज के स्थान पर हैं, आप उन्हीं की तरह आशीर्वाद देने की शैली अपनाएँ। जैसे वे ताली बजाकर हँसते हुए आशीर्वाद दिया करते थे। इससे लोगों में आप के प्रति स्नेहभाव बढ़ जाएगा। वे सोचेंगे कि आप और योगीजी महाराज भिन्न नहीं हैं।'

'मेरी ऐसी स्वाभाविक रीति नहीं है, आशीर्वाद देने की तो योगीजी महाराज की अलौकिक पद्धति थी। क्या मुझे योगीजी महाराज की नकल करनी चाहिए? मैं नकल करना नहीं जानता। जो मुझमें नहीं है, ऐसी बातों का प्रदर्शन करना मुझे नहीं आएगा। लोगों का स्नेह योगीजी महाराज के प्रति है, वही उचित है।' ऐसे सत्यनिष्ठ महापुरुष का वर्णन करते हुए व्यासजी कहते हैं : *'सत्याकारास्त्रयोदश:'* अर्थात् सत्य के तेरह पहलू होते हैं। (महाभारत : 12-156-8-9)

एक प्रसंग पर बोचासण में स्वामीश्री के मुंह से अचानक शब्द निकल पड़े थे – 'दंभ से मुझे सदैव घृणा रही है।'

एकबार स्वामीश्री के आशीर्वाद के लिए उमड़ते भक्तों की भीड़ को देखते हुए जनमंगल स्वामी ने विनोद में कहा, 'स्वामीजी, लोगों के सिर पर हाथ रख-रखकर आपके हाथ थक नहीं जाते? इससे तो काष्ठ का नकली हाथ बनवाना ठीक रहेगा, जो हरिभक्तों के सिर पर

स्पर्श करता रहे! भक्तों को पता भी नहीं चलेगा कि यह हाथ असली है या नकली!'

स्वामीश्री बीच में ही बोल उठे, 'ऐसा दंभ किसलिए? हम नकली माल रखते ही नहीं। यहाँ तो असल माल ही मिलेगा।'

जहाँ दंभ है; वहाँ असत्य है, जहाँ निर्दंभता है; वहाँ सत्य है। खुली किताब सा पारदर्शक जीवन स्वामीश्री की साहजिकता है। उनका एकान्तशून्य सार्वजनिक जीवन! दिन हो या रात, भोजन हो या आराम, पूर्णतः खुला जीवन। जिनके जीवन में छुपाने जैसी कोई घटना ही नहीं हुई, उनके लिए न तो किसी का भय रहता है, न ही कोई चिन्ता।

एकबार गोंडल में विश्वविहारी स्वामी ने पूछा, 'अपनी 'प्राईवेट' डायरी में क्या लिख रहे हैं?' स्वामीश्री ने कहा, 'हम कोई 'प्राइवेट' डायरी नहीं रखते। हमारा समग्र जीवन जग जाहिर है। जो गुप्त रखता है, उसे खुल जाने का भय सताये रहता है। हमें तो भगवान स्वामिनारायण के सामने जैसे हैं, वैसे ही जीना है।'

स्वामीश्री के सत्य का एक विशिष्ट आयाम है : सिद्धांत एवं मूल्यनिष्ठा के लिए आत्मसमर्पित हो जाना। पिछले 50 वर्षों में उन्होंने संस्था का विस्तार विश्वस्तर तक किया है, परन्तु सिद्धान्तों से कोई समझौता नहीं किया। उनको वर्षों से अत्यंत निकट से देखनेवाले संस्था के वरिष्ठ साधु महंत स्वामी का उद्गार सुनिए, 'कितने ही नेताओं और धार्मिक प्रमुखों को देखते हैं कि प्रतिवर्ष अथवा कभी-कभी तो हर छः महीने में वे गुरु की फिलॉसफी अथवा मूल्य बदल देते हैं... सिद्धांत और नियम भी बदलते हैं... किन्तु स्वामीश्री ने इतनी सारी प्रवृत्तियों का संचालन एवं प्रारम्भ किया, परन्तु अपने आदर्श एवं सिद्धांतों को कभी नहीं बदला। यह उनकी सत्यनिष्ठा और आध्यात्मिक ऊँचाई का मापदंड है।'

सत्य को समर्पित होनेवाले के मूल्य अविचल रहते हैं - किसी भी स्थिति में और किसी भी समय में! महर्षि वाल्मीकि कहते हैं, 'रामो द्विर्नाभिभाषते' अर्थात् श्रीराम के सिद्धांत तथा व्यवहार में हमेशा सत्य एवं एकरूपता थी। दूसरों के हित के लिए सत्य भाषण में स्वामीश्री कभी भी दबाव, लज्जा, झूठी ममता अथवा क्षोभ का अनुभव नहीं करते।

यदि कोई उनकी प्रशंसा के लिए मनगढ़ंत घटनाएँ कहने लगता है, तो स्वामीश्री उसे स्पष्ट कह देते हैं, 'आपने जो कुछ कहा, वैसी घटना घटी हो, ऐसा मुझे बिल्कुल याद नहीं

है!' स्वामीश्री की ईमानदारी को देखकर वह मिथ्याभाषी व्यक्ति स्तब्ध रह जाता है।

स्वामीश्री हमेशा कहते रहते हैं कि 'सत्य ही भगवान को प्रसन्न करने का माध्यम है।'

बिहार के आई.जी.पी. राकेश अस्थाना को 16 फरवरी, 2006 को वड़ौदा में स्वामीश्री ने कहा था, 'सत्य के लिए समर्पित होने में चाहे कितने ही कष्ट आ जाएँ, सत्य को कभी छोड़ना नहीं। इसके लिए सहन तो करना ही पड़ेगा, लेकिन अन्त में सत्य की ही जय होती है और उन्हीं पर भगवान प्रसन्न रहते हैं।'

महर्षि पतंजलि कहते हैं, 'सत्य-प्रतिष्ठायां क्रियाफल-आश्रयत्वम्' (योगसूत्र, 2/26) अर्थात् जीवन में सत्य की प्रतिष्ठा करनेवाले महापुरुषों का प्रत्येक वचन-कर्म मूर्तिमान सत्य बन जाता है। छांदोग्य उपनिषद् अक्षरब्रह्म को 'सत्यकाम' तथा 'सत्यसंकल्प' कहता है। अर्थात् उनके संकल्प व इच्छाएँ सत्य हैं। (8-1-5)

स्वामीश्री के संकल्प और वाणी में सदैव सत्य का ही प्रभाव दिखता है।

सन् 1985 में अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी का द्वि-जन्मशताब्दी महोत्सव मनाया गया था। उन दिनों गुजरात पानी के लिए तरस रहा था। विद्यार्थी आंदोलन भी उग्र रूप धारण कर चुका था। सितम्बर मास के अन्त तक वर्षा के कोई चिह्न दिखाई नहीं दिए थे। कई महानुभावों का अभिप्राय था कि महोत्सव को रद्द कर दिया जाए। स्वामीश्री ने एक मीटिंग में कहा था, 'हमें उत्सव तो मनाना ही है। वर्षा अवश्य होगी। हस्ति नक्षत्र पानी बरसाएगा और भगवान हमारी सहायता अवश्य करेंगे।'

उनके वचन के अनुसार पूरे गुजरात में मुसलाधार बरसात हुई और अनुकूल वातावरण के कारण महोत्सव भी भव्यता के साथ संपन्न हुआ।

दिल्ली में 'अक्षरधाम' के लिए भूमि संपादन के बाद स्वामीश्री ने कहा था कि 'अक्षरधाम की नींव ऐसी डालनी है कि हज़ारों वर्ष तक कोई व्यवधान उपस्थित न हो।'

भूकम्प की संभावना को लक्ष्य में रखते हुए विख्यात स्ट्रक्चरल इंजीनियर बी.वी. चौधरी तथा अन्य विद्वानों ने कहा कि 'यमुना की रेतीली ज़मीन में हज़ारों वर्षों तक स्थिर रहनेवाले फाउन्डेशन की डिजाईन तैयार करना एक चुनौती है। सबकुछ हमारी शक्ति से परे है। हमारे पास कोई संतोषजनक विकल्प नहीं है।'

किन्तु देखते ही देखते वैज्ञानिक पद्धति से डिजाईन तैयार कर ली गई। इस असाधारण चुनौती को स्वीकार करनेवाले डिजाईनर महेश देसाई एवं बी.वी. चौधरी कहते हैं कि 'फाउन्डेशन का ऐसा सुंदर निराकरण हमारे लिए एक चमत्कार ही था। अब हमें पूर्ण विश्वास है कि अक्षरधाम की नींव हज़ारों वर्ष तक अविचल रहेगी।'

'अक्षरधाम' में प्रदर्शित करने के लिए भारत में सर्वप्रथम धार्मिक आईमेक्स फिल्म 'नीलकंठ यात्रा' का फिल्मांकन हो रहा था। 5 मार्च, 2003 से नेपाल में मुक्तिनाथ से फिल्मांकन का प्रारंभ होनेवाला था। कार्यक्रम के अनुसार शूटिंग-सामग्री के साथ युनिट के सभी लोग ठीक समय पर वहाँ पहुँच गए, किन्तु वहाँ के पूरे क्षेत्र में आकाश घने बादलों से ढंका हुआ था। निरंतर हो रही बरसात के कारण सूर्य का कहीं दर्शन ही न था। सूर्य के प्रकाश के अभाव में फिल्मांकन करना असंभव था। साथ ही सबसे बड़ी समस्या यह थी कि मुक्तिनाथ के पहाड़ों पर दूर-सुदूर तक कहीं भी बर्फ़ थी, थी तो केवल पहाड़ों की काली चट्टानें! स्थानीय लोगों का कहना था कि 'आप असमय में आ गए हैं। इस समय यहाँ बर्फ नहीं होती।'

हर कोई बड़े असमंजस में था। व्यवस्थापकों ने गोंडल में विराजमान स्वामीश्री को तमाम कठिनाइयों से अवगत कराया। उन्होंने आयोजकों को आशीर्वाद देते हुए कहा, 'आप चिन्ता न करें, शूटिंग ठीक समय पर होगी। भगवान आपकी सहायता करेंगे।' यद्यपि यूनिट के अधिकारियों ने अन्य स्थलों की भी खोज की, परन्तु सबकुछ निष्फल। उन्होंने पुनः स्वामीश्री का मार्गदर्शन लिया। स्वामीश्री ने पुनः सभी को प्रोत्साहित किया, 'आप कल बिना किसी विघ्न के शूटिंग करिएगा। आपको कोई व्यवधान नहीं होगा।'

4 मार्च की रात तक कोई भी अनुकूल चिह्न नहीं दिखाई देता था, परन्तु सुबह उठते ही सबकी आँखें आश्चर्य से फैल गईं। पूरब में सूर्य चमक रहा था। शूटिंग-स्थल पर रात्रि में हिमवर्षा का होना, काले पहाड़ों पर दूर-दूर तक बर्फ़ की चादर फैल जाना और प्रातः सूरज की किरणों के स्पर्श से सोने की भाँति चमकना सबकुछ स्वामीश्री द्वारा की गई प्रार्थना का ही चमत्कार था! बहुत ही अच्छे दृश्यों का फिल्मांकन हुआ। वहीं, दूसरी तरफ 'एवरेस्ट' नामक आइ-मेक्स फिल्म की पूरी युनिट महीनों तक रुककर मात्र 7-8 मिनट का फिल्मांकन कर सकी थी, जब कि 'नीलकंठ यात्रा' के लिए केवल एक ही दिन में एक घंटे तक फिल्मांकन पूरा कर लिया गया था!

आइमेक्स फिल्म उद्योग के विशेषज्ञ रीड स्मूट ऐसी आश्चर्यजनक घटनाओं का स्मरण करके बोल उठे थे, 'इस लार्ज फार्मेट फिल्म की शूटिंग-व्यवस्था देख रहे बी.ए.पी.एस. के 16 कार्य-विभागों के अतिरिक्त एक 17 वाँ विभाग भी शुरू से हमें सहयोग दे रहा है; वह है-नेचर-प्रकृति! जिसका संचालन प्रार्थना से होता था और प्रार्थना करनेवाले हैं - स्वामीश्री!'

सत्य की सर्वोत्तम परिभाषा करते हुए व्यासजी कहते हैं,

'यद्भूतहितम् - अत्यन्तमेतत् सत्यं परं मतम्।' (शान्तिपर्व, 316-13)

'जो प्राणीमात्र का अत्यंत हित करता है, वह परम सत्य है।'

स्वामीश्री के समग्र अस्तित्व का केन्द्र-बिन्दु, जीव प्राणीमात्र का हित है।

एकबार स्वामीश्री ने कहा था, 'किसी का भी अहित हो, ऐसा विचार मुझे आज तक कभी नहीं आया!' 'दूसरों के भले में हमारा भला है। दूसरों के हित में हमारा हित है।' यही उनकी जीवन-भावना है। उनकी प्रत्येक प्रार्थना में विश्वभर के लोगों का हित-चिन्तन निहित है। विश्व विख्यात 'राइटर्स' समाचार संस्था के संवाददाता फिलिप पुलेला ने 6 अप्रैल, 1985 को वेकिटन सिटी में एक इन्टरव्यू में स्वामीश्री से पूछा, 'कल आप पोप से मिलेंगे, तब क्या चर्चा करेंगे? अन्य लोग तो राजनीति की बातें करते हैं।'

'हमें राजनीति की कोई बात नहीं करनी है। विश्व सदाचार के मार्ग पर चले, भगवान के प्रति लोगों में भक्तिभाव बढ़े और संसार सुखी रह सके, इसी विषय पर चर्चा करेंगे।'

सन् 1994 में चेक देश के पत्रकारों ने स्वामीश्री से उनके आगमन का कारण पूछा। स्वामीश्री ने कहा था कि 'फ्रीच साहब के निमंत्रण पर हमारा आना हुआ। इस देश का भला हो तथा सभी में परस्पर आत्मीयता बढ़े, यही हमारा उद्देश्य है।'

यह उत्तर केवल कथन मात्र नहीं था। 5 अगस्त, 1998 को स्वामीश्री 18वीं सदी में निर्मित विख्यात सेन्ट बिट चर्च में पधारे, तो लोग वहाँ की नक़्क़ाशी और भव्यता देखने में तल्लीन थे; स्वामीश्री काष्ठ की एक सामान्य बैठक पर बिराजमान होकर आँखें बन्द कर

प्रार्थना में लीन हो गए ! 'स्वामिनारायण' महामंत्र को धीमे स्वर में जपते हुए वे कह रहे थे कि 'इस देश का भला हो, लोगों में धर्मभावना बढ़े, यहाँ के प्रिस्ट (पुजारी) का भला हो, यहाँ की प्रजा सुखी रहे...'

ऐसे विशाल-हृदयी धर्मगुरु को स्थानीय युरोपियन आश्चर्यचकित हो देखते रहे।

8 सितम्बर, 1999 को स्वामीश्री इजरायल में जेरुसलेम पधारे थे। यहाँ ईसा मसीह के जन्मस्थान तथा वेइलिंग वोल के नाम से प्रसिद्ध यहूदियों का विख्यात तीर्थ है। स्वामीश्री ने भी यहाँ प्रार्थना की, 'इस स्थान पर जो भी आए, सभी का भला हो।'

वर्षों से दर्शनार्थियों का प्रवाह देखते हुए जनमंगल स्वामी ने अटलादरा में स्वामीश्री से विनोद करते हुए कहा, 'इतने लोगों के लिए दर्शन-शुल्क रखिए। भीड़ कम रहेगी।' स्वामीश्री ने कहा, 'भाई! हम जनमंगल नहीं है, सर्वमंगल हैं। हमें सबका भला करना है, शुल्क नहीं रखा जाता। जनमंगल तो जन का ही कल्याण करे और सर्वमंगल सर्व का कल्याण करते हैं। हमें तो प्राणीमात्र का अच्छा करना है, इसलिए नि:शुल्क ही ठीक है।'

परमात्मा का साक्षात्कार करनेवाले सिद्धपुरुष सर्व का मंगल कर सकते हैं। ब्रह्मानंद स्वामी ऐसे संत को 'परम हितकारी' पदवी देते हैं :

'प्रभुपद प्रकट करावत प्रीति, भरम मिटावत भारी,

परम कृपालु सकल जीवन पर हरि सम सब दु:खहारी, जगतमांहि संत परम हितकारी...'

परमहित का अर्थ है - देहभाव के भ्रम को मिटाकर ब्रह्मभाव की अनुभूति कराना। जीवात्मा का सम्बंध परमात्मा से कराना।

सन् 1988 में पेरिस में प्रवीणभाई भावसार के घर से बिदा लेते समय स्वामीश्री ने प्रसन्नता पूर्वक कहा था, 'आप सभी ने जो सेवा की है, उसका अन्य फल हम आपको क्या देंगे? लेकिन हमारे पास भगवान हैं, हम उन्हीं को देते हैं।'

हृदय की बायपास सर्जरी के बाद स्वामीश्री पहली बार सार्वजनिक समारोह में पधारे थे। 6 सितम्बर, 1998 को न्युयॉर्क के वेस्ट चेस्टर काउन्टी हाल में बायपास सर्जरी करनेवाले डॉ. सुब्रह्मण्यम् भी निमंत्रित थे। उनका नाम घोषित होते ही निरंतर करतल-ध्वनि से हॉल गूंजता रहा। डॉ. सुब्रह्मण्यम्, स्वामीश्री के समक्ष आए और हाथ जोड़कर उन्होंने भव्य समारोह के बीच मंच पर ही स्वामीश्री के चरणों में साष्टांग दंडवत् प्रणाम किए।

विश्व विख्यात सर्जन को साष्टांग दंडवत् प्रणाम करते हुए देखकर हज़ारों आँखें चकित रह गईं! उस हार्टसर्जन ने उद्‌बोधन में कहा, '7 जुलाई, 1998 को लेनोक्स हिल अस्पताल में मेरे ऑपरेशन थियेटर में मुझे लगा कि भगवान स्वामिनारायण का अवतरण हुआ है। सर्जरी के बाद मैं स्वामीश्री को देखने नित्य जाया करता था; मुझे लगता था कि उनका दर्शन करने जाता हूँ, तो भगवान का ही दर्शन करने जाता हूँ। प्रतिदिन उनके पास जाकर लगता था कि मैं पवित्र हो रहा हूँ।'

जिन्हें परम सत्य का साक्षात्कार है, उनके सम्बंध से दूसरों को भी सत्य का अनुभव होता है। श्रीहरि के वचनामृत का संदर्भ देते हुए स्वामीश्री प्राय: कहा करते हैं, 'परमात्मा सत्य है, उसकी वाणी सत्य है, उसके धारक संत-अक्षरब्रह्म सत्य हैं और जिसे उनमें श्रद्धा है, वही इस सत्य को प्राप्त करता है।' इति सत्यम्।

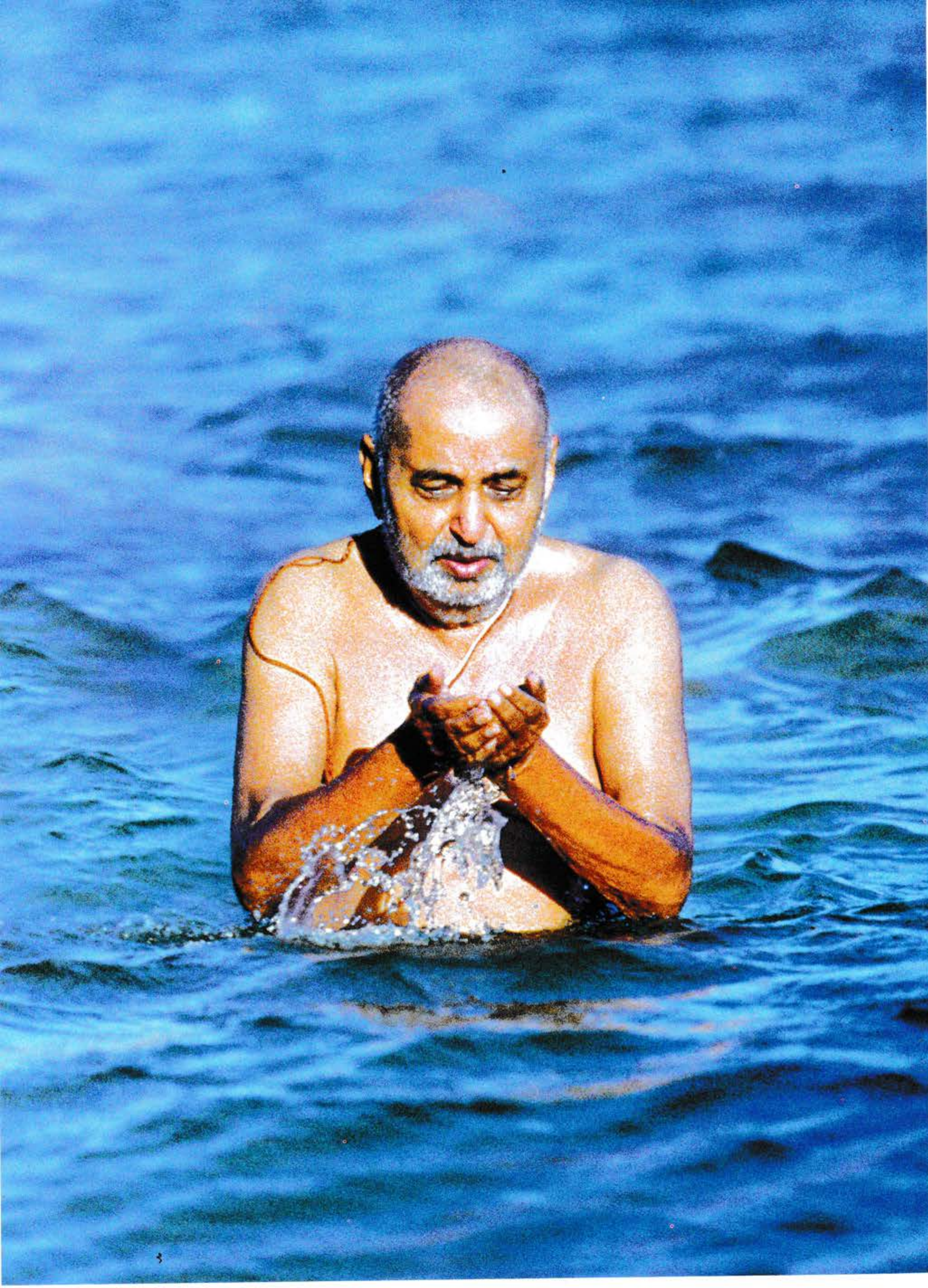

शौचम्

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

शौचम् अर्थात् शुद्धि, स्वच्छता, पवित्रता।
भारतीय शास्त्रों में पाँच प्रकार के शौच का वर्णन मिलता है :
मनःशौच, कर्मशौच, शीलशौच, वाक्शौच तथा शरीरशौच।
भगवान की पवित्रता के धारक गुणातीत संत इन पाँचों शौचों से
जगत में पवित्रता के आदर्श रूप बने हैं। प्रमुखस्वामी महाराज के जीवन में
इन पाँचों पवित्रताओं की सुगन्ध महकती रहती है।

मन का राग-द्वेष से रिक्त होना मनःशौच है। ऐसा पवित्र हृदय प्रमुखस्वामी महाराज के मनःशौच का प्रतिबिंब है। कर्म की निष्काम शैली कर्मशौच है।

भगवान की प्रसन्नता के अतिरिक्त फलमात्र इच्छा का त्याग कर, 90 वर्ष की आयु में निष्काम कर्म के कर्मवीर स्वामीश्री का जीवन कर्मशौच का प्रतीक है।

भगवान के दिये हुए सदाचार के नियमों पर अपना जीवन न्यौछावर कर स्वामीश्री शीलशौच के सर्वोच्च शिखर पर बिराजमान हैं।

सत्य, प्रिय एवं हितकारी वाणी का प्रयोग अर्थात् वाक्शौच। जीव-प्राणीमात्र को सुख देनेवाली निर्मल वाणी स्वामीश्री के वाक्शौच का सतत प्रवाहित झरना है।

स्नानादि द्वारा शुद्धि अर्थात् शरीरशौच, जो स्वामीश्री की लाक्षणिकता है। आदि शंकराचार्यजी पाँचों शौचों को दो प्रकार से विभाजित करते हैं : बाह्यशौच तथा आंतरशौच।

शरीर आदि की शुद्धि बाह्यशौच है और राग-द्वेषादि से मुक्त मन, आंतरशौच है। हर प्रकार की शुद्धि रखकर दूसरों को भी शुद्धि के मार्ग पर प्रेरित करना आध्यात्मिक गुण है। स्वामीश्री इस गुण को नित्य व्यवहार में रखते हैं, ताकि लोग शौचम् का अनुसरण कर सकें।

स्वच्छ शरीर, स्वच्छ मन, स्वच्छ घर, स्वच्छ मंदिर, स्वच्छ गाँव, स्वच्छ राष्ट्र; यही उनका जीवन-ध्येय है। स्वामीश्री कहते हैं, 'हृदय को स्वच्छ करने का आरम्भ बाहर की स्वच्छता से करना चाहिए।' सन् 1960 के दशक में सारंगपुर में जलझुलनी एकादशी तथा द्वादशी समाप्त कर दूर-सुदूर से आए हरिभक्त बिदा हो गए। थके हुए संत-सेवक दोपहर को विश्राम कर रहे थे। स्वामीश्री ने भी सभामंडप में अपने पैर पसारे। अचानक सेवक धर्मजीवन स्वामी की आँखें खुल गईं। देखा तो स्वामीश्री का बिस्तर खाली था। वे जिज्ञासावश पता करने निकले। उन्होंने हरिभक्तों के शौचालय की ओर कदम बढाए, तो चौंक उठे। वहाँ स्वामीश्री स्वयं मल से उफनते शौचालय को साफ कर रहे थे! गंदगी से भरी बाल्टी को उठाते स्वामीश्री को देखकर वे दौड़ते हुए नज़दीक पहुँचकर बोले, 'अरे, स्वामीजी! आप यह क्या कर रहे हैं?'

स्वामीश्री ने उन्हें मौन रहने का संकेत किया, 'धीरे से बोलिए, दूसरे लोग सोये हुए हैं।'

अनेक अधम लोगों का जीवन-परिवर्तन करके स्वामीश्री ने उनको आंतर-बाह्य पवित्र किया है।

सेवक संत ने स्वामीश्री को मना किया, तो उन्होंने कहा, 'एक से भले दो। तुम पानी लेकर आओ और मैं झाड़ू लगा दूँ।' इतना कहकर वे स्वच्छता के कार्य में पुनः जुड़ गए!

सन् 1961 में गढ़डा में स्वर्ण कलश स्थापना के उत्सव में हज़ारों भक्त उमड़ पड़े थे। स्वामीश्री, भक्तों के जूठे पत्तल ठेले में भरकर कूड़े के ढेर तक फेंकने की सेवा में लग गए!

सन् 1971 में अपनी ही 51वीं जन्मजयंती पर धर्मज में उन्होंने प्रात:काल उठते ही देखा कि कुछ भक्तों ने दातून की जूठी फाँक इधर-उधर फेंककर आँगन को गंदा किया है। अपने ही जन्मदिन पर उन्होंने अपने ही भक्तों की जूठी फाँकें उठा लीं और आँगन स्वच्छ कर दिया।

आणंद शहर में एक भक्त के नये मकान में स्वामीश्री का निवास था। शौचालय एवं स्नानागार में सिमेन्ट तथा सफेदी के दाग स्वामीश्री स्वयं साफ करने लगे। सेवक ने तुरन्त ही रोका तो उन्होंने कहा, 'हम यहाँ रहते हैं, तो सफाई हमें ही करनी ही चाहिए। बिदा लेने के समय यजमान को उनका घर साफ करके ही लौटाना चाहिए। जैसा उन्होंने हमें दिया था, उससे भी अधिक स्वच्छ करके देना।' स्वामीश्री हमेशा कहते हैं, 'घर एवं मंदिर इतने स्वच्छ होने चाहिए कि भगवान को प्रिय लगने लगे। गंदगी में भगवान कैसे रहेंगे? मंदिर, घर, प्रांगण तथा मन को स्वच्छ रखें, पूरा देश स्वच्छ हो जाएगा।'

कितने ही सत्संगी स्त्री-पुरुषों ने स्वामीश्री से प्रेरित होकर स्वच्छता की सेवा करने का व्रत लिया है। अमेरिका स्थित प्रतिष्ठित चिकित्सक डॉ. राजीव व्यास, जिनके अधीन 800 कर्मचारी तथा 38 चिकित्सक, उनके सहायक हैं। परन्तु चेरीहिल के स्वामिनारायण मंदिर में वे प्रतिदिन दर्शन के बाद भक्तिभाव से शौचालयों की सफाई किया करते हैं।

सूरत में अत्यंत धनिक युवकों की एक मंडली, हर रविवार को मंदिर परिसर के शौचालयों को स्वच्छ किया करती है। लंदन के प्रतिष्ठित डॉ. रोहित पटेल, डॉ. दीपक पटेल, अनूप मोरझरिया आदि पिछले 22 वर्ष से मंदिर में बर्तन-सफाई का सेवाकार्य करते हैं।

ऐसी अहंशून्यता देखकर स्वामीश्री प्रसन्नता पूर्वक कहते हैं, 'आप बाहरी स्वच्छता करते हैं, तो भगवान प्रसन्न होकर आपके हृदय को स्वच्छ बना देंगे।'

देश-विदेश में बी.ए.पी.एस. के विशाल मंदिरों के बृहद् परिसरों में स्वामीश्री ने पवित्र आध्यात्मिक वातावरण का सृजन करके एक प्रेरक उदाहरण प्रस्तुत किया है। क्यों न वे वर्ष में एक-दो बार ही मंदिर में पधारते हों, वे शौचालयों एवं जनसुविधाओं के विषय में सजग

रहते हैं। भंडार से लेकर ठाकुरजी के गर्भगृह तक द्रुतगति से घूम लेते हैं। उन्होंने व्यवस्थापकों को कम से कम एकबार तो स्वच्छता के लिए टोका होगा, ऐसा प्रत्येक जिम्मेदार व्यक्ति का अनुभव रहा है।

उनके लिए संस्था के छात्रावास तथा रसोई घर आदि की स्वच्छता अग्र क्रम पर रहती है। वे कोठारी तथा भंडारी संतों को भी इसी कारण सावधान किया करते हैं। लाखों लोगों को आकर्षित करनेवाले महोत्सवों की मीटिंग में व्यस्त रहते हुए भी सेवा विभागों में अवश्य पधारते हैं और जरा सी भी गंदगी देखने पर सूचना देने में विलम्ब नहीं करते।

घर-घर अविरत भ्रमण करनेवाले स्वामीश्री गृहस्थों को आदेश देते रहते हैं कि छोटा घर भी स्वच्छ और सुंदर होना चाहिए। यदि हम ढंग से रहेंगे, तो संतानें भी स्वच्छ और सुव्यवस्थित रहेंगी। बड़े लोग गंदगी बनाए रखेंगे, तो पूरा घर गंदगी का ढेर बन जाएगा। घर का वातावरण हमेशा पवित्र रखिए, जहाँ बच्चे संस्कारी और स्वच्छ हों, भगवान का स्मरण हो, और परिवार के सदस्यों में एकता हो, वही घर आदर्श है।'

आंतरशौच की समृद्धि के लिए अगले प्रकरणों में देखेंगे, जहाँ स्वामीश्री द्वारा राग-द्वेषादि विकारों से मुक्त समाज की बातें विस्तारपूर्वक की गई हैं।

समाजसेवकों के लिए उनका आग्रह देखिए। एक नगरपालिका के सदस्यों को स्वामीश्री ने कहा था, 'सामाजिक कार्यकर्ताओं को आचरण और मन से शुद्ध ही रहना चाहिए; तभी वे समाज के प्रत्येक वर्ग पर अपना प्रभाव डाल सकेंगे। अपने पवित्र जीवन की प्रेरणा से गाँव को आदर्श बनाना है और वही आपके सिर पर सबसे बड़ा उत्तरदायित्व है।'

अटलादरा में स्वामीश्री ने कहा था, 'जिस प्रकार ए.सी. में कचरा भर गया, तो उसे नीचे उतारना पड़ता है; वैसे ही हृदय में दुर्गुणों का कचरा भर गया, तो उसे पथभ्रष्ट कहा जाता है। उसे आज नहीं तो कल नीचे उतरना ही पड़ेगा। इसलिए जीवन पवित्र एवं आचरण शुद्ध रखना।'

अपने संपर्क में आनेवाले हर किसी का हृदय स्वच्छ करने की कला स्वामीश्री की अनूठी विलक्षणता है। असंख्य लोगों को उन्होंने दुर्गुणों एवं विकारों से मुक्त किया है।

उबेर गाँव के हरिजन बन्धु ने स्वामीश्री को लिखा था, 'मैंने आपका दर्शन अटलादरा में किया। मुझे आपके प्रति थोड़ी सी भी श्रद्धा नहीं थी, किन्तु आपकी दृष्टि मेरी दृष्टि से मिली और जादू हो गया! मैं अपने परिवार के साथ मांस, शराब और सिगरेट का आनन्द लिया करता था। मेरा क्रोध कभी भी शान्त नहीं होता था, परन्तु आपके दर्शन हुए आठ महीने बीत चुके हैं। मैं अपनी हर बुराई से दूर, आपके सत्संग द्वारा ही सुधर चुका हूँ। सब कुछ सौ प्रतिशत छूट गया है। मेरे पूरे परिवार में शान्ति का वातावरण बन गया है। व्यभिचार की आदत पूर्णत: मिट चुकी है। आपकी प्रसन्नता प्राप्त कर मैं बहुत ही धन्य हूँ।'

18 जुलाई, सन् 1996 को डलास (यू.एस.ए.) में एक सत्संगी युवक, स्वामीश्री का दर्शन करने आया। चरण-स्पर्श करते हुए उसने स्वामीश्री को कहा, 'स्वामीजी! पिछली बार आपने मेरे सिर पर हाथ रखा था, उसी दिन से मेरा क्रोध मिट गया, मांसाहार छूट गया। मैं तो इस जन्म मैं नास्तिक था, किन्तु आपका जादू चल गया... अब मेरे लिए जो कुछ है, आप ही हैं...।'

स्वामीश्री ने आंतरशौच के ऐसे लाखों चमत्कार किये हैं। जो स्वयं शुद्ध, पवित्र और निर्दोष हैं, वही अन्य को आंतर-बाह्य स्वच्छता, पवित्रता और निर्दोषता प्रदान कर सकते हैं। ◆

दया

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

वेदव्यासजी महाभारत में संत के लक्षण का वर्णन करते हुए कहते हैं,
'दयावन्तः सन्तः करुणवेदिनः।' संत दयावान एवं करुणापूर्ण होते हैं।
श्रीमद् भागवत के एकादश स्कंध में संत के लक्षणों में
'कृपालुता' को प्रथम क्रम में स्थान दिया गया है।
माता देवहूति को बोध देते हुए कपिलमुनि संत-लक्षण में दया
को अग्रताक्रम देते हैं। तुलसीदासजी रामचरित मानस में कहते हैं,
'परदुःख द्रवै सो संत पुनीता।' परदुःख देखकर जिनका हृदय दया से
नवनीत (मक्खन) की तरह द्रवित हो जाता है, वह संत हैं।
प्रमुखस्वामी महाराज के पास ऐसा ही कोमल हृदय है,
जो परदुःख देखकर करुणा से द्रवित हो जाता है।

अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामीजी कहते हैं, 'भगवान दया के सागर हैं। सारे संसार में दया वहीं से ही अवतरित होती है।'

श्रीहरि के जीवन-दर्शन से उक्त कथन की प्रतीति अवश्य होती है। गुरु से वरदान माँगते हुए उन्होंने हम सबकी ओर से माँगा था कि 'मेरे भक्त को एक बिच्छू-दंश का दुःख होनेवाला हो, तो उसके बदले मुझे रोम-रोम में कोटि-कोटि बिच्छू-दंश की वेदना हो, किन्तु भक्त सुखी रहे और मेरे भक्त के प्रारब्ध में यदि भीख माँगना लिखा हो, तो वह मुझे मिले, परन्तु भक्त को अन्न-वस्त्र का अभाव न हो।' उनकी यह प्रार्थना, विश्व के इतिहास में दया-करुणा का एक अनूठा अध्याय बन गया।

भगवान स्वामिनारायण किसी भी प्राणी को पीड़ित देखकर अथवा सुनकर आर्द्र हो जाते और 'राम... राम...' शब्द कहने लगते थे। दयावश दुःख मिटाने के लिए वे अन्न-वस्त्रादि का प्रबन्ध कर देते या उसकी सेवा-संभाल करते। किसी निर्दोष को प्रताडित होते देख लेते तो उसे सहन नहीं कर पाते और मार खानेवाले को बचाने के लिए दौड़ पड़ते थे।

श्रीहरि का यही सद्गुण, स्वामीश्री का भी परिचायक बन गया है। वे जीव-प्राणीमात्र को हृदयपूर्वक गले लगाते हैं। क्योंकि पराई पीड़ा को देखना उनकी प्रकृति के विरुद्ध है।

जीव-प्राणीमात्र के प्रति सच्चे प्रेम के कारण ही उनके हृदय से दया की गंगा एवं वात्सल्य की धाराएँ प्रवाहित होती हैं। वस्तुतः वे भक्त नरसिंह मेहता की इस प्रसिद्ध पंक्ति को ही जी रहे हैं, 'वैष्णवजन तो तेने रे कहिए, जे पीड़ पराई जाने रे...'

इस विषय पर आइए कुछ घटनाओं का स्मरण करें।

अकाल की स्थिति हो या गाँव के गाँव बाढ़ में बह गए हों, भूचाल के कारण नगर और

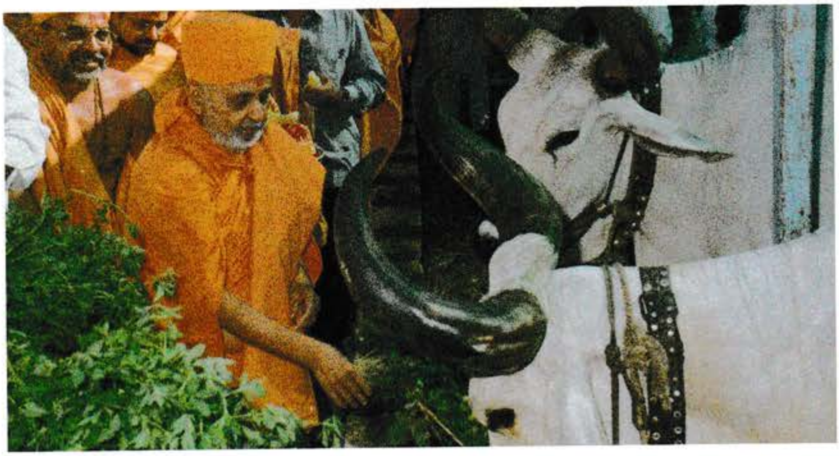

अकाल के दिनों में पशुओं की सेवा में, पशु-शिविर, रायसण, जिला गांधीनगर, सन् 2001

गाँव ध्वस्त हुए हों अथवा समुद्र-तट पर सुनामी का कहर बरपा हो, व्यसनमुक्ति का अभियान हो अथवा मांसाहार निषेध का आंदोलन, पारिवारिक कलह हो या सामाजिक दावानल से पीड़ित शहर, स्वामीश्री को व्यक्ति अथवा समाज को वेदना से मुक्त करने के लिए त्वरित निर्णय लेते देखा गया है।

उन्होंने पीड़ितों की सेवा में संस्था के हज़ारों स्वयंसेवकों को प्रेरित करके, सेवा की चौखट पर उन्हें अपना सर्वस्व कुरबान कर देने की प्रेरणा दी है। उनकी करुणा ने आधी रात को उठकर वर्षा के लिए अथवा सामाजिक दावानल को बुझाने के लिए उन्हें प्रार्थना करने को विवश किया है। सन् 1990 में सौराष्ट्र अकाल से त्रस्त था। स्वामीश्री उन दिनों मध्यरात्रि को दो-दो बजे तक भगवान के चरणों में वर्षा के लिए प्रार्थना करते रहते थे।

उस वर्ष आषाढ़ तथा सावन के बाद भी बादल रुठे हुए थे। सरकार कृत्रिम वर्षा का भी प्रयोग कर चुकी थी। अभाव-निवारण समितियों की रचना हो चुकी थी। स्वामीश्री उस समय लंदन में विराजमान थे। उन्होंने अब तक वर्षा की आशा नहीं छोड़ी थी। वे आधी रात को बिस्तर में बैठे हुए ही अकाल-निवारण के लिए प्रार्थना करते रहते थे। एक रात दो बजे सेवक की नींद उचट गई। देखा तो स्वामीश्री अपने बिस्तर पर बैठकर नेत्र बन्द किए 'स्वामिनारायण' मंत्र की रट लगाए हुए प्रार्थना कर रहे थे। सेवक संत कुछ देर तक स्वामीश्री का दर्शन करते रहे; लेकिन बहुत समय हो गया, तो उन्होंने इस तरह प्रार्थना करने का कारण पूछा। स्वामीश्री ने कहा कि अकाल-पीड़ित लोगों का दु:ख दूर करने की प्रार्थना कर रहा था। उत्तर सुनकर सेवक संत भी प्रार्थना में शामिल हो गए।

स्वामीश्री ने लंदन से पत्र द्वारा आशीर्वाद दिया, 'आषाढ़ और आधे सावन के बीत जाने पर भी वर्षा न होने से हर किसी का चिंतित होना स्वाभाविक है। किन्तु भगवान की इच्छा के अनुसार ही हमें रहना है। रात्रि में उठकर एक-एक घंटे तक (स्वामी गुणातीतानंदजी के समाधिस्थल) अक्षरदेहरी में ('स्वामिनारायण महामंत्र') धुन करता हूँ। वे हम सब पर अवश्य दया करेंगे...' अन्ततः स्वामीश्री की प्रार्थना ने मेघ के बांध तोड़ दिए।

सन् 1979 में मोरबी (गुजरात) के मच्छु डेम के टूटने से पूरा शहर भयानक जलप्रलय का शिकार हुआ। तब स्वामीश्री के एक ही आह्वान पर 1500 स्वयंसेवक तथा 100 से अधिक संत नगर-सफाई की सेवा में जुड़ गए। सड़े-गले मृतदेहों और कीचड़ भरी

गलियों में घूमते हुए स्वामीश्री पीड़ितों की पीड़ा से कितने व्यथित थे; वह दृश्य आज भी मोरबी निवासी भूल नहीं पाए!

सन् 1987 के भीषण अकाल में राजकोट के समीप रतनपुर गाँव में एक सरकारी पशु-शिविर में पाँच हज़ार बछड़े रखे गए थे। स्वामीश्री स्थिति का जायजा लेने जब वहाँ पहुँचे, तो उन्हें देखते ही भूख से तड़पते हज़ारों बछड़े घास-चारे की आशा से उनकी ओर दौड़ पड़े। वह दुर्दशा स्वामीश्री से देखी नहीं गई। स्थानीय कर्मचारियों ने बताया कि तीन दिन से इन्हें कोई चारा नहीं मिला! यही कारण है कि ये सब चारे की आशा से आनेवाले को घेर लेते हैं। स्वामीश्री एक शब्द भी बोल नहीं पाए। उनकी आँखें भर आईं। उन्होंने कोठारी ज्ञानप्रसाद स्वामी को आदेश दिया, 'रतनपुर के पशु-शिविर में बछड़ों ने जिस प्रकार से हमें घेर लिया, वह देखा नहीं गया। आप कुछ भी करें, आज दोपहर तक घास-चारे की ट्रकें वहाँ भेजने का प्रबन्ध करें।'

अकालग्रस्त पशुओं तथा लोगों के दु:ख जानकर स्वामीश्री कईबार स्तब्ध हो गहरे चिंतन में डूब जाते और स्थिति से निबटने का उपाय खोजने लगते थे। एकबार वे बातों ही बातों में बोल उठे कि 'मुझे कुछ भी चैन नहीं लगता। फिलहाल तो एक यही इच्छा रहा करती है कि शीघ्र वर्षा हो! उठते-बैठते, खाते-पीते, यही एक इच्छा व्यथित कर रही है। पूरा दिन संताप से मन संतप्त रहता है।' उनके ऐसे करुणापूर्ण मंथन में थोड़ा बहुत चारा ट्रकों से पहुँचाने तक ही संवेदना सीमित नहीं थी, परन्तु उनके मन में ऐसा आयोजन आकार ले रहा था कि पशुओं का पालन इस प्रकार से प्रकार होना चाहिए कि अकाल बीतने पर भी किसानों को कोई संकट न रहे। इसी विचार-मंथन से उत्पन्न हुआ लोकसेवा का उनका अविस्मरणीय अभियान, जो पूरे गुजरात में एक मिसाल बनकर रह गया।

तड़प-तड़पकर मरते अपने जानवरों को देखकर बेचने के लिए तैयार हुए अनेक किसानों की कलपती आत्मा को स्वामीश्री ने महसूस किया।

स्वामीश्री ने उन सभी को कहा, 'नहीं, नहीं, पशुओं को बेचने का विचार ही भूल जाइए। संस्था द्वारा पर्याप्त आयोजन हुआ है। सभी को समझाइएगा कि पशु बेचने पर आप अगले वर्ष साधनहीन बन जाएँगे। हम आपके पशुओं की देखभाल करेंगे और अच्छा समय आने पर पुन: लौटा देंगे... आप किसानों के लिए तो पशु प्राण के समान हैं।'

स्वामीश्री की करुणा के परिणाम स्वरूप बी.ए.पी.एस. संस्था द्वारा वैज्ञानिक पद्धति से स्थापित पशु-शिविरों तथा अनेक राहत कार्यों द्वारा सहायता तीव्र हो उठी। विशाल पैमाने पर चारे का वितरण प्रारम्भ हुआ। स्वामीश्री की छत्र-छाया में सहस्त्रों पशुओं ने नया जीवन पाया। एक वर्ष बाद जब उत्कृष्ट देखरेख में जतन किए गए हृष्ट-पुष्ट पशुओं को स्वामीश्री ने उनके मालिकों को सौंपा, तो उनकी सेवा, टहल और हिफ़ाजत देखकर उनकी आँखों से कृतज्ञता के आँसू उमड़ पड़े।

वाढ़ेळा गाँव के प्रवीणसिंह अपने पशुओं को हृष्ट-पुष्ट देख उपकार के ऋण से फूट-फूटकर रो पड़े। माधुपुर गीर गाँव के कासमभाई ने गद्गद होकर कहा था, 'इस कैटल कैम्प में आने पर मुझे प्रतीत होता है कि प्रमुखस्वामीजी ही मेरे खुदा हैं।'

उस भयंकर अकाल में संस्था के संतों का पुरुषार्थ अनन्य था। संतों की सेवा से जैसे स्वयं उपकृत हुए हों, ऐसी संवेदना स्वामीश्री एक पत्र में व्यक्त कर रहे थे। उन्होंने भावपूर्ण

घायल सैनिक को आश्वस्त करते हुए, सन् 2002, अहमदाबाद

पत्र में लिखा था, '...आप सभी ने अकाल में अपूर्व पुरुषार्थ किया है, सभी संतों ने जी-तोड़ सेवा की है, उसका बदला मैं सौ जन्म तक भी नहीं चुका पाऊँगा।'

सन् 1993 में महाराष्ट्र के भूकंप में दो गाँवों का संपूर्ण निर्माण कर उन्हें संस्था द्वारा लोकार्पण किया। समुद्राल एवं कोंडजीगढ़ के लोग स्वामीश्री की सेवा का गुणगान करते थकते नहीं थे। सन् 1999 में उड़ीसा में आए चक्रवात ने समग्र जनजीवन को तबाह कर दिया था। दत्तक लिए गए दो गाँवों का पुन:निर्माण एवं अन्य राहत कार्यों के लिए स्वामीश्री के बढ़े हुए हाथ को उड़ीसावासियों ने भगवान जगन्नाथ के हाथ का अनुभव किया था!

सन् 2006, सूरत के जलप्रलय से लेकर अफ्रीका में नैरोबी, दार-ए-स्सलाम तथा केलिफोर्निया (यू.एस.ए.) आदि प्रांतों की प्राकृतिक आपदाओं तक स्वामीश्री की करुणा का विस्तार हुआ है। प्रत्येक का पूर्ण वर्णन एक अलग ग्रंथ की क्षमता रखता है। अपनी अस्वस्थता के बावजूद तामिलनाडु, उड़ीसा और महाराष्ट्र के अंतरंग गाँवों में स्वयं जाकर उन्होंने पीड़ितों को स्नेह के साथ आश्वस्त किया था।

सन् 2001 की 26 जनवरी की सुबह गुजरातियों के लिए सदैव दु:खद रूप से अविस्मरणीय रहेगी। उस सुबह 7.3 रिक्टर स्केल पर आए विनाशकारी भूकंप ने गुजरात की धरती को तहस-नहस कर दिया था। आघात से स्तब्ध समाज वास्तविकता को अभी समझ पाता कि उसी दिन दोपहर को भुज शहर में पीड़ितों के लिए भोजन का प्रथम निवाला स्वामीश्री ने ही भेजा था। स्वामीश्री भूकंप-पीड़ितों की खोज-खबर लेने में व्यस्त थे। प्रात:स्नान से पूर्व वे भूकंपग्रस्तों की मदद के लिए दूरभाष से संपर्क करने में व्यस्त हो गए। भूकंप के पश्चात् लगातार एक वर्ष तक देर रात 12.00 बजे तक सूचना देते हुए वे पीड़ितों की व्यवस्था करते रहे।

बी.ए.पी.एस. द्वारा महीनों तक प्रतिदिन 80,000 लोगों को गर्म एवं पौष्टिक भोजन परोसने का प्रबंध किया गया। स्वामीश्री ने बोचासण स्थित वेदज्ञ स्वामी से पूछा था कि, 'भूकंपराहत के लिए जो अनाज पीसा जा रहा है, उसे अच्छी तरह से साफ़ तो किया है न? सावधानी बरतना, कहीं कोई कंकर-कचरा न रहने पाए।'

अटलादरा में पीड़ितों के लिए भोजन के पैकेट्स तैयार हो रहे थे, स्वामीश्री ने कहा था,

'पैकेट्स में मीठी बूँदी और नमकीन के साथ-साथ अचार की दो-दो हरी मिर्च भी रखिएगा। कच्छ में लोगों को हरी मिर्च का अचार प्रिय होता है और स्वाद में भी अच्छा रहेगा।' क्षुधा-पीड़ित लोगों को यह भी जानकारी नहीं होगी कि एक नि:स्वादी एवं विरक्त महापुरुष उनके लिए कितनी बारीकी से प्रबंध कर रहे हैं!

लगभग 500 भूकंपग्रस्त गाँवों में चिकित्सालय एवं पाठशाला से लेकर संस्था द्वारा निश्चित किए गए पच्चीस गाँवों के पुन:निर्माण तक के कार्यों की सेवा में स्वामीश्री ने कोई भी कमी नहीं छोड़ी। स्वामीश्री स्वयं भूकंप-प्रभावित क्षेत्रों में पधारे और पैदल चलते हुए ध्वस्त गाँवों की गली-गली में घूमे। भग्न-हृदयी लोगों को उन्होंने अपने प्रेमामृत से सचेतन किया। उनकी करुणा के प्रतीक बी.ए.पी.एस. संस्था द्वारा गोद लिए हुए पुनर्निर्मित गाँव, गुजरात के आदर्श गाँवों की सूची में अग्रगण्य हैं।

लोकसेवा के इस यज्ञ में न तो उन्हें प्रसिद्धि की कामना है, न ही किसी प्रशंसा की। वे केवल भगवान को प्रसन्न करने की अभिलाषा से सेवा अभियानों से जुड़े हुए हैं।

18 अगस्त 2006 को सूरत की बाढ़ दुर्घटना के समय संस्था के कार्यकर्ताओं को, स्वामीश्री ने बेंगलूर से फोन द्वारा कहा था, 'आप कठिनाइयों के बीच सेवा कर रहे हैं, तो भगवान प्रसन्न होंगे। हम महत्त्व बढ़ाने के लिए सेवा नहीं करते हैं, यह मानव सेवा है। भगवान स्वामिनारायण ने कहा है कि दु:खी मनुष्य की सेवा अवश्य करें। अत: आप सब ठीक रूप से राहत सामग्री का वितरण करना। राशन देने में भेदभाव नहीं रखना। समानभाव बनाये रखना और सभी को प्रसन्न करना।'

सन् 1985 के भयानक सांप्रदायिक दंगे की ज्वाला में जब समग्र गुजरात जल रहा था, तब अनेक अग्रणी धर्मगुरुओं तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं से संपर्क स्थापित करके स्वामीश्री रात-दिन शान्ति और भाईचारे की स्थापना में व्यस्त थे। विचार-विमर्श में व्यस्त स्वामीश्री समय पर भोजन भी नहीं ले पाते थे। दोपहर का भोजन सायं 4 बजे लेना होता था। एकबार तो बैठक के बाद स्वामीश्री ने तीन-चार मिनट में भोजन समेट लिया और तुरन्त बैठक के लिए तैयार हो गए। सेवक संत ने पूछा, 'विश्राम नहीं करेंगे?' स्वामीश्री ने कहा था, 'लोग बेचारे कितने दु:खी होते हैं? ऐसी स्थिति में आराम कैसा?'

30 अप्रैल, 2008, को लंदन में स्वामीश्री हरिभक्तों से मिले थे। 10 बजे उन्होंने लम्बा पत्र पढ़ना शुरू किया। पत्र समाप्त होते ही नि:श्वास छोड़ते हुए स्वामीश्री बोले, 'सुख का एक भी पत्र नहीं आता। सारे पत्र दु:ख, दु:ख और दु:ख के ही आते हैं। पढ़ते ही कष्ट होता है!' दूसरों का दु:ख स्वामीश्री की आँखों में करुणा के आँसू बनकर तैरता है।

7 मई, 1977 को पेटलाद में मूर्ति प्रतिष्ठा का उत्सव था। भव्य शोभायात्रा का आयोजन हुआ था। सफेद घोड़ों की सुंदर बग्घी तैयार थी। नगरयात्रा का प्रारंभ हुआ, स्वामीश्री की बग्घी के घोड़े एक कदम भी आगे नहीं बढ़ रहे थे! बग्घीवाला घोड़े की पीठ पर चाबुक बरसाने लगा। स्वामीश्री से वह नहीं देखा गया; अत: उसको रोकते हुए उन्होंने कहा, 'भाई! घोड़े न चलें तो कोई बात नहीं, हम पैदल चलकर जा सकते हैं, उन्हें मारो मत।' फिर संतों से कहने लगे, 'चलिए, हम पैदल ही चलते हैं। इसमें क्या है?'

अग्रणी हरिभक्त मोहनभाई स्वामीश्री से बिनती करने लगे, 'स्वामीजी! आपकी

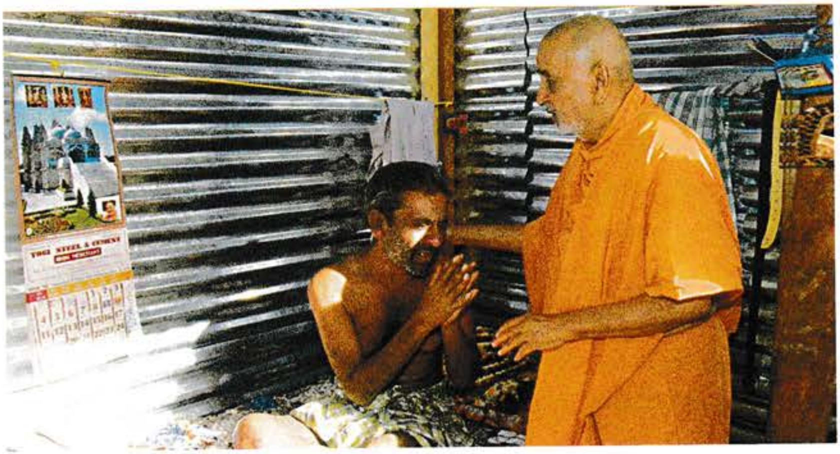

भूकंपपीड़ितों की सेवा में, भुज (गुजरात), सन् 2001

शोभायात्रा में आप ही पैदल चलें, यह अच्छा नहीं लगता।'

'तो क्या यह अच्छा लगता है?' उन्होंने कहा और वे बग्घी से उतर गए।

प्राणीमात्र के प्रति ऐसी संवेदना का अनुभव करते स्वामीश्री मांसाहार को कैसे सहन करेंगे? वे बार-बार कहते हैं कि 'प्रत्येक प्राणी को जीने का अधिकार है। किसी को मारकर जीना, मानवता नहीं है।' उन्होंने लाखों लोगों को मांसाहार से मुक्त किया है। असंख्य लोगों के हृदय में गूँगे प्राणियों के प्रति दया एवं सद्भावना का सिंचन किया है।

निर्दोष पशु-पक्षियों का शिकार कर मांसाहार के शौकीन एक क्षत्रिय युवक को स्वामीश्री ने कहा था, 'हमें जीवन जीने का अधिकार है, तो क्या उन्हें नहीं है? ऐसा पाप हमें कभी नहीं करना चाहिए। निर्दोष प्राणी तो बेचारे घास खाकर निर्वाह करते हैं। जैसे मार खाने पर हमें दु:ख होता है, उसी प्रकार उनको भी होता है। उनके भी माँ-बाप हैं। आज से प्रण लो कि मांसाहार कभी नहीं करूँगा; भगवान तुम्हें बल देंगे।'

उस नवयुवक ने अहिंसा-पालन का व्रत लिया और कंठी धारण की। लेकिन उसने अपनी निर्बलता को व्यक्त करते हुए कहा, 'बगैर शिकार किए तो मुझसे रहा नहीं जाएगा।'

स्वामीश्री उसे शान्तिपूर्वक समझाने लगे, 'यह कैसी निर्बलता है? तुम मांसाहार के बिना न रह सको, यह तो असंभव है। तुम ऐसे विचारों को अभी छोड़ दो। सत्संग किया करो, तभी आंतरिक शक्ति बढ़ेगी। शिकार करने में उन्हें या तुम्हें किसी को भी फ़ायदा नहीं है। बेचारे तड़प-तड़पकर मर जाएँ, उसमें तुम्हें क्या अच्छा लगता है? क्या उनमें जीव नहीं है? भगवान ने उन्हें पशु का शरीर दिया है और तुम्हें मनुष्य का, तुम तो क्षत्रिय हो। क्षत्रिय का धर्म है, रक्षा करना। हिंसा तो असुरों का कार्य है। जितनी हिंसा करोगे, उतनी ही अशान्ति बढ़ेगी।' अंतत: स्वामीश्री उस युवक की निर्बलता एवं पापवृत्ति को मिटाकर ही रहे।

व्यसनी को देखते ही स्वामीश्री का हृदय करुणा से द्रवित हो जाता है। व्यक्तिगत रूप से उन्होंने ऐसे लाखों नशेबाजों को समझा-बुझाकर नशामुक्त किया है।

यदि उन्हें कोई दुर्व्यसनी मिल गया, तो अति व्यस्तता के बीच भी वे किसी प्रकार समय निकालकर उसे निर्व्यसनी बनाने के लिए कटिबद्ध हो जाते हैं तथा वर्षों तक उन्हें याद रखकर, उनको प्रोत्साहित एवं प्रेरित करना उनकी सहज प्रकृति है।

अचारडा के भरतसिंह झाला को व्यसनमुक्त करने के बाद स्वामीश्री ने पत्रों द्वारा और

प्रमुखस्वामी महाराज हमारे देश के अद्वितीय आध्यात्मिक मुकुटमणि हैं।
सामान्यतः आध्यात्मिक जीवन अंतर्मुखी एवं
भगवत् साक्षात्कार से जुड़ा हुआ होता है।
ऐसा होने पर भी उन्हें जनसेवा में अवरोध नहीं खड़ा होता।
प्रमुखस्वामीजी महाराज इस सिद्धांत की अनन्य मिसाल है।
ऐसे अलौकिक महापुरुष सहज रूप से सर्वत्र प्राप्त नहीं होते।
जब ऐसे संत का प्राकट्य होता है, तब समग्र मानवजाति का उत्कर्ष होता है।

- पूज्य वरद यतिराज जियर स्वामी

(रामानुज सम्प्रदाय के धर्मगुरु, श्रीपेरुम्बुदुर, दक्षिण भारत)

व्यक्तिगत रूप से उन्हें व्यसन से दूर रहने की लगातार प्रेरणा दी थी। कभी-कभी तो मूढ़ नशेबाजों को आक्रोश दिखाकर भी स्वामीश्री करुणा के मेघ बरसाते हैं।

अहमदाबाद में स्वामीश्री पुराने सभाखंड की ओर जा रहे थे। एक युवक अचानक स्वामीश्री के चरणों में आ गिरा। एक संत ने परिचय दिया तो स्वामीश्री ने कहा, 'जानता हूँ इसे!' फिर उसकी ओर रुख करके पूछा, 'कहो अतुल, कैसा चल रहा है ? अभी चालू है?'

'क्या?' युवक ने पूछा।

'वही, ब्राउन सुगर।' वह युवक चुप रहा। स्वामीश्री कहने लगे, 'मैंने तुझे बार-बार कहा है कि नशा छोड़ दे। तूने इसे खाकर क्या कमाई की? यह खाकर नरक में जाना तुझे अच्छा लगता है? तेरे मित्र-परिवार तुझे नशा छोड़ने के लिए कहते हैं, तो वे क्या तेरे दुश्मन हैं? व्यसन छोड़कर कोई नहीं मरा। लेकिन व्यसन करके तड़प-तड़पकर मरना निश्चित है। इसलिए कहता हूँ कि प्रतिज्ञा ले।' फिर पूछा, 'कितना खर्च करते हो?'

'प्रतिदिन 200 रु.।'

'रुपये कहाँ से लाता है?'

'सरकारी नौकरी है, व्यवस्था कर लेता हूँ।' उसने उत्तर दिया।

स्वामीश्री ने कहा, 'नशे के लिए यह दूसरी चोरी अलग से करता है? एक पाप, दूसरे पाप को जनम देता है। नशे के लिए लोगों से पैसे ऐंठना दूसरा पाप नहीं, तो और क्या! यहाँ भी दुःख और मरने के बाद भी दुःख?' इतना बोलते ही स्वामीश्री करुणा से विह्वल हो गए। एक विधवा माँ के बेटे को सुधारने के लिए स्वामीश्री ने लगातार आठ-आठ वर्ष तक पुरुषार्थ किया। उसे नशे में फँसकर दिवालिया होते स्वामीश्री कैसे देख सकते थे? आखिर वही अंजाम हुआ, जो स्वामीश्री ने कहा था।

परदुःख में दया के शीतल लेप से स्वामीश्री ने कई संतप्त जीवों के दग्ध हृदय शान्त किये हैं। लाखों परिवारों की विकट समस्याओं का निराकरण, स्वामीश्री ने अपनी करुणा-वर्षा से किया है। कितनों के आँसू उन्होंने स्वयं पोंछे हैं! रोग-शय्या पर पड़ा कोई रोगी हो, अथवा मृत्यु-शय्या पर पड़ा कोई व्यक्ति, स्वामीश्री ने अपनी प्रेमल आत्मीयता से सभी को आश्वस्त किया है। प्रतिदिन सैकड़ों व्यक्तियों से प्रत्यक्ष मिलकर, स्वामीश्री ने धैर्यपूर्वक उनकी समस्याओं का निराकरण किया। साथ-साथ उतनी ही संख्या में उनकी समस्याओं

का निराकरण करके अब तक करोड़ों संतप्त लोगों को शीतलता प्रदान की है।

'दु:खियों के लिए मैं किस प्रकार सहायता करूँ?' यह भाव स्वामीश्री के रोम-रोम में समाया है। संस्था के संनिष्ठ युवा सेवक हर्षद चावड़ा एक गंभीर दुर्घटना के शिकार हो गए थे। स्वामीश्री ने अपने हृदय की संवेदना व्यक्त करते हुए बीस पन्नों का एक पत्र लिखकर उनको प्रेषित किया, 'आपका समाचार सुनकर मुझे बड़ा दु:ख हुआ है। आप शीघ्र स्वस्थ हों, इसके लिए मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ। पूजा में भी यही प्रार्थना करता हूँ। आपके दु:ख से मैं भी दु:खी हूँ। आपके इस दु:ख में मुझे आपकी सेवा करनी चाहिए; क्योंकि आपने नि:स्वार्थ भाव से भूख-प्यास की चिंता किए बिना, उत्साहपूर्वक, अविरत, रात-दिन महिमापूर्वक सेवा की है। आपके लिए हम जितना भी करें, कम है। ऐसे अवसर पर मुझसे स्वयं सेवा नहीं हो सकती है, उस बात का सहज ही दु:ख भीतर को कुरेदता रहता है...।'

शास्त्रीजी महाराज के समकालीन हरिभक्त प्रभाशंकर पंड्या, स्वामीश्री का एक स्मरण करते ही गद्‌गद हो जाते थे, 'अटलादरा में वसंतपंचमी का उत्सव था। कड़ाके की ठंड के दिन थे। मैं वहाँ देर रात को पहुँचा। सारे संत-हरिभक्त सोए हुए थे। मुझे कहीं पर जगह नहीं मिली, न तो कोई रजाई ही मिली। सभाखंड की सीढ़ी के पास ही, मैं थैले का तकिया बनाकर सो गया। प्रात:काल लगभग साढ़े पाँच बजे प्रकट भगत मेरे पास आकर बोले, 'पंड्याजी, जागो!' मैं सहसा जाग उठा। देखा कि मेरे शरीर पर रजाई थी! मैंने पूछा, 'यह किसने ओढ़ाई होगी?' प्रकट भगत ने कहा, 'स्वामीश्री स्वयं रजाई ओढ़ा गए थे!'

सन् 1971 में नडियाद में एक भव्य नगरयात्रा के अवसर पर स्वामीश्री रथ में विराजमान थे। असह्य गर्मी में दोपहर का समय था। रास्ते प्रखर गर्मी के कारण जल रहे थे। स्वामीश्री ने रथ पर बैठे हुए देखा कि नारायणप्रसाद स्वामी के पैर में चप्पल नहीं थीं। अचानक उन्होंने आवाज़ दी। अपना नाम सुनते ही उन्होंने देखा, तो स्वामीश्री स्वयं पुकार रहे थे। स्वामीश्री ने रथ में से अपनी चप्पल नीचे डाल दीं और शोभायात्रा के शोर के बीच ऊँची आवाज़ में बोले, 'चप्पल पहन लो! गर्मी में खुले पैर चलने से आँखों का तेज कम हो जाएगा।'

उन्होंने चप्पलें पहन लीं। कुछ देर के बाद उनको लगा कि यह तो स्वामीश्री की ही हो सकती हैं। वे तुरन्त चप्पल हाथ में लेकर चलने लगे। स्वामीश्री ने यह देखा, तो पुन: स्नेहपूर्वक कहा, 'अरे! चप्पल पहन लीजिए! हाथ में पकड़ने के लिए नहीं दी हैं?'

कड़कती ठंड में स्वयं खुले आकाश के नीचे सोकर अथवा स्वयं भूखे रहकर, किसी से कुछ माँगे बिना दूसरों को सुविधाएँ उपलब्ध करा देना, स्वामीश्री की विशिष्टता है।

सन् 2000 में संस्था द्वारा आयोजित एक उत्सव में वलसाड के मछुआरा परिवार का एक छोटा बालक दुर्घटना में घायल हुआ, तो उसे सूरत के अस्पताल में भर्ती करवा दिया गया। स्वामीश्री ने जब समाचार सुना, तो अत्यंत दु:खी हो गए। जब वे सूरत में बिराजमान थे, तब एक सुबह अचानक उन्होंने अस्पताल जाने का निर्णय लिया। आगे ही पता चला कि सड़क के दोनों ओर खुदाई की गई है; अस्पताल तक कार पहुँचना असम्भव है। किन्तु स्वामीश्री ने अपना निर्णय नहीं बदला। वृद्धावस्था, रोगग्रस्त शरीर तथा पाँवों में वातपीड़ा के बावजूद वे सेवकों के सहारे गड्ढों को लाँघते हुए किसी तरह अस्पताल तक पहुँचे।

आई.सी.यू. में बालक के सिर पर कोमल हाथ फेरते हुए स्वामीश्री ने बार-बार

आशीर्वाद दिया, 'जय स्वामिनारायण प्रशान्त!' वे कह रहे थे, परन्तु उसे कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। स्वामीश्री बच्चे के प्रतिभाव की प्रतीक्षा कर रहे थे। फिर प्रासादिक पुष्पहार उस बालक के गले में पहनाया। उसके पिता शान्तिलाल की ओर देखते हुए एक स्वजन से भी अधिक ममत्वभरा शुभ आशीर्वाद दिया कि 'आपका बच्चा जरूर ठीक हो जाएगा। हमने भगवान से प्रार्थना की है। जो भी तकलीफ हो, दवाई आदि के लिए कुछ भी चाहिए, बिना हिचक आप मंदिर के कोठारी से माँग लेना। मैंने उनको बता दिया है।'

बच्चे के पिता स्वामीश्री के स्नेह-सागर में डूबकर कृतार्थ हो रहे थे। काँपते हुए स्वामीश्री सेवकों के सहारे पैदल चलकर मोटरकार तक आए। 80 वर्ष की वृद्धावस्था में भी एक अबोध बालक के दु:ख में सहभागी बनने का संतोष उनके मुखारविन्द पर उमड़ आया था।

जाति-पाँति, देश-विदेश तथा स्वधर्मी-विधर्मी आदि प्रकार की सरहदें स्वामीश्री की करुणाधारा को कभी अवरुद्ध न कर सकीं।

अटलादरा में एकबार जनमंगल स्वामी ने स्वामीश्री से पूछा था, 'आप ठाकुरजी के दर्शन करते हुए कौन सी प्रार्थना करते हैं?'

'और क्या प्रार्थना हो सकती है? हरकोई सुखी हो, किसी को कोई भी दु:ख न सताए, सभी भजन-भक्ति करें और हर किसी की परिस्थिति शुभ और मंगल बने।'

देहातीत वही हैं, जिनकी रगों में परमार्थ का लहू बहता रहे। जो देहातीत हैं, देह से पर हैं, वही दूसरों की सर्वोत्तम भलाई कर सकते हैं और सोच-समझकर इस कथन को चरितार्थ भी कर सकते हैं कि 'दूसरों के सुख में हमारा सुख, दूसरों के उत्कर्ष में हमारा उत्कर्ष और दूसरों की भलाई में हमारी भलाई है।'

ब्रह्मरूप स्थिति के उच्च आध्यात्मिक शिखर पर बिराजमान स्वामीश्री, 90 वर्ष की उम्र होने के बावजूद दूसरों के कल्याण हेतु रात-दिन पुरुषार्थ कैसे करते होंगे?

जो स्वयं पूर्णकाम हैं, किन्तु सामाजिक सेवा के जरिए लोक सम्पर्क बनाए रखते हैं, यह उनकी कितनी महान दया है!

श्रीहरि कहते हैं, 'ऐसे अति बड़े संत यदि बाह्यदृष्टि से देह का व्यवहार रखते हैं, वह अनेक जीवों के कल्याण के लिए है।'

ऐसे ब्रह्मस्वरूप संत भले ही मायिक उपाधि से परे होते हैं, परन्तु उनको दया तथा प्रीति का भाव किसी भी प्रकार मिटता नहीं है।' (वच. ग.अं. 3) केवल दु:ख देखकर द्रवित हो जाना ही दया नहीं कहलाती। दया तो विराट कारुण्य का स्थायी भाव है। भारतीय ऋषि इसे 'अकारण दया' अथवा 'अहैतुकी कृपा' कहते थे। योगीजी महाराज कहते थे, 'जीवों को जन्म-मरण के दु:ख से विमुक्त करना ही आत्यंतिक दया है।'

श्रीमद् आदि शंकराचार्यजी ने कहा है :

'शान्तो महन्तो निवसन्ति सन्तो वसन्तवल्लोकहितं चरन्त: ।

तीर्णा: स्वयं भीमभवार्णवं च अहेतुनान्यानपि तारयन्त: ॥' (विवेकचूडामणि : 37)

वसंतऋतु की भाँति बिना कोई स्वार्थ के, केवल परोपकार की भावना से लोकहित करनेवाले, शान्तचित्त, उदारहृदय एवं लोगों को भवसागर पार करनेवाले संत का इस धरती पर निवास हैं, इससे बड़ा सद्भाग्य इस जगत का और क्या हो सकता है? ◆

क्षान्तिः

क्षान्ति अर्थात् क्षमा।
यह, समर्थ एवं उदारहृदय परमात्मा का असाधारण गुण है,
संत की एक दिव्य संपत्ति है। अहित की इच्छा रखना, अनिष्ट करना, अपमान
करना, आघात पहुँचाना, अपशब्द तथा कठोर वचन कहना,
निंदा करना, झपट पड़ना, धन-संपत्ति छीन लेना, ज़हर देना, कत्ल करना, प्रत्यक्ष
अथवा परोक्षरूप से किसी को भी हानि पहुँचाना -
ऐसे दुष्कर्म करनेवाले व्यक्ति के प्रति प्रतिशोध की
भावना न रखने का नाम ही क्षमा है।

अपने साथ अपराध करनेवालों के अपराधों को अपराध न मानकर, उसे सदा के लिए भूल जाना, क्षमा का एक उच्च स्तर है। इससे भी आगे अपराधी के अपराधों को सदा के लिए भूलकर, उसकी भलाई के लिए सोचना, उनका भला करना, यह तो क्षमा का सर्वोच्च स्तर है। प्रमुखस्वामी महाराज क्षमा के उसी सर्वोच्च शिखर पर विराजमान हैं।

बचपन से ही उनकी शान्त और गंभीर प्रकृति के साथ क्षमाशीलता अभिन्न रूप में जुड़ी हुई है। चाहे कैसी भी उपेक्षा, घृणा अथवा अपमान हो, मौन रहकर उसे सहन कर लेना, बाल्यकाल से ही उनकी प्रकृति रही है।

त्यागाश्रम स्वीकार करने के पश्चात् स्वामीश्री के व्यक्तित्व में क्षमाशीलता एवं सहिष्णुता चरमसीमा पर दिखने लगी।

सन् 1950 में 28 वर्ष की युवा अवस्था में गुरु शास्त्रीजी महाराज ने उन्हें संस्था के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया, तब कुछ लोगों के हृदय में द्वेषाग्नि भड़क उठी। ऐसे ही एक द्वेषी ने 1954 में स्वामीश्री को विष देने का प्रयास किया था, किन्तु षड़यंत्र की जानकारी हो जाने के कारण स्वामीश्री की रक्षा हुई। संस्था के अध्यक्ष पद पर बिराजमान स्वामीश्री चाहते तो उस व्यक्ति को संस्था से निष्कासित कर सकते थे, किन्तु स्वामीश्री ने उसके षड़यंत्र के पर्दाफ़ाश होने के बाद भी उसको क्षमा करके जीवनपर्यन्त उसका साथ निभाया!

इस घटना की चरमसीमा तो तब देखी गई कि पूरे षड़यन्त्र के साक्षी, संस्था के एक वरिष्ठ ट्रस्टी तथा एक संत को स्वामीश्री ने उसी समय हाथ में जल देकर प्रतिज्ञा कराई कि 'आपको जिस बात की जानकारी है, उस बात को आप जीवनभर अपने हृदय में दफ़न करके ही रहेंगे। किसी को भी इस घटना की जानकारी कभी नहीं देंगे।' तत्पश्चात् स्वामीश्री ने कहीं और कभी भी इस घटना की चर्चा नहीं होने दी।

सन् 1983 में उस द्वेषी की जर्जर वृद्धावस्था में संस्था के ही एक मंदिर में मृत्यु हुई, तब

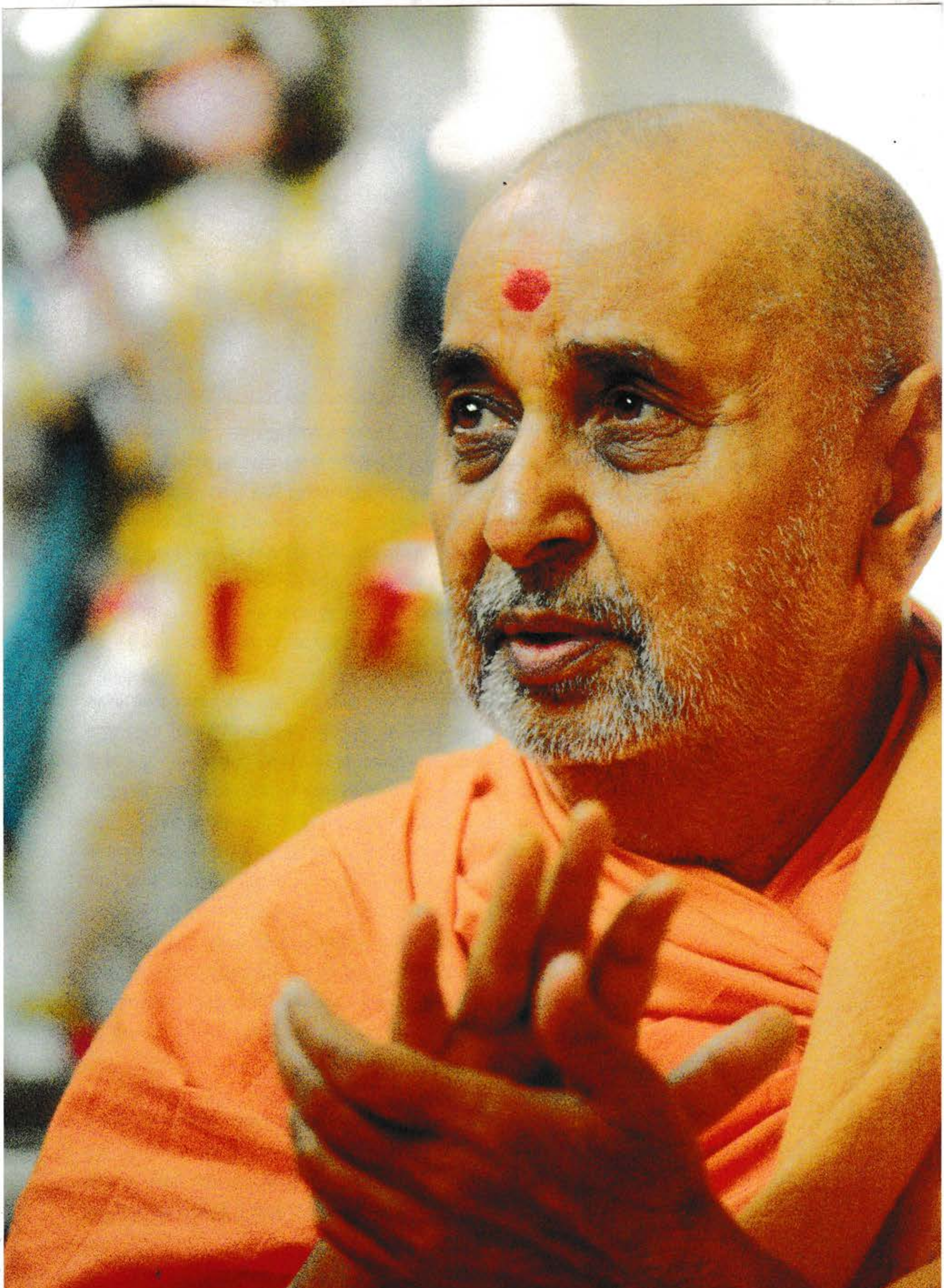

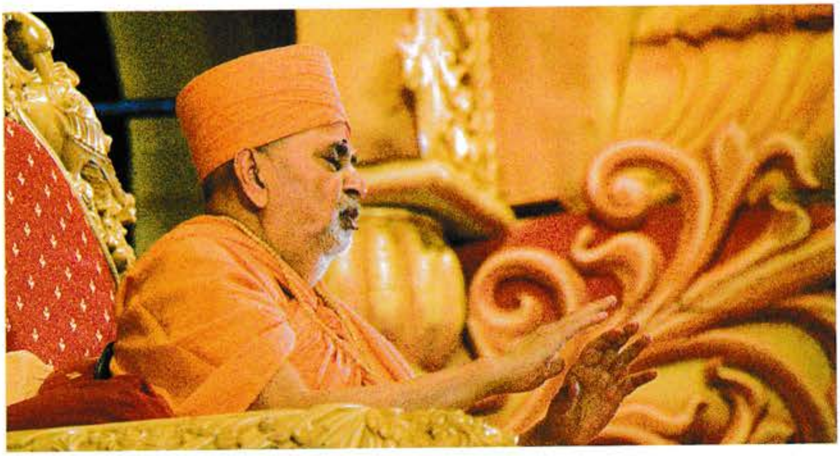

'क्षमा कर देने से भगवान प्रसन्न होते हैं...'

तक स्वामीश्री अपने संतों द्वारा उसकी पूरी देखभाल करवाते रहे। परन्तु सन् 1989 में उक्त घटना के साक्षी धर्मजीवन स्वामी ने, एक संत-शिविर में उस घटना का प्रथम बार उद्घाटन किया। जिसे सुनकर संतशिविर में आश्चर्यमिश्रित सन्नाटा फैल गया! स्वामीश्री यह भी सहन नहीं कर पाए। उनकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। उन्होंने धर्मजीवन स्वामी को रोकते हुए कहा, 'उन बातों को भूल जाओ, आज ऐसी बातें करने से क्या फ़ायदा? उन्होंने संस्था की सेवा की थी, उसी बात का स्मरण करते रहो।'

इससे बढ़कर क्षमा का श्रेष्ठ उदाहरण और क्या हो सकता है!

विष देनेवाले आततायी को भी क्षमा दे देना, उनका अनन्य आध्यात्मिक शौर्य है!

सन् 1971 में गुरुपद संभालने के बाद समाज पर ज्यों-ज्यों उनका दिव्य प्रभाव फैलने लगा, त्यों-त्यों उन्हें कुछ लोगों का द्वेष और ईर्ष्याभाव भी झेलना पड़ा। परन्तु विपरीत समय में भी उनकी साधुता-क्षमाशीलता का रंग और भी निखरने लगा। कुछ लोगों ने उनके प्रति आक्षेप तथा मिथ्या प्रचार भी किया। परन्तु स्वामीश्री सदैव शान्त रहे। हँसते हुए उन्होंने सब कुछ सहन किया; इसके अतिरिक्त उन लोगों की भलाई भी की!

अहमदाबाद में स्वामीश्री नित्य क्रिया से अभी निवृत्त भी नहीं हुए थे कि अन्य संस्था के दो साधु, स्वामीश्री से उसी समय मिलने का आग्रह करने आ पहुँचे। स्वामीश्री स्नान आदि छोड़कर उनके साथ बैठ गए। वास्तव में वे दोनों साधु अन्य कोई सहयोग न होने के कारण, अपने एक प्रोजेक्ट के लिए आर्थिक सहयता के लिए आए थे। ये वही लोग थे, जिन्होंने कभी स्वामीश्री एवं संस्था का विरोध करने में कोई भी कोर-कसर बाक़ी न रखी थी! सारी वास्तविकता को जानते हुए भी, स्वामीश्री ने संस्था द्वारा उन दोनों साधुओं की उदारतापूर्वक सहायता की और कभी भी उस घटना का जिक्र तक नहीं किया। वे दोनों स्वामीश्री की उदारता एवं क्षमाशीलता पर नतमस्तक हो गए।

सन् 1977 में कुछ द्वेषियों ने पुलिस को अपने पक्ष में मिलाकर स्वामीश्री को जेल में डालने का षड्यंत्र रचा। स्वामीश्री गढ़डा में लक्ष्मीवाडी के मंदिर में दर्शन कर रहे थे, उसी समय निर्धारित योजना के अनुसार पुलिस ने आकर उनकी गिरफ्तारी का आदेश सुनाया। स्वामीश्री शान्तचित्त धैर्यपूर्वक खड़े रहे, किन्तु साथ के हरिभक्तों ने लिखित वॉरन्ट दिखाने

की माँग की। पुलिस इन्सपेक्टर अचकचाने लगा। स्वामीश्री ने उसकी मानसिकता ताड़ ली और उन्हें बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण मंदिर में चलने का निर्देश दिया।

दूसरी ओर संस्था के अग्रणी लोगों ने वास्तविकता जानने के लिए जब उच्च अधिकारियों का संपर्क किया, तो पूरे षडयंत्र का पर्दाफाश हो गया। पुलिस इन्सपेक्टर घबरा गया। अब तो उसकी नौकरी का सवाल था। उसकी मनोदशा भाँपकर स्वामीश्री ने उसे निकट बुलाकर निश्चिंत रहने के लिए कहा। दोपहर के भोजन का समय हो गया था। इसलिए स्वामीश्री ने इन्स्पेक्टर से कहा, 'आप घबराइए नहीं, शान्तिपूर्वक हमारे साथ भोजन करके जाइए।' स्वामीश्री ने उसे अपने पास बैठाकर आग्रह पूर्वक भोजन करवाया। एक अतिथि की भाँति स्वामीश्री उसके भोजन में रुचि ले रहे थे।

वह इन्स्पेक्टर जीवनपर्यंत इस वात्सल्यमूर्ति संतवर्य का ऋणी बना रहा।

इस घटना के प्रत्यक्षदर्शी ईश्वरचरण स्वामी ऐसी ही एक अन्य घटना का वर्णन करते हैं : 'सन् 1966 में योगीजी महाराज और प्रमुखस्वामीजी अहमदाबाद में विराजमान थे। सायंकाल मंदिर के चौक में सत्संगसभा का आयोजन हुआ था। विद्यानगर (गुजरात) से कुछ द्वेषी लोग अचानक वहाँ आ पहुँचे। वे तत्काल स्वामीश्री से मिलना चाहते थे। योगीजी महाराज एवं स्वामीश्री, उन लोगों को लेकर मंदिर के पीछे पुराने सभामंडप में गए। किसी भ्रम के कारण वे लोग बहुत ही बौखलाये हुए थे। योगीजी महाराज की उपस्थिति में ही वे लोग बेशर्म होकर स्वामीश्री को उलटा-सीधा बोलने लगे। इसे देखकर किसी ने मुझे सूचित किया, तो हम सभी लोग उसी समय वहाँ इकट्ठे हो गए।

'मिथ्या अहंकार, एवं क्रोधावेश में वे अपना विवेक खो चुके थे। सारी मर्यादाओं को ताक पर रखकर वे स्वामीश्री का घोर अपमान कर रहे थे। बाहर खड़े युवकों से सहन न हो सका तो कई युवक दरवाजे को धक्का मारकर कमरे में जा घुसे। हाथापाई शुरू हो गई। स्वामीश्री, हम सभी को रोकने का प्रयास करने लगे। स्वामीश्री ने अंततः डपटकर कहा, 'आप सभी लोग बाहर निकल जाइए। आपको यहाँ कुछ भी नहीं करना है। ये लोग हमसे बात करने आए हैं, तो इन्हें बात पूरी करने दीजिए।' इतना कहते हुए स्वामीश्री पूरी ताक़त से भक्तों को कमरे से बाहर निकालने लगे। परन्तु किसी भी सत्संगी का मन शान्त नही था। मीटिंग वैसे ही समाप्त हुई। विद्यानगर के आगंतुक स्थिति को पूरी तरह से भांपते हुए बाहर निकल गए। परन्तु मंदिर के बाहर भी उनके साथ बुरा व्यवहार न हो जाए, इसे ध्यान में रखकर स्वामीश्री ने उन सभी को द्वार तक जाकर सम्मान पूर्वक बिदा किया। उक्त घटना से इस सत्य का परिचय हुआ कि यह महापुरुष घोर अपमान अथवा विद्रोह को भी स्वस्थता पूर्वक सहन कर सकते हैं तथा ऐसे लोगों को आदर भी प्रदान कर सकते हैं।

सन् 1994 में अमेरिका में स्थायी हुए नटुभाई पटेल स्वामीश्री को अपने गाँव डांगरवा ले जाना चाहते थे। उस समय स्वामीश्री गुजरात के करजीसण गाँव में पधारे हुए थे। किन्तु, गाँव के कुछ लोग बिना कारण ही विरोध कर रहे थे। यह जानकर नटुभाई दुःखी हो गए। वे स्वामीश्री से कहने लगे, 'इनके गाँव में मैंने मंदिर निर्माण में सबसे बड़ी आर्थिक सहायता की थी, आज से सबकुछ बंद करता हूँ।'

स्वामीश्री ने कहा, 'नटुभाई, आप ऐसा नहीं सोचना। उस समय आपने भगवान के लिए

मुक्त होकर बाहर निकल आए। हुआ यह कि किसी ने दूसरे ही दिन उनका गुम हुआ पासपोर्ट उन्हें वापस कर दिया! मकरंदभाई के मन में दृढ़ विश्वास हो गया कि यह स्वामीश्री की कृपा का ही परिणाम है।

भारत लौटने के बाद श्री मेहता सीधे स्वामीश्री से मिलने के लिए अहमदाबाद आ पहुँचे। अक्षम्य द्रोह के पश्चात् स्वामीश्री से मकरंदभाई की वह प्रथम मुलाकात थी। स्वामीश्री के आशीर्वाद के बाद उन्हें सबसे बड़ा आश्चर्य यह हुआ कि उनके जघन्य अपराध के बाद भी इन महापुरुष की मुखाकृति पर न तो रोष का कोई चिह्न था, न ही किसी प्रकार का क्षोभ! जाति और स्वभाव से नागर होने के कारण तुरंत झुक जाना उनकी आदत नहीं थी; किन्तु स्वामीश्री की अनंत क्षमाशीलता ने आज उन्हें झुका दिया था। स्वामीश्री के प्रेम और आग्रह के कारण मकरंदभाई की आँखों से अश्रुधारा बहने लगी।

बड़ी मुश्किल से उन्होंने कहा था कि 'मैंने आपके साथ बहुत बड़ा द्रोह किया है। मुझे क्षमा कर दीजिए। आप जैसे क्षमावान संत इस धरती पर आज तक मैंने कहीं नहीं देखा!'

पश्चात्ताप की अग्नि में झुलसते मकरंद मेहता को पानी देकर शान्त करते हुए स्वामीश्री ने कहा, 'सब कुछ भूल जाइए, जैसे कुछ हुआ ही नहीं!'

मकरंदभाई के स्मृति-पटल पर वह क्षण जीवनभर के लिए अंकित हो गया।

सन् 1991 में स्वामीश्री द्वारा अमेरिका में आयोजित भव्य 'कल्चरल फेस्टिवल ऑफ इन्डिया' का समग्र अमेरिका में व्यापक प्रभाव पड़ा। किन्तु कुछ द्वेषियों ने स्वामीश्री का अपमान करने के उद्देश्य से उनके प्रति विकृत बातें लिखकर एक पत्रिका प्रकाशित की। न्यूयॉर्क मंदिर में स्वामीश्री अल्पाहार ले रहे थे, उसी समय ब्रह्मविहारी स्वामी उस पत्रिका को लेकर आ पहुँचे।

'क्या लाए हो?' स्वामीश्री ने पूछा।

'कुछ नहीं। आपको दिखाने जैसी बात नहीं है।' उन्होंने संकोच पूर्वक कहा।

'क्यों?' स्वामीश्री ने पूछा।

अंततः सभी के आग्रह पर ब्रह्मविहारी स्वामी ने वह आघातजनक लेख पढ़ा। उसे सुनते ही स्वामीश्री खिलखिलाकर हँस पड़े! संतों ने कहा, 'हमें उससे पूछना चाहिए कि ऐसा किसलिए करते हो?'

'नहीं।' स्वामीश्री ने कहा, 'हमें अपना कार्य करते रहना चाहिए। किसी से कोई प्रतिकार नहीं; भगवान सब कुछ देखते हैं।'

संतों ने कहा, 'किन्तु उन विरोधियों को मालूम हो जाना चाहिए कि वे गलत काम कर रहे हैं! गुणातीतानंद स्वामी ने भी कहा है कि 'हम भले ही डंस न मारें किन्तु हमें फुत्कारना तो नहीं भूलना चाहिए।'

स्वामीश्री ने तुरंत कहा, 'फुत्कारने में भी मुँह दुखता है और फुत्कारना शास्त्रीजी महाराज की 'पोलिसी' (Policy) नहीं थी। किसी ने कुछ भी कह दिया या अपमान कर दिया, लेकिन हमें उसका प्रतिकार नहीं करना है। हमें तो क्षमा ही करनी चाहिए...'

'लेकिन स्वामीजी,' एक संत ने तर्क दिया, 'शास्त्रीजी महाराज के समय में हमारी संस्था में साधु ही कितने थे? आज तो हमारी संख्या बहुत ज्यादा है... इसलिए...'

स्वामीश्री ने बीच ही में बात काटते हुए कहा, 'आप अधिक संख्या में हैं और यदि

निठल्ले हैं, तो भजन कीजिए, किन्तु विरोध करना बहुत बुरी चीज है।' इतना कहकर उन्होंने सहजतापूर्वक प्रतिदिन की भाँति भोजन ग्रहण किया; जैसे कुछ हुआ ही नहीं!

एक लेखक ने समाचारपत्रों में सार्वजनिक रूप से स्वामीश्री के विषय में लम्बे-लम्बे लेख लिखकर काफ़ी समय तक मिथ्या प्रचार किया। इसे पढ़कर संस्था के अनेक विद्वान हरिभक्तों ने उस लेखक के खिलाफ कलम उठाने का निर्णय ले लिया। स्वामीश्री ने उनको कड़ाई से रोक दिया और कहा, 'ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं। (हमारे गुरु) शास्त्रीजी महाराज तथा योगीजी महाराज ने कभी भी ऐसे लोगों को उत्तर नहीं दिया था। अत: आज के बाद प्रतिशोध लेने के लिए कभी सोचना तक नहीं ! हाथ में जल लेकर प्रतिज्ञा करो।'

परन्तु संतों ने एक और तर्क देते हुए कहा, 'लेकिन स्वामीजी, श्रीकृष्ण ने भी 100 गालियाँ सुनने के बाद शिशुपाल को अपने तरीके से उत्तर दे दिया था। आपने तो 100 से भी अधिक अपराध सहन कर लिए हैं।'

स्वामीश्री तुरंत बोल उठे, 'वे तो भगवान थे! जो चाहे सो करें! हम तो भगवान के दास हैं...' स्वामीश्री ने आग्रहपूर्वक प्रत्येक तर्क को अस्वीकार कर दिया था। उनके साथ सार्वजनिक सभा में मंच पर उपस्थित रहकर सम्मानपूर्वक उक्त महोदय को अपने ही आसन पर बैठाने का आग्रह करने लगे थे। आश्चर्यचकित लोगों को उस समय स्वामीश्री की क्षमाशीलता की पराकाष्ठा का दर्शन हुआ।

18 जून, सन् 1988 में स्वामीश्री टोरन्टो (केनेडा)के मार्खम शहर में चंद्रकान्तभाई के घर बिराजमान थे। भादरा से संतों द्वारा लिखे गए पत्र की चर्चा शुरू हुई। संतों ने लिखा था कि 'यहाँ हम दुष्कालपीड़ितों की सहायता हेतु सुखड़ी वितरण के लिए निकलते हैं, तो कुछ लोग टीका करते हैं कि संस्था को जितना दान अकाल राहत के लिए मिलता है, उस धनराशि से ये लोग अकाल पीड़ितों तक बहुत ही कम सहायता पहुँचाते हैं!'

यह सुनते ही स्वामीश्री बोल उठे, 'भले ही बोलनेवाले अनाप-शनाप बोलते रहें। हमें तो भगवान को सिर-माथे रखकर सेवा करते ही रहना है। यदि ऐसे लोगों की बातें सुनते रहेंगे तो काम नहीं कर पायेंगे। ये सब लोग अपनी नासमझी के कारण ऐसा बोलते हैं। मनुष्य के अवगुणों-अपराधों की ओर हम ध्यान नहीं देते! जिस प्रकार भगवान स्वामिनारायण सभी का कल्याण सोचते थे, उसी प्रकार हमें भी सभी के कल्याण को ही सोचना है।'

वैसे तो अनेकबार संस्था की प्रतिष्ठा धूमिल करने की अनेक कोशिशें की गईं, किन्तु प्रत्येक बार स्वामीश्री ने उसकी उपेक्षा की है! स्वामीश्री के नित्य प्रवचन में भी उन घटनाओं का कोई प्रभाव नहीं दिखाई पड़ा। वाणी द्वारा प्रहार करना उनकी प्रकृति में ही नहीं! कभी किसी निर्दोष अथवा गरीब पर हुए अन्याय अथवा धार्मिक मर्यादाओं के उल्लंघन से, उनके शब्दों में हृदय की वेदना अवश्य झलक उठती है, पंरतु वहाँ भी कटुता अथवा प्रहार का वह भाव कभी नहीं रहता, जिससे कि किसी के हृदय को ठेस लगे।

स्वामीश्री के हृदय से बहते क्षमाशीलता के निर्मल प्रवाह में इतनी प्रबल शक्ति है कि उनके साथ अपराध करनेवाला भी जब संपर्क में आता है, तो मात्र उनका चाहक ही नहीं; एक समर्पित भक्त बन जाता है।

अटलादरा के स्वामिनारायण मंदिर में सेवा कर रहे ब्रह्मजीवन स्वामी कहते हैं,

'बुद्ध और तीर्थंकर, राम और कृष्ण, कबीर एवं नानक आदि संतवृंद तथा भिन्न-भिन्न अवतारों ने भारत को संवर्धित किया है। अब किसी ऐसे महापुरुष की प्रतीक्षा की जा रही है, जो भारतीय संस्कृति को व्यापकता प्रदान करें। भगवान की कृपा से ऐसे महापुरुष मिल गए हैं। उनका नाम है - प्रमुखस्वामी। भारत को यदि एक करना हो, तो वह प्रमुखस्वामी महाराज के नेतृत्व में ही एक रह सकता है। प्रमुखस्वामी, स्वामिनारायण सम्प्रदाय के ही प्रमुख नहीं, वे हिन्दू धर्म के प्रमुख हैं। हिन्दू धर्म भी नहीं, बल्कि समग्र भारतीय समाज के प्रमुख हैं।'

- पूज्य जैनाचार्य मुनि सुशीलकुमारजी

(वर्ल्ड फिलोशीप ऑफ रिलिजियन)

''एकबार मैंने काफी समय से मन में दबी हुई एक बात को निष्कपटभाव से स्वामीश्री के सामने प्रस्तुत किया, 'स्वामीजी! पहले तो मैं संप्रदाय एवं आपके गौरव से बिलकुल अनजान था। उन दिनों मैंने आपका बहुत विरोध किया था, मैं जहाँ-तहाँ आपके बारे में अनाप-शनाप बकता रहता कि 'आप, लोगों को ठगते हैं, स्वयं भगवान बन बैठे हैं।' कभी कोई द्वेषी आपके लिए कुछ गलत-सलत छाप देता, तो मैं उस कटिंग को लेकर सभी को दिखाता फिरता। किन्तु जब समझ में आया, तब मैंने पूरा जीवन आपके चरणों में समर्पित कर दिया। आपने मुझे अपना त्यागी शिष्य बनाकर मुझ पर बड़ी कृपा की। अब मेरे पूर्व के अपराधों को क्षमा कर दीजिए।' यूँ कहते हुए मेरी आँखों में आँसू छलक उठे। भावविभोर हो स्वामीश्री, मेरे सिर पर हाथ रखकर अत्यंत स्नेहपूर्वक बोले, 'आप वह सब कुछ भूल जाइए। आपने अनजाने में भी (हमारा तथा भगवान स्वामिनारायण का) नाम लिया, उसमें आपका काम हो गया। अब बीती हुई बातों को भूल जाइए। सत्पुरुष दयालु होते हैं। वे प्रत्येक अपराध को क्षमा कर देते हैं।' स्वामीश्री बोलते रहे और मैं उनके चरणों को आँसुओं से भिगोता रहा।''

जिस हृदय में क्षमाशीलता का महोदधि उमड़ता हो, वहाँ छोटी-बड़ी भूलों का कोई अस्तित्व ही नहीं रहता। स्वामीश्री भूलों को क्षमा करने के बाद उन अपराधों को सहज ही भूल जाते हैं। क्षमा का यह वैभव उनके संसर्ग में रहनेवालों के हृदय में भी गहराई तक उतर आया है। एक गाँव में एक क्षत्रिय अपने भतीजे के खून का बदला लेने के लिए हमेशा व्यग्र रहा करता था। 11 मार्च, 1995 को गढ़डा में उसने अपने हृदय की भड़ास निकालते हुए स्वामीश्री से कहा, 'मैं उसका खून अवश्य करूँगा। गाँव के लोग हमें कहते हैं कि ये सब नपुंसक हैं।'

स्वामीश्री उसे समझाने लगे, 'भाई, आप खून का बदला खून से लेने का इतना बड़ा अपराध क्यों सिर पर रखते हो? आप धैर्यपूर्वक सोचिए, जो चला गया वह वापस आनेवाला नहीं है। फिर बिना वजह दुश्मनी बढ़ाने से क्या फ़ायदा? मन को शान्त रखिए। भगवान सब कुछ ठीक कर देंगे। खूनी को मारकर आपको कुछ भी नहीं हासिल होगा! यदि शान्त रहोगे, तो परिवार में आया तूफ़ान स्वतः शान्त हो जाएगा। लोग तो आपको उकसाकर शूली पर ही चढ़ा देंगे और आपके बीवी-बच्चे दर-दर भटकेंगे। बोलनेवालों का क्या जाएगा? अब दुश्मनी मोल लेने से बचो और शान्ति से भगवान का भजन करो।'

क्षमाशीलता की अमृत संजीवनी प्रदान करके स्वामीश्री ने सौराष्ट्र के 45 गाँवों के क्षत्रियों में चल रही डेढ़ सौ वर्ष पुरानी शत्रुता का अंत किया।

इस प्रकार स्वामीश्री की अनुभवपूर्ण वाणी से वैर की आग शान्त हो गई।

बोटाद (जिला : भावनगर) के पास रोहीशाला गाँव में एक छोटी सी बात ने उग्र रूप धारण कर लिया। एक युवक ने बैर की आग में सुलगते हुए गाँव के मध्यस्थी हुए एक सज्जन सत्संगी अमरशीभाई का खून कर दिया। इस दुर्घटना से पूरे गाँव का माहौल विस्फोटक हो गया। सारा गाँव प्रतिशोध की आग में जलने लगा। अमरीशभाई के युवा पुत्र जसमत को बुलाकर स्वामीश्री ने कहा, 'यदि ऐसी ही स्थिति गाँव में रही, तो गाँव तबाह हो जाएगा। तुम्हें शान्त रहना चाहिए। किसी प्रकार का वैर या खून-खराबा करने से तुम्हारे पिताजी वापस तो नहीं लौटेंगे। वे तो भगवान के धाम में बैठ गए हैं। यहाँ मैं, तुम्हारे लिए हूँ न! कोर्ट में से अभियोग वापस खींच लो और हत्यारे को क्षमा कर दो। तुम्हारी माँ से भी कह दो कि वह उसे क्षमा कर दे।' स्वामीश्री की वाणी सुनकर भावनगर की कोर्ट में उस ग्रामीण किसान की पत्नी ने जज के सामने खड़ी होकर, अपनी ही आँखों के सामने अपने पति का खून करनेवाले को क्षमा प्रदान कर दिया। इसे देखकर सभी आश्चर्यचकित रह गए! इसके पश्चात् स्वामीश्री ने स्वयं उस गाँव में आकर लगातार दो दिनों तक समझा-बुझाकर वहाँ की शत्रुता शान्त की। इस प्रकार स्वामीश्री ने प्रतिशोध की आग में जलते हुए उस गाँव को बचा लिया। इस घटना के प्रत्यक्षदर्शी लोग आज भी कहते हैं, 'यदि स्वामीश्री न होते, तो इस गाँव में न जाने कितनी लाशें बिछा दी गई होतीं !'

17 अक्टूबर, 1997 को स्वामीश्री ने सूरत में घटित हुई एक घटना के समाधान के लिए

दोनों पक्षों को गोंडल में एकत्रित किया था। क्षत्रियों और पटेलों के झगड़े के कारण स्थिति विस्फोटक हो गई थी। दोनों पक्षों में समाधान के लिए स्वामीश्री लगातार प्रयास करते रहे। दोपहर के भोजन के पश्चात् स्वामीश्री ने पौने चार बजे तक उनके साथ बैठकर समझा-बुझाकर समस्या का समाधान कर दिया। सभी लोग जब जाने को तैयार हुए, तब स्वामीश्री ने कहा, 'अब पाँच मिनट और बैठिये और सुनिए। द्वेष और वैर भूल जाना करोड़ रुपये के बराबर है। आप सभी लोग अक्षरदेहरी में आए हैं। यह देहरी का प्रताप है। आपकी समस्या का समाधान सहजरूप से हो गया, इसलिए हमें बड़ी प्रसन्नता है। आज के बाद भविष्य में परस्पर ईर्ष्या-द्वेष और शत्रुता को हमेशा के लिए भूल जाना। शत्रुता से शत्रुता बढ़ती है। वैर की आग में तेल उंडेलने से कोई लाभ नहीं। ऐक्यभाव से रहें। झगड़ा कोई शूरवीरता का काम नहीं है। अन्यथा एक तो सिधार गया, पीछे पाँच और जा सकते हैं!'

दोनों पक्षों ने एक दूसरे को क्षमा करके स्वामीश्री द्वारा सूचित शान्ति के मार्ग पर चलने की प्रतिज्ञा की। स्वामीश्री ने भी सभी को मिठाई खिलाकर अंतहीन शत्रुता का अंत किया!

सौराष्ट्र के भावनगर जिले में कुकड़, ओदरका आदि 45 गाँवों के क्षत्रियों में पिछले डेढ़ सौ वर्षों से भूमि-विवाद के कारण रक्तरंजित शत्रुता की आग जल रही थी। पुरखों द्वारा जलाई हुई हिंसा और प्रतिशोध की आग में जल रहे लोगों के बीच दुश्मनी अधिक से अधिक उग्र रूप ले चुकी थी। भावनगर के महाराजा कृष्णकुमारसिंहजी से लेकर ब्रिटिश अधिकारियों तथा स्वतंत्र भारत के अनेक नेता एवं उच्च अधिकारियों ने इस जातिगत वैर को शान्त करने के लिए लगातार प्रयास किये; किन्तु सब कुछ विफल हो गया था।

सन् 1980 में स्वामीश्री ने उक्त क्षेत्र के दबंग क्षत्रिय रामसंग बापू का जीवन-परिवर्तन किया, इसी के साथ डेढ़ सौ वर्षों से चली आ रही पुरानी शत्रुता के अंत की प्रक्रिया भी शुरू हो गई। स्वामीश्री ने लगातार प्रयत्न करके सभी के हृदय को क्षमा-भावना के अमृत से सींचा। परिणाम स्वरूप 12 अप्रैल, सन् 1990 का दिन इतिहास के स्वर्ण पृष्ठ पर अंकित हो गया। डेढ़ सौ वर्ष के पश्चात् दोनों पक्षों के क्षत्रिय, स्वामीश्री की छत्रछाया में एकत्र हुए। आपस का वैर उसी दिन छिन्न-भिन्न हो गया।

दोनों पक्षों ने स्वामीश्री के हाथों एक-दूसरे के गाँवों का जल डेढ़ सौ वर्षों के बाद ग्रहण किया। उक्त ऐतिहासिक अवसर पर वहाँ के क्षत्रियों के मुखिया ने कहा था, '150 वर्षों में जो कार्य अंग्रेज अथवा भारत सरकार भी न कर सके, उसे इन ओलिया महापुरुष ने कर दिखाया! हमारे वैर की आग को केवल प्रमुखस्वामी महाराज ही शान्त कर सकते हैं।'

जो स्वयं जीवनभर दूसरों के अपराधों को भूल कर उन्हें क्षमा के अमृत से सींचते रहे, उनके वचनों से ऐसी शक्ति का जन्म होता है, जो प्रतिशोध की ज्वालाओं को शान्त करके भाईचारे की स्थापना करती है। समर्थ होते हुए भी सहन करना और क्षमा कर देना, भगवान को अखंड धारण करनेवाले सत्पुरुष का लक्षण है। श्रीहरि ने वचनामृत में कहा है कि 'समर्थ होकर भी क्षमाशील होना, गुणातीत संत के सिवा किसी अन्य से संभव नहीं है।'

स्वामीश्री का दर्शन करते हुए लगता है कि यदि ऐसे महापुरुष इस धरती पर न होते, तो शास्त्रों में लिखित 'अजातशत्रु' शब्द का कोई अस्तित्व ही न होता! ◆

१९ वर्ष की अवस्था में
गृहत्याग के बाद ली गई
स्वामीश्री की एक तसवीर, १९४०

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

त्यागः

'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' का त्यागमंत्र सहस्रों वर्षों से भारतीय संस्कृति की त्याग परम्परा को प्रेरित कर रहा है। हमारी सनातन परम्परा ने सारे संसार को इस विभावना से मुग्ध कर दिया है। सनातन धर्म परम्परा में त्याग को जितनी महत्ता दी गई है, उतनी विश्व के अन्य धर्मों में नहीं दिखती। इसका रहस्य यही है कि जो परमानन्द का इच्छुक हो, उसे त्याग करना पड़ता है। जैसा त्याग वैसी प्राप्ति। आत्यंतिक प्राप्ति के लिए आत्यंतिक त्याग अनिवार्य है। ऐसे त्याग का अर्थ मात्र 'छोड़ना' नहीं है, परन्तु निःस्वार्थभाव से लोक कल्याण के लिए सर्वस्व का समर्पण, आत्म-समर्पण ही त्याग है। ऐसा त्याग स्वामीश्री के रोम-रोम में समाया हुआ है। उन्होंने जो भी छोड़ा है, जीवनभर के लिए छोड़ दिया ! केवल छोड़ा ही नहीं, उन्होंने आत्मसमर्पण किया है, कभी कहीं शोर और शब्द तक नहीं उठा। उन्होंने घर छोड़ा, माता-पिता और परिवार को छोड़ा, ऊँचे अरमान छोड़े, बड़ी सहजता से। उनके आत्यंतिक त्याग का प्रारम्भ, उनके गृहत्याग की घटना से शुरू होता है। उनके गृहत्याग की घड़ी कितनी सहज थी !

ऊँचे अरमानों और महत्त्वाकांक्षाओं से भरे किसी भी किशोर के लिए संसार का अचानक त्याग करना, उसके जीवन का कितना कठिन मोड़ बन जाता है!

गुजरात में बड़ौदा के निकट चाणसद गाँव के एक किसान परिवार में, शान्तिलाल के रूप में जन्म लेनेवाले स्वामीश्री के लिए वह मोड़ अचानक आया था। किन्तु उनके लिए वह मार्ग कठिन नहीं था। उनका, वत्सल माता-पिता और भाई-बहन का ममतामय पवित्र परिवार था। उनके अपने कई ऊँचे अरमान थे, तेजस्वी विद्यार्थी अवस्था थी, उच्च अंग्रेजी पढ़ने का मन था, परन्तु अचानक आई गुरु शास्त्रीजी महाराज की एक चिट्ठी ने सब कुछ बदल दिया। शान्तिलाल उसी क्षण सर्वस्व छोड़कर, त्याग-पथ पर समर्पण हेतु निकल पड़े।

त्याग की एक असाधारण घटना, अत्यन्त ही साधारण रूप से घटित हो गई!

गौतम बुद्ध, महावीर, सम्राट भरत तथा भर्तृहरि जैसे प्रसिद्ध त्यागियों का गृहत्याग, एक बड़े आत्ममंथन के परिणाम स्वरूप थे, जब कि शान्तिलाल का गृहत्याग गुरुआज्ञा के परिणाम स्वरूप हुआ था। उन्होंने संसार का त्याग ऐसे किया जैसे साँप अपनी केंचुली उतार देता है!

22 नवम्बर 1939, कार्तिक शुक्ला एकादशी, विक्रम संवत् 1996 के दिन, अहमदाबाद

भगवान के प्रति सर्वस्व का समर्पण ही त्याग है...

शहर की 'आम्बलीवाली पोल' मुहल्ले में, हरिभक्त बबुभाई सोमनाथ पटेल के निवास स्थान पर गुरु शास्त्रीजी महाराज ने 19 वर्षीय शान्तिलाल को पार्षद-दीक्षा प्रदान की, तब शान्तिभगत ने बिना कोई हिचकिचाहट या शंका किये गुरुचरणों में आत्मसमर्पण कर दिया था; जगत हिताय!

अंग्रेजी पढ़ने की उनके मन में तीव्र अभिलाषा थी, परन्तु गुरुवचन से उसे भी त्याग दिया। दीक्षा के क्षण से ही उन्होंने अपना सर्वस्व त्याग दिया! न तो कोई महत्त्वाकांक्षा रही, न ही अपनी कोई निजी संपत्ति! न कोई अपना आत्मीय, न कोई स्वार्थ! उन्होंने समग्र विश्व को अपना माना और अपनी झोली में गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज की प्रसन्नता के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं रखा!

उस समय उनकी आयु केवल 19 वर्ष की थी, किन्तु आत्मसमर्पण का सौरभ आज 91 वर्ष की आयु में भी उतना ही सुरभित है। भगवान स्वामिनारायण द्वारा स्थापित त्याग की उच्च परंपरा को उन्होंने आज 91 वर्ष की उम्र में भी जीवंत रखा है। पिछले 63 वर्षों से विश्वव्यापी बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था के सूत्रधार होने के बावजूद, उनके पास निजी पूंजी के नाम पर फूटी कौड़ी तक नहीं है! पूर्ण अकिंचन, पूर्ण अपरिग्रही!

ऐसे अकिंचन महापुरुष के चरणों में समर्पित होने के लिए करोड़ों का दान स्वयं उन्हें ढूँढ़ता आया है, परन्तु उन्हें कभी विचलित न कर सका। दान के एक-एक पैसे का उपयोग उनके मार्गदर्शन में लोकसेवा और सत्संग-उत्कर्ष के लिए ही होता है।

प्रमुखस्वामी महाराज ऐसे महापुरुष हैं, जो
हर किसी को प्रिय हैं। अत्यंत सहज तथा फूल से मासूम !
जो अपने सिर पर किसी प्रकार का बोझ नहीं रखते।

- पूज्य श्री श्री रविशंकर महाराज

(प्रणेता, आर्ट ऑफ लिविंग)

21 मई 1950 का दिन सदैव अविस्मरणीय रहेगा, जब शास्त्रीजी महाराज ने, शान्तिलाल से नारायणस्वरूप स्वामी बने, मात्र 28 वर्ष के युवा संत को बी.ए.पी.एस. संस्था के प्रमुखपद (अध्यक्ष) के साथ ही अपनी जगह 'गुरुपद' पर भी नियुक्त किया।

एक विश्वव्यापी संस्था के प्रमुख (अध्यक्ष) पद पर नियुक्ति भी त्याग की एक अपूर्व घटना बन गई। गुरु शास्त्रीजी महाराज द्वारा बार-बार 'प्रमुख' पद स्वीकार करने के आग्रह को वे विनम्रतापूर्वक अस्वीकार करते रहे। अनेक प्रयत्नों के पश्चात् अंततः अपने गुरुहरि की प्रसन्नता हेतु उन्होंने आज्ञा तो स्वीकार कर ली, किन्तु आत्मसमर्पण के रूप में!

सामान्यतौर पर इतनी छोटी उम्र में ऐसी महान संस्था के प्रमुख (अध्यक्ष) पद पर पहुँचना, किसी भी व्यक्ति के लिए गौरव, पद-प्रतिष्ठा एवं महान उपलब्धि का अवसर होता है। परन्तु प्रमुखपद पर नियुक्त होने के अवसर पर उनके ऐतिहासिक प्रवचन में किसी प्राप्ति अथवा किसी उपलब्धि की गन्ध तक न थी! इसके बजाय स्वामीश्री के प्रवचन में आत्मसमर्पण की यह प्रतिज्ञा इस तरह प्रतिध्वनित हो रही थी :

'आज मैं आप गुरुश्री तथा सभा के समक्ष प्रतिज्ञा करता हूँ कि अपने कर्तव्य का पूर्ण रूप से पालन कर आपकी संस्था को अपनी देह की परवाह किये बिना, पूर्ण रूप से वफादार रहकर आपका कृतकृत्य बनूँगा। आपने जो अक्षरपुरुषोत्तम ज्ञानरूपी उद्यान पुष्पित किया है, उसकी विशेष अभिवृद्धि हो, इसलिए मैं प्रतिदिन संपूर्ण सावधानी और उत्साह के साथ सेवा करके समग्र सत्संग का आशीर्वाद प्राप्त करने की अभिलाषा रखता हूँ, उसे आपश्री पूर्ण कीजिएगा।'

आत्मसमर्पण की यह प्रतिज्ञा को स्वामीश्री ने अपने जीवनभर जीया है। अपने शरीर की परवाह किये बिना वे लोक-कल्याण एवं संस्था की प्रगति के लिए रात-दिन सेवारत हैं।

त्याग का तात्पर्य केवल गृह-त्याग कर देना ही नहीं है। श्रीमद्भगवद्गीता ने त्याग की एक विशिष्ठ परिभाषा दी है : 'जो सत्त्वयुक्त होकर, निःसंशय बनकर, कुशल कर्म का कर्ता होता है, परन्तु कर्मफल का त्याग करके कर्मफल में आसक्त नहीं होता, वही बुद्धिमान सच्चा त्यागी है।' *'यः तु कर्मफल त्यागी स त्यागीत्यभिधीयते॥'* (श्रीमद् भगवद्गीता :18-11) अर्थात् सर्व कर्मफल की इच्छा का त्याग ही वास्तविक त्याग है।

यह अर्थ मानो स्वामीश्री के जीवन को ही प्रतिबिम्बित करता है।

सांसारिक जीवन त्यागकर भी जन हित के कर्मों में निरंतर प्रयासरत रहना तथा लोक कल्याण के कर्मों में निरंतर कुशलता बनाये रखना स्वामीश्री के जीवन का एक विस्मय कारक पहलू है। वे 90 वर्ष की वृद्धावस्था में आज भी जन कल्याण के लिए निरंतर कर्मशील हैं, परन्तु कर्मफल की आसक्ति से सर्वथा परे हैं!

स्वामीश्री अनेक बार कहते हैं, 'हमें तो भगवान की इच्छानुसार सेवा करते रहना चाहिए। परिणाम जो भी आए, भगवान की इच्छा समझकर उनकी प्रसन्नता रूपी फल की ही अपेक्षा रखनी चाहिए। उसके अतिरिक्त हमें किसी प्रकार के फल की कोई अपेक्षा नहीं है।'

फल प्राप्ति की आकांक्षा से दूर, कर्मयज्ञ करते रहना; स्वामीश्री की हर एक प्रवृत्ति में गीता का संदेश सुनाई देता है। मान-सम्मान, यश-कीर्ति आदि से विरक्त, निष्काम कर्म को पराभक्ति में परिवर्तित कर देने की अनूठी कला, उन्हें सहज ही प्राप्त है।

राजधानी दिल्ली में विश्व विख्यात 'स्वामिनारायण अक्षरधाम' का सृजन हो, या भारतीय सांस्कृतिक महोत्सव (C.F.I.) जैसे अंतर्राष्ट्रीय महोत्सव हो; भूकंपग्रस्तों की सेवा में गाँवों का पुनर्निर्माण हो अथवा विद्यालयों-अस्पतालों का नवनिर्माण; प्रचण्ड पुरुषार्थ से किये गये सभी युगान्तकारी कार्यों को, प्रमुखस्वामीश्री आत्यंतिक भक्ति के रूप में भगवान के चरणों में समर्पित कर दिये हैं!

गीता-उपनिषद् के गहन अध्ययनकर्ता सत्यनारायण काबरा नामक मुंबई के मुमुक्षु को स्वामीश्री के प्रथम दर्शन से ही अपार शान्ति का अनुभव हुआ था। उन्होंने स्वामीश्री से पूछा, 'स्वामीजी! शास्त्रों के गहन अध्ययन के बाद भी मेरा मन विक्षिप्त रहता है, मैं इसका कारण आज तक समझ नहीं पाया।'

स्वामीश्री ने सहज शब्दों में कहा, 'आपको अपने कार्यों का बोझ परेशान करता है। यदि आप कर्म करते चलें और कर्मफल को भगवान पर छोड़ देने की आदत डालें, तो आप स्वयं को बहुत ही हलका महसूस करेंगे। गीता में श्रीकृष्ण भगवान ने अर्जुन को जो मार्गदर्शन दिया है, उसी के अनुसार कर्म करना चाहिए। कर्म के फल की आशा नहीं रखनी चाहिए; तभी संसार का बंधन नहीं होगा।

जगत में जो भी घटित हो रहा है, सब कुछ भगवान की इच्छा से ही हो रहा है। यदि हम मान ले कि 'यह सब मेरी शक्ति से हुआ करता है...' तो उस कर्म के फल की इच्छा परेशान करती रहेगी। इसलिए उसे भगवान पर ही छोड़ देना चाहिए 'मैं फलां पुण्य करूँ, उसका फल मुझे इस प्रकार ही मिले' - ऐसी मनोकामना हमारे अहंकार का पोषण करती है, जिससे उद्वेग बढ़ता रहता है।'

29, अपैल 1995 की रात्रि के 10.30 बजे थे। बारडोली नगर में स्वामीश्री देर तक चलनेवाली एक महत्त्वपूर्ण मीटिंग के बाद जब विश्राम के लिए उठे, तो डॉ. किरण दोशी ने कहा, 'ऐसी बैठकों के बाद आपको उसका कोई बोझ महसूस...' स्वामीश्री उनको बीच ही में रोककर हँसते हुए बोले, 'जय स्वामिनारायण... कुछ भी नहीं! सब कुछ सिर पर उठाकर कहाँ-कहाँ फिरते रहेंगे? हम तो समझते हैं कि सर्वकर्ता परमात्मा हैं। उनके सिर पर जिम्मेदारी सौंपकर सो जाते हैं। जो कुछ हुआ है और जो कुछ होगा, भगवान की इच्छानुसार ही होगा। बाक़ी सब झूठा है। कल की बात कल।'

बिहार के सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ पुलिस अजय वर्मा अहमदाबाद में स्वामीश्री का दर्शन करते हुए बोले, 'अक्षरधाम के महान निर्माता से मिलने की बहुत उत्कंठा थी।' स्वामीश्री सहसा बोल उठे, 'सबका सर्जनहार तो भगवान ही हैं। सभी को प्रेरणा देनेवाले भगवान हैं।'

अक्षरधाम के निर्माण का यश-कलश उन्होंने भगवान के चरणों में समर्पित कर दिया।

एक संत ने स्वामीश्री से प्रश्न पूछा था, 'आपके अनेक कार्यों से प्रभावित होकर, लोग आपका सम्मान करते हैं, तब आपको कौन सा विचार आता है?'

स्वामीश्री ने सहजतापूर्वक कहा था, 'यह सन्मान तो भगवान का है। हम तो सेंका हुआ पापड़ तक नहीं तोड़ सकते। भगवान की आज्ञानुसार रहकर उन्हें प्रसन्न करते हैं, इसलिए सम्मान भी भगवान के कारण ही मिलता है। भगवान का भक्त मानकर ही लोग हमें बुलाते हैं, पूजते हैं, सम्मान देते हैं। अन्यथा हम कहाँ ऐसे सद्गुणी हैं कि कोई हमें बुलाए? हमें तो यही ख़याल रखना चाहिए कि 'भगवान स्वामिनारायण की आज्ञा में हम कैसे रह सकें? उनको प्रसन्न कैसे कर सकें? इसी भावना के साथ सदैव सेवक बनकर कार्य करना चाहिए। दूसरी कोई इच्छा ही नहीं है...।'

संसार-त्याग करना कदाचित् सरल है, सुख-वैभव को छोड़ना भी सरल होगा, परन्तु अहंकार का त्याग करके समर्पित जीवन जीना वास्तव में अत्यंत कठिन है। 91 वर्ष की आयु तक दिन-रात निरन्तर लोक-कल्याण के लाखों कार्यों को सफलतापूर्वक प्रचंड पुरुषार्थ से संपन्न करना, फिर भी कर्मफल की इच्छा न रखना, इसके लिए अद्वितीय सामर्थ्य चाहिए!

ऐसा त्यागी कौन हो सकता है? जो पूर्णकाम हो अर्थात् भीतर से परिपूर्ण हो; जिन्हें भगवान के अलावा अन्य कुछ भी नहीं चाहिए। स्वामीश्री भीतर से परिपूर्ण हैं। इसीलिए वे भौतिक पदार्थों के त्याग के साथ, ऐसे अनेक महान कार्यों का यश और सम्मान सहजतापूर्वक भगवान को समर्पित कर सकते हैं। श्रीमद् भगवद्गीता का कथन है :

'श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद् ध्यानं विशिष्यते ।
ध्यानात् कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥' (12-12)

अर्थात् अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से ध्यान विशेष है, ध्यान से सर्व कर्मफल का त्याग श्रेष्ठ है। कर्मफल के त्याग से अनंत शान्ति प्राप्त होती है : *'न कर्मणा न प्रजया धनया। त्यागेनैके अमृतत्त्वमानशुः ॥'*

अर्थात् कर्म से अथवा प्रजा से या धन से नहीं, अपितु त्याग से अमृतत्व प्राप्त होता है।

ईशावास्य उपनिषद् के प्रथम मंत्र को चरितार्थ करते हुए स्वामीश्री ने त्याग करने के पश्चात् प्राप्त किया है - दिव्य शान्ति और अमृतत्व!

संतोषः

आर्जवम्

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

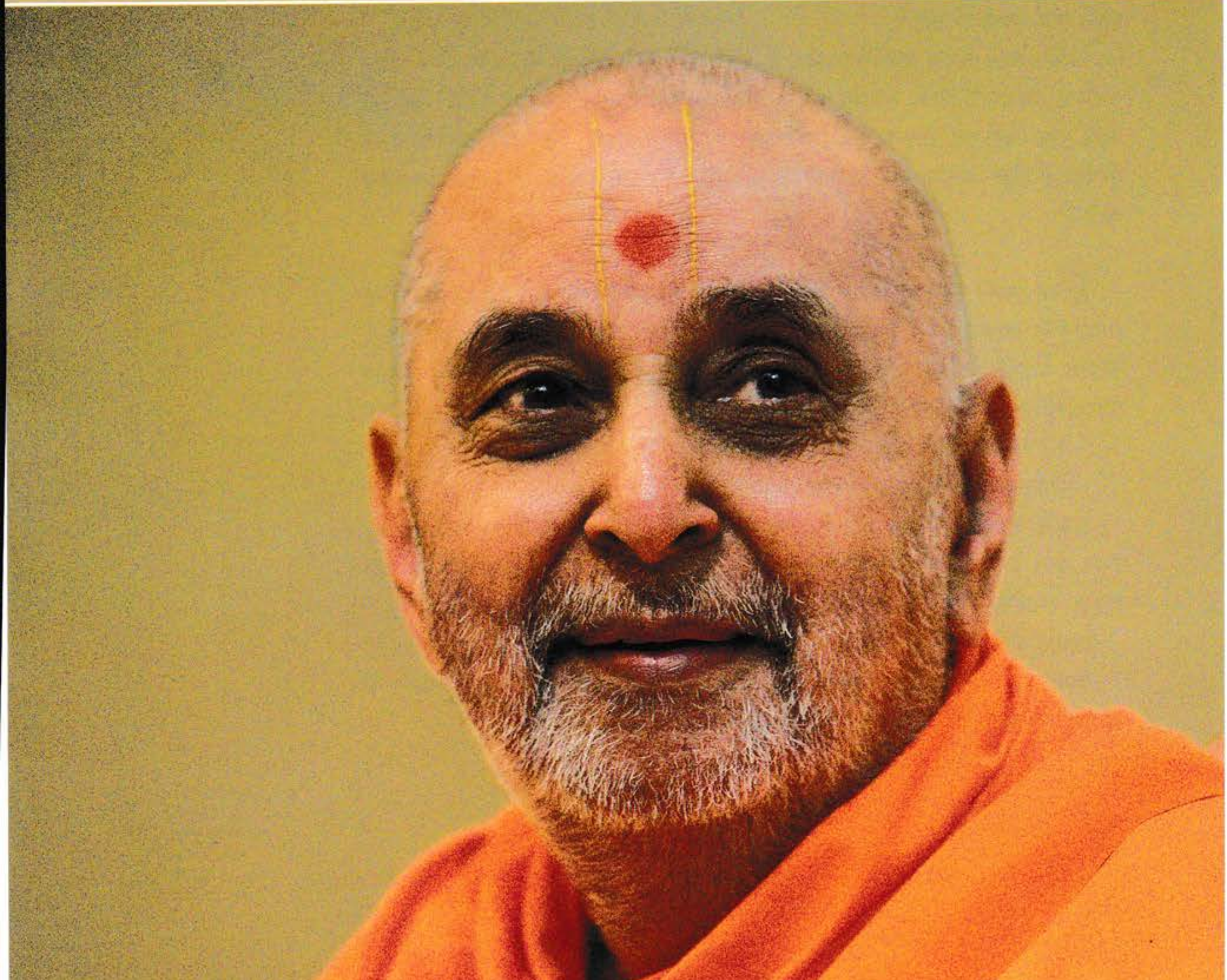

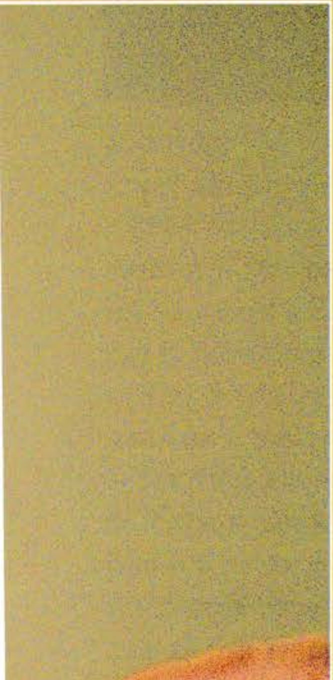

आर्जवम् अर्थात् सरलता, निखालिसपन।
जो सरलचित्त है, जिनमें कुटिलता का सर्वथा अभाव है,
जो व्यवहार में दाँव-पेच या छल-कपट करना नहीं जानते,
ऐसे निष्कपट महापुरुष 'आर्जवम्' और 'संतोष' गुण के धारक हैं।
वे संतोषी हैं इसीलिए सरल हैं।
सरल हैं, इसीलिए प्रत्येक स्थिति में संतुष्ट रहते हैं।
योगीजी महाराज कहते थे, 'चाहे जैसी भी स्थिति हो,
जैसा भी स्थान हो, तथा जैसी भी साधारण सी चीज मिले,
उसी से निर्वाह कर लेना 'संतोष' है।'
प्रमुखस्वामी महाराज का यह जन्मसिद्ध गुण है।

पिछले 63 वर्ष से स्वामीश्री बी.ए.पी.एस. संस्था के अध्यक्ष हैं, लाखों हरिभक्तों के जीवन-प्राण गुरुहरि हैं, भारत के मूर्धन्य संत हैं, समग्र विश्व के महानुभाव उनके दिव्य सेवाकार्यों से अभिभूत हैं, परन्तु उनके नित्य व्यवहार में संतोष के साथ सरलता इतने सहज रूप से अभिव्यक्त होती है कि वह हर किसी के हृदय को छू लेती है।

भले ही कोई गरीब हो, आदिवासी हो, निर्धन किसान हो, अथवा दर-दर भटकता शोषण का शिकार कोई गृहस्थ ही क्यों न हो; स्वामीश्री से वह तत्काल और उसी क्षण मिल सकता है; उसे लम्बी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। एक बालक भी उनके साथ घुलमिलकर बातें कर सकता है, तो युवावर्ग उन्हें मित्र बना सकता है। सूर्य के प्रकाश की भाँति उनका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए गरीब-अमीर, ऊँच-नीच, पापी-पुण्यात्मा आदि का कोई भेदभाव नहीं।

आजीवन परिव्राजक के रूप में स्वामीश्री ने आदिवासियों की झोपड़ियों से लेकर देश-विदेश के कोने-कोने तक निरन्तर भ्रमण किया है। अब तक 17,500 गाँवों-नगरों तथा विश्व के 55 देशों में उन्होंने सत्संग-यात्राएँ की हैं। परन्तु 91 वर्ष की उम्र तक स्वामीश्री ने अपनी सुख-सुविधा के लिए कभी भी, ऐसा नहीं कहा है कि 'मेरे लिए ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए, ऐसा वाहन होना चाहिए, ऐसा भोजन, ऐसी शय्या, ऐसी सभा अथवा सभा में इतने लोग होने चाहिए...' जहाँ कहीं, उन्हें जब कभी जैसा-तैसा मिल गया, उसी से वे परम संतुष्ट रहते हैं।

बाल्यकाल से ही उनका ऐसा स्वभाव रहा है कि वे कभी भी अपने लिए न तो कोई पदार्थ माँगते और न ही भूख लगने पर अपनी माँ से कभी भोजन ही माँगते।

उनकी यह सरलता समय के साथ निखरती गई। सहस्रों गाँवों में भ्रमण करते हुए

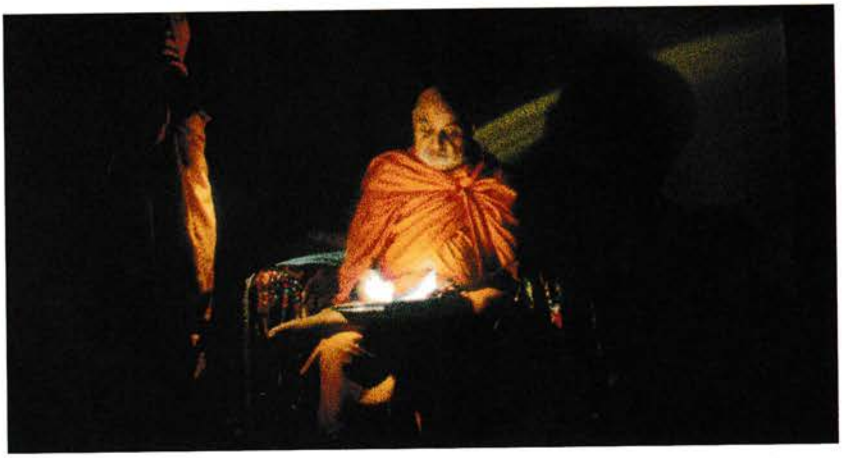

गाँव में अंधेरा होने पर भी स्वामीश्री का कार्य सरलता पूर्वक चलता रहता है।

स्वामीश्री को गाँवों की असुविधाओं ने कभी भी विचलित नहीं किया। यदि कोई स्वामीश्री के लिए सुविधा जुटाने में व्यस्त रहता, तो स्वामीश्री उसको टोकते हुए कहते कि 'तुम देह की सुविधा के लिए इतना समय क्यों गँवाते हो? असुविधा होने से हम मर नहीं जाएँगे?'

14 सितम्बर, 1975 को स्वामीश्री भावनगर जिले के कालातलाब गाँव में प्राणप्रतिष्ठा के लिए पधारे थे। बरसात का मौसम था। कच्चे रास्ते में स्वामीश्री की मोटरकार दल-दल में फँस गई। संतों-भक्तों ने उसे निकालने का खूब प्रयत्न किया। स्वयं स्वामीश्री भी गाड़ी को धक्का देने के लिए कार से उतर पड़े। किन्तु कार निकल न सकी। किसी के सुझाव पर स्वयं स्वामीश्री भी सड़क के उस पार पड़े छोटे-बड़े पत्थर उठाकर कीचड़ में डालने लगे। सभी ने स्वामीश्री को रोका तो उन्होंने कहा, 'इससे हमारी क्या हानि होगी? हमने तो शास्त्रीजी महाराज के समय में भी पत्थर उठाये हैं और योगीजी महाराज के समय में भी सेवा की है।' गाड़ी बाहर न निकल सकी, तो संतों ने कहा, 'चलिए नवागाम से बैलगाड़ी बुलवा लेते हैं...' स्वामीश्री ने कहा, 'बैलगाड़ी की कोई आवश्यकता नहीं है, हम पैदल ही चलते हैं।' इतना कहकर स्वामीश्री कीचड़ से सनी उस सड़क पर अपनी धोती को तनिक ऊँचा करके चलने लगे। फिर दूधाधार गाँव से तीन बैलगाड़ियाँ लेकर वे भीगते हुए 'स्वामिनारायण' मंत्र की धुन करते कालातलाब गाँव पहुँचे।

ऐसे अवसरों पर धर्मगुरु के रूप में उनकी सरलता, लोकहृदय को स्पर्श कर जाती है।

गुजरात का भालप्रदेश उस समय प्राकृतिक असुविधा के कारण पिछड़ा हुआ था। तालाबों में भरा गन्दा और खारा जल, त्वचा को झुलसा देनेवाली सूरज की धूप, वातावरण में निरन्तर उड़ती धूल, गाँवों में बिजली और पंखे का सर्वथा अभाव इत्यादि असुविधाओं को झेलते हुए स्वामीश्री यहाँ महीनों तक विचरण करते रहे। साथ आनेवाले संत-भक्त साहस खो देते, परन्तु स्वामीश्री के मुख से सुविधा हेतु कभी एक शब्द भी न निकलता था!

सन् 1985 में स्वामीश्री नवसारी से कुरेल पधारे थे। एक नये घर में स्वामीश्री के निवास का प्रबंध था। रात को सेवकों ने देखा कि स्वामीश्री की गुदड़ी धूल से सनी हुई थी। एक संत गुदड़ी झटकने लगे, तो स्वामीश्री ने मुस्कुराकर कहा, 'क्या करते हो? धूल लगी है?' 'जी, स्वामीजी।' स्वामीश्री सहज ही बोल उठे, 'यह शरीर भी धूल का ही है न!'

स्वामीश्री के इस दृष्टिकोण का प्रत्यक्ष अनुभव उसी रात को हो गया। ठंड अधिक थी।

ओढ़ने के लिए सीमित साधन थे। रात में उन्होंने बगल में पड़ी मसहरी ओढ़ ली! शरीर को मिट्टी समझ कर उन्होंने कभी भी सुविधाओं की चिंता नहीं की।

सन् 1968-69 में ग्रीष्मावकाश के दौरान विद्यानगर स्थित संस्था के छात्रालय में बहुत कम विद्यार्थी रह गए थे। किसी कमरे में कुछ विद्यार्थी देर रात तक पढ़ रहे थे। मध्य रात्रि में एकाएक दरवाजा खड़का और खुल गया, क्योंकि अंदर से बन्द न था। विद्यार्थियों के आश्चर्य की सीमा न रही, जब उन्होंने सामने स्वामीश्री को खड़े देखा! विचरण से थके-मांदे स्वामीश्री सीधे वहीं आ पहुँचे थे। छात्रालय संभालनेवाले पार्षद जयकृष्ण भगत आदि सो रहे थे, इसलिए स्वामीश्री उन विद्यार्थियों के कमरे में प्रकाश देखकर सीधे वहीं आ पहुँचे थे। विद्यार्थियों ने पार्षदों को जगाना चाहा, किन्तु स्वामीश्री ने मना करते हुए कहा, 'उन्हें शान्ति से सोने दो, यहीं रहकर रात गुजार लूँगा!'

संस्था के अध्यक्ष तथा सम्माननीय व्यक्तित्व होने के बावजूद स्वामीश्री, घर जा चुके विद्यार्थियों के बिस्तर पर नीचे ही सो गए; जब कि कमरे के विद्यार्थी पलंग पर सोते रहे! दूसरों को कष्ट दिए बिना तमाम कष्टों को मौन रहकर सहन कर लेना स्वामीश्री की प्रकृति है।

प्रारंभिक वर्षों में स्वामीश्री को सबसे अधिक असुविधा उनके कार्यक्रमों की अनिश्चितता के कारण होती थी। जहाँ केवल पाँच घरों में संपर्क करने का आयोजन हुआ हो, वहाँ स्वामीश्री के प्रति आकर्षण के कारण संध्या होते होते 50, 70 या 100 घरों में पधरावनी हो जाती थी। स्वामीश्री कभी ऐसी अनिश्चतता पर व्यथित नहीं होते थे। जिस प्रकार भक्तों का भाव रहता, उसी प्रकार के आयोजन वे स्वीकार कर लेते और सभी को राजी किया करते। गाँववालों को स्वामीश्री की कठिनाइयों का अनुभव मात्र एक ही दिन का होता था, किन्तु स्वामीश्री के लिए तो यह लगातार चलनेवाली कष्टदायी कल्याणयात्रा थी। जब साथी संत तथा कार्यकर्ता गाँववालों से नाराज हो जाते, तब स्वामीश्री ही उन भोले भक्तों के पक्ष में रहकर उनको सब कुछ सहन करने की शिक्षा देते।

आइए, कुछ ऐसी घटनाओं के साक्षी बने, जो हमारे ह्रदय को स्पंदित कर देती हैं :

14 जनवरी, 1983 को स्वामीश्री, मकरसंक्राति के दिन साबरकांठा जिले में विचरण करते हुए जब नादरी गाँव पधारे, तो दोपहर का 1.00 बज गया था। चिलचिलाती धूप में गाँव के लोगों ने स्वामीश्री की स्वागतयात्रा का आयोजन किया था। लगभग 3 बजने लगे। आज भी हर रोज की भाँति स्वामीश्री साढ़े तीन बजे भोजन के लिए उपस्थित हो सके। कुछ मिनटों के विश्राम के बाद 'श्रीमद्‌भागवत ज्ञानयज्ञ' में वे आशीर्वाद देने पधारे। सायं छ: बजे तक सत्संग-लाभ दिया। सुबह से साथ रहनेवाले स्थानीय हरिभक्त बेचरभाई ने कहा, 'स्वामीजी! अभी दो-चार भक्तों के घर पधरावनी बाक़ी है।' स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'चलो चलते हैं।' गाँववालों को ज्यों-ज्यों जानकारी होती गई, त्यों-त्यों पधरावनी की संख्या बढ़ती गई। रात्रि में पेट्रोमेक्स के उजाले में कुल 102 घरों की पधरावनी करके स्वामीश्री जब वापस लौटे, तो 10.30 बज चुके थे। थकान के बावजूद उनके मुखारविंद पर भक्तों को प्रसन्न करने का संतोष झलक रहा था।

एकबार पीपलग से पधरावनी करते-करते स्वामीश्री पैदल ही आठ कि.मी. दूर डभाण

अहमदाबाद में पुराने हरिभक्त नारायणभाई मिस्त्री के साथ सीढ़ियों पर बैठकर गोष्ठी...

गाँव की सीमा तक पहुँच गए थे। उसी समय पीपलग के हरिभक्त स्वामीश्री के चरणों में निवेदन किये, 'स्वामीजी! हमारे गाँव में कुछ घरों में पधरावनी बाकी रह गई है।' स्वामीश्री ने जानकारी लेकर कहा, 'हम उसी मुहल्ले से आ रहे हैं। वह घर कैसे छूट गया?' और बिना किसी तनाव के स्वामीश्री पुनः पीपलग की ओर चल पड़े। वहाँ रात्रि 12 बजे तक पधरावनी का कार्यक्रम चलता रहा। जब वे डभाण अपने निवास पर लौटे तब आधी रात बीत चुकी थी।

कभी-कभी स्वामीश्री को अपना कार्यक्रम बदलकर बीच में किसी अन्य गाँववालों को भी राजी करना पड़ा है। निश्चित कार्यक्रम अस्तव्यस्त हो जाने से कैसे भी धैर्यवान का धैर्य जवाब दे जाता! परन्तु स्वामीश्री हँसते हुए सब कुछ स्वीकार कर लेते।

एकबार प्रातःकाल बदलपुर से निकले स्वामीश्री रात को 12.00 बजे आणंद पहुँचे, तब तक मार्ग के 13 गाँवों में उनका विचरण हो चुका था!

कभी-कभी हरिभक्त अपने व्यावहारिक प्रसंगों में स्वामीश्री का आशीर्वाद लेने के लिए उन्हें ऐसी स्थिति में डाल देते कि स्वामीश्री के प्रत्येक कार्यक्रम, शारीरिक सुविधाएँ तथा नीजी पत्र व्यवहार सब कुछ अस्त-व्यस्त हो जाता। प्रसंग का औचित्य हो या न हो, परन्तु स्वामीश्री ने अपनी उपस्थिति से उसे मंगलमय बनाया है। वे कभी भी किसी से 'ना' नहीं बोल सकते। हर किसी के शुभ मनोरथों को पूर्ण करने के लिए ही उन्होंने अपने शरीर को कष्टदायी विचरण में झोंक दिया है। स्वयं जलकर उन्होंने सभी को अमृत वर्षा से संतृप्त किया है। वे उनके लिए एक कामधेनु गाय की तरह पेश आए हैं! उनके साथ में वर्षों से भ्रमण करने वाले संतों को ऐसी असंख्य घटनाओं का स्मरण यथावत् है।

एक घटना महीनदी के तट पर नालों-खोहों में बसे बदलपुर क्षेत्र की है। दो-दो कि.मी. चलकर, स्वामीश्री ने एक झोपड़े से दूसरे झोपड़े तक सुबह से शाम तक अनेक पधरावनी की थी। वरिष्ठ साधु महंतस्वामी एक घटना का स्मरण करते हुए कहते हैं : 'बामण गाम' में वैशाख की दोपहर थी। सूर्य आग उगल रहा था। तीन बजे तक स्वामीश्री बिना भोजन पानी के एक के बाद दूसरे घर में पधरावनी कर रहे थे। मैं भी स्वामीश्री के साथ था। पूरा गाँव ऊँचे-नीचे ढलानों पर बसा हुआ है। इसी कारण स्वामीश्री का शरीर जवाब दे गया। एक टीले पर चढ़ते समय स्वामीश्री हाँफने लगे। पाँव में दर्द भी होने लगा।

जब प्रमुखस्वामी महाराज बोलते हैं तब वे नहीं, भगवान बोलते हैं।
वे सभी को आश्चर्यजनक ढंग से आध्यात्मिक उन्नति करा रहे हैं।
यदि शास्त्रों के अनुसार कहें तो उनका पूजन, भगवान का ही पूजन है।
प्रमुखस्वामीजी वास्तव में एक आध्यात्मिक महापुरुष हैं।
इनके कारण हिंदू धर्म का गौरव बढ़ा है।

- सद्‌गुरु स्वामी शिवाय सुब्रह्मण्यम्

(हिमालय एकेडेमी, हवाई द्वीप, अमेरिका)

उनकी पीड़ा देखकर मुझे दया आई और अनायास ही मुँह से निकल पड़ा, 'इस उम्र में इतना कष्ट उठाने की क्या जरूरत? अब तो इन्हें आराम करना चाहिए...।' स्वामीश्री मेरी ओर देखकर हलका सा मुस्कराये। पुनः मेरे मन में आया कि आपका शरीर तो घिसकर चूर-चूर हो रहा है और आप हँस रहे हैं? उसी क्षण उन्होंने कहा, 'यहाँ के सभी स्थानों पर योगीबापा पधरावनी कर चुके हैं।'

सौराष्ट्र तथा साबरकांठा क्षेत्र में गर्मी के दिन असह्य होते। ऐसे ही प्रखर ताप में स्वामीश्री साबरकांठा में सत्संग यात्रा की तैयारी कर रहे थे। विवेकसागर स्वामी ने कहा, 'स्वामीजी! वर्षाऋतु के बाद वहाँ जाना चाहिए। गर्मी के दिनों में तो आपके लिए मुंबई ही अच्छा रहेगा।' स्वामीश्री बोले, 'गर्मी में ही छोटे-छोटे गाँवों का विचरण अच्छा रहता है। क्योंकि वर्षा के बाद गाँव के किसान खेती-बोआई में व्यस्त हो जाते हैं, उन्हें कथा और सेवा की अनुकूलता उस समय नहीं रहती!' सभी संत मौन रह गए।

गाँव के लोगों की सुविधा के लिए, अपनी सुविधा को ठुकराकर, स्वामीश्री ने 45 डिग्री तापमान में 27 दिनों तक साबरकांठा के 87 गाँवों का विचरण किया था।

मुंबई के मुलुंड क्षेत्र में स्वामीश्री एकबार अश्विनभाई पोपट के घर पधरावनी में पधारे, तब दीनभाव से क्षमा माँगते हुए अश्विनभाई बोले, 'स्वामीजी! आपको बहुत कष्ट दिया।'

स्वामीश्री तुरन्त बोल उठे थे, 'जहाँ प्रेमभाव है, वहाँ कोई तकलीफ नहीं है। भगवान का भजन करनेवाले को असुविधा की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए, सुविधा में तो हर कोई भजन कर सकता है। जिस समय पर जो मिला, उसीसे निर्वाह कर लेना चाहिए। बाकी तो वृक्ष तले भी गुजारा हो जाता है।' यही उनकी जीवन शैली है, जो जीवनभावना बनकर कभी कभी इस प्रकार अभिव्यक्त हो जाती है।

अखिल भारत साधु समाज के पूर्व अध्यक्ष स्वामी रामस्वरूप शास्त्रीजी कहते हैं, 'स्वामीश्री के संपर्क से मुझे विलक्षण अनुभूति होती है। सीधे-सादे-सरल एवं निष्कपट संत की यह प्रथम परिभाषा है, वे अपनी क्रिया द्वारा सभी को सरलता की प्रेरणा दे रहे हैं।'

चाहे कितना ही बड़ा समारोह क्यों न हो, और चाहे कितना ही विशाल समुदाय क्यों न हो, परन्तु जब तक स्वामीश्री व्यक्तिगत रूप से हरिभक्तों से नहीं मिलते, उनके हृदय में संतोष नहीं होता।

9 दिसम्बर, 1994 को स्वामीश्री की 74वीं जन्मजयंती मेहसाना में भव्यता पूर्वक मनाई जा रही थी। हज़ारों हरिभक्तों से व्यक्तिगतरूप से मिलने की तीव्र अभिलाषा स्वामीश्री के

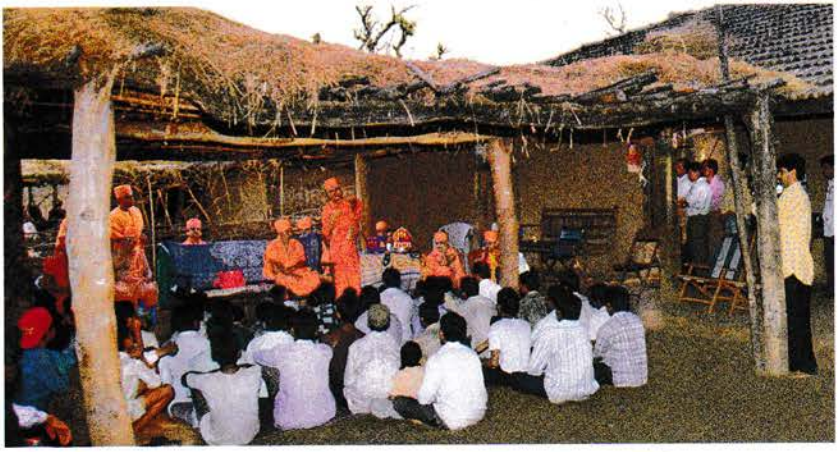

डांग जिले के एक आदिवासी घर में सत्संग सभा का लाभ प्रदान करते स्वामीश्री, मई, 1999

हृदय में बनी हुई थी। परन्तु डॉक्टरों ने परामर्श दिया था कि व्यक्तिगत मुलाकात बन्द रखनी चाहिए। नारायणमुनि स्वामी ने सभी की ओर से स्वामीश्री के पास जाकर विनती की, 'सत्संग सभा के बाद भक्तों को चार-चार की पंक्तियों में मंच के निकट से जाने की व्यवस्था की है, ताकि सभी को आपका दर्शन-लाभ हो।' स्वामीश्री यह सुनकर स्तब्ध रह गए। फिर उन्होंने धीरे से अपना अभिप्राय सुनाया कि हम व्यक्तिगत रूप से ही एक-एक से मिलें, वही अच्छा रहेगा। किन्तु सेवक वृंद उनके स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर ऐसा नहीं करने का आग्रह करता रहा। दस मिनट के पश्चात् पुन: पूछने पर स्वामीश्री ने सहजतापूर्वक कहा, 'जैसी आप सबकी इच्छा। संत कहे वही करना श्रेष्ठ है। आप सभी में भी भगवान का निवास है।'

कितनी सरलता! योगीजी महाराज हमेशा गुजराती में कहते थे, 'कट मुड जाना' अर्थात् तुरन्त ही अपने मन की छोड़, बड़ों की बात स्वीकार लेना।

न तो उनको अध्यक्षपद का अहंकार है, न तो गुरुपद पर विराजमान होने का अभिमान! स्वामीश्री स्वयं को एक छोटे स्वयंसेवक के रूप में ही देखते हैं।

सन् 1962 में अहमदाबाद में शाहीबाग मंदिर के प्रतिष्ठा-उत्सव में हजारों हरिभक्त आये और भोजन करने के बाद रात में ही सब इधर-उधर बिखर गये। संत-निवास के पीछे रसोईघर के पास जूठन भरी हुई लारी को रात लगभग दस बजे एक स्वयंसेवक अकेले ही ढलान पर चढ़ाने का प्रयत्न कर रहा था। एकाएक स्वामीश्री की दृष्टि उधर पहुँची, तो वे तुरन्त उस स्वयंसेवक के पास जाकर लारी को धक्का देकर आगे ले गये और लारी खाली करके वापस ले आये। एक विराट संस्था के सर्वेसर्वा तथा उक्त महोत्सव के सभा की अध्यक्षता करके निकले स्वामीश्री की वह सरलता, उस छोटे से स्वयंसेवक के हृदय में सदा के लिए अंकित हो गई। वही स्वयंसेवक त्यागी होकर साधु नारायणप्रसाददास बने। वे एक और घटना का जिक्र करते हैं -

सन् 1968 में कोलकाता में नारायणप्रसाददास स्वामी के चित्रों की प्रदर्शनी लगी थी। स्वामिनारायणीय त्यागियों के नियमानुसार कोई भी साधु बिना जोड़ीदार साधु के अकेला कहीं नहीं जा सकता। नारायणप्रसाददास स्वामी अपने जोड़ीदार साधु की तलाश में थे। सभी सन्त अपनी-अपनी सेवा में व्यस्त थे। इसलिए नारायणप्रसाददास स्वामी व्यग्रता से

इधर-उधर देख रहे थे। स्वामीश्री ने उनकी मनोदशा भाँप ली और अत्यंत व्यस्त होने पर भी बोले, 'चलिए, मैं आपके साथ चलता हूँ।' वे सोचने लगे, 'प्रमुखस्वामी को जोड़ के संत के रूप में कैसे ले जा सकता हूँ? कहाँ स्वामीश्री और कहाँ मैं?' परन्तु स्वामीश्री तो तैयार हो गए। नारायणप्रसाददास स्वामी, स्वामीश्री की यह सरलता देख गद्‌गद हो उठे।

सन् 1972, कोलकाता में मूर्तिप्रतिष्ठा-महोत्सव का कार्यक्रम था। स्वामीश्री एक दिन दोपहर को रसोई घर में पधारे। वहाँ देवचरण स्वामी पूड़ी बेल रहे थे, परन्तु तलनेवाला कोई नहीं था। स्वामीश्री क्षणभर में परिस्थिति भांप लिए और तेल का खाली कनस्तर उलटकर उस पर बैठकर पूड़ी तलने लगे। अगले ही दिन जिनके वरदहस्तों से मूर्तिप्रतिष्ठा होनेवाली है, वे स्वामीश्री आज भक्तों के लिए पूड़ी तलने में निमग्न हैं! उनकी यह सरल प्रतिभा सभी के हृदय में प्रतिष्ठित हो गई।

एकबार योगीजी महाराज और प्रमुखस्वामीजी लिंबडी से राजकोट जा रहे थे। सेवकसंत अन्य वाहन द्वारा प्रात:काल में ही निकल गए थे। मार्ग में वे सब मूली गाँव में दर्शन के लिए रुक गए और दोपहर 12.30 बजे राजकोट पहुँचे। देर होने के कारण सभी को चिंता थी कि योगीजी महाराज को भोजन में देरी हो जाएगी। परन्तु राजकोट पहुँचकर उन्होंने जब देखा कि योगीजी महाराज भोजन कर रहे थे और प्रमुखस्वामी प्रेमभाव से उन्हें परोस रहे थे, सेवकों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा! योगीजी महाराज ने मधुर स्मित करते हुए कहा, 'रसोई तो प्रमुखस्वामी ने बनाई है। देखिए कितनी स्वादिष्ट!'

जो सेवा संतों को करनी थी, वह सेवा स्वामीश्री ने कर दी।

स्वामीश्री की सरलता का एक दूसरा स्वरूप भी देखने लायक है। विनम्रता उनके व्यक्तित्व में इस प्रकार से ओतप्रोत हो चुकी है कि अगणित प्रवृत्तियों का बोझ तथा गुरुपद का उत्तरदायित्व भी उनकी सौम्यता को प्रभावित नहीं कर पाते! उनके प्रवचनों तथा सत्संग सभाओं में इसकी निरंतर अनुभूति होती रहती है। किसी विशेष दिन अथवा समय का कोई आग्रह नहीं; सम्बोधन 5 मिनट का हो या 50 मिनट का, गाँव हो या भव्य सभागार; जैसी सरल उनकी जीवन-शैली है, उतनी ही सरल उनकी वाणी!

सौराष्ट्र के त्राड़िया गाँव में अधिकतर राजपूतों की आबादी थी। स्वामीश्री जब यहाँ पधारे, तो असह्य गर्मी और धूल भरे बवंडर के बीच उनकी शोभायात्रा निकाली गई। जब शोभायात्रा समाप्त हुई तब स्वामीश्री ने सभा में प्रवचन प्रारंभ किया। स्वामीश्री के साथ विचरण में शामिल अडवाल गाँव के सम्मानित क्षत्रिय भक्त जामभा बापू ने सोचा कि 'मुख्य सभा तो शाम को है; फिर आशीर्वचन की क्या जरूरत...?' अत: जल्दबाजी में उन्होंने बीच में ही खड़े होकर 'जय' बुलवाकर प्रवचन पूर्ण करा दिया। कोई सामान्य-सा व्यक्ति ऐसे समय पर स्वयं को अपमानित महसूस करता, परन्तु स्वामीश्री ने क्षोभ रहित सौम्यभाव से कहा, 'अच्छा हुआ; बापू ने बंद करा दिया। अगले कार्यक्रम की मुझे कहाँ जानकारी थी?'

सन् 1994, नैरोबी (केन्या) में रात 11.00 बजे स्वामीश्री चंदुभाई पटेल के घर पधारे। कुछ मुमुक्षु पहले से ही वहाँ उपस्थित थे। सत्संग सभा का कोई आयोजन नहीं था, फिर भी वहाँ के अग्रणी हरिभक्त हर्षदभाई राणा ने निवेदन किया, 'स्वामीजी अब हमारे लिए दो शब्द कहेंगे।' स्वामीश्री ने इस उद्‌घोष का शब्दश: अनुसरण करते हुए कहा, 'ब्रह्मसत्यं

जगन्मिथ्या।' और जयघोष करके सभा समाप्त कर दी। स्वामीश्री की वह लाक्षणिक स्मृति सभी के हृदय में घर कर गई।

स्वामीश्री की वाणी में साहित्यिक सौंदर्य की कोई सजावट नहीं होती। उनके व्याख्यान चाहे दिल्ली अक्षरधाम के उद्घाटन अवसर पर उपस्थित भारत के सर्वोच्च राजपुरुषों के बीच में हो, अथवा संयुक्त राष्ट्रसंघ में 'मिलेनियम विश्वधर्म-संसद' के बीच; सहज-स्वाभाविक शैली में उनके हृदय से उनके जीवन की सरलता प्रवाहित होती रहती है।

सारंगपुर में उनके 70वें जन्मजयंती महोत्सव में लाखों भक्त पधारे थे। उनका समर्पण देखकर प्रसिद्ध फोटोग्राफर रघुराय आश्चर्यचकित थे! उन्हें सबसे बड़ा आश्चर्य तो तब हुआ; जब कई महानुभाव मंच पर आकर सहस्रों भक्तों के समक्ष, स्वामीश्री का गुणगान कर रहे थे, उस समय स्वामीश्री भक्तों द्वारा प्रेषित पत्र पढ़ने में निमग्न थे; जैसे वे अकेले हों! जब प्रवक्ता ने स्वामीश्री के आशीर्वाद का उद्घोष किया, माईक सामने रखा गया, स्वीच ऑन हुई, तब तक स्वामीश्री पत्र पढ़ने में व्यस्त रहे। तत्पश्चात् सहजतापूर्वक बोलना प्रारंभ कर दिया। ऐसा विशिष्ट दर्शन करते ही रघुराय बोल उठे, 'माईक लगने तक स्वामीश्री पत्र लिखते-पढ़ते हैं। इतने लोगों के सामने मैं क्या उपदेश दूँगा, इसका उन्हें तनिक भी टेन्शन नहीं है।'

उनकी ऐसी सरलता का अनुभव करके सिद्धहस्त गुजराती साहित्यकार हरीन्द्र दवे लिखते हैं, 'प्रमुखस्वामी से अनेक बार मिलना हुआ है। वे जो भी बात करते हैं, उसमें तन्मय हो जाते हैं। उनकी सरल वाणी में गजब की गहराई होती है। मातृवत्सलता और संत की मानवीय दृष्टि दोनों का उनमें एक ही बिन्दु पर संगम है।'

24 नवम्बर, 2008 को अहमदाबाद में 'दर्शन परिषद्' का कार्यक्रम था। बिहार के विद्वान् डॉ. रामजीतसिंहजी एवं डॉ. दुबेजी की उपस्थिति में स्वामीश्री विशाल सभा को संबोधित कर रहे थे। दोनों वक्ताओं ने हिन्दी में विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान दिये थे। स्वामीश्री ने अपने प्रवचन का प्रारंभ गुजराती में किया, किन्तु बाद में वाणी का प्रवाह हिन्दी की ओर मुड़ गया। वे हिन्दी बोलने में इतने अभ्यस्त नहीं है, इसलिए दोनों भाषाओं का सम्मिश्रण होने लगा। ऐसी दिव्यभाषा सुनकर लोग स्वामीश्री की सहज ब्रह्मवाणी का आनन्द उठा रहे थे। स्वामीश्री ने देखा कि भक्त समुदाय उनकी द्विभाषा को सुनकर आनंदित हो रहे हैं, तो वे स्वयं भी हँस पड़े और कहने लगे, 'हमारी हिन्दी तो ऐसी ही है, इसलिए कोई हँसना नहीं। इन विद्वानों ने हिन्दी भाषा में प्रवचन दिया तो हमें प्रेरणा मिली कि हम भी हिन्दी में क्यों न बोलें? परन्तु हिन्दी हमारा विषय नहीं है, इसलिए ऐसा चलता ही रहेगा। बहुत हँसने का नहीं...' फिर मुस्कुराते हुए अपनी विशिष्ट हिन्दी में प्रवचन देना जारी रखा।

स्वामीश्री की निखालिस प्रतिभा ने सारे माहौल को आनंदित कर दिया।

अहमदाबाद में एक बार स्वामीश्री ने प्रवचन के समय भूल से एक ही संदर्भ सात-आठ बार दुहरा दिया। भोजन लेने बैठे तब संतों ने संदर्भ देकर स्वामीश्री को यह बताया, तो वे हँसते हुए बोले, 'मैंने तो हार स्वीकार ली। हम इतना पढ़े-लिखे नहीं हैं, इसलिए ऐसा बोल गए। विद्वान को अपनी भूल के कारण मन में क्षोभ होगा; क्योंकि उन्हें, लोगों पर प्रभाव डालने की आदत है। हमें तो भगवान को स्मरण करके बोलने की आदत है, वे जो बुलाते

हैं, बोल लेते हैं।' स्वामीश्री की यह सरलता सभी के हृदय को स्पर्श कर गई।

भावनगर के बाढ़डा गाँव के एक हरिजन बन्धु विनोदराय वाला एक पत्र में लिखते हैं, 'मैं पाँच वर्ष से ईसाई बना हूँ। आप प्रभु का बाढ़डा रोड पर 1-3-1995 को सुबह दर्शन हुआ था और 3-3-1995 को भादरा आकर आपके वचन सुने, तब से आप ही की कृपा से मेरे हृदय में सत्य का एक दीपक प्रज्वलित हुआ... मैं बीड़ी, तम्बाकू, नशीले पदार्थों का सेवन करता हूँ। मुझे उन व्यसनों से मुक्त होना है। अनुग्रह करें।'

दक्षिण गुजरात के प्रसिद्ध उद्योगपति सी.के. पीठावाला ने लंदन में अपने मित्र के घर स्वामीश्री के आशीर्वाद की वीडियो देखी। अपनी सुवर्णतुला के भव्य सम्मान के अवसर पर आशीर्वाद देते स्वामीश्री के शब्दों में जो सरलता, निर्मानिता और पवित्र भावना का उन्हें अनुभव हुआ, वह अपूर्व था। उनके जीवन पर स्वामीश्री के सरल व्यक्तित्व का गहरा प्रभाव पड़ा और वे सत्संग के रंग में आकंठ डूब गए।

मन-कर्म-वचन से सरल-संतोषी स्वामीश्री के ऐसे तो अनेक आयाम हैं; किन्तु यह सरलता वे वहाँ नहीं रखते, जहाँ श्रीहरि की आज्ञा तथा सिद्धांतों का उल्लंघन होता हो।

इंग्लैण्ड की सेन्ट जेम्स संस्कृत पाठशाला के प्रसिद्ध आचार्य डेविड बडी ने 6-5-2008 को लंदन में स्वामीश्री से पूछा था, 'इस जगत् में संवादिता कैसे आ सकती है और दूसरों को संवादिता कैसे सिखाई जा सकती है?' स्वामीश्री ने उत्तर में एक सूत्र कहा था, 'सभी अपने मन में बंधी गांठें ढीली करना सीख लें, सरल हो जाए तो संवादिता आ जाएगी।'

सन् 1986 में जामनगर में डॉ. हर्षदभाई जोशी के घर स्वामीश्री का निवास था। एपार्टमेन्ट की छत से पानी टपक रहा था। शौचालय में वर्षा का पानी सीधा छत से ही टपकता था। 2006 के वर्ष में स्वामीश्री अटलादरा में विराजमान थे, उस समय पुरानी स्मृतियों का स्मरण करके डॉ. हर्षदभाई बोले, 'उस समय मैं पढ़ रहा था और प्रेम से बावरा हो गया था, इसलिए आपकी अच्छी सुविधा हो नहीं सकी।'

स्वामीश्री ने कहा, 'जीवन में सुख एवं दुःख, दोनों का अनुभव होना चाहिए, तभी धैर्य बना रहता है। सुविधा मिले अथवा न मिले, फिर भी आनंद ही आनंद रहेगा।' स्वामीश्री प्रायः कहते हैं कि 'हरि इच्छा से जो मिले, उसमें ही शान्ति माननेवाले सुखी हैं। बिना उनकी इच्छा चाहे कुछ भी मिल जाए, अशान्ति एवं दुःख मिटते नहीं हैं। इसलिए भगवान की इच्छानुसार जीना सीख लें; यही शान्ति का उपाय है।'

'भगवद्-इच्छा ही बलवान है।' यही आध्यात्मिक विचार उनके संतोष एवं सरलता का मूलमंत्र है। महाभारत में वेद व्यासजी कहते हैं :

सर्वं जिह्मं मृत्युपदं आर्जवं ब्रह्मणः पदम् ।
एतावान् ज्ञानविषयः किं प्रलापः करिष्यति ॥ (आदि पर्व, 11-4)

कुटिलता मृत्युपद है और आर्जव अर्थात् सरलता ब्रह्मपद है। यही ज्ञान का विषय है, शेष केवल प्रलाप से क्या अभिप्राय है?

◆

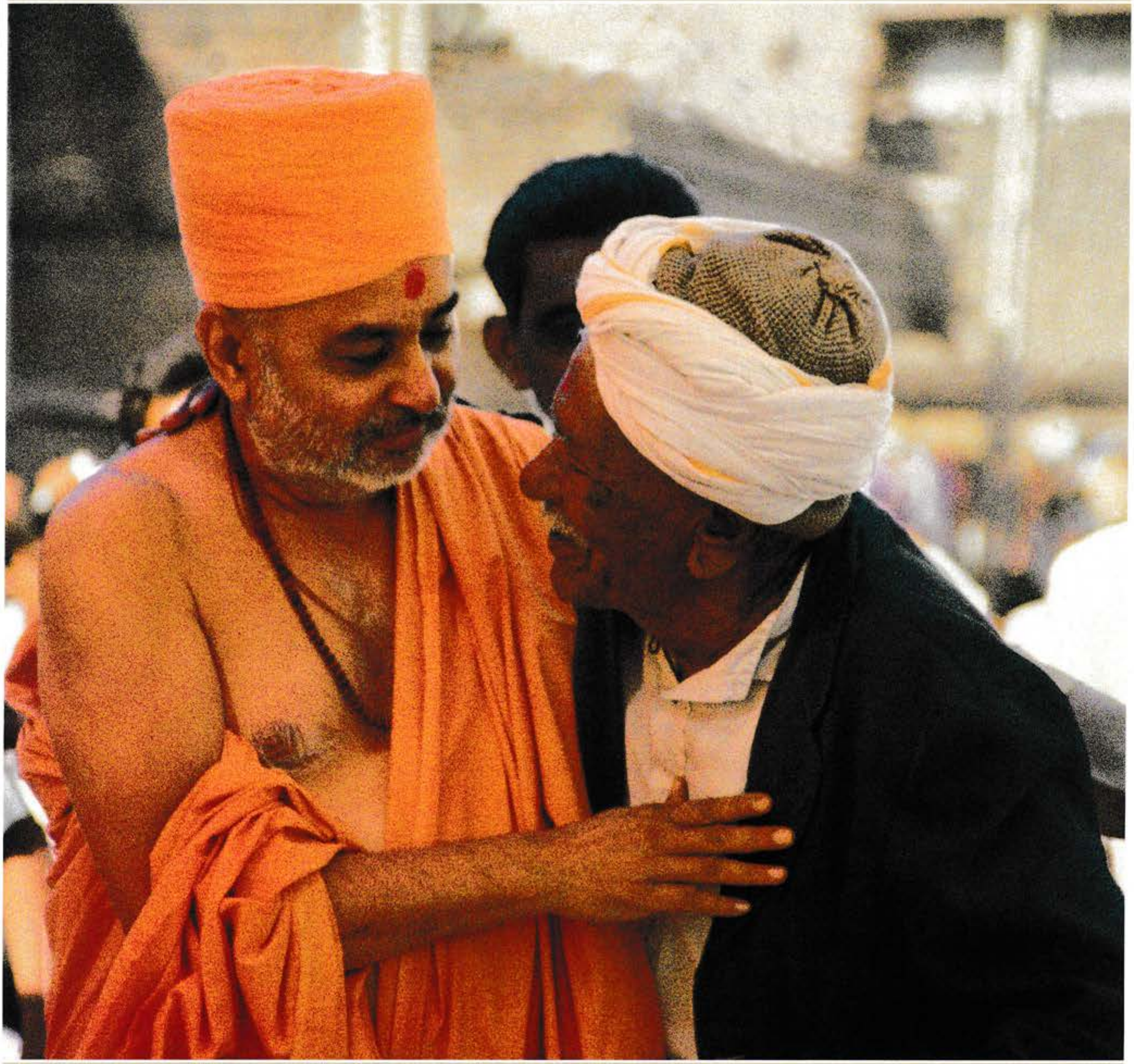

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

साम्यम्

साम्यम् अर्थात् समत्व, समता, समानभाव।
भगवान की अनूठी गुणसंपत्ति है साम्यम्।
अनेक विरोधाभासी परिस्थितियों के बीच भी मन की तुला
संतुलित और प्रफुल्लित रहे, उसका नाम है - साम्यम्।
गरीब और अमीर, जय और पराजय, सुख तथा दुःख, कचरा और कंचन
जैसे अनेक द्वन्द्वों में भी जो समता धारण कर सके, उसे
श्रीमद् भगवद्गीता, 'योगी' एवं 'गुणातीत' कहकर सम्मान देती है।
प्रमुखस्वामी महाराज ने भगवान के इस समत्व
योग को रोम-रोम में आत्मसात् और सिद्ध कर लिया है।

वचनामृत में भगवान स्वामिनारायण के शब्दों को पढ़िये : 'मुझे सहज स्वभाव से ही... उत्कृष्ट पंचविषय तथा निकृष्ट पंचविषय में समभाव है। राजा तथा रंक के बीच समता है। त्रिलोक का राज्य करना तथा मिट्टी के फूटे बर्तन में भिक्षा माँगकर खाना, दोनों स्थिति में समभाव है। हाथी के हौदे पर बैठना तथा पदयात्रा करना, दोनों में समभाव है। कोई चंदन-पुष्पादिक उपचारों से पूजे तथा वस्त्र-आभूषणों से अलंकृत करे अथवा धूल-गोबर उछाले, दोनों में समभाव रहता है। कोई मान दे या कोई अपमान करे, उन दोनों में समभाव रहता है। स्वर्ण, रत्न, हीरा तथा कूड़ा-कर्कट आदि में समदृष्टि है और 'यह भक्त बहुत बड़ा है और यह भक्त साधारण है,' ऐसा विचार तक नहीं रहता है। सारे हरिभक्त समान ही नज़र आते हैं।' (वच. ग.म. 13)

समता का यह सर्वोच्च तथा ऐतिहासिक कथन है। समता का इससे उच्चतर आध्यात्मिक अनुभव असंभव है। भगवान के कल्याणकारी गुणों के धारक गुणातीत संत भी ऐसे दिव्यगुणों से विभूषित होते हैं। श्रीमद् भगवद्गीता का वचन है :

समदुःख-सुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥ (6-36-24)

अर्थात् जिन्हें सुख-दुःख में समभाव है, मिट्टी-पत्थर और स्वर्ण में समान अनासक्ति है, प्रिय-अप्रिय तथा अपनी निंदा एवं स्तुति (प्रशंसा) में समभाव है, वही गुणातीत हैं।

स्वामीश्री गुणातीत समता के शिखर पर आरूढ़ संत हैं।

प्रत्येक भेदरेखा को लाँघकर उन्होंने सारे संसार को अपना प्रेम परोसा है। सभी उनकी वात्सल्यमय धारा में स्नान करके प्लावित होते हैं।

सन् 2000 में अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति बिल क्लिन्टन की स्वामीश्री से प्रथम

आदिवासी बन्धुओं के प्रति प्रेमोद्गार : 'आपमें मुझे, भगवान का दर्शन होता है... ।'

मुलाकात मायामी शहर में हुई थी। स्वामीश्री से मिलकर वे अति प्रभावित हुए थे। जब वे भारत आए, तब अपने पूर्वायोजित कार्यक्रम को बदलकर 5 अप्रैल, 2001 को गांधीनगर के 'अक्षरधाम' में स्वामीश्री के दर्शन हेतु पधारे। अन्य 50 महानुभाव भी उनके साथ थे। सभी के समक्ष स्वामीश्री का गुणगान करते हुए वे समय एवं स्थान तक भूल चुके थे।

जैसे ही श्री क्लिन्टन बिदा हुए और 15-20 फुट दूर खड़े अपने वाहन तक ही पहुँचे थे कि स्वामीश्री कि दृष्टि किसी को ढूँढ़ने लगी। वे थे कच्छ क्षेत्र के भूकंप-पीड़ित अति सामान्यजन! एक ओर जहाँ स्वामीश्री अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा की गई प्रशंसा के हिंडोले में झूल रहे थे, तो दूसरी ओर वे भूकंप में तबाह हो चुके असहायों को गले लगाकर उन्हें सान्त्वना दे रहे थे! जैसी उमंग क्लिंटन से मिलते समय थी, उससे अधिक उमंग उन कच्छवासियों से मिलते समय भी उनके चेहरे पर छाई हुई थी! उनके हाथ, अपने हाथों में लेकर स्वामीश्री पूछ रहे थे, 'सेहत तो अच्छी है? आप यहाँ आए, हमें बहुत अच्छा लगा। भगवान आपका कार्य कर रहे हैं।' इसके पश्चात् स्वामीश्री ने कच्छ के अपने प्रतिनिधि जनकभाई दवे को बुलाकर उनसे पूछा, 'सीद्दीकभाई और अन्य सभी का वापस लौटने का क्या प्रबंध है? उनके लिए टिकट आरक्षित किया गया है कि नहीं?' फिर निर्देश दिया, 'इनके लिए शयनयान के टिकट का प्रबंध करना, नहीं तो थक जाएँगे।'

एक क्षण में विश्व के शक्तिशाली राजपुरुष के साथ तो दूसरे ही क्षण में सामान्य पीड़ितों के साथ! कैसी अमृतमय समता! 'आत्मवत् सर्वभूतेषु...' मंत्र चरितार्थ हो रहा था।

सन् 1994 में स्वामीश्री का जन्मजयंती महोत्सव मेहसाना में सम्पन्न हुआ। उत्सव के बाद स्वामीश्री अपने निवास पर पहुँचे। वहाँ खेरालु तहसील के महियेल गाँव के एक गरीब हरिभक्त, जिन्होंने हाल ही में सत्संग में प्रवेश किया था, स्वामीश्री के दर्शन की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें देखते ही स्वामीश्री अति स्नेहपूर्वक वार्तालाप करने लगे। डॉक्टर स्वामी विस्मित होकर सोचने लगे कि स्वामीश्री इस स्तर के समत्व का निर्वाह कैसे कर पाते होंगे? इन्हें देखकर तो ऐसा लगता है कि हज़ारों भक्तों की उपस्थिति में जन्मजयंती जैसा भव्य महोत्सव, कहीं कुछ हुआ ही न हो!

दिल्ली स्थित 'स्वामिनारायण अक्षरधाम' का उद्घाटन समारोह 6-11-2005 को भव्यतापूर्वक सम्पन्न हुआ। समारोह के बाद स्वामीश्री का अभिनंदन करनेवाले महानुभावों का तांता लग गया। 19-11-2005 को भी यही क्रम जारी रहा, जिनमें तत्कालीन राष्ट्रपति

श्री कलाम के निजी सलाहकार और भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. वाय.एस. राजन् भी थे। उनके बिदा होते ही एक आदमी स्वामीश्री के पास आकर बोला, 'मेरा नाम हेमराज है। हम सगराम बाघरी के गाँव के बाघरी जाति के हैं।'

इतना सुनते ही स्वामीश्री प्रसन्नता पूर्वक बोल उठे, 'ओहो! बहुत अच्छा! आप, बाघरी भाइयों को अक्षरधाम दर्शन करने लाइएगा। यहाँ आपके लिए व्यवस्था हो जाएगी।'

'दिल्ली में तो बहुत बाघरी भाई हैं, मैं सभी से बात करने ही वाला हूँ।'

स्वामीश्री ने धीरे से उनके हाथ को पकड़ते हुए प्रेम से पूछा, 'शराब-सिगरेट का व्यसन तो नहीं है?' कहते हुए अत्यंत ही आत्मीयतापूर्वक आशीर्वाद देने लगे।

राष्ट्रपति का वैज्ञानिक सलाहकार हो अथवा एक वाघरी, हर कोई स्वामीश्री के प्रेम का स्पर्श पा सकता है।

सन् 1994 में दिल्ली में 'गुजरात विहार सोसायटी' में स्थापित प्रथम मंदिर का प्राणप्रतिष्ठा उत्सव था। उत्सव के दिन स्वामीश्री ने दिल्ली के सुरेन्द्रनगर निवासी धनजी बाघरी को याद किया, 'अभी तक धनजी नहीं दिखाई दिए।' सभी निरुत्तर थे, क्योंकि धनजी के बारे में कोई जानता ही नहीं था। स्वामीश्री कई वर्ष पूर्व धनजी से मिले थे। किन्तु उनकी याद आज तक यथावत् थी। स्वामीश्री ने जब यहाँ कोई जानकारी नहीं पाई, तो उन्होंने फोन करके सुरेन्द्रनगर से धनजी का दिल्ली का पता मँगवाया। उसे बुलाने की जिम्मेदारी किशोरसिंह राणा को दी!

एक ओर दिल्ली के बड़े महानुभाव स्वयं चलकर स्वामीश्री का दर्शन करने आ रहे थे, तो दूसरी ओर एक साधारण जाति के आदमी को मिलने के लिए स्वामीश्री स्वयं बुलावा भेज रहे थे! संस्था के सारंगपुर स्थित मंदिर में पशुओं की सेवा कर रहे ग्वाला हीराभाई का सन् 1997 में देहावसान हुआ, तब गोशाला के संचालक तपोधन भगत को सूचना देते हुए स्वामीश्री ने कहा था, 'हीरा की मृत्यु के बाद उसका क्रिया-कर्म हमें ही करना है और अस्थि-विसर्जन के लिए तुम्हें ही उनके पुत्रों को साथ जाना है।' एक वृद्ध सेवक को भी स्वजन मानकर स्वामीश्री ने उनकी संपूर्ण उत्तरक्रिया करवाई। 13 दिनों के बाद उनके समग्र जातिजनों का जातिभोज भी मंदिर की ओर से करवाया। स्वामीश्री की उदारता से हीराभाई का पूरा परिवार एवं जाति के लोग गद्गद हो गए। रघुभाई ने कहा, 'स्वामीजी, हीरा की वास्तविक सेवा तो आपने की है। हमारी बिरादरी में सभी को बहुत ही अहोभाव हुआ है कि हीरा कितना भाग्यशाली था, कि जिसके पीछे इतनी सारी उत्तरक्रिया सम्पन्न हुई।' प्रत्युत्तर में स्वामीश्री इतना ही बोले, 'हीरा तो हमारा था।' कितना समत्व! कितना स्नेह!

सत्संग के कार्यकर्ताओं को स्वामीश्री के समत्व का एक विलक्षण अनुभव है। वे केवल महानुभावों की ही सेवा-शुश्रूषा नहीं करते, उनके ड्राइवर्स एवं सेवकों को भी याद करते हैं और उनकी व्यवस्था करवाते हैं।

6-2-1997 बड़ौदा-अटलादरा में एक महोत्सव के आयोजन की चर्चा हो रही थी। स्वामीश्री ने प्रसाद वितरण के लिए सुझाव दिया कि 'सभा में उपस्थित लोगों को तो प्रसाद का बोक्स मिलेगा ही, किन्तु हरिभक्तों के ड्राइवरों को मत भूलिएगा। वे पार्किंग में जहाँ भी बैठे हों, वहाँ स्वयंसेवकों को भेजकर प्रसाद पहुँचाना। एक भी ड्राइवर छूटना नहीं चाहिए।' सभी आश्चर्यचकित हो गए। जब कभी कोई विशिष्ट अतिथि स्वामीश्री का दर्शन करने आता

है, तो स्वामीश्री की दृष्टि ड्राइवरों की सुविधा के लिए भी घूमती रहती है।

नवसारी में हरिजन समाज द्वारा निर्मित परीक्षित मजमुदार आश्रम के उद्‌घाटन का अवसर हो अथवा हरिजनों के तीर्थ झांझरका में सवगुणनाथ मंदिर में संबोधन का अवसर हो, प्रत्येक अवसर पर स्वामीश्री समता का नया अध्याय जोड़ते रहे हैं। शताब्दियों से तिरस्कृत जातियों के प्रति विशेष संवेदना का अनुभव करते स्वामीश्री कहते हैं, 'भगवान की भक्ति का अधिकार कोई एक का नहीं है। भगवान सभी के हैं। जो भजे उनके भगवान।'

एकबार सारंगपुर में स्वामीश्री ने दूर खड़े हुए कुछ युवकों को देखा और उन्हें समीप बुलाया। कुछ संकोच से युवकों ने कहा, 'परन्तु बापजी! हम हरिजन हैं!'

स्वामीश्री का हृदय करुणा से आर्द्र हो उठा। दो कदम आगे चलकर उन्होंने कहा, 'हम भी हरि के जन हैं... आइए निकट आइए!'

दौड़ते हुए वे युवक स्वामीश्री के पास पहुँच गए। स्वामीश्री ने उनके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया, तो वे आनंद से रोमांचित हो उठे। स्वामीश्री ने स्नेहपूर्वक कहा, 'भाई! हरि के जन तो सभी को होना है। कुछ नशा-व्यसन तो नहीं है न? जीवन शुद्ध रखना। नशा छोड़ देना, व्यसन-दूषण दूर कर पवित्र रहना। लीजिए आशीर्वाद देते हैं।'

युवकों के निस्तेज चेहरे, प्रेम और प्रेरणा के तेज से आलोकित हो उठे। लघुताग्रंथि पिघल गई। सभी के हृदय में स्वामीश्री का मृदु स्वर गूँजने लगा, 'हम हरि के जन हैं, पामर, पतित या अधम नहीं हैं।'

मोटीबेज गाँव पंचमहाल जिले का आदिवासी क्षेत्र का गाँव है। स्वामीश्री रात को एक बजे कड़कड़ाती ठंड में वहाँ आदिवासी-सभा में पधारे। उनका संबोधन आज भी लोगों के कानों में गूँजता रहा है, 'आप सभी में मुझे भगवान के दर्शन होते हैं!' डांग-धरमपुर क्षेत्र के आदिवासियों से स्वामीश्री ने कहा था, 'आदिवासी का अर्थ क्या है? आदिवासी का तात्पर्य पिछड़ा हुआ नहीं; सबसे आदि तो परमात्मा हैं। उनके पास आपका निवास है, इसलिए आप सब आदिवासी हैं।'

दक्षिण गुजरात के देदवासण गाँव के दलुभाई मदारी का संतों की संगत में जीवन परिशुद्ध बन गया। शराब, मांसाहार, हिंसा आदि छोड़कर वे सत्संग के पवित्र पथ पर चलने लगे। उनकी बहुत बड़ी इच्छा थी कि स्वामीश्री उनके घर पधारें और उन्हें कृतार्थ करें। उन्हें मालूम नहीं था कि गरीबनिवाज स्वामीश्री के चरण कब उनकी कुटिया को पावन करेंगे?

उन्हें दृढ़ विश्वास था कि एक न एक दिन स्वामीश्री मेरी प्रार्थना सुनकर अवश्य पधारेंगे और वह दिन आ गया। मानो शबरी के घर राम पधारे हों! दलुभाई आनंद से नाच उठे। परन्तु दुविधा यह थी कि अपनी अंधेरी झोपड़ी में स्वामीश्री को कहाँ बैठाऊँ? वह घर, घर नहीं, कोई घोंसला था! न बैठने की सुविधा थी, न खड़े रहने की जगह।

संतों की सूचना पर दलुभाई ने पशुशाला साफ़ करके स्वच्छ किया। स्वामीश्री के लिए आसन बनाया; भैंस के खूँटों पर पत्थर रखकर उस पर संतों का आसन लगाया। पूजन आदि के बाद स्वामीश्री को पता चला कि दलुभाई सभी बुराइयों को छोड़कर शुद्ध धर्म-नियम का पालन करते हैं। स्वामीश्री इतने प्रसन्न हुए कि अपने आसन से उठकर अत्यंत प्रेम से दलुभाई को हृदय से लगा लिया। वह गरीब भक्त स्वामीश्री की प्रेमवर्षा से भीग उठा।

'जब मैं प्रमुखस्वामी महाराज से मिला,
तब एक आध्यात्मिकता से परिपक्व हुई आत्मा के साथ मिलन हुआ है,
ऐसी अनुभूति होने लगी। वे वास्तव में आध्यात्मिक प्रेम,
विनम्रता एवं सादगी के मूर्त स्वरूप हैं।
वे हर किसी को चाहते हैं, यही कारण है कि हर कोई उनके ऊपर
प्रेम की वर्षा करता रहता है और वह भी लगातार और धुँआधार !'

- पूज्य स्वामी विबुधेशतीर्थजी महाराज

(मध्वाचार्य, अडमार मठ, उडुपी)

उनके साथ उपस्थित अन्य आदिवासी भाइयों ने भी दलुभाई की प्रेरणा से शुद्ध जीवन अपनाने की प्रतिज्ञा की थी। स्वामीश्री अत्यन्त ही स्नेहपूर्वक सभी को गले लगाते और भावार्द्र होकर बोलते भी जाते थे, 'ये सब भले ही गरीब हों, किन्तु उनके दर्शन से ही शान्ति हो जाती है, ऐसा इनका जीवन है। इन्हें कौन 'पिछड़ा हुआ' कहेगा? जो सत्संगी बने, पवित्र हुए, उनके घर तो तीर्थ बन गए हैं। ऐसी झुग्गियों में उनकी भक्ति का दर्शन हो गया।'

इन भोलेभाले आदिवासियों को इस विश्व वंदनीय महापुरुष की विश्वव्यापी महानता का कोई परिचय नहीं था, परन्तु स्वामीश्री के हृदय में उनके प्रति प्रवाहित हो रही वात्सल्य-धारा का परिचय उन्हें अवश्य मिला।

सन् 1997 में इंग्लैण्ड के विश्व विख्यात बर्मिंघम पैलेस में प्रिन्स फिलिप और सेन्ट जेम्स पैलेस में प्रिन्स चार्ल्स को भी स्वामीश्री के आशीर्वाद मिले हैं। उन्होंने अपने महालयों में स्वामीश्री के पावन सांनिध्य का लाभ प्राप्त किया है। परन्तु कभी-कभी लगता है कि महलों में रहनेवाले महानुभावों से भी अधिक स्नेह वे झुग्गियों पर बरसाते रहते हैं।

सांकरी गाँव में स्वामीश्री ने देखा कि रास्ते के दोनों किनारों पर कुछ गरीब आदिवासी आँखों में अपेक्षा लिए बैठे थे। स्वामीश्री उन लोगों के पास गए और हाथ जोड़कर कहने लगे 'जय स्वामिनारायण'; परन्तु वे अशिक्षित आदिवासी मूर्खों की भाँति टकटकी लगाकर देखते ही रहे। स्वामीश्री जानते थे कि उन्हें शिष्टाचार मालूम ही नहीं; अत: उन्होंने कहा, 'सुनो, आप सभी प्रतिदिन मंदिर में दर्शन के लिए आते रहना। यह मंदिर केवल पटेलों के लिए ही नहीं, आप सभी का है। आप लोग मंदिर में आकर घण्टे - दो घण्टे भजन में बैठेंगे, तो काम की थकावट भी दूर हो जाएगी; किन्तु आप नहीं आते तो हमें दु:ख होता है। यदि आप लोगों को शराब अथवा अन्य कोई व्यसन हो, तो उसे छोड़कर आज से पवित्र जीवन प्रारंभ कर दीजिए। आपके घर मिट्टी के बने हैं; जो वर्षाऋतु में कीचड़ के ढेर में बदल जाते हैं, कितना नुक़सान होता है! आप नशेबाजी में पैसे लगाते हैं; इससे अच्छा यह है कि पैसे बचाओ और पक्के घर बनाओ, नहीं तो बरसात में घर गिर जाएँगे। जाड़ों में सर्दी से काँपते रहोगे और गर्मी में धूप से जल जाओगे। ऐसे में हम आपकी चाहे जितनी ही मदद करें अथवा सरकार मदद करे, फिर भी आप वहीं के वहीं रहेंगे। व्यसन छोड़कर आप पैसे बचाएँगे, तो घर अच्छा होगा, बच्चे पढ़-लिखकर तरक्की करेंगे। हम आपसे पैसे नहीं माँगते; आप मंदिर में आएँ और भगवान के सामने हाथ जोड़िए, यही मेरे लिए लाखों रुपये के बराबर है।'

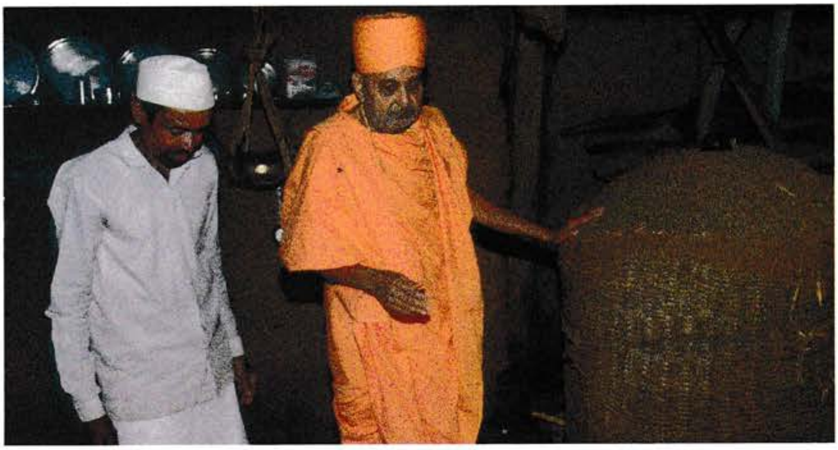

'आपके घर तो तीर्थ के समान पवित्र हैं...' डांग जिले में आदिवासी की झुग्गी में पदार्पण

एकबार हैदराबाद में शुक्ल यजुर्वेद के विद्वान शरद देशमुख के साथ गोष्ठी में स्वामीश्री ने कहा था, 'उच्च वर्ण के लोग मांस-मदिरा का भक्षण कर भी पूजा कर सकते हैं, तो हरिजनों के लिए पूजन-अर्चन में बाधा किसलिए? भले ही हरिजन क्यों न हो, पवित्र और संस्कारी हैं तो वह अच्छा ही है। ब्राह्मण भी तो संस्कार से ही ब्राह्मण कहलाता है।'

स्वामीश्री ने अपने इन विचारों का केवल प्रवर्तन ही नहीं किया, अमल भी किया है। श्रीहरि के धामगमन के पश्चात् कई वर्षों तक स्वामिनारायण संप्रदाय की परंपरा रही थी कि निम्नवर्ण के मुमुक्षु को भागवती दीक्षा देना वर्ज्य था; परन्तु स्वामीश्री ने सन् 1981 में उस परंपरा को तोड़कर निम्नवर्ण के मुमुक्षुओं को भी भागवती दीक्षा का अधिकार दे दिया। उनको भारतीय धर्म-संस्कारों से सुसंस्कृत करके पूजा-पाठ का उत्तरदायित्व भी दिया। हिन्दूधर्म में कदाचित् यह प्रथम घटना घटित हुई थी!

गुजरात के खेड़ा जिले के रामोदड़ी गाँव के वाघरीवास में उनकी चिथड़ों से बनी गुदड़ी पर बैठकर, स्वामीश्री ने उनको अपना स्नेह-भाजन बनाया था। भोज, गजेरा व नवसारी के हरिजनवास से लेकर न्युयॉर्क में संयुक्त राष्ट्रसंघ की मिलेनियम विश्वशान्ति परिषद तक तथा सौराष्ट्र के गरीब गाँवों से लेकर के दिल्ली के राष्ट्रपति भवन तक, उन्होंने समतापूर्वक आध्यात्मिक चेतना का प्रसारण किया है। ब्रिटेन की पार्लामिन्ट तथा अमेरिका में प्लेटिनम तुला के भव्य सम्मानों को या अत्यंत घोर अपमानों को उन्होंने समान रूप एवं साक्षीभाव से देखा है।

प्रत्येक परिस्थिति में स्वस्थता, प्रफुल्लिता, निश्चलता, उत्साह और परमानंद की स्थिति का अनुभव स्वामीश्री का स्थायी भाव है।

सन् 1994 में लंदन के विश्वविख्यात अलेक्ज़ेन्ड्रिया पैलेस में स्वामीश्री का भव्य सम्मान हुआ था। भारत लौटते ही वे सौराष्ट्र के रोहिशाला गाँव में पधारे। यहाँ मिट्टी-गोबर के छोटे से घर में उनका निवास था। प्रात:पूजा के बाद लंदन के युवक सुभाष पटेल ने कहा, 'कहाँ अलेक्ज़ेन्ड्रिया पैलेस और कहाँ यह मिट्टी का घर?'

स्वामीश्री ने तुरन्त ही कहा, 'सुभाष! इस घर की तुलना में सौ-सौ अलेक्ज़ेन्ड्रिया पैलेस भी धूल के बराबर हैं। इन गरीब भक्तों की भाव-गरिमा को तो देखो!'

सन् 1982 में लंदन के शीतल वातावरण से भारत आकर स्वामीश्री सीधे ही महाराष्ट्र

के खानदेश क्षेत्र के गाँवों में विचरण हेतु पधारे थे। असह्य गर्मी से लोग 'त्राहि माम्' बोल उठे थे। महाराष्ट्र के उन गाँवों में शौचालय की सुविधा का भी अभाव था, किन्तु स्वामीश्री की स्वस्थता एवं प्रसन्नता यथावत् थी। लंदन हो या अभावग्रस्त कोई गाँव, स्वामीश्री के लिए दोनों एक समान ही होते हैं।

स्वामीश्री द्वारा उपकृत होकर लोग प्रतिवर्ष उनका जन्मजयंती महोत्सव मनाते हैं। उस समय मानो समर्पण एवं भक्तिभाव का सागर उमड़ पड़ता है! अंतर्राष्ट्रीय हस्तियाँ तथा भारत के मूर्धन्य संत उनका गुणगान करते हैं; परन्तु स्वामीश्री कभी रोमांचित नहीं होते। प्रशंसा और अपमान, दोनों में स्वस्थ रहना, उनके समत्व की पराकाष्ठा है!

कुछ द्वेषी लोगों ने स्वामीश्री के लिए अखबारों में महीनों तक हीन और निम्न स्तर का कुप्रचार शुरू किया था। स्वामीश्री यदि चाहते तो कुप्रचार का पर्दाफाश कर सकते थे; लेकिन उन्होंने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। एक समय तो ऐसा आया कि भारत में आज तक किसी संत का ऐसा अपमान नहीं हुआ होगा, वैसा घोर अपमान हुआ। इस विश्ववंदनीय संत के लिए अखबारों ने दुष्टों के बहकावे में आकर, न जाने कैसी-कैसी मनगढ़ंत खबरें छापीं! लाखों हरिभक्त व्याकुल और व्यथित हो गए। परन्तु जब स्वयं स्वामीश्री ही मौन थे, तो किसी से क्या होनेवाला था? धैर्य एवं समत्वभाव से स्वामीश्री उस विष का कटोरा निगल गए। समय आने पर सत्य आखिर शक्ति बनकर प्रकट हुआ!

स्वामीश्री प्रायः कहा करते हैं, 'जिस प्रकार सम्मान, उसी प्रकार अपमान भी मीठा लगना चाहिए। अपने द्वेषी के प्रति भी शुभभाव रहे तभी उसे 'मान अपमान में एकता' कहते हैं। इसलिए हमें सहने की आदत डालनी चाहिए। 'मैं इतना अच्छा हूँ फिर भी मुझे बुरा कहते हैं?' ऐसा विचार ही देहभाव है। हम तो आत्मा हैं। आत्मा को क्या बुरा, क्या भला?'

भारतीय विद्याभवन के प्रधानाध्यापक श्रीभाईशंकर पुरोहित, जिन्होंने वर्षों से स्वामीश्री की इस समता को निकट से देखा है, वे लिखते हैं, 'बड़ी-बड़ी राजसत्ताएँ तथा बेशुमार दौलतवाले भी जो न कर सके, ऐसे महान कार्यों को स्वामीश्री ने अत्यंत ही शान्तभाव से, अक्षुब्ध दशा में सहजता पूर्वक सिद्ध किया है, फिर भी कर्तृत्व का यश उन्होंने सदैव भगवान स्वामिनारायण के चरणों में ही अर्पण किया है। वे स्वयं सदा अकर्ता और अलिप्तभाव से विनम्रतापूर्वक रहते हैं। 'समत्वं योग उच्यते' - गीतोक्ति का मूर्तिमान स्वरूप यदि आप देखना चाहते हैं, तो स्वामीश्री के अलावा अन्यत्र कहाँ मिलेगा?'

ऐसा समत्व, बुद्धि का खेल नहीं, बल्कि सर्वोच्च आध्यात्मिक स्थिति है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं, 'जो पुरुष मन-इन्द्रियों को वश में करता है और मन-बुद्धि से परे ऐसे परमात्मा की आत्यंतिक उपासना करता है, ऐसा संतजन ही समानभाव रखकर जीव-प्राणीमात्र का हित करने में रत रहता है।' (12-3)

रामचरित मानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने भगवान श्रीराम के शब्दों को लिखा है :

निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पदकंज ।
ते सज्जन मम प्राणप्रिय, गुणमंदिर सुखपुंज ॥ (उत्तरकांड)

अर्थात् जिन्हें निंदा और स्तुति में समता है, मेरे चरण कमल में ममता है, वे संतजन तो मुझे प्राण से भी अधिक प्रिय हैं; ऐसे संत सर्व सद्‌गुणों के मंदिर और सुखपुंज के समान हैं।

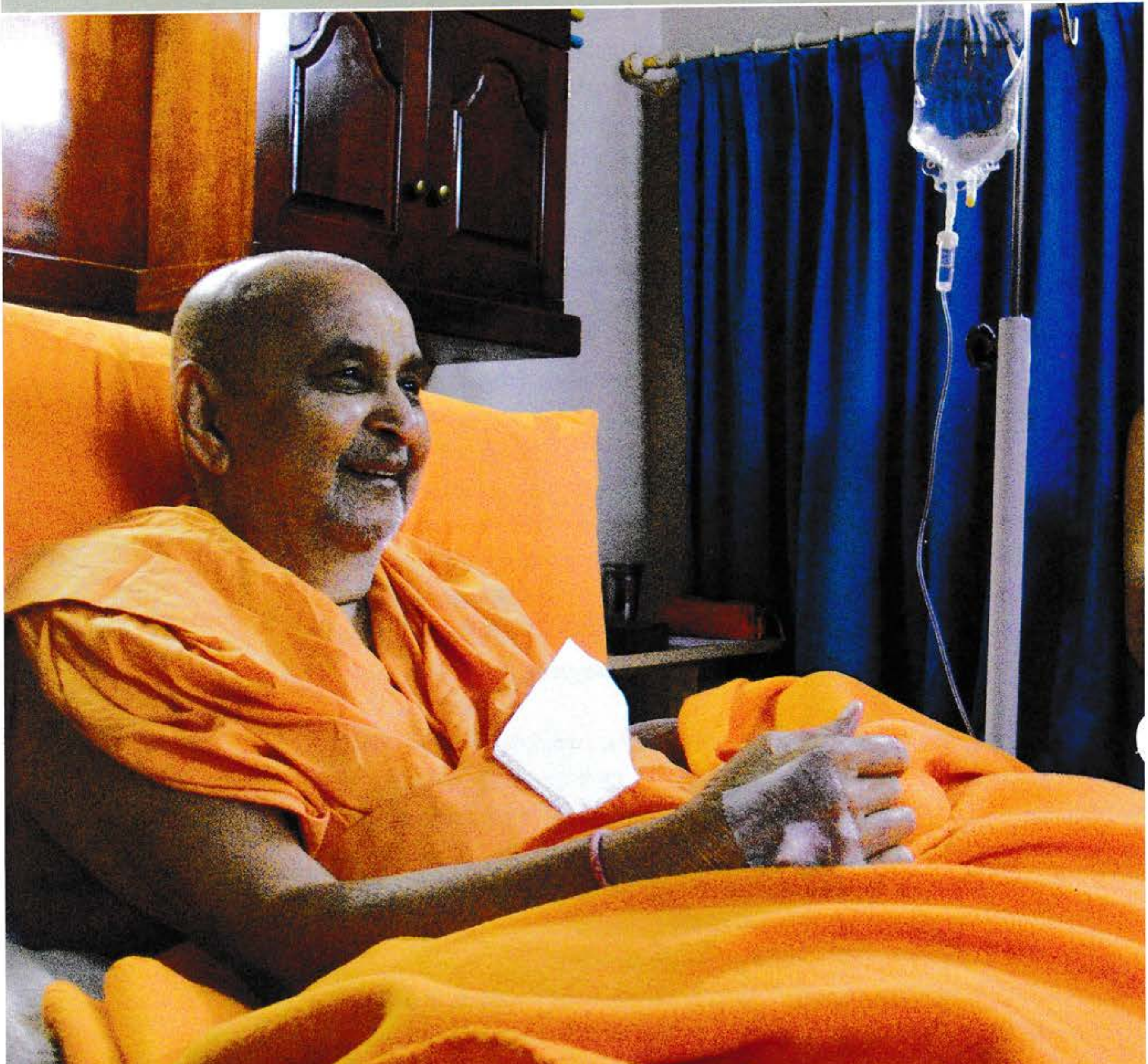

तितिक्षा

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

तितिक्षा अर्थात् जानबूझकर सहन करना।
असहाय होकर सहन करना विवशता है, समर्थ होते हुए भी सहन करना - एक आध्यात्मिक गुण है। तितिक्षा का यह गुण प्रमुखस्वामी महाराज के व्यक्तित्व से ऐसे जुड़ा है, जैसे सूर्य से उसकी रोशनी जुड़ी है। गंभीर रोगों से लेकर अनेक कठिन परिस्थितियों तक भाँति-भाँति की आधि, व्याधि तथा उपाधियों को हँसते हुए सहन कर लेने की इन्हें दिव्यशक्ति प्राप्त है।

वे प्राय: कहा करते हैं, 'यह शरीर रोग का घर है और संसार दु:ख का घर है। अपने घर पर रहने के लिए कोई न कोई तो आता ही रहता है! इसलिए दु:ख और रोग तो आते ही रहेंगे। राम और कृष्ण आदि भगवान के अवतार तथा शास्त्रीजी महाराज, योगीजी महाराज जैसे महान संत एवं नरसिंह मेहता तथा मीराबाई जैसे भक्त इस पृथ्वी पर अवतरित हुए थे। इनमें कोई दोष या कमी नहीं थी; फिर भी उनके जीवन में भाँति-भाँति के दु:ख आए और उन्होंने उसे सहन भी किया। जिनको ज्ञान है उन्हें दु:ख, दु:ख जैसा नहीं लगता। जो लोग जानबूझकर सहन करना जानते हैं, उन्हें दु:ख और संकट की स्थिति में भी अखण्ड आनन्द मिलता रहता है।'

ये शब्द, स्वामीश्री के अनुभव के मोती हैं। सुख-दु:ख के द्वन्द्व में स्वामीश्री की सहनशीलता आश्चर्य पैदा करती है। गर्मी-ठंडी, भूख-प्यास, शरीर का कोई भी रोग हो अथवा दु:ख, इन्हें सहन करने के लिए वे वज्र जैसा कठोर हृदय रखते हैं। सब कुछ मूक बनकर सहन कर लेना, बचपन से ही उनकी सहज प्रकृति रही है। इस सम्बंध में वे न तो कोई शिकायत करते हैं, न ही कोई माँग। तितिक्षा उनकी साधुता की अनोखी संपत्ति बन चुकी है। प्रमुखपद पर नियुक्त होने तथा गुरुपद पर विराजमान होने के बाद, उनका जीवन तितिक्षा का एक दिव्य दर्शन बन गया है। देश हो अथवा विदेश; शहर हो अथवा गाँव; उनका अविरत विचरण तितिक्षा का एक अनुपम अध्याय बन चुका है।

बहते हुए पवन, समुद्र में उठनेवाली लहरों तथा नदी के जल का कहीं विराम नहीं होता; उसी प्रकार स्वामीश्री ने कभी विराम नहीं लिया। उपनिषद् में वर्णित परिव्राजक के वे मूर्तिमान स्वरूप हैं। गाँव-गाँव, घर-घर तथा जन-जन तक लोक-कल्याण की अपनी इस महायात्रा में स्वामीश्री ने अनंत कठिनाइयाँ झेली हैं।

उनके शरीर पर पड़नेवाले कष्टों, बेशुमार कठिनाइयों तथा भाँति-भाँति के विघ्नों का कभी अंत ही नहीं होता था। विचरण के उस दौर में उनके लिए न तो आराम करने का समय

उम्र और स्वास्थ्य की चिंता किए बग़ैर स्वामीश्री हजारों गाँवों में तितिक्षा पूर्वक विचरण करते रहे हैं...

होता, न ही भोजन करने का कोई ठिकाना। आज यदि दोपहर में 1.00 बजे भोजन लिया हो, तो कल दोपहर में 2.30 बजे! ऋतु चाहे कोई भी हो, स्वामीश्री को इसकी कोई चिंता नहीं सताती। शीतकाल की कड़कड़ाती ठंड में बर्फीली हवाओं के बीच, स्वामीश्री साबरकांठा के गाँवों में लोगों को सांत्वना देने पहुँच जाते थे। निरंतर होती वर्षा के बीच वे सौराष्ट्र के गाँवों में पहुँचकर लोगों को अपने दिव्य आशीर्वाद देते थे। विपरीत मौसम में जब बड़े-बड़े साहसी जवानों का साहस भी जवाब दे देता, तो स्वामीश्री चालू विचरण में हँसते हुए कहते कि 'ऋतु अपना काम करती रहे और हम अपना काम करते रहें।'

65 वर्ष की उम्र तक जाड़े की ऋतु में स्वामीश्री को ऊनी टोपी पहनने के लिए सेवक संतों को कितना आग्रह करना पड़ता था! गाँवों में प्राय: बिजली के अभाव में पंखे कहाँ से होते? भीषण गर्मी के समय यदि कोई संपन्न भक्त स्वामीश्री के लिए एयरकंडीशन की व्यवस्था कर दे, तो उसे स्वामीश्री की झिड़की सुननी पड़ती थी कि 'यह किसके लिए किया? शरीर को ऐसी आदत नहीं डालनी चाहिए ।'

इतनी विषम परिस्थिति में भी स्वामीश्री लोककल्याण का अभियान हँसते हुए चलाते रहे हैं। गाँवों के असंख्य हरिभक्त स्वामीश्री की ऐसी तितिक्षा के साक्षी हैं।

जून, 1979 में स्वामीश्री दक्षिण गुजरात के महुवा तहसील में विचरण कर रहे थे। खारपा तथा फूलवाडी जैसे अत्यंत ही पिछड़े हुए आदिवासी गाँवों में उन्होंने एक-एक झोपड़े में पदार्पण किया था। देदवासण गाँव के कच्चे रास्ते पर मिट्टी-पत्थर एवं मेटल की सामग्री बिखरी पड़ी हुई थी। ऐसे ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर वाहन ले जाना असंभव था। देखते ही देखते बरसात की गति तेज़ होने लगी। एक इँच भर गाड़ी आगे बढ़ाना कठिन था। नारायणप्रसाद स्वामी ने कहा, 'स्वामीजी! आगे चलना असंभव है, आप रहने दीजिए। आपको यहाँ बहुत कष्ट झेलना पड़ा है।'

स्वामीश्री ने कहा, 'यदि गाडी नहीं जाएगी तो हम पैदल चलेंगे। चलने से या बरसात में भीगने से शरीर तो नहीं घिस जाएगा! हमें सोचना चाहिए कि इस इलाके के हरिभक्त ऐसी ही विकट परिस्थिति में सदैव रहते हैं। आप सभी संत भी विचरण के समय मच्छड़, खटमल इत्यादि का कष्ट झेलते रहते हैं। आपने भी खाने-पीने-सोने की कठिनाइयों के बीच विचरण जारी रखा है, तो मुझे कौन सी बाधा आ जाएगी?' स्वामीश्री कीचड़ से सनी हुई

प्रमुखस्वामी महाराज से अत्यंत ही प्रभावित हूँ।
स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि महापुरुष शान्त, स्थिर
और अदृश्य ही रहते हैं। ये सभी लक्षण, प्रमुखस्वामी की शक्ति के कारण हैं,
वे स्वयं कुछ नहीं कहते। प्रमुखस्वामी में मैंने एक बालसुलभ संत की
अहंशून्यता देखी है। ऐसे अहंशून्य संत में विद्यमान रहकर भगवान
अद्‌भुत कार्य करते हैं। मैं उन्हें हृदय से प्रेम करता हूँ और गहरा प्रेम करता हूँ।

- पूज्य स्वामी जितात्मानंदजी

(उपाध्यक्ष, रामकृष्ण मिशन)

सड़क पैदल ही पार करने लगे। ऐसा सैकड़ों बार हुआ है कि स्वामीश्री को भारी बरसात के बीच गाँवों में कीचड़ रौंदते हुए एक घर से दूसरे घर पधरावनी के लिए जाना पड़ा हो।

सन् 1967 के बरसाती मौसम में स्वामीश्री गोंडल से गढ़डा होकर जीप द्वारा सारंगपुर जा रहे थे। भारी बरसात के कारण मार्ग में चारों ओर जल ही जल दिखाई दे रहा था। स्वामीश्री वल्लभीपुर होकर खांभडा पहुँचे। रात के 12.00 बज चुके थे। ड्राइवर अर्धनिद्रा की झपकियाँ ले रहा था। एकाएक जीप सड़क की ढलान से नीचे की ओर उतरने लगी। स्वामीश्री ने तुरन्त ही ड्राईवर को सावधान किया और जीप पानी में लुढ़कने से बच गई। जीप रुकवाकर वे नीचे उतर गए, क्योंकि ढलान पर लगभग दो फुट पानी भर चुका था। स्वामीश्री ने देखा, तो सड़क का एक किनारा बरसात में पूरी तरह बह गया था!

जीप को पीछे लाने का काफी प्रयास किया गया, परन्तु पेट्रोल न होने के कारण वह स्टार्ट ही नहीं होती थी! स्वामीश्री ने शान्त स्वर में कहा, 'चलो, पैदल ही सारंगपुर पहुँच जाएँ।' फिर ड्राइवर को वहीं रोककर वे पेट्रोल की व्यवस्था करने के लिए सारंगपुर के लिए निकल पड़े। भयंकर बरसात और चिकनी मिट्टी में फिसलने का भय था। स्वामीश्री ने अपने जूते हाथ में ले लिए। नंगे पाँव कीचड़ से लथपथ सड़क पर चलते हुए वे सारंगपुर पहुँचे। उस समय अर्धरात्रि के बाद लगभग तीन बज रहे थे!

चाहे कठिनाइयाँ प्रकृति सर्जित हों या मानवसर्जित, स्वामीश्री का मनोभाव अति सहजभाव से उन्हें सहन करने का ही रहता है।

19 जून, 1977 को लंदन के वेम्बली कोन्फरन्स ऐरिना में एक भव्य सार्वजनिक सभा का कार्यक्रम था। छत में लगे हुए एयरकंडीशन द्वारा अत्यंत ठंडी हवा स्वामीश्री के सिर पर ही लग रही थी। लगातार पाँच घण्टे तक चली उस सभा में, स्टेज पर बैठे हुए सभी संत कड़ी ठंड से कांप रहे थे। सभा संपन्न होने के बाद जब लोग बाहर निकले, तो बाहर भी बर्फीली हवाएँ चल रही थीं। स्वामीश्री, संतवृंद के साथ ईश्वरभाई मास्टर के यहाँ पहुँचे। उनके घर के छोटे से रसोई घर में स्वामीश्री और संतों के लिए भोजन की व्यवस्था की गई थी। स्वामीश्री का आसन रसोई घर के बरामदे में पानी की सिन्क के पास ही लगाया गया था। रसोई घर में आने-जाने की तनिक भी जगह शेष नहीं बची थी।

यज्ञेश्वर स्वामी ने अत्यंत सावधानी पूर्वक जलपात्र भर-भरकर एक-दूसरे को देना शुरू किया। अभी वे, संतों को एक-दो गिलास ही पानी दे पाये थे कि एक गिलास का पानी छलककर स्वामीश्री की पीठ पर लुढ़क पड़ा और वे उपवस्त्र सहित भीग गए। एक तो वे

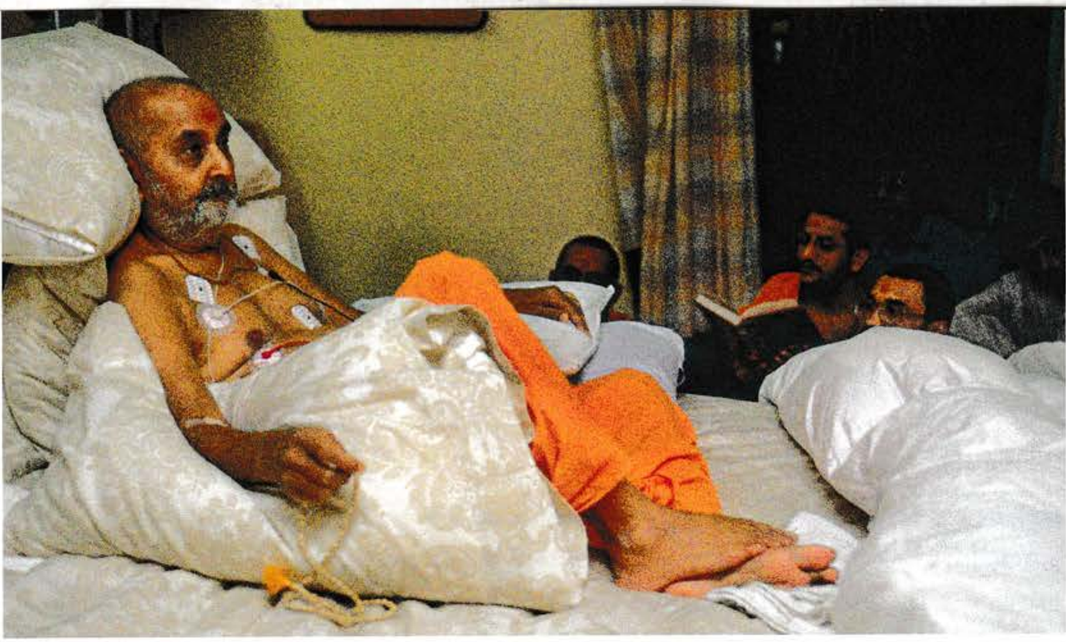

हृदय की बायपास सर्जरी होने के पूर्व कथाश्रवण में तल्लीन स्वामीश्री, 1998, न्युयोर्क

पाँच घण्टे तक सभा में वैसे ही ठिठुरते रहे और यहाँ पर उनके ऊपर ठंडा पानी गिर गया! परन्तु स्वामीश्री तनिक भी विचलित नहीं हुए। उन्हें देखने पर ऐसा लगता था कि जैसे कुछ हुआ ही न हो! शारीरिक सुख-दु:ख को वे जिस प्रकार से सहन करते हैं, उसे देखकर आश्चर्य होता है। बीमारी के समय उनकी तितिक्षा और भी निखरकर सामने आती है।

सन् 1978 में गाँवों के विचरण की एक घटना, आज भी संतों के मन-मस्तिष्क में ताज़ी है। कठोर परिश्रम के बाद स्वामीश्री 28-9-1978 के दिन दक्षिण गुजरात के कपुरा गाँव में पधारे। अगले दिन निर्जल उपवास के बावजूद उन्होंने घर-घर व्यसनमुक्ति के लिए पधरावनी की थी। उसी उपक्रम में आज सुमनभाई नरसिंहभाई भट्ट के घर सत्संग सभा का आयोजन किया गया था। विवेकसागर स्वामी प्रवचन कर रहे थे कि अचानक स्वामीश्री का शरीर धीरे-धीरे काला पड़ने लगा। संतों ने देखा तो भय के कारण उनका गला सूखने लगा। स्वामीश्री अपनी प्रकृति के अनुसार माला फेर रहे थे। साथ के सभी संत चिंतित थे। सेवक ने आकर स्वामीश्री का स्पर्श किया, उसी क्षण वे अशक्ति और बुखार के कारण मंच पर ही लुढ़क पड़े। सभा अगले ही क्षण समाप्त कर दी गई। निकट के व्यारा गाँव में ही चिकित्सा करवाई जा सकती थी। सभी ने स्वामीश्री को सहारा देकर कार में बैठाया और तुरन्त ही व्यारा की ओर निकल पड़े। जीतूभाई शाह के घर स्वामीश्री के निवास की व्यवस्था थी।

गाँव के डॉक्टर को बुलाया गया। स्वामीश्री आँखें नहीं खोल पा रहे थे। बिस्तर तक पहुँचते ही वे अचेत-से होकर गिर गए। सभी संत और हरिभक्तों के मन पर यही भय छाया था कि अब क्या होगा? क्या किया जाए कि स्वामीश्री का स्वास्थ्य अच्छा हो?

तात्कालिक औषधियाँ उपलब्ध की गईं, परन्तु बुखार उतरने का नाम ही नहीं लेता था। वे बेहोश अवस्था में भी संतों को कोई परामर्श दे रहे थे, किन्तु वह स्पष्ट रूप से किसी की समझ में नहीं आया। बाद में मालूम हुआ कि स्वामीश्री अगले कार्यक्रम की चिंता कर रहे थे कि, 'आज हम मढीवाले महेन्द्रभाई के यहाँ न जा सके... तो सुमन के बापूजी को बुरा तो नहीं लगेगा?' संतों की आँखें स्वामीश्री की भावना देखकर आँसुओं से भीग गईं। स्वामीश्री अपने आप करवट बदलने में भी असमर्थ थे। ऐसी स्थिति में भी हरिभक्तों की इतनी चिंता?

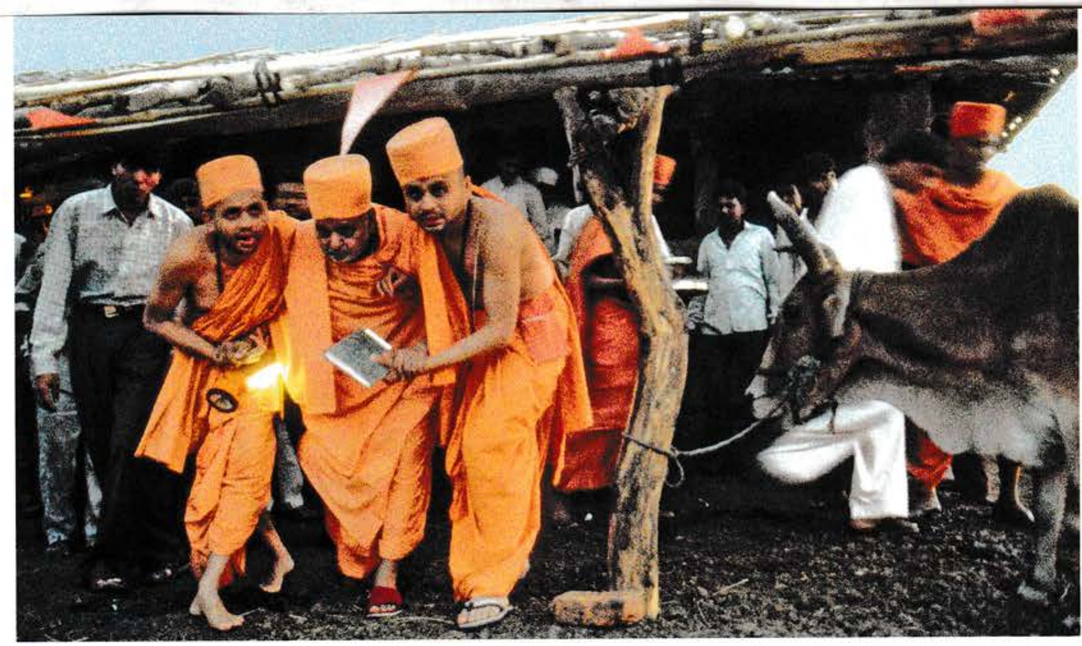

गरीब आदिवासियों की झोपड़ियों में पधरावनी करने में उन्होंने कितने कष्ट सहे हैं! कंबोई, अप्रैल, 1998

ठीक दोपहर के 11.30 बजे स्वामीश्री अचानक साहस करके बिस्तर में ही उठ बैठे और संतों से पूछने लगे कि, 'ठाकुरजी हरिकृष्ण महाराज को नैवेद्य अर्पण कर दिया ?'

'जी स्वामीजी, पूरी तरह सेवा की गई है। आप आराम कीजिए।'

इतनी अस्वस्थता के बावजूद स्वामीश्री को अपनी चिंता नहीं थी। वे तो ठाकुरजी का स्मरण कर रहे थे! जाँच के बाद मालूम हुआ कि स्वामीश्री को पीलिया हो गया था। डॉक्टर द्वारा निदान करने के बाद अशक्ति होने पर भी स्वामीश्री ने विचरण स्थगित नहीं किया।

उसी दौरान स्वामीश्री को मसूढ़े का दर्द भी तीव्र होने लगा था। वे बिना बोले सहन कर रहे थे। संयोगवश तीन दिन के बाद राजकोट के प्रसिद्ध दंतवैद्य श्री लाभशंकरभाई दर्शन करने आ पहुँचे। उन्होंने स्वामीश्री के मसूढ़े को जब थोड़ा सा दबाया, तो मवाद निकलने लगी। वे तुरन्त बोल पड़े, 'इतनी पीड़ा तो मात्र स्वामीश्री ही सहन कर सकते हैं।'

शरीर के कष्टों को खामोश रहकर सहन कर लेना उनकी विशेषता है।

सन् 1984 में स्वामीश्री भूमिपूजन के लिए नडियाद पधारे थे। अचानक उनके चप्पल के एक किनारे से बबूल का एक कांटा उनके पैर में चुभ गया। एक-दो संत दौड़कर नजदीक आ ही रहे थे कि स्वामीश्री ने स्वयं कांटा निकाल लिया और खून निकलने लगा। पीड़ा की बात किनारे रखकर, स्वामीश्री ने दोनों संतों से धीमी आवाज़ में कहा, 'किसी से कहना मत।'

संतों ने व्यवस्थापक को कुछ कहना चाहा कि भूमि की अच्छी तरह सफाई करवा लेनी चाहिए थी। परन्तु वह दु:खी न हों, इसलिए स्वामीश्री ने संतों को बुलाकर धीरे से कहा था कि किसी को टोकना मत। उसी प्रकार एकबार नवसारी में परिक्रमा करते समय उनके पैर में गन-स्टेपलर की पिन चुभ गई थी। इस दर्द को भी उन्होंने चुपचाप सहन कर लिया था।

'सिर दर्द' अथवा 'पाँव दर्द' की शिकायत करना स्वामीश्री की आदत ही नहीं है। किन्तु बड़े रोगों को भी उन्होंने बड़ी ही सहजता से सहन किया है।

चिकित्सकों द्वारा दिये गए गंभीर परामर्श के बावजूद उनका सेवा-कार्य कभी स्थगित

नहीं हुआ। प्रत्येक बीमारी के समय इनकी तितिक्षा की पराकाष्ठा का दर्शन होता रहा है। पथरी का रोग हो या आँख में मोतियाबिंद का ऑपरेशन, कमर के नीचे गाँठ बन गई हो अथवा हृदयरोग का हमला ही क्यों न हुआ हो, स्वामीश्री कभी भी अपनी पीड़ा को जबान तक नहीं लाते।

सन् 1983 की 5 फरवरी को आणंद के पास सुंदलपुरा गाँव में स्वामीश्री को प्रथम हृदयरोग का हमला हुआ। एक ओर स्वयं हृदय की पीड़ा के शिकार थे, तो दूसरी ओर वे दूसरों के लिए चिंतित थे! उन्होंने अस्पताल जाते हुए अपनी कार रुकवाकर, वहाँ एकत्रित संतों में से आचार्य स्वामी से कहा, 'हम तो अब अस्पताल में भर्ती हो जाएँगे, न जाने कब विचरण शुरू हो पाए। आणंद में पारायण पर्व का आयोजन हुआ है; वहाँ जाकर आप उस प्रसंग को संभाल लेना!'

सन् 1996 में अमेरिका की धर्मयात्रा के दौरान, चिकित्सकों के परामर्श पर ह्युस्टन में उनके हृदय की एन्जियोग्राफी कराई गई। विख्यात कार्डियोलोजिस्ट डॉ. वीरेन्द्र माथुर उस समय विस्मयपूर्वक बोल उठे थे, 'स्वामीजी एक अद्‌भुत व्यक्ति हैं! रोग की पीड़ा में भी उनके पास गजब का धैर्य है! शरीर पर इतने टेस्ट किए गए, किन्तु उनके मुख से उफ् तक नहीं निकला। इनके पास बहुत बड़ी सहनशक्ति है! ऐसा रोगी मैं जीवन में पहली बार देख रहा हूँ।'

7 जुलाई, 1998 को न्युयॉर्क के लेनोक्स हिल होस्पिटल में विख्यात कार्डियोलोजिस्ट डॉ. मोसेस तथा डॉ. श्वॉर्ट्ज ने स्वामीश्री की एन्जियोग्राफी की। केथलेब से निकलते ही दोनों ने स्वामीश्री की गंभीर स्थिति से सभी को अवगत कराया तथा यथाशीघ्र बायपास सर्जरी का परामर्श दिया। स्वामीश्री एन्जियोग्राफी के टेबल पर ही थे। उस समय अंग्रेजी भाषा से अनजान कृष्णवल्लभ स्वामी से डॉ. श्वॉर्ट्ज का युवा असिस्टन्ट बातचीत की कोशिश कर रहा था, यह देखकर स्वामीश्री ठठाकर हँस पड़े। ऐसी गंभीर स्थिति में भी हँसते हुए स्वामीश्री को देखकर, वह युवा अमेरिकन डॉक्टर गहन आश्चर्य में डूब गया!

एन्जियोग्राफी के परिणामों से अवगत होकर सभी ने स्वामीश्री को तत्काल बायपास सर्जरी की जानकारी दी। स्वामीश्री माला फेरते हुए बोल पड़े, 'जैसी भगवान की इच्छा।' इतना कहकर वे दो घण्टे तक गहरी नींद में सोते रहे! सर्जरी के उस दौर में भी स्वामीश्री की स्थिरता एवं तितिक्षा का सहज परिचय मिला।

सर्जरी के पश्चात् स्वामीश्री डॉ. महेन्द्रभाई पटेल के घर कुछ सप्ताह तक आराम करने पधारे। उन दिनों उनकी पीठ पर काफ़ी दर्द हो रहा था। एक दिन सोते समय उनकी पीड़ा का आभास योगीचरण स्वामी तथा डॉ. किरणभाई दोशी को हुआ, तो दोनों ने सहज ही पूछा, 'स्वामीजी, दर्द होता है?' स्वामीश्री ने स्वीकृति में उत्तर दिया। तत्काल फिजियोथेरापिस्ट डॉ. जॉन को बुलाया गया। उन्होंने कहा कि 'मैं आपके कंधे के पीछे अंगूठे से दबाता हूँ। पहले हलके-से दबाऊँगा, बाद में धीरे-धीरे दबाव बढ़ाता जाऊँगा। जब आप सहन न कर पाएँ, तब बोलिएगा।' इतना कहकर डॉ. जॉन ने अंगूठे से स्वामीश्री की पीठ पर दबाव बढ़ाना शुरू किया। पूरी शक्ति से दबाने पर डॉ. जॉन का अंगूठा दुखने लगा, किन्तु स्वामीश्री के मुख से उफ् तक न निकला! आश्चर्यचकित डॉ. जॉन ने कहा, 'कैसे रोगी हैं ये! मैंने इतने वयोवृद्ध किन्तु सहनशील रोगी को जीवन में पहली बार देखा!'

बायपास सर्जरी के बाद प्रसिद्ध टेकनोक्रेट साम पित्रोडा ने मुलाकात के दौरान स्वामीश्री

महाराष्ट्र में समुद्राल गाँव के भाव-विभोर भक्तों के बीच शोभायात्रा में, 1995

से कहा, 'मेरा स्वयं का अनुभव है कि सर्जरी के बाद प्रारंभ में दो महीने तक छाती में कुछ भार-सा महसूस होगा, जैसे गले में ईंट लटकाई गई हो! क्या आपको अभी ऐसा वजन लगता है?' स्वामीश्री ने कहा, 'हाँ, लगता था; किन्तु अब नहीं लगता।'

यह सुनकर सेवक संत विस्मित हो गए। क्योंकि आज तक स्वामीश्री ने इसके बारे में कभी कोई शिकायत तक नहीं की थी, सब कुछ सहज ही सहन कर लिया था!

वायु-विकार के कारण पाँव में हो रहे दर्द के बारे में पूछने पर स्वामीश्री हँसते हुए गुजराती भजन की यह पंक्ति गुनगुनाने लगे, 'जूनुं तो थयुं रे देवळ जूनुं तो थयुं...' अर्थात् यह शरीर अब पुराना पड़ गया इसलिए ऐसा तो होगा ही। नारायणमुनि स्वामी ने कहा कि 'स्वामीजी, आज तक आपने बहुत सहन किया, इसलिए...'

स्वामीश्री बीच ही में बोल पड़े, 'सहन क्या किया है! शरीर तो किसी तरह से चल ही रहा है, हमें दूसरा क्या दु:ख है? खाट तो नहीं पकड़ लिया हूँ? मुझे नींद भी आती है और जो भोजन लेता हूँ, वह पचता है; इससे बड़ा सुख और क्या! भगवान की और कितनी दया चाहिए?' फिर अलमस्ताई से बोल उठे, 'बाक़ी जो बचा उसे तो भोगना ही होगा!'

अहमदाबाद के कार्डियोलोजिस्ट डॉ. मधुभाई पटेल ने एकबार स्वामीश्री का कार्डियोग्राम लिया। ग्राफ देखते ही उन्होंने कहा, 'स्वामीजी! परिश्रम कम कीजिए। इस बार का रिपोर्ट कुछ अलग ही संकेत देता है। लगता है कि जाड़े में आपने बहुत विचरण किया है।'

स्वामीश्री यह सुनकर मुस्कुरा रहे थे। दोपहर भोजन के समय उस रिपोर्ट को कुछ अलग ढंग से बताते हुए स्वामीश्री ने सेवक कृष्णवल्लभ स्वामी से कहा, 'आज तो डॉक्टर ने कहा कि 'आप भोजन अधिक करने लगे हैं, थोड़ा कम कीजिए!' हृदयरोग की घातक बीमारी की उपेक्षा करते हुए स्वामीश्री भीतर से कितने प्रफुल्लित थे!

कुछ दिनों के बाद भावनगर के डॉ. भूवा ने रिपोर्ट देखकर गंभीरतापूर्वक कहा था, 'यह लेटरल एक्सटेन्शन है, हृदय में रक्त का प्रवाह कम हो गया है। यदि वह धीरे-धीरे डेमेज होता जाएगा, तो हृदय की कार्यक्षमता घट जाएगी। यह जीवन के लिए गंभीर स्थिति है। ऐसी स्थिति में आपको विचरण बंद ही कर देना चाहिए...।'

स्वामीश्री ने निर्लेपभाव से मात्र इतना ही कहा, 'मैं तो जहाँ जाता हूँ, अच्छी तरह से नींद आ जाती है। जगह बदलने से नींद न आए, ऐसा भी नहीं है। जो खाता हूँ, वह पच जाता है। पधरावनी तो अब अधिक होती ही नहीं, इसलिए कोई परेशानी नहीं है। आपकी दृष्टि से यदि देखूँ, तो यहाँ से बाहर-तक जाना भी श्रम ही माना जाएगा। अन्यथा यह तो शरीर है, वृद्ध अवस्था भी हो चुकी है। इसलिए थोड़ी बहुत परेशानी तो होगी ही...।'

कोई भी साधारण आदमी ऐसे गंभीर परामर्श के बाद दो सीढ़ी चढ़ने-उतरने में भी विचार करेगा! किन्तु स्वामीश्री ने ऐसी स्थिति में भी अपने सतत विचरण को यथावत् जारी रखा!

सारंगपुर में स्वामीश्री की शारीरिक जाँच के लिए मुंबई से डॉ. सामाणी, डॉ. किरण दोशी, डॉ. पंचाल तथा डॉ. भगुभाई आए हुए थे। स्वामीश्री के कार्डियोग्राम में लेटरल एक्सटेन्शन की अत्यंत ही खतरनाक स्थिति देखकर डॉ. सामाणी ने कहा, 'स्वामीजी! हृदय के स्नायुओं को रक्त की अत्यधिक जरूरत पड़ती है, इसीलिए भगवान ने हमारे हृदय के लिए एक से अधिक आर्टरी की व्यवस्था की है। उनमें से यदि एक-दो ब्लॉक हो जाए, तो रक्त का प्रवाह कम पहुँचता है। इसलिए जितनी लम्बी चादर हो, उतना ही पाँव पसारिये...।'

जिस समय स्वामीश्री के कार्डियोग्राम के रिपोर्ट को लेकर डॉक्टरों के साथ संतवृंद सहित सभी चिंतित थे, उस स्थिति में स्वामीश्री शान्तचित्त प्रसन्नमुख बैठे हुए थे! यह देखकर डॉ. सामाणी दुविधा में पड़ गए और बोले, 'स्वामीजी, आप सुन रहे हैं न! आप अपना काम करें और मैं अपना करूँ, ऐसा तो नहीं है न?'

मधुर स्मित के साथ स्वामीश्री की मौन प्रतिक्रिया ने बातचीत पर विराम लगा दिया।

सन् 1993, कोलकाता में स्वामीश्री को अचानक चक्कर आने लगे। उनके मस्तिष्क के किसी भाग में अल्प रक्त-भ्रमण की शंका थी। उन्हें मुंबई हॉस्पिटल में ले जाने के लिए चिकित्सकों एवं अन्य प्रमुख लोगों ने समस्त कार्यक्रम को रद्द करने का परामर्श दिया। स्वामीश्री ने स्पष्ट रूप से कहा, 'भगवान को याद करके हम सभी को आशीर्वाद देते हैं, तो क्या भगवान हमें आशीर्वाद नहीं देंगे? आप नित्य माला फेरिये। मैं भी फेरूँगा। सब कुछ अच्छा हो जाएगा। दो-चार दिनों में कोई दुर्घटना नहीं होनेवाली है। यहाँ पर हरिभक्त पूरी तैयारी के साथ आते हैं, तो सब कुछ संपन्न होने के बाद ही जाना है! जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं, मुझे कुछ नहीं होगा...।' हरिभक्तों के लिए वे अपनी गंभीर बीमारी को भी उपेक्षित करके कोई भी सलाह मानने को तैयार नहीं होते!

स्वामीश्री की रग-रग में तितिक्षा घुली हुई है; इसलिए उनकी 91 वर्ष की उम्र में भी चिकित्सकों को उन्हें, बालकों की भाँति सिखलाना पड़ता है - 'आपके शरीर में यदि कहीं दर्द होता हो, अथवा कोई कठिनाई होती हो तो मुझसे कहिएगा; उसे सहन मत कीजिएगा। मुझे सेवा का अवसर दीजिए...।' किन्तु उन्होंने जीवनभर जो नहीं किया, वह शिकायत अब कैसे कर सकते हैं? एकबार किसी ने उन्हें अपने स्वास्थ्य को संभालने की बहुत सलाह दी, तो उन्होंने कहा था, 'स्वास्थ्य तो भगवान संभालते हैं, हमें क्या संभालना है? भगवान ने शरीर दिया है, उन्हें जितनी सेवा लेनी है, उतनी लेंगे!'

जीवन के प्रत्येक जटिल क्षण को स्वामीश्री उत्सव की भाँति जीते हैं; इसी में उनकी ब्राह्मीस्थिति का लक्षण प्रकट हो जाता है। इसीलिए उन्हें देहभाव स्पर्श नहीं कर सकता!

सन् 1994 में स्वामीश्री युरोप के प्राग नगर में पधारे हुए थे, उस समय एकबार संध्या की सभा के पश्चात् स्वामीश्री का पाँव दबाते हुए सेवक का हाथ उनके पाँव में स्पर्श कर

गया, तो उसे कुछ घाव जैसा महसूस हुआ। उसने पूछा, 'आपके पाँवों में क्या हुआ है? घाव लगा है?' स्वामीश्री ने कुछ भी नहीं कहा। अधिक आग्रह करने पर उन्होंने कहा, 'शरीर है, तो ऐसा होगा ही!' रोम-रोम में समाए हुए इसी तत्त्वज्ञान के कारण, उन्हें शारीरिक कष्टों की कोई परवाह नहीं रहती।

सामाजिक व्यवधानों में भी उनकी सहिष्णुता चरमसीमा पर रहती है। न जाने कितने अपमानों के घूंट, उन्होंने हँसते हुए गले में उतारा है। चाहे अज्ञानता रही हो अथवा ईर्ष्या-द्वेष, उनकी निंदा करनेवालों को स्वामीश्री द्वारा कभी भी कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया गया! ऐसी स्थिति में सहन कर लेना ही उनकी भावना रही है। 'तान् तितिक्षस्व भारत' का गीतामंत्र उनका पर्याय बन गया है। गुजराती साप्ताहिक 'चित्रलेखा' पत्रिका के प्रधान संपादक हरकिशन मेहता ने मुंबई में एक इन्टरव्यू के दौरान स्वामीश्री से पूछा, 'यदि आपकी कोई निंदा करे, तो आपकी क्या प्रतिक्रिया होती है?' स्वामीश्री ने कहा, 'निंदा की कोई चिंता ही नहीं! यदि भगवान की दृष्टि में हम सच्चे हैं, तो लोग जो चाहे सो बोलें। आज उनका अज्ञान है, तो कल उन्हें समझ आएगी ही।'

'लेकिन आपको उस निंदा का स्पष्टीकरण देना जरूरी लगता है?'

स्वामीश्री ने कहा, 'कुछ भी नहीं!'

9 फरवरी, 1990 को महाराष्ट्र के आकोला में स्वामीश्री ने ऐसे ही एक अवसर पर कहा था, 'भगवान की इच्छा से जो कष्ट आ पड़ा है, उसे सहन करना ही है।'

13 फरवरी, 2007 को मुंबई में एक गोष्ठी के दौरान स्वामीश्री से संतों ने पूछा था, 'आप कहते हैं कि सहन करें; किन्तु लोगों को कहाँ तक बर्दाश्त करें? अति होने पर जवाब तो देना ही चाहिए।' स्वामीश्री ने कहा, 'सहन करने के साथ सबके प्रति स्नेहभाव रखो! योगीजी महाराज ने जीवन के अंत तक सहन ही किया है। विपरीत परिस्थिति में भी उनके मुख से एक भी शब्द विरोध या शिकायत का नहीं निकला था। विरोधियों के सामने मौन रहेंगे, तो वे किसी दिन सोचेंगे कि 'इतना परेशान करने पर भी यह कुछ बोलता नहीं!' इस प्रकार बिना कुछ बोले ही परिवर्तन हो जाता है। कहा गया है कि 'मौनात् सर्वसिद्धिः।' निर्मानी होकर सेवा कीजिए, इसी में महत्ता है। सत्पुरुषों के व्यवहार से यही सिद्ध हुआ है। वे स्पष्टीकरण देने नहीं गए थे। शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज ने धैर्य रखा था न! उन्होंने हमें कभी प्रतिशोध लेने की सीख नहीं दी थी। शान्त रहने से ही परिवर्तन हो जाता है। इसलिए चाहे जितना भी हो जाए, उसे सहन करना है, किन्तु निष्क्रिय नहीं रहना है।'

इससे बड़ी तितिक्षासंहिता दूसरी क्या हो सकती है!

सन् 1986 में गुजरात समाचार के स्थानीय संपादक कनुभाई मेहता ने मुंबई में स्वामीश्री से पूछा था, 'आपको जीवन में कभी पश्चात्ताप हुआ है?'

स्वामीश्री ने आश्चर्य के साथ कहा, 'पश्चात्ताप किस बात का? सब कुछ तो भगवान की इच्छा से होता है; यही समझिए तो किसी बात का पश्चात्ताप होगा ही नहीं।'

'आपको जिस घटना के बाद अधिक आनंद की अनुभूति हुई हो, ऐसी कोई घटना... ?'

'मुझे तो हर प्रकार की सेवा-प्रवृत्तियों में आनंद ही आनंद है।' स्वामीश्री बोले।

यही उनकी तितिक्षा की चरम परिणति है और सहन करने का आनंद भी है!!

स्वामीश्री का यह तितिक्षा योग अद्‌भुत है!

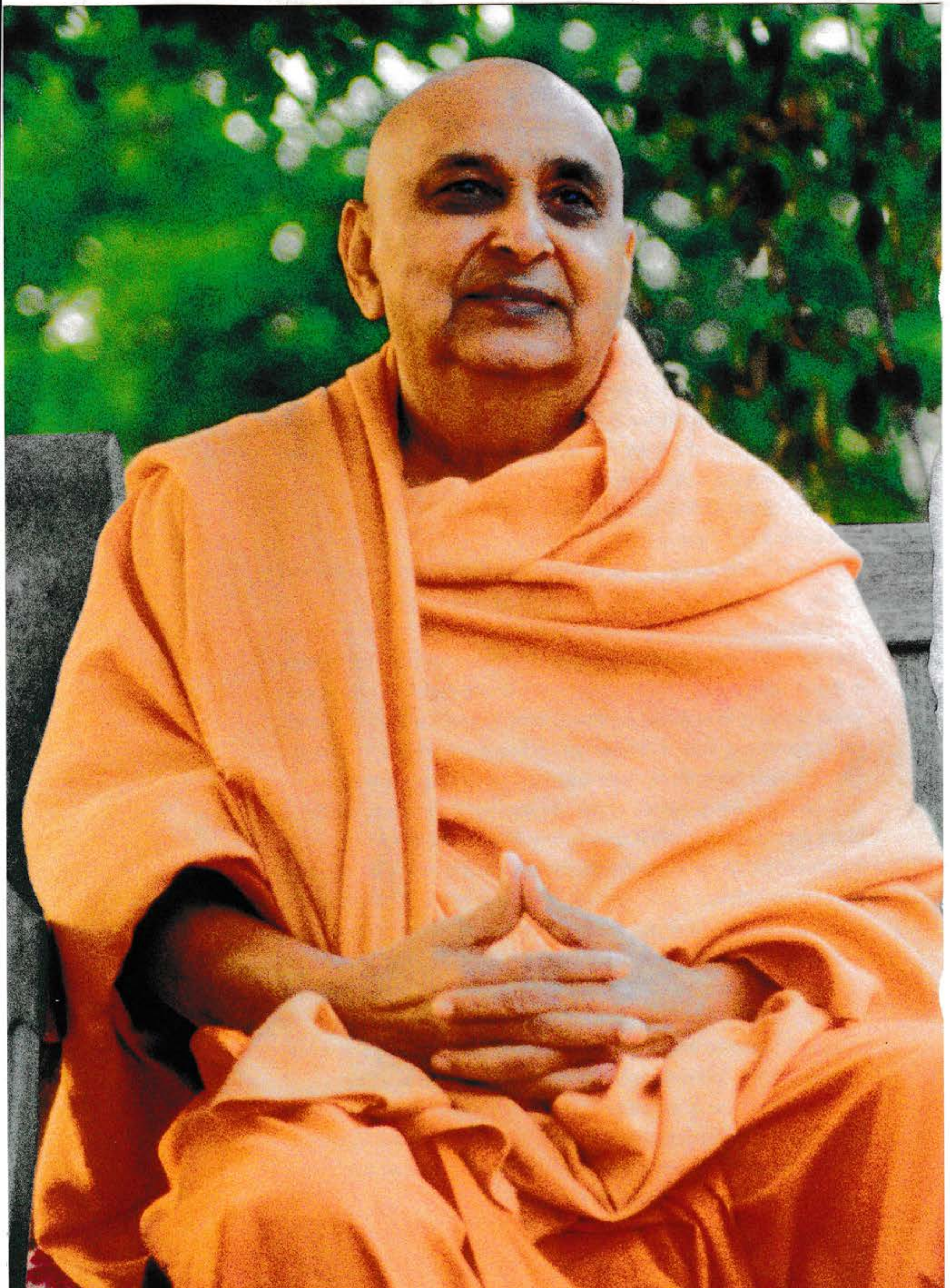

उपरतिः

विरक्तिः

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

विरक्ति अर्थात् पंचविषयों के भोग से उदासीनता ।
उपरति अर्थात् लौकिक लाभ अथवा सांसारिक व्यवहार में अनासक्ति।
त्याग और विरक्ति के बीच सूक्ष्म भेद है। पदार्थों का स्थूल त्याग तो
सरल है, परन्तु पदार्थ भोगने की आसक्ति का त्याग ही विरक्ति है।
भगवान स्वामिनारायण ने पिंड-ब्रह्मांड से निःस्पृह रहने को ही
विरक्ति कहा है। निर्वेद के पथ पर चलनेवाले साधु-संन्यासी के लिए,
विरक्ति का सद्गुण नींव के पत्थर समान हैं।
परंतु साधना के शिखर पर पहुँचने के बाद भी इस सद्गुण को
पूर्णरूप से सिद्ध करना, शेरनी को दुहने जैसा दुष्कर है।
प्रमुखस्वामी महाराज को यह गुण सहज सिद्ध है।
74 वर्ष का उनका त्यागी जीवन और 18 वर्ष के उनके पूर्वाश्रम को देखें
तो उनको संसार से अलग कर देता है।

बहता हुआ जल, नदी का परिचय है; उसी प्रकार स्वामीश्री के जीवन में सतत प्रवाहित होती अनासक्ति, उनका परिचय बन चुकी है।

पंचविषयों की लहरें उन्हें ललचा नहीं सकतीं। धन-वैभव का विलास, उन्हें प्रभावित नहीं कर सकता। नाना प्रकार के भोग, उनके अंतराल को भिगो नहीं सकते। भाँति-भाँति के पद-प्रतिष्ठा के लाभ, उन्हें लुभा नहीं सकते। आधुनिकतम पदार्थों के प्रति उनकी कोई इच्छा ही नहीं। यह सब उन्हें, बिना किसी प्रयास के सहज सिद्ध हैं!

उनकी यह विरक्ति, कोई आडम्बर अथवा दंभ नहीं; सब कुछ सहज और स्वाभाविक! शम-दम-तप के प्रकरण में मन-इन्द्रियों पर संयम, उनकी विरक्ति का पक्ष है, तो दूसरा पक्ष है - उनकी अनासक्ति और निःस्पृहिता!

समग्र विश्व में सत्संग-यात्रा करते हुए, अंतर्राष्ट्रीय महानुभावों से मान-सम्मान प्राप्त करने के बावजूद सांसारिक आकांक्षाएँ उनका स्पर्श तक न कर सकीं!

लोग उनके चरणों में प्रतिदिन नये-नये पदार्थों का ढेर लगाते रहते हैं; परन्तु स्वयं के लिए उनकी कोई इच्छा नहीं होती।

सन् 2004 में स्वामीश्री अमेरिका में एडिसन शहर की एक सत्संग सभा में जा रहे

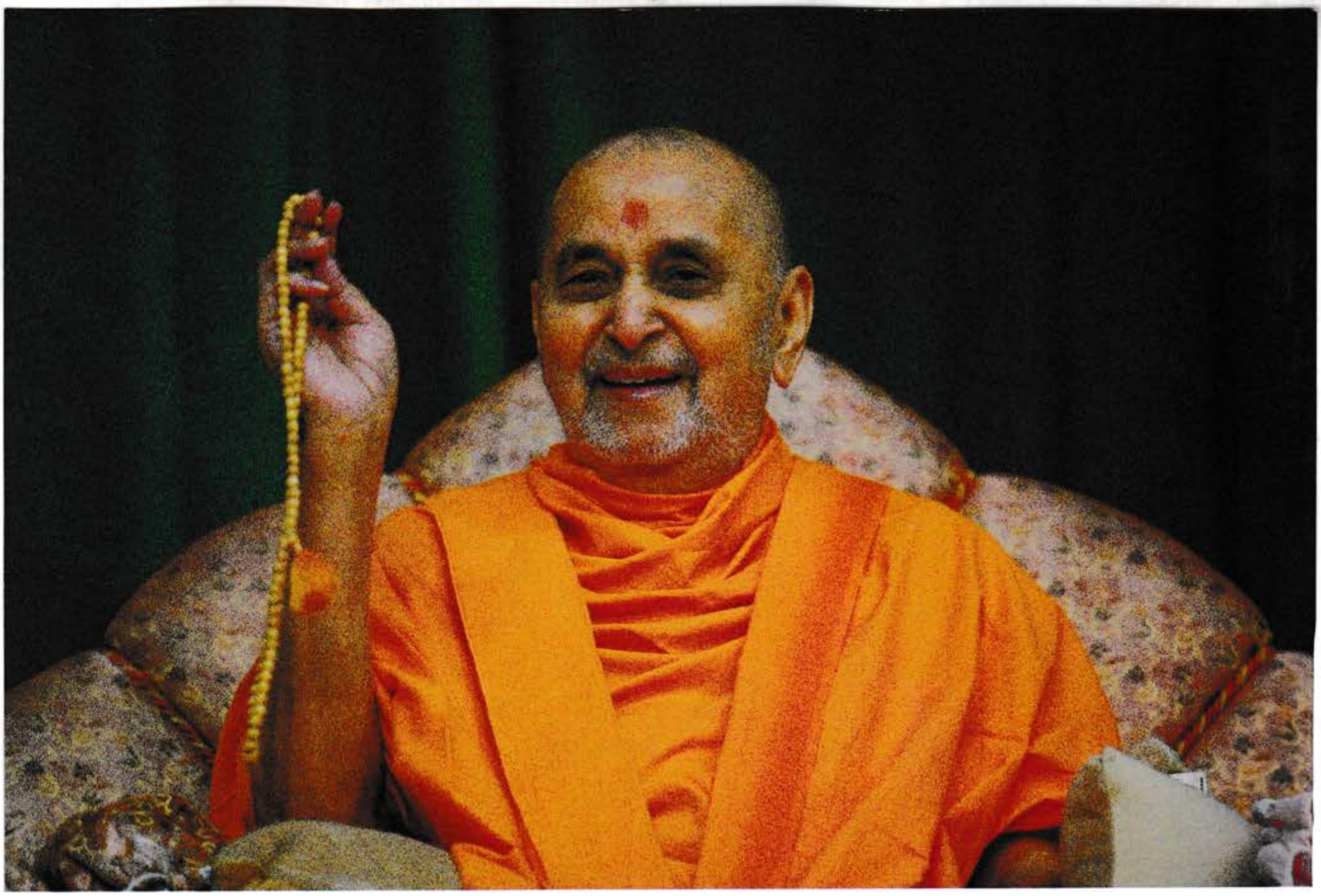

'माला फेरना और भजन-भक्ति करना ही मेरा व्यवसाय है...'

थे। बहुत दिनों से स्वामीश्री को एक आधुनिकतम कार भेंट में देने का संकल्प लिए, जयमीनभाई पटेल तथा हितेशभाई, स्वामीश्री को ऐसी ही आधुनिक कार में ले जा रहे थे।

मार्ग में कार की अनेक आश्चर्यजनक विशेषताएँ दिखाकर उन्होंने धीरे से कहा, 'स्वामीजी! यह गाड़ी तो आपके लिए अधिक उपयुक्त होगी!'

स्वामीश्री, उनका आशय समझकर बोले, 'मेरे लिए तो जो पुरानी है, वही उपयुक्त है।' उन्होंने बात टालने का प्रयास किया, परन्तु दोनों युवक अनेक उदाहरण देकर स्वामीश्री की स्वीकृति लेने का असफल प्रयास करते रहे।

अंत में हितेशभाई ने कहा, 'जब शास्त्रीजी महाराज ने आपको संस्था के प्रमुख पद पर नियुक्त किया, तब तो आपने कहा था कि मैं हरिभक्तों को प्रसन्न करूँगा। तो आज हमारी इतनी-सी विनती मान्य करें और हमको राजी करें।'

स्वामीश्री ने कहा, 'आपकी भावना देखकर आपके साथ इस कार में बैठा हूँ, यहाँ आकर आपसे मिले, यह आपको राजी ही तो किया है!'

'परन्तु स्वामीजी, ऐसी कार आपके लिए समर्पित करने की हमारी इच्छा है।'

'ऐसी इच्छा मत किया करो।' स्वामीश्री ने सहज स्मित करते हुए कहा।

वस्तु के अभाव में अथवा उसे प्राप्त करने की सामर्थ्य न होने से अनासक्ति रखना एक प्रकार की विवशता है, परन्तु वस्तु की उपलब्धि और सामर्थ्य दोनों होने पर भी आकर्षण न होना, विरक्ति का चरम शिखर है। स्वामीश्री ने सुविधाओं के नाम पर भी कभी राग को प्रोत्साहन नहीं दिया है।

प्रमुखस्वामी महाराज द्वारा आज समग्र संसार का उद्धार हो रहा है।
उन्होंने लोगों के मन में उत्पन्न जंगलों को जलाकर
एक संस्कारमय मंगल का निर्माण किया है।
वे केवल परमात्मा की सेवा के लिए समर्पित हैं,
कीर्ति, कांता और कनक से हंमेशा मुक्त हैं।
उनके आदेशों के अनुसार आज के युवा अपना जीवन समर्पित करते हैं।
यह वास्तव में एक बड़ा चमत्कार है।

- पू. चिन्ना जीअर स्वामी
(रामानुजाचार्य)

कई धनपति सत्संगी स्वामीश्री के लिए हेलिकॉप्टर लेने का संकल्प भी कर बैठे थे! परन्तु स्वामीश्री ने उनकी बात को मज़ाक में उड़ा कर सहज ही समेट लिया।

16 अक्टूम्बर, 1994 को वल्लभविद्यानगर में हेलिकॉप्टर की बात चली, तो स्वामीश्री ने कहा था, 'इहलोक के संकल्पों को छोड़कर परलोक के लिए संकल्प करना सीखो।'

संतों की ओर परोक्षरूप से संकेत करके स्वामीश्री ने पुनः कहा, 'दु:ख और सुख दोनों में स्थिर रह सकें, ऐसा अभ्यास त्यागी को निरंतर करना चाहिए। वाहन से महानता नहीं है। लोक संपर्क का काम महत्त्वपूर्ण है। हरिभक्तों को प्रसन्न करने के लिए चाहे मिट्टी में शयन करना पड़े अथवा गद्दा तकिये मिले, हमारे लिए दोनों स्थिति समान हैं। महल हो, या झोपड़ी, हमें सर्वत्र सुखपूर्वक रहना सीख लेना चाहिए।'

बैलगाड़ी या ट्रेक्टर, मर्सिडिस आदि कार या विभिन्न वायुयान, हर प्रकार के वाहनों में वे निस्पृहभाव से यात्रा कर लेते हैं। क्योंकि आसक्ति नहीं, त्याग उनका जीवन मंत्र है।

'लाखों के बीच में हो, तो भी समझो जंगल में हैं; जंगल में हों, तो भी समझो हम लाखों के बीच में हैं; ऐसा भाव रखो, यही आनंद का स्रोत है। यह ज्ञान बिना पैसे का है, किन्तु सर्वोपरि है।'

स्वामीश्री अपने हृदय के भावों को इन्हीं शब्दों में हमेशा व्यक्त करते रहते हैं।

भोग, विलास और संसार के रंगारंग में विहार करनेवाले असंख्य लोंगों को स्वामीश्री ने विरक्ति के माध्यम से भक्ति का रंग चढ़ा दिया है, जिससे उनकी जीवनशैली भी आध्यात्मिक और शान्तिपूर्ण बन चुकी है। 25 से अधिक विदेश-धर्मयात्रा में वहाँ के वैभव या मनोरंजक स्थानों में स्वामीश्री ने लेशमात्र रुचि नहीं रखी। वहाँ मुमुक्षुओं को सत्संग के प्रति लगाव बढ़ाना और उनके जीवन में आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों का सिंचन करना ही उनका लक्ष्य रहता है। स्थानीय भक्तों के अतिआग्रह के कारण यदि वे किन्हीं स्थानों पर जाते भी हैं, तो वहाँ भजन-भक्ति और ज्ञानगोष्ठी में स्वत: लीन हो जाते हैं। साथ में उपस्थित संतों-भक्तों की रुचि उस स्थान की आह्लादकता या वैभव के प्रति नहीं, परन्तु स्वामीश्री द्वारा मिल रहे अनिर्वचनीय आनंद के प्रति आकृष्ट रहती है।

लौकिक पद-प्रतिष्ठाओं के प्रति तो उनकी अरुचि स्पष्ट दिखाई देती है।
12 अगस्त, 1995, बुधवार के दिन स्वामीश्री के समक्ष भरुच में नर्मदा प्रोजेक्ट के बारे

३

में चर्चा चल रही थी। एक सज्जन ने कहा, 'आप और आपके साधुओं की केबिनेट बन जाए, तो यह काम शीघ्रता से पूर्ण हो सकता है।'

स्वामीश्री मौन रहे। इसे सहमति समझकर उन्होंने चर्चा आगे बढाई कि अमुक साधु को अमुक मंत्रालय देना चाहिए, स्वामीश्री ने बीच में ही उनको रोककर कहा, 'हम साधुओं के लिए भजनभक्ति और जपमाला - तथा सेवा करना ही सबसे बड़ा मंत्रालय है। बाक़ी के जंजाल में क्यों फँसें?'

फिर कहने लगे : 'भगवान के भजन में जैसा सुख है, वैसा तो चौदह लोक के ब्रह्मांड में भी नहीं है। शुद्धभाव और स्नेहपूर्वक भजन किया जाए, तो सुख और शान्ति दोनों मिलते हैं। साधु को तो भजन - भक्ति का व्यापार ही करना चाहिए।'

8 नवम्बर, 1997 को स्वामीश्री ट्रेन द्वारा लंदन से पेरिस जा रहे थे। हाथ में जपमाला घूम रही थी। हरिभक्तों ने गोष्ठी शुरू कर दी। हर्षदभाई राणा ने कहा, 'सरकार का सारा तंत्र स्वामीश्री के हाथों में सुपुर्द कर देना चाहिए...।'

एकदम अलमस्ती से दाहिना हाथ ऊपर कर जपमाला दिखाते हुए स्वामीश्री ने कहा, 'हमारे हाथ कहाँ खाली हैं? देखिए यह माला! दूसरे तंत्र को पकड़कर हमें क्या करना है?'

कभी-कभी अंतर्राष्ट्रीय उद्योगपति अथवा मंत्री स्वामीश्री की मुलाकात के दौरान सत्ता देने का खुले मन से समर्थन करते हैं, तब भी स्वामीश्री उसे किसी प्रकार का समर्थन नहीं देते!

शान्तिदूत के रूप में, स्वामीश्री के दिव्यजीवन और उनके द्वारा मानव-कल्याण के विश्वव्यापी कार्यों से प्रभावित सत्ताधीशों में एक थे, ब्रिटन स्थित भारत के राजदूत डॉ. एल. एम. सिंघवी। जिनके मन में स्वामीश्री के प्रति इतना अहोभाव था कि वे इच्छा रखते कि स्वामीश्री को भी 'नोबल प्राइस' से सम्मानित किया जाए। कुछ अग्रणी हरिभक्तों ने इस विचार को समर्थन भी दिया था।

सन 1997 में स्वामीश्री लंदन में थे। एक दिन ब्रह्मविहारी स्वामी ने कहा, 'डॉ. के. सी. पटेल तथा कुछ हरिभक्तों की प्रबल इच्छा है कि आपको नोबल प्राइस मिले। मैंने इस विषय पर कुछ पुस्तकें मंगवाई हैं।'

बात को वहीं रोकते हुए स्वामीश्री ने कहा, 'मुझे तो भगवान स्वामिनारायण और गुणातीतानंद स्वामी मिल गए हैं। सबसे बड़ा नोबल वे ही हैं। दूसरे किसी प्राइस की मुझे आवश्यकता नहीं है। वैसा पारितोषिक मिला भी तो क्या और नहीं मिला तो भी क्या? उसमें कोई महत्ता नहीं है। हमें तो भगवान और संत मिले, गुरु शास्त्रीजी महाराज, योगीजी महाराज की प्रसन्नता प्राप्त हुई; इससे अधिक नोबलप्राईस में है कुछ?'

प्रियदर्शन स्वामी ने कहा, 'भगवान स्वामिनारायण के दिव्य संदेश के प्रसारण के लिए आप कितना परिश्रम उठाते हैं? परन्तु यदि आपको एक ही प्राईस मिल गया, तो बिना प्रयास किए लाखों लोग सत्संग के प्रति आकृष्ट होंगे और प्रचार भी बहुत होगा।'

'यदि हम साधुता रखकर प्रभु का भजन करेंगे, तो अपने आप सभी आकृष्ट होकर सत्संग में चले आएंगे।' स्वामीश्री ने कहा। बात को अधिक स्पष्ट करते हुए उन्होंने आगे कहा, 'नोबल से कोई विशेषता नहीं है। यह तो दुनिया को दिखाने की महत्ता है। इतना समझ लो कि भगवान स्वामिनारायण प्रसन्न हो गए, तो पूरा ब्रह्मांड प्रसन्न हो गया और

उनके आशीर्वाद से हमारी प्रतिष्ठा बढ़ती रहे, वही सच्ची प्रतिष्ठा है। सांसारिक मान-सम्मान से कोई प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती। इसलिए हमें नोबल का कोई विचार ही नहीं करना चाहिए। हम भजन करते हैं, वही ठीक है।'

विरक्ति के सर्वोच्च शिखर पर बिराजमान स्वामीश्री के समक्ष सब मौन ही रहे! विश्व की पद-प्रतिष्ठाओं के प्रति विराग और भजन का अनुराग, उनकी रग-रग में प्रवाहित होता रहा है।

स्वामीश्री जहाँ भी जाते हैं, लोग भव्य सम्मान समारोह आयोजित करते हैं। परन्तु वे ऐसे आयोजनों को कभी प्रोत्साहन नहीं देते। आयोजन से पूर्व यदि उनको कोई सूचना मिल गई, तो वे सम्मान समारोह के लिए स्पष्ट मना कर देते हैं।

सन् 1984 में स्वामीश्री कई वर्षों के पश्चात् कच्छ में सत्संग-यात्रा पर जा रहे थे। वहाँ के हरिभक्तों में स्वामीश्री के स्वागत का अत्यधिक उत्साह उमड़ रहा था। गढडा में देवचरण स्वामी और कच्छ के हरिभक्त धरमशीभाई, अशोकभाई भानुशाली आदि ने स्वामीश्री से कहा, 'हमारी इच्छा है कि आपको हाथी पर बैठाकर आपकी शोभायात्रा निकाली जाए।'

स्वामीश्री ने फौरन कहा, 'नहीं... नहीं... नहीं... ऐसी माथापच्ची करने से क्या लाभ?'

उन्होंने समझा-बुझाकर स्वागत समारोह के प्रस्ताव को खारिज करने में सफलता प्राप्त कर ली!

वल्लभविद्यानगर स्थित संस्था के छात्रालय को स्वामीश्री के आगमन की खुशी में पुष्पों की लड़ियों से सजाया गया था। पूरे परिसर की सजावट को देखते ही स्वामीश्री ने कहा, 'हमारे लिए ऐसी सजावट करने की कोई आवश्यकता नहीं है। क्या हम किसी पराये स्थान पर आए हैं? घर में ही तो आए हैं।'

तब एक युवक ने कहा, 'आप नये वर्ष के अवसर पर पधारे हैं, इसलिए सभी की भावना हो गई।'

स्वामीश्री ने कहा, 'हमारे लिए नया-पुराना होता ही नहीं; हमारे लिए तो नित्य नया ही दिन होता है।'

28-10-1998 को गढडा में स्वामीश्री ने सहज शब्दों में कहा था, 'पुष्पमालाएँ पहनना भी एक सजा है।'

आनेवाली सहस्त्रों पीढ़ियों को वैदिक उपासना की दिव्य प्रेरणा मिलती रहे तथा समाजिक सेवाओं की गंगा सतत प्रवाहित होती रहें, इसके लिए स्वामीश्री भव्य मंदिरों तथा आश्चर्यजनक सांस्कृतिक संकुलों का निर्माण करते रहे हैं।

अक्षरधाम जैसे अद्‌भुत संकुलों का निर्माण तो करते हैं, परन्तु उन गौरवशाली संकुलों के प्रति उन्हें कोई आसक्ति अथवा बन्धन नहीं। सर्जन और सुन्दर व्यवस्था का आयोजन करके, स्वामीश्री वहाँ से विदा ले लेते हैं। वर्ष में एक-दो बार भले ही वहाँ पधारें, अन्यथा उनका विचरण गाँव-गाँव तक जारी रहता है।

इंग्लैन्ड के प्रिन्स फिलिप गांधीनगर में 'अक्षरधाम' के दर्शन से अति प्रभावित हुए। उस समय स्वामीश्री सुरेन्द्रनगर में विराजमान थे। प्रिन्स ने जिज्ञासावश पूछा कि, 'अक्षरधाम के

प्रकृति की गोद में भगवद्ध्यान में लीन, न्युयॉर्क, अगस्त 1998

निर्माता प्रमुखस्वामीजी यहीं पर हैं?'

'नहीं, वे तो छोटे-मोटे शहरों और गाँवों में घूमते रहते हैं।'

यह सुनकर प्रिन्स आश्चर्य में डूब गए कि स्वामीश्री ऐसे भव्य महालय को छोड़कर झोपड़ियों में विचरण करते हैं? और वर्ष में शायद ही दो-चार दिन के लिए ही आते हैं?

10 नवम्बर, 1997 को स्वामीश्री प्रिन्स के निमंत्रण पर लंदन स्थित बकिंघम पैलेस में पधारे। वहाँ प्रिन्स फिलिप ने कहा, 'अक्षरधाम एक अपूर्व सौंदर्य का धाम है। किन्तु मुझे अफसोस यह हुआ कि 'अक्षरधाम में आपसे मेरी मुलाकात न हो सकी। क्योंकि आप अन्यत्र विचरण कर रहे थे। मुझे आश्चर्य इस बात का हुआ कि आपने अक्षरधाम जैसे सुंदर स्थान का निर्माण किया, परन्तु आप वहाँ रहते नहीं?'

स्वामीश्री ने मात्र स्मित से ही प्रत्युत्तर दे दिया था।

विश्वविख्यात सर्जन अथवा सिद्धियों से निःस्पृह रहना स्वयं में एक महा आश्चर्य है!

भगवान स्वामिनारायण द्वारा त्यागियों के लिए पंचव्रतों का पालन निश्चित किया गया है; जिसमें एक है निःस्नेही वर्तमान। अर्थात् पूर्वाश्रम के परिवार के साथ हर प्रकार का संबन्ध समाप्त कर देना। स्वामीश्री पूर्वाश्रम के परिवारजनों के प्रति इतने विरत रहते हैं कि उन्होंने अपने परिवार के हित के लिए न तो कुछ किया है और न ही किसी को करने दिया है।

एक संगोष्ठी में युवकों ने स्वामीश्री के समक्ष उनके जन्मस्थल की वार्ता शुरू की। स्वामीश्री चर्चा को वहीं समाप्त करते हुए बीच ही में बोल उठे, 'हमारा न तो कोई घर है, न

ही कोई स्थान; एक भगवान को साथ रखे हैं; उन्हीं का भजन करते और करवाते हैं।'

उन्होंने अपने जन्मस्थल या परिवार की ही नहीं, अपने देह की भी स्पृहा कहाँ रखी है ? 102 डिग्री बुखार में उन्होंने निर्जल उपवास के साथ 120 घरों में पधरावनी की थी। अपनी दोनों आँखों में मोतियाबिन्द पक जाने पर दो कदम आगे देखना भी उनके लिए मुश्किल हो गया था। परन्तु ऐसे समय में भी बिना किसी शिकायत या रुकावट के वे लगातार विचरण करते रहे थे।

सन 1998 में न्यूयॉर्क में हृदय की बायपास सर्जरी के दो महीने बाद स्वामीश्री के हृदय की पुनः जाँच की गई। विख्यात कार्डियोलॉजिस्ट डॉ. दयानंद नायक ने थ्री-डी इको परीक्षण करने के बाद स्वामीश्री को आग्रहपूर्वक दस सूचनाएँ दी थीं। जब कि उनके हृदय की परिस्थिति को देखते हुए, डॉक्टर के प्रत्येक परामर्श का पालन अनिवार्य था। परन्तु स्वामीश्री यु.के. तथा अफ्रीका के शहरों में हरिभक्तों को लाभ देकर जब भारत पधारे, तब तक डॉक्टर का प्रत्येक परामर्श उनके विचरण की बाढ़ में बह चुका था।

सन् 2007 के जनवरी में डॉक्टरों ने स्वामीश्री के स्वास्थ्य के बारे में पुनः चिंता जतायी। मुंबई में हृदयरोग के निष्णातों ने विशेष परीक्षण किए। स्वामीश्री का विचरण रोकने के लिए सभी डॉक्टरों ने बार-बार आग्रह किया कि 'आपके शरीर एवं हृदय को अब आराम की अत्यंत जरूरत है। आप कष्टदायी विचरण पर स्वयं ही रोक नहीं लगायेंगे तो अनर्थ होना निश्चित है।' परन्तु केवल तीन महीनों के बाद स्वामीश्री पूर्व अफ्रीका की धर्मयात्रा पर पधारे। केन्या, युगान्डा एवं तंजानिया से लेकर अमेरिका, केनेडा तथा इंग्लैण्ड आदि देशों में उनका थकानभरा विचरण जारी रहा।

लंदन के युवक हितेष पटेल ने बोचासण में स्वामीश्री से कहा, 'स्वामीजी! देखने से ही मालूम हो जाता है कि आपका शरीर सूख गया है, हाथ में झुर्रियाँ भी दिखाई दे रही हैं।'

स्वामीश्री ने निर्लेपभाव से कहा, 'अब तो शरीर सूखेगा ही! इतना ही नहीं, अब तो यह मिट्टी में भी मिल जाएगा!'

'किन्तु स्वामीजी, अभी तो पूरे ब्रह्मांड में सत्संग प्रसार करना है।' डॉक्टर भास्करभाई ने कहा।

स्वामीश्री स्मित के साथ बोले, 'सत्संग प्रसार करनेवाले भगवान बैठे हैं। हमें तो अपना कार्य समाप्त होते ही अपने-अपने रास्ते पर चले जाना है!'

स्वामीश्री की विरक्ति का यह पहला छोर है, तो दूसरा छोर... ?

6-8-1998 को स्वामीश्री भक्तिभावी मल्टीमिडीया शॉ के दिग्दर्शक प्रो. फ्रीच के निमंत्रण से स्वामीश्री युरोप में प्राग पधारे थे। स्वामीश्री के साथ में आए हुए संत, वहाँ के एक विख्यात चर्च को देखने जा रहे थे। निवास स्थान पर केवल स्वामीश्री तथा तीन सेवक संत रुकनेवाले थे। अचानक स्वामीश्री ने पत्रलेखन की सेवा सम्हाल रहे संत से कहा, 'आपको भी नगर-दर्शन के लिए जाना हो तो जाइए। मुझे पत्र-सामग्री दे देना।'

संत ने कहा, 'मुझे वहाँ जाने की कोई विशेष रुचि नहीं है।'

तुरंत ही स्वामीश्री बोले, 'हमें भी एक भगवान को छोड़कर अन्यत्र कहीं रुचि नहीं है।'

यही है पिंड-ब्रह्मांड से निःस्पृह स्वामीश्री की विरक्ति! जहाँ भगवान के सिवा अन्य कोई राग नहीं है, न ही अन्य विषयासक्ति को कोई स्थान! ◆

श्रुतम् ज्ञानम्

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

श्रुतम् अर्थात् वेद आदि शास्त्रों के गहन अर्थ को
प्रत्यक्ष देखना व समझना। ज्ञानम् अर्थात् आत्मा और परमात्मा का अनुभव।
ज्ञान का अर्थ मात्र जानकारी नहीं है।
शास्त्रों द्वारा आत्मा-परमात्मा के सम्बंध में जानकारी होना
परोक्ष ज्ञान है और आत्मा-परमात्मा का
यथार्थ अनुभव तथा साक्षात्कार होना, प्रत्यक्ष ज्ञान है।

श्रीमद् भगवद्गीता का कथन है : *अध्यात्मज्ञान-नित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थ-दर्शनम्।* अर्थात् अध्यात्म विद्या में आत्मा-परमात्मा का तत्त्वत: यथार्थ अनुभव होना ही ज्ञान कहलाता है। (13/12)

भगवान स्वामिनारायण ने वचनामृत में स्थान-स्थान पर उस ज्ञान को सिद्ध करनेवाले ज्ञानी की पहचान बताई है। वे कहते हैं, 'ज्ञानी तो ब्रह्मस्वरूप में ही रहता है और भगवान की यथार्थ महिमा जानता है।' (वच. ग.प्र. 56) इस प्रकार ज्ञान एक उच्च आध्यात्मिक स्थिति है। वह वर्णन का नहीं, जीवन निर्माण का विषय है।

इसीलिए गुणातीत संत का जीवन, ज्ञान की यथार्थ व्याख्या बन जाता है। प्रमुखस्वामी महाराज का जीवन, ज्ञान का परिचय बन गया है। वे सुख-दु:ख में संतुलन कैसे बनाये रखते हैं? लाभ-हानि में उनकी समता कैसे रख पाते हैं? मान-अपमान में अपनी प्रज्ञा को स्थिर कैसे रखते हैं? विश्वभर में सत्संग-प्रसारण का लक्ष्य होने पर भी वे महत्त्वाकांक्षाओं से परे कैसे रह सकते हैं? अनेक प्रवृत्तियों के अंबार के बीच भी प्रतिपल भक्ति कैसे करते हैं? विश्वव्यापी संस्था बी.ए.पी.एस. के अध्यक्ष के रूप में सतत कर्मठतापूर्वक अकल्प्य कार्यभार का वहन करते हुए भी वे तरोताज़ा कैसे रहते हैं?

सबका एक ही उत्तर है : अनुभवसिद्ध अध्यात्म ज्ञान के बल पर!

ज्ञान की बातें करना सरल है, किन्तु उसे सिद्ध करना दुष्कर है। उपनिषदों में वर्णित यह दुर्लभ ज्ञान स्वामीश्री के जीवन का परिचायक बन गया है। इसीलिए वे सदैव निर्विकल्प स्थिति के आनंद में डूबे रहते हैं।

इंग्लैण्ड के अंग्रेज युवक डेविड, डेनियल और रिचार्ड हिन्दू तत्त्वदर्शन से आकर्षित होकर भारत आए थे। यहाँ पर उन्होंने कई संतों से मुलाकात की, परन्तु वे स्वामीश्री से नितांत अपरिचित थे। कुछ दिन पहले ही डेविड को स्वप्न में स्वामीश्री का दिव्य दर्शन

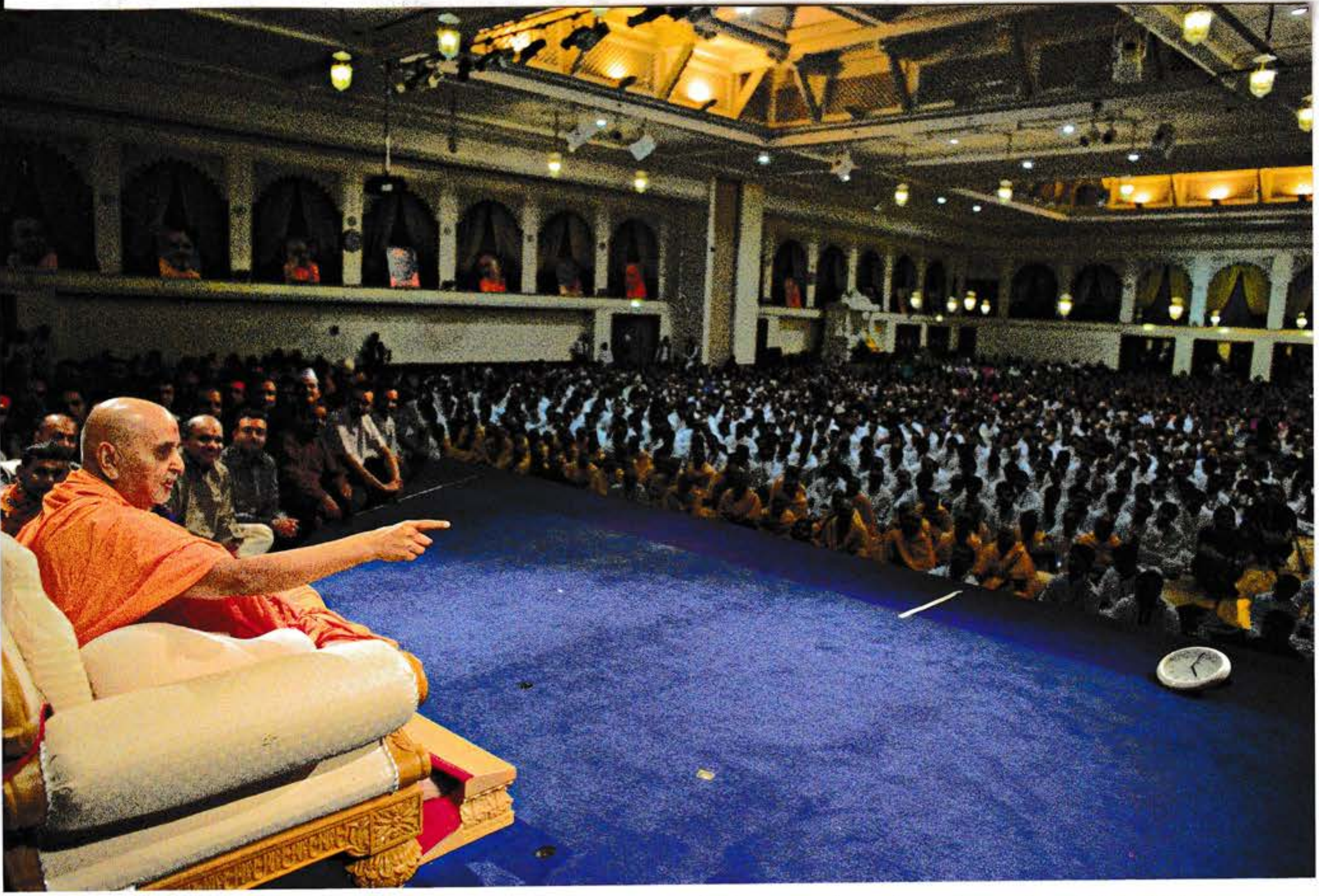

'भले ही चन्द्रमा पर पहुँच जाओ; ज्ञान के अभाव में कहीं भी आनंद नहीं...'

हुआ, तो वह चौंक कर जाग उठा। स्वप्न में स्वामीश्री ने उसे कहा था कि लंदन के स्वामिनारायण मंदिर में आना। अत: वह अपने मित्रों के साथ 15 मई, 1995 को स्वामीश्री के दर्शन हेतु वहाँ जा पहुँचा। प्रथम दर्शन से ही उसके भीतर परम शान्ति का अनुभव हुआ। उसने स्वामीश्री से पूछा, 'चार दिन पहले मुझे स्वप्न में आपका दर्शन हुआ था। आपने मुझे निर्विकल्प समाधि की जानकारी दी थी। स्वप्न में आपने मुझे ऐसी दिव्य समाधि का अनुभव भी कराया था! क्या आपको चौबीसों घंटे निर्विकल्प समाधि का अनुभव होता है?'

'हाँ, सभी क्रिया करते रहते हैं, परन्तु भगवान को साथ में रखकर ही करते हैं, इसलिए निर्विकल्प समाधि का अनुभव नित्य रहता है।'

स्वामीश्री का सहज-प्रतीतिकारक उत्तर उन सभी को स्पर्श कर गया।

सन् 1993 में कोलकाता में स्वामीश्री को चक्कर आने लगे, तो उन्हें तत्काल मुंबई लाया गया था। विशेषज्ञ न्यूरोफिजिश्यन्स के परामर्श के अनुसार स्वामीश्री का ई.ई.जी. और 'बेरा' (BAER) टेस्ट किया गया।

टेस्ट के दौरान स्वामीश्री टेबल पर सो रहे थे। कान की परिधि में गेजेट और माथे पर सेन्सर्स रखे हुए थे। स्वामीश्री को सूचित किया गया कि आप कुछ देर के लिए विचारशून्य अवस्था में शान्तचित्त हो जाएँ, ताकि दिमाग के छोटे से छोटे स्पन्दन के कारण भी कोई गलत निदान न हो। परन्तु 15 मिनट तक प्रयत्न करने के बाद टैक्निशियन ने कहा, 'मुझे संतोष नहीं हो रहा है। स्वामीश्री को बहुत शान्तचित्त होकर सोना चाहिए।'

सेवक संत ने स्वामीश्री को इसकी सूचना दे दी। टैक्निशियन ने फिर एक बार प्रयत्न किया, परन्तु उसे संतोष न हुआ, तो उसने तीसरी बार स्वामीश्री का टेस्ट लिया। स्वामीश्री के मुख पर अपार शान्ति झलक रही थी।

टेस्ट के बाद सभी लोग मंदिर आ पहुँचे। रात को सेवक ने स्वामीश्री से कहा कि डॉक्टर पुन: एकबार टेस्ट करना चाहते हैं और कहते हैं, 'यह टेस्ट अत्यंत अनिवार्य है, इसके रिपोर्ट के बिना सही निदान कर पाना मुश्किल है।'

स्वामीश्री गंभीर होकर मना करते हुए बोले, 'चाहे जो भी हो, मुझे पुन: टेस्ट नहीं कराना है।' संतों के बार-बार आग्रह करने पर स्वामीश्री ने ऊँची आवाज में कहा, 'वह विचारशून्यता की बातें कर रहा था, यदि मैं अक्षरदेहरी की स्मृति करते हुए वहाँ बैठकर महाराज की मूर्ति का ध्यान करूँ, तो क्या वह चित्त की शान्त अवस्था नहीं है?!'

अब संतों की समझ में आया कि स्वामीश्री इष्टदेव की स्मृति को पलभर के लिए भी चित्त से अलग नहीं कर सकते हैं, जबकि जड़ मशीन को रोगी के शून्यमनस्कता की आवश्यकता थी!

स्वामीश्री तत्त्वज्ञान को परिभाषाओं में नहीं, नित्य जीवन में जीते हैं। अगणित प्रवृत्तियों में व्यस्त होने पर भी आत्मा-परमात्मा का चिन्तन पलभर के लिए भी खंडित नहीं होता, यही उनकी ज्ञान-स्थिति का दुर्लभ परिचय है। बोचासण में दिव्यजीवन संघ के संतों ने स्वामीश्री से पूछा था कि 'गत वर्ष कोलकाता में आपकी जन्मजयंती के अवसर पर दर्शन हुआ था; परंतु क्या आपका जन्म है?'

स्वामीश्री ने कहा था 'लौकिक रूप से तो दिखाई दे रहा है; परन्तु आध्यात्मिक रूप से देखें, तो हमारा जन्म भी नहीं है और मरण भी नहीं है।'

'मरण भी नहीं?' – पूछा गया।

'नहीं, आत्मा अक्षर है, अजर है, अमर है और अजन्मा है।'

'अक्षर और परमात्मा भिन्न-भिन्न है?'

'हाँ, अक्षर सेवक है और परमात्मा उनके इष्ट। वैसे तो दोनों माया से परे हैं।'

अमेरिका में वाबाश कॉलिज के प्राध्यापक डॉ. रेमन्ड विलियम्स ने स्वामीश्री से पूछा था, 'आप कौन हैं?'

स्वामीश्री ने कहा था, 'अक्षरब्रह्म!'

ब्रह्म तो स्वयं ज्ञान का मूर्तिमान स्वरूप है। तैत्तिरीय उपनिषद् कहती है कि 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म' अर्थात् जो ब्रह्म है, वही सत्य एवं ज्ञान का स्वरूप है।

अमेरिका के एटलान्टा में किशोरों ने स्वामीश्री से पूछा, 'आपको अक्षरधाम का अनुभव कितने समय तक रहता है?' स्वामीश्री ने कहा, 'नित्य रहता है।'

12 जुलाई 1994 को डलास में बालकों ने पूछा, 'आपके लिए दिन का कौन सा पल श्रेष्ठ है?' स्वामीश्री ने कहा, 'सभी पल श्रेष्ठ हैं। चौबीस घंटे, प्रत्येक क्षण भगवान स्वामिनारायण साथ में हैं।'

गोंडल की अक्षरदेहरी में आरती के बाद, दो बालक स्वामीश्री से कुछ प्रश्न पूछने लगे। स्वामीश्री को थोड़ी जल्दी थी, किन्तु बालकों को उन्होंने प्रेम से सुना। बालकों ने पूछा, 'आप आरती करते हैं, तब भगवान का कैसा अनुभव होता है?'

स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान साक्षात् सामने बैठे हों, वैसे दर्शन होते हैं। जैसे आप सामने

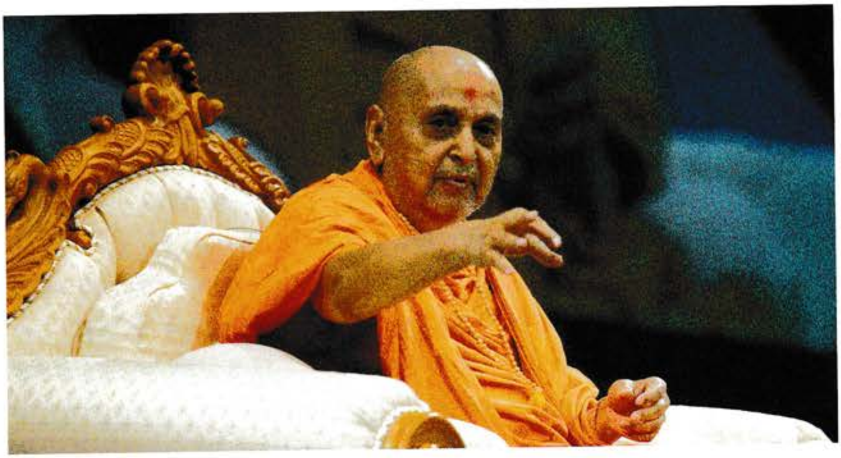

'संसार में यदि कोई आनंद है, तो वह भगवान का आनंद है।'

बैठे हैं, तो बातें हो रही हैं न! उसी प्रकार!'

यह उनके ज्ञान की सर्वोच्च स्थिति के कुछ सत्य प्रसंग हैं। इस प्रकार के प्रसंगों की बहुत लंबी शृंखला है।

परब्रह्म के साक्षात्कार के कारण उनको क्षणभर के लिए भी परमात्मा का विस्मरण नहीं है। इसलिए भीड़ के बीच, अथवा एकांत में भी वे अपनी अगम्य भूमिका में सहज विहार करते हैं। कभी-कभी वार्तालाप में उनकी दिव्य भूमिका का परिचय मिल जाता है।

14-5-2008 को स्वामीश्री लंदन से न्यूयॉर्क जानेवाले थे। भोजन के दौरान नैनेश पटेल ने कहा, 'लंदन तो आपका घर है, आपको यहाँ से बिदा नहीं होना चाहिए।'

स्वामीश्री ने कहा, 'समझो भाई! हम तो जहाँ भी जाते हैं, वहाँ घर ही है। अक्षरधाम तो अधो-ऊर्ध्व प्रमाण से रहित है; असीम है! हम जहाँ देखें वहीं अक्षरधाम है। हम चाहे झुग्गियों में जाएँ अथवा महलों में, हमारे लिए सर्वत्र अक्षरधाम है। हमें संकुचित क्यों बनना चाहिए? हम अक्षरधाम से ही तो आए हैं!'

नैरोबी में विश्वविहारी स्वामी ने फोन से पूछा, 'स्वामीजी, आप अहमदाबाद कब आ रहे हैं?'

'हमें आना-जाना है ही नहीं। यह तो बीच का खेल है। हम तो यहाँ भी हैं और वहाँ भी!'

भगवान स्वामिनारायण वचनामृत में कहते हैं, 'ऐसा ज्ञानी... भले ही राज्य में रहता हो, तो भी मानो वन में ही है तथा वन में रहता हो, तो भी उसे राज्य में रहनेवालों से अधिक आनन्द है। ऐसा ज्ञानी पुरुष राज्य में रहता हो और हज़ारों मनुष्य उसकी आज्ञा में रहते हों तथा समृद्ध भी हों, परन्तु वह स्वयं को ऐसा समझ बैठे कि 'मैं बहुत बड़ा आदमी हो गया।' और यदि उसके पूरे राज्य का नाश हो जाए या हाथ में मृत्तिका-पात्र लेकर उसे घर-घर जाकर भीख माँगकर अपनी क्षुधापूर्ति करनी पड़े, तो भी वह ऐसा न समझे कि 'अब तो मैं गरीब हो गया।' क्योंकि ऐसा ज्ञानी तो निजानन्द में महाअलमस्त रहता है। उसने अपने स्वरूप तथा भगवान के स्वरूप की महिमा को जान लिया है।' (वचनामृत लोया-10)

सन् 1992 में गांधीनगर, गुजरात के 'अक्षरधाम' संकुल के उद्घाटन समारोह की पूर्णाहुति के तुरन्त बाद स्वामीश्री नडियाद पधारे थे। उनके समक्ष केवल चार-पाँच और दो-

'प्रमुखस्वामी महाराज एक महान प्रेरणामूर्ति हैं।
वे स्वयं शान्त रहकर सहस्रों को क्रियाशील कर सकते हैं;
उनमें से बाल-युवा-वृद्ध आदि अगणित लोग सद्प्रेरणा प्राप्त करते हैं।'

- पूज्य स्वामी दयानंद सरस्वती

(आर्यविद्या गुरुकुलम्, चेन्नै)

एक हरिभक्त स्वामीश्री के दर्शनार्थ बैठे थे। किसी ने पूछा, 'यहाँ आपको खाली-खाली नहीं लगता? गांधीनगर के महोत्सव में तो रोजाना लाखों लोग आते थे! यहाँ तो मात्र पाँच ही हैं।'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'हमने भगवान को साथ में रखा है, इसलिए हमारे लिए सर्वत्र भरा-भरा ही है! यदि भगवान साथ न रहें, तो पूरी दुनिया साथ होने पर भी सबकुछ खाली ही है!'

एकबार स्वामीश्री अटलादरा (बड़ौदा) से मुंबई होकर विदेश की धर्मयात्रा पर जानेवाले थे। दर्शनार्थियों की संख्या अधिक थी। स्वामीश्री व्यक्तिगत दर्शन दे रहे थे। परन्तु एक साथ खड़े हो गए हरिभक्तों के कारण इतनी भीड़ जम गई कि स्वामीश्री स्वयं व्यवस्था करने लगे। यह देखकर जनमंगल स्वामी ने कहा, 'आपका व्यवहार तो बहुत बढ़ गया है!' स्वामीश्री ने कहा, 'मुझे व्यवहार की कोई प्रधानता नहीं है। हम तो निरंतर स्वामिनारायण का भजन करते रहते हैं।'

निरंतर प्रवृत्तिमय जीवन होने पर भी ब्रह्मस्थिति में अलमस्त रहना और अखंड भजन में तल्लीन रहना ही उनकी आध्यात्मिक स्थिति है। स्वामीश्री उसे 'आत्मा और परमात्मा की टेकनिक' कहते हैं।

'आर्ट ऑव लिविंग' के प्रणेता श्री श्री रविशंकरजी दिल्ली में स्वामिनारायण अक्षरधाम तथा स्वामीश्री के दर्शन-मुलाकात के बाद जब वहाँ से विदा होने लगे, तो उनको अक्षरधाम में खींची हुई उनकी तसवीरें उन्हें भेंट दी गईं। इतनी शीघ्रता से सुंदर फ्रेम के साथ तत्काल तैयार हुई अपनी तसवीर को वे आश्चर्यपूर्वक देखने लगे। स्वामीश्री ने स्मित करते हुए कहा, 'यह विज्ञान की टेकनिक है। लेकिन सबसे बड़ी टेकनिक आत्मा-परमात्मा के ज्ञान की है। उससे बड़ी कोई टेकनिक नहीं है।'

जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों में सभी को यही टैकनिक सिखाते हुए स्वामीश्री सभी को शाश्वत सुख के मार्ग पर अग्रसर करते हैं। सभी को ज्ञान के शिखर पर पहुँचाना ही उनके जीवन का उद्देश्य है।

शिकागो से आए योगीवंदन स्वामी ने स्वामीश्री से कहा, '2007 के वर्ष में जब आप अमेरिका आएँगे, तब तक मुझे कोई नियम दीजिए।'

स्वामीश्री ने कहा, 'सबसे बड़ा नियम-निजात्मानं ब्रह्मरूपं... स्वयं को आत्मा मानो। इसमें सभी नियम आ गए। सुख हो अथवा दु:ख, मान हो चाहे अपमान, हर स्थिति में हमें प्रसन्न रहना चाहिए। हमारा ध्येय वही है और नियम भी वही है।'

स्वामीश्री का अमृत महोत्सव मनाने के लिए नडियाद में वरिष्ठ संतों की एक बैठक थी। चर्चा के दौरान भगवत्चरण स्वामी ने पूछा, 'दान-राशि संपादन की सेवा के लिए मुझे क्या करना चाहिए?' स्वामीश्री ने विलक्षण जवाब दिया, 'आत्मदृष्टि करो, उसमें सबकुछ

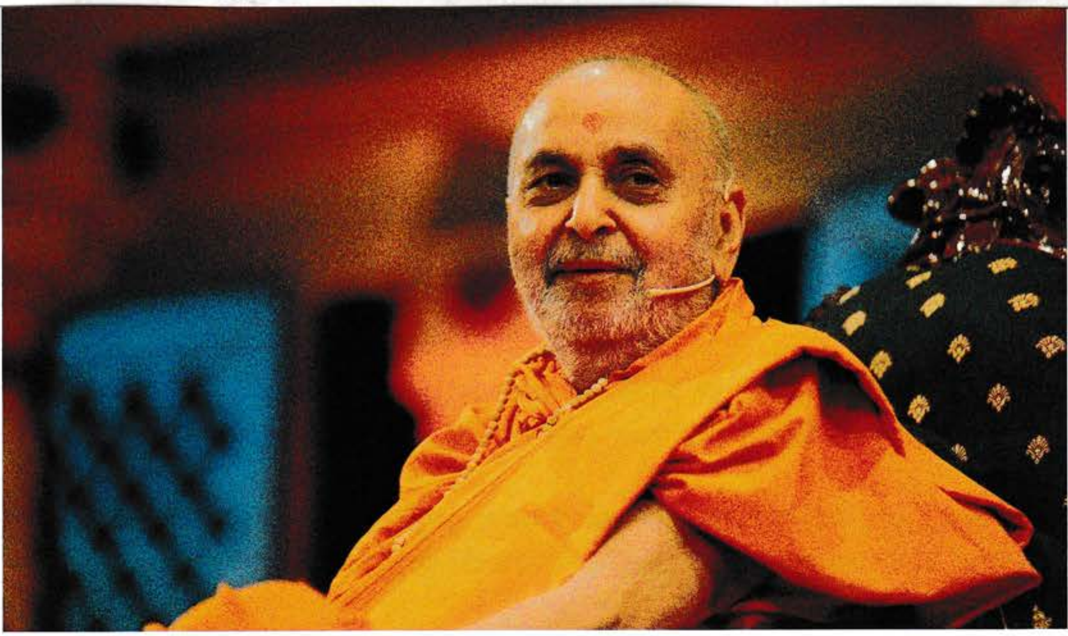

आ जाता है।'

अमेरिका के सानहोजे नगर में एक सत्संग गोष्ठी में स्वामीश्री ने युवकों को आत्मज्ञान की स्थिति दृढ़ करने की प्रेरणा देते हुए कहा था, 'आपको भी उस स्थिति पर पहुँचना है। बाल मंडल, किशोर मंडल किसलिए हैं? आध्यात्मिक स्थिति सिद्ध करने के लिए; जिससे आपको भी वही सुख मिले। ज्ञान सिद्धि के बाद जगत में दुःख रहेगा ही नहीं। आनंद ही मिलता रहेगा। खाओ-पियो, बैठो-उठो लेकिन भगवान का आनंद मिलता ही रहेगा। कोई पदार्थ मिले-ना मिले, उसकी कोई चिंता नहीं रहेगी। आनंद का स्रोत अखंड बहता रहेगा।'

4 दिसम्बर, 1994 को गुजरात राज्य के मुख्य सचिव श्री बालकृष्णन् को आध्यात्मिक बोध प्रदान करते हुए स्वामीश्री ने कहा था, 'हम ब्रह्म हैं, ऐसी भावना रखनी चाहिए। यही हमारा सिद्धांत है। अपनी आत्मा को ब्रह्म मानेंगे, तो राग-द्वेष एवं स्वभावगत विकार सबकुछ छूट जाएँगे और शान्ति रहेगी। जो इस ज्ञान को प्राप्त करे, उसका मोह संसार से टूट जाएगा। फिर चाहे रोग हो या कोई दुःख, कुछ भी अन्तर नहीं आएगा। भगवान स्वामिनारायण ने यही ज्ञान दिया है कि आत्मारूप बनो तभी एकाग्रता से भक्ति कर पाओगे अन्यथा विघ्न नहीं मिटेंगे।'

23 अक्टूबर, 1997 को लंदन में संस्था के ट्रस्टियों तथा मंदिर के आर्किटेक्ट नाइजल लेन के साथ स्वामीश्री की मीटिंग चल रही थी। उसी दौरान डॉ. आई.पी. पटेल ने कहा, 'हमारे ट्रस्टी जीतूभाई मंदिर की सेवा (दान) के लिए किसी को कहते हैं, तो कभी-कभी उन्हें अपमान सहन करना पड़ता है, परन्तु सेवाभाव के कारण सहन कर लेते हैं।'

स्वामीश्री ने कहा, 'हमारा ज्ञान ऐसी विपरीत स्थिति में ही काम आता है। कोई कहे कि डॉक्टर मूर्ख है, लेकिन हमें विचार कर लेना चाहिए कि मैं कहाँ मूर्ख हूँ? मैं तो आत्मा हूँ। ऐसी आत्मदृष्टि होने पर अपमान नहीं लगता। आत्मदृष्टिवाले को शब्द शून्य का ही अंश लगता है। (अर्थात् शब्द जैसे आकाश में विलीन हो जाते हैं, उसी प्रकार उसे भी कोई शब्द नहीं लगता।) हमारे गुरु शास्त्रीजी महाराज का विरोधियों ने कितना अपमान किया! उनके लिए तो अपमान बोध करानेवाले लोग पन्ने भर-भर कर द्वेष उगलते रहते थे। परन्तु उन्होंने कभी अपना आपा नहीं खोया। कहनेवाले और लिखनेवाले चले गए। शास्त्रीजी महाराज

आज भी हमारे हृदय में जिन्दा हैं। ऐसी स्थिरता की नींव में आत्मज्ञान ही है। ज्ञान सिद्ध कर लेने से ही सर्वत्र आनन्द का अनुभव होता है।'

28, सितम्बर 1996 को लोसएन्जलस (अमेरिका) में स्वामीश्री के दर्शनार्थ एक हताश अमेरिकी शिक्षाशास्त्री मि. ब्रायन जीवन का नया उत्साह प्राप्त करने की आशा से आए थे। ब्रायन द्वारा लिखित अमेरिकी शिक्षा सम्बंधी किताब 'How to Get a Grade?' को बहुत प्रसिद्ध मिली थी। जीवन का कोई अर्थ न निकलने से उनके मन में कईबार आत्महत्या करने का विचार उत्पन्न हुआ। वे दो बार आत्महत्या का निष्फल प्रयत्न कर चुके थे। स्वामीश्री से उन्होंने पूछा, 'हम कौन हैं? और जीवन का अर्थ क्या है?'

स्वामीश्री ने कहा, 'हम आत्मा हैं और इस पृथ्वी पर वैसे ही नहीं आ गए। हमारे जीवन का बहुत बड़ा अर्थ है! शरीर तो हमारा बाहरी हिस्सा है और समय आने पर उसका नाश भी निश्चित है। अत: आत्मकल्याण के लिए शरीर का उपयोग करना चाहिए; ताकि लोग सुखी हों। परस्पर प्रेमभाव बना रहे, सभी का अच्छा स्वभाव बने, हमारी वैर-भावना दूर हो, व्यसनों से दूर रहकर लोगों को निर्व्यसनी करें। यही है हमारे जीवन का ध्येय।'

स्वामीश्री की स्पष्ट एवं अनुभव की गहराइयों से निकले उपदेश ने, मि. ब्रायन के अंतर्मन तथा हृदय को परम शान्ति की अनुभूति करवाई।

10 अक्टूबर 1996, न्यूजीलैण्ड के ऑकलैन्ड शहर में ठाकोरभाई नामक मुमुक्षु ने स्वामीश्री से कुछ आध्यात्मिक प्रश्न पूछा। उत्तर देते हुए स्वामीश्री ने कहा, 'हम शरीर नहीं, आत्मा हैं। आत्मा में परमात्मा रहते हैं, यही कारण है कि आप बोल पाते हैं, आपको बंगले-मोटर और गहनों का सुख आता है। किन्तु जब चैतन्य चला गया, तब कौन सा सुख मिलेगा? कुछ नहीं मिलेगा।

'मिष्ठान्न-पकवान में सुख नहीं, सुख तो आत्मा में है, इसलिए भोजन मीठा लगता है। संसार के हर सुख की वजह आत्मा एवं परमात्मा हैं। परमात्मा हमारे अंत:करण में बसे हैं, वह प्रत्येक में रहते हैं, अणु-अणु में विराजमान हैं। वृक्ष, लताएँ, पर्वत या बादल सर्वत्र भगवान का निवास है, इसलिए हमें सुख की अनुभूति होती है।'

स्वामीश्री ने असंख्य लोगों के जीवन में आत्मा-परमात्मा के ज्ञान का सिंचन करके उन्हें निर्भय किया है।

उपनिषद् में कहा गया है, 'तरति शोकम् आत्मवित्' अर्थात् जो आत्मा को जानता है, वह शोक का उल्लंघन कर लेता है। ऐसी स्थिति स्वामीश्री ने अनेक भक्तों को आत्मसात् करायी है। गृहस्थ जीवन में सांसारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए, या हर प्रकार के कार्यभार को वहन करते हुए भी, ब्रह्मस्वरूप गुरु की कृपा से ऐसी आध्यात्मिक भूमिका सिद्ध हो सकती है।

केनेडा के युवा सत्संगी भगवानजी मांडविया का जीवन ऐसे आत्मज्ञान का एक उदाहरण है। वे कुशल प्रबंधक तथा राजकीय एवं सामाजिक क्षेत्र में ख्यातिप्राप्त सज्जन व्यक्ति थे। इन्डो-कनेडियन फेडरेशन के अग्रणी सदस्य के रूप में भी उनकी प्रसिद्धि थी। सन् 1985 में डॉक्टरों ने इलाज करते समय पाया कि वे ब्लड कैंसर के शिकार हैं, किन्तु उन्होंने थोड़ा भी विचलित हुए बिना नित्य क्रमानुसार सेवा प्रवृत्ति जारी रखी।

जब जानलेवा बीमारी प्रतिदिन गंभीर रूप लेने लगी, तब तक उन्होंने किसी से कुछ नहीं

कहा। सन् 1988 में बोर्नमेरो ट्रान्सप्लान्ट के लिए वे अस्पताल में भर्ती हुए, तो ऐसे भयानक एकान्त में भी वे प्रफुल्लित थे। उनके मुख पर दु:ख की एक लकीर तक नहीं दिखती थी। डॉक्टरों ने उन्हें मृत्यु की चेतावनी दे दी, तब भी भगवानजीभाई की आवाज़ में न तो कोई कंपन था, न ही कोई निराशा। वे मृत्युशय्या से भी अपने मित्रों को टेलिफोन द्वारा सत्संग की बातें कहा करते थे। मित्रों को यह भी ज्ञात नहीं था कि भगवानजी अपने कार्यालय से फोन करते हैं कि मृत्युशय्या पर से!

स्वामीश्री की दिव्य कृपा से उनके हृदय में प्रकट हुआ ज्ञानवैभव और स्थिरता, उनके अंतिम दो पत्रों से स्पष्ट होता है। मृत्यु के कुछ ही दिनों पूर्व उन्होंने अपने भाई को पत्र लिखा था, जिसकी एक झलक : 'शारीरिक दु:ख तो सभी को आता है। रामकृष्ण परमहंस जैसे महापुरुषों को भी कैंसर हुआ था। इसलिए बीमारी और मृत्यु से किसी को भी कभी डरना नहीं चाहिए। प्रमुखस्वामी महाराज जैसे भगवान के धारक संत की शरण कभी भी नहीं छोड़नी चाहिए, यदि हमारा मन उनके स्वरूप से विचलित हो गया, तो हमारी पतिव्रता भक्ति का भंग ही समझना। हमारी श्रद्धा अविचल रहनी चाहिए।'

एक धर्मनेता को उन्होंने लिखा था, 'मेरी बीमारी में मृत्यु निश्चित है, किन्तु मुझे पूर्ण संतोष और आनंद है कि मुझे जीवन में प्रमुखस्वामी महाराज जैसे गुणातीत संत का सत्संग प्राप्त हुआ और उनको प्रसन्न करने का महान अवसर मिला।'

थोड़े ही दिनों के बाद 43 वर्ष की आयु के भगवानजीभाई अक्षरधाम निवासी हुए, तब उनके मुख पर निर्भयता एवं पूर्णकाम आत्मा की अंतिम कान्ति चमक रही थी!

23 अक्टूम्बर 1994, गोंडल में स्वामीश्री के दर्शनार्थ आए एक अधेड़ गृहस्थ छगनभाई को प्रथम दृष्टि से देखकर आसपास खड़े लोगों ने सोचा कि यह कोई साधारण किसान है। वे साधारण जरूर थे, वेश-परिवेश और वाह्य स्वरूप से, परन्तु हृदय से नहीं।

राजकोट जिले के लीलाखा गाँव में कुछ दिन पहले ही स्वामीश्री ने छगनभाई के घर भोजन अंगीकार किया था। उस समय स्वामीश्री की मरज़ी को जानकर ज्ञानप्रसाद स्वामी ने सहज ही छगनभाई को कहा था कि मूर्तिप्रतिष्ठा-उत्सव के बाद तुरंत ही आप जूनागढ़ के स्वामिनारायण मंदिर की खेती संभालने के लिए चले जाना।

परन्तु स्वामीश्री के वहाँ से बिदा होने के पश्चात् एक दु:खद घटना घटित हो गई। छगनभाई कहते हैं, ''स्वामीजी, आपके विदा होने के बाद हम कार्य को समेट रहे थे। वृक्षारोपण के स्थान पर बाड़ बनाने में संध्या ढल चुकी थी। दूसरी ओर मेरी धर्मपत्नी, जहाँ आपने भोजन किया था, उस खंड में सोने के लिए गई और साथ की महिलाओं से कहने लगी कि 'स्वामीश्री के प्रसादीभूत खंड में सोने से अक्षरधाम मिलता है।'

''फिर मुझसे कहने लगी कि गाँव में चुनाव होनेवाला है, उसमें मेरे मतदान की चिन्ता मत करिएगा। मुझे कहाँ इस दुनिया को मत देना है! मुझे तो अक्षरधाम को मत देना है। मैं पहचानपत्र के लिए तसवीर खींचवाने नहीं आऊँगी।'

''मैंने भी उसे यही कहा था कि गाँव में मेरा सेवाकार्य समाप्त होते ही मैं तुरन्त जूनागढ़ सेवा के लिए चला जाऊँगा। स्वामीश्री ने मुझे मंदिर की खेतीवाड़ी संभालने का आदेश दिया है। यह सुनकर उसने फिर कहा कि 'आपको स्वामीजी ने भले ही अक्षरवाड़ी की सेवा दी है, किन्तु मुझे तो अक्षरधाम ही दे दिया है!'

''स्वामीश्री की कथा में बैठकर मैं, उनसे यही माँगती रही कि 'मेरा कार्य समाप्त हुआ; अब मुझे अक्षरधाम में ले चलो।' उसी दिन संध्या समय पर मेरे घर चमत्कार हुआ! हम दोनों मंदिर गए। सभी ने प्रथम आरती करने के लिए मुझे आग्रह किया और मैंने आरती की। घर गए तो उसी समय पत्नी भैंस दुहकर घर में आयी और वहीं गिर गई! उसने साहजिक रूप से ही देहत्याग कर दिया। आपने उनको भगवान के समीप में निवास दे दिया। मुझे लगा कि वह कितनी भाग्यशाली है!''

अपनी पत्नी के देहवसान की पूरी घटना सुनाते हुए छगनभाई की आँखों में न तो आँसू थे न ही कोई विषाद! उनके स्वर में सत्संग की खुमार थी। पत्नी की आत्मा भगवान के धाम में ही सीधार गई है, ऐसी प्रतीति झलक रही थी। वे पत्नी के अंतिम संस्कार की सूचना देकर स्वामीश्री की आज्ञानुसार जूनागढ़ चल दिये थे। अपने पुत्रों को उन्होंने सूचित किया था कि 'आप सब कुछ कर लीजिएगा, मुझे तो जाने की आज्ञा है, इसलिए जा रहा हूँ।'

उनकी अनुपस्थिति में ही पत्नी का अग्निसंस्कार हो गया! स्वामीश्री को जब इस बात का पता चला, तो उन्होंने जूनागढ़ से छगनभाई को गोंडल बुलवाकर पूरी घटना सुनी फिर कहा, 'छगनभाई! आपने तो भक्तराज पर्वतभाई जैसा कर दिखाया। (पर्वतभाई – भगवान स्वामिनारायण के समय के भक्त थे। अपने पुत्र के देहावसान पर भी उन्होंने गढ़डा जाने की आज्ञा का पालन किया था।) लेकिन लोकव्यवहार और संसार की प्रथा के अनुसार चलना चाहिए। आप दोनों अचल निष्ठावान भक्त हैं। पूर्व के हरिभक्तों की बातें तो हर किसी ने सुनी हैं, परन्तु आज तो आप जैसे भक्त प्रत्यक्ष देखने को मिले।' स्वामीश्री ने आगे कहा, 'अभी आप घर जाकर लौकिक व्यवहार संपन्न कीजिए। तत्पश्चात् जूनागढ़ जाइएगा।'

स्वामीश्री का आदेश सुन रहे छगनभाई के मुख पर भावोद्रेक छाया हुआ था, परंतु विषाद की एक लकीर भी नहीं दिखती थी।

संप्रदाय के ज्ञानी एवं वयोवृद्ध संत पूज्य संतस्वामीजी को हृदयरोग की गंभीर बीमारी हुई, तब भी उनके मुख पर ब्रह्मभाव का आनंद थोड़ा सा भी धूमिल नहीं हुआ था। उन्होंने स्वामीश्री से कहा था, 'भगवान की इच्छा मुझे ले जाने की हो, तो मैं तैयार हूँ। यदि मुझे यहीं रखने की इच्छा हो, तो भी मैं तैयार हूँ। मुझे कोई दुःख या ग्लानि नहीं है। अंतःकरण में संपूर्ण शान्ति है। मैंने शास्त्रीजी महाराज, योगीजी महाराज और आपकी सेवा की है। मुझे कोई इच्छा नहीं है, भय नहीं है, असंतोष नहीं है। मैं पूर्णकाम हूँ।'

स्वामीश्री के सत्संग तथा उनकी प्रेरणा का यह अद्‌भुत चमत्कार है! अपने इकलौते बेटे की मृत्यु होने पर भी विषाद रहित मन से सभाजनों में शक्कर बाँटनेवाले योगेन्द्रभाई परमार, वीरचंदभाई मोदी अथवा नवसारी के मगनभाई जैसे कई हरिभक्त सत्संग में ऐसे हैं कि वे संसार में तो रहते हैं, परन्तु जैसे जल में कमल का फूल!

ऐसे आत्मज्ञानी एवं आध्यात्मिक पुरुष को अपनी आत्मा समझकर भगवान भी गौरव का अनुभव करते हैं।

श्रीमद् भागवत में कहा गया है कि –

इति वेद स वै विद्वान् यो विद्वान् स गुरुहरिः ॥ (4-29-51)

अर्थात् ऐसे ज्ञानी ही गुरु हैं और श्रीहरि हैं।

शमः दमः तपः

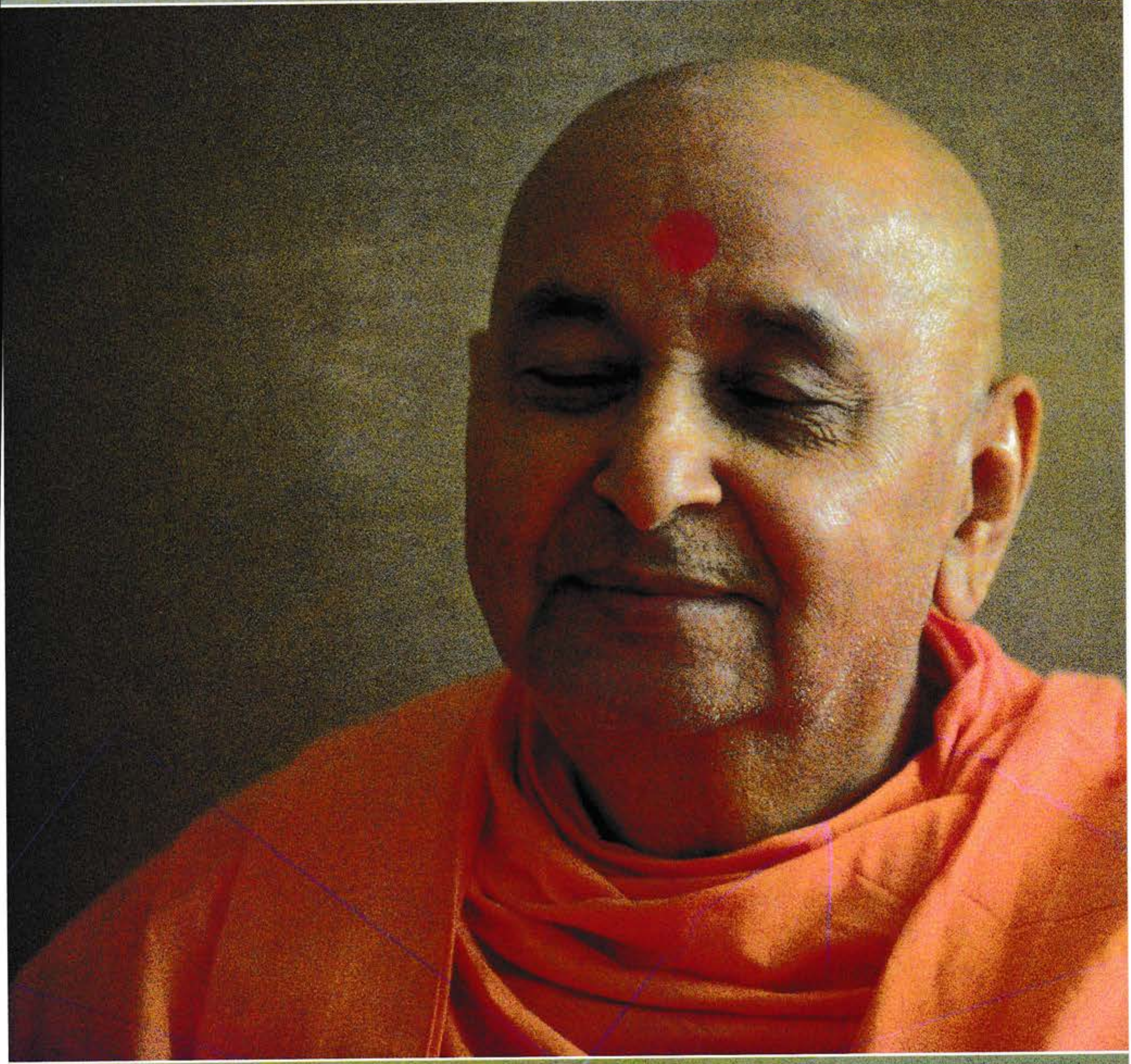

शीलम् अर्थात् सदाचार।
शमः अर्थात् मन को संयमित करके, सांसारिक भोग-चिंतन से मुक्त करना।
दमः अर्थात् पंचविषयों की ओर आकर्षित ज्ञानेंद्रियों को
नियंत्रण में रखकर, उन्हें अपने वश में कर लेना।
तपः अर्थात् इन्द्रियों के आहार को रोककर, उन्हें आत्माभिमुख करके
दिव्य आनन्द में डुबो देना।
स-शरीर होने पर भी जिनके स्वरूप में मन, इन्द्रिय तथा अंतःकरण के भाव नहीं,
ऐसे परमात्मा को शम, दम, तप एवं शील स्वाभाविक ही सिद्ध होते हैं !
परमात्मा के धारक गुणातीत संत के लिए भी ऐसे गुण सहज सिद्ध होते हैं !
प्रमुखस्वामी महाराज का दर्शन करने के बाद
इसकी सहज प्रतीति होती है।

शम-दम-तप की त्रिवेणी स्वामीश्री की साधुता-शिखर से प्रवाहित होती पुण्यगंगा है। मन और इन्द्रियों पर स्वामीश्री का कैसा आधिपत्य है? उनका तपस्वी जीवन कैसा है? उनमें शील के लक्षण कैसे हैं? इन प्रश्नों के उत्तर उनकी संगति में स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। उनके दैनिक जीवन में ऐसे आंतरिक गुणों की झलक मिलती रहती है।

मन और इन्द्रियों पर उनके नियंत्रण का प्रतिक्षण अनुभव किया जा सकता है।

भगवान स्वामिनारायण ने कहा है, 'जितं सर्वं जिते रसे' अर्थात् स्वादेन्द्रिय पर विजय प्राप्त करनेवाला प्रत्येक इन्द्रिय पर विजय प्राप्त कर लेता है।

सन् 1959-60 में स्वामीश्री जब योगीजी महाराज के साथ प्रथम विदेश यात्रा पर पधारे, तब उनके साथ सेवा हेतु मुंबई के युवक अरुण दवे (वर्तमान, पूज्य ईश्वरचरणदास स्वामी) भी शामिल थे। वे लिखते हैं, 'उस समय सेवा में रहते हुए स्वामीश्री के सांन्निध्य की अमिट छाप आज भी मेरी स्मृति में यथावत् है। सन् 1959 में योगीजी महाराज के साथ सेवा हेतु मुझे अफ्रीका जाने का अवसर प्राप्त हुआ था। संतों के लिए भोजन तैयार करने की सेवा मिली थी। पूरा संतमंडल स्वाद रहित भोजन का अभ्यस्त था। योगीजी महाराज मिर्च या नमक के बिना बिल्कुल हलका भोजन पसन्द करते थे।

साथ में उपस्थित संतों की भी वही रुचि थी। केवल एक प्रमुखस्वामी महाराज थे, जो कुछ तीखा भोजन खा सकते थे। परन्तु नौ महीने तक उन्होंने एकबार भी सूचित नहीं किया कि मैं उनके लिए कुछ स्वादिष्ट अथवा तीखा भोजन तैयार करूँ। सामान्य रसोई-ज्ञान के अनुसार मैं जो कुछ तैयार करता था; वे स्वीकार कर लेते थे। मैं कोई रसोईकला में पारंगत

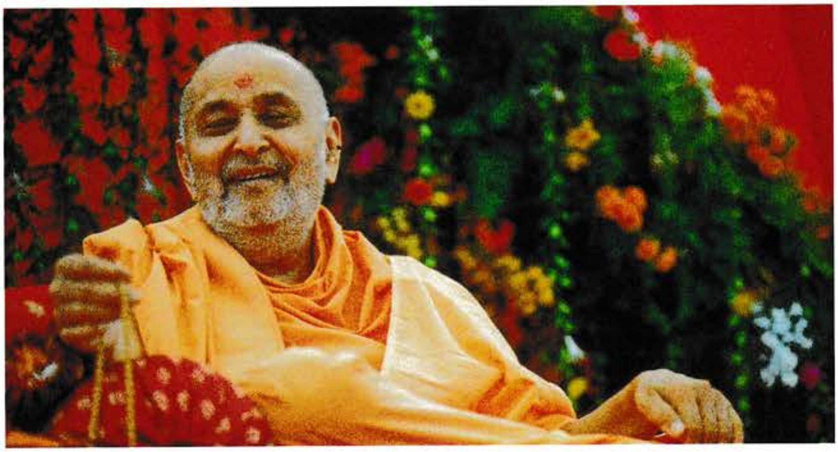

'जितना मिले उस सबका उपभोग न करें, उसका त्याग करते रहें... ।'

तो था नहीं; किन्तु स्वामीश्री ने कभी भोजन के सम्बंध में लेशमात्र भी प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। वे भगवत् स्मरण के साथ भोजन ग्रहण कर लेते थे। मुझे स्वामीश्री के स्वादेन्द्रिय-विजय का परिचय, उस समय प्रथमबार प्राप्त हुआ था।'

गुजरात के पूर्व मुख्यमंत्री बाबूभाई जे. पटेल, स्वामिनारायण संप्रदाय के जन्मजात अनुयायी थे। शिक्षापत्री के अध्ययनकर्ता के रूप में उन्होंने सन् 1990 में लिखा था कि 'स्वामीश्री का निःस्वादी वर्तमान मैंने अनेकबार देखा है। स्वादिष्ट एवं स्वादरहित व्यंजनों को एक पात्र में मिलाकर बिना स्वाद की इच्छा किए, वे प्रसाद ग्रहण कर लेते हैं। स्वादेन्द्रिय पर विजय पाना सर्व इन्द्रियों पर विजय पाने का सर्वोत्कृष्ट मापदण्ड है।'

सेवकों को स्वामीश्री के साथ यह अनुभव प्रतिदिन होता रहता है। वर्षों से स्वामीश्री की रसोई बनाने की सेवा कर रहे कृष्णवल्लभदास स्वामी की स्मृति में आज तक ऐसा कोई भी दिन नहीं आया, जब स्वामीश्री ने स्वयं के लिए कोई विशेष व्यंजन बनाने की इच्छा प्रकट की हो! जो कुछ थाल में रखा गया, उसे भगवान का प्रसाद समझकर ग्रहण कर लेते हैं।

अनेकबार उनसे पूछा गया, 'स्वामीजी, आपको भोजन में सबसे अधिक क्या पसंद है? कौन से फल का रस आपको अधिक प्रिय है? कौन सी सब्जी अथवा मिठाई आपको अधिक अच्छी लगती है?' स्वामीश्री एक ही पंक्ति में कह देते थे, 'भगवान के थाल में जो कुछ आ जाए, वही सामग्री हमें अच्छी लगती है!'

कभी-कभी सेवकसंत द्वारा भोजन तैयार करने में कुछ गलती हो जाती हो, तो भी स्वामीश्री कोई रोष नहीं प्रकट करते। वे चुपचाप भोजन ग्रहण कर लेते हैं। स्वामीश्री से जब इसका कारण पूछा गया, तो उन्होंने कहा था कि 'यदि भगवान ने स्वीकार कर लिया, तो हमें क्या आपत्ति है? भगवान का स्वीकार किया हुआ अन्न तो उनका प्रसाद है।'

सन् 1990 में इंग्लैण्ड की धर्मयात्रा में कार्डिफ सिटी में संतों को एक अविस्मरणीय अनुभव हुआ था। उस दिन संध्या समय सार्वजनिक स्वागत समारोह था। सेवक संत भगवान को नैवेद्य अर्पण करने के लिए पहले ही निकल गए थे। रसोई में बहुत सारे काम बाक़ी थे। दोनों संत सेवा में जुड़ गए। नैवेद्यगान के बाद संतों ने जब भोजन परोसा, तो स्वामीश्री भोजन के साथ यजमान की बातें सुनने लगे। अंत में सेवक ने कढ़ी परोसी। उसी समय भीतर से एक संत ने आवाज़ दी, 'अरे, स्वामीजी को कढ़ी मत देना, बहुत बे-स्वाद और दुर्गन्धयुक्त है!'

घबराये हुए संतों ने जब उसकी जाँच-पड़ताल की, तो पता चला कि जिसे दही समझकर कढ़ी तैयार की गई थी, वह कई दिनों से फ्रीज में रखी हुई पुरानी मलाई थी!

सेवक संतों ने स्वामीश्री से क्षमा याचना की, 'स्वामीजी! भूल हो गई...।'

स्वामीश्री ने शान्तचित्त से कहा, 'कोई बात नहीं। जब भगवान ने बिना बोले ग्रहण कर लिया, तो हमें क्या आपत्ति है?'

स्वामीश्री का उत्तर सुनकर सभी के सिर झुक गए। किसी के पास कहने के लिए कोई शब्द ही न थे।

एकबार मुंबई में मीठे नींबू का कसैला रस स्वामीश्री को अनजाने में ही दिया गया था। वे बिना कोई प्रतिक्रिया व्यक्त किए उसे पी गए थे! एक हरिभक्त ने खेत से ताज़े हरे चने लाकर प्रेमपूर्वक आग्रह किया, तब रेत से सने हुए उन चने को स्वामीश्री अंगीकार करने लगे! अहमदाबाद में एक भक्त ने अपनी नई आटे चक्की में पिसे आटे से रोटी पकाई और स्वामीश्री को लाकर प्रेमपूर्वक दिया, तो स्वामीश्री उसकी रोटी में मिले हुए पत्थर के महीन कणों के बावजूद उसे स्वीकार करने लगे।

पिछले कई वर्षों से स्वामीश्री के लिए हमेशा एक ही प्रकार का भोजन तैयार किया जाता है। किसी विशिष्ट व्यंजन के लिए यदि प्रेमपूर्वक आग्रह हुआ, तो स्वामीश्री सेवक का मन रखने के लिए व्यंजन के छोटे से टुकड़े को स्वीकार कर लेते हैं।

सारंगपुर में यज्ञेशदास स्वामी गन्ने का रस लेकर आए, तो उसे वापस लौटाते हुए स्वामीश्री ने कहा था, 'मैंने आपको कल ही मना कर दिया था; इसे वापस ले जाइए। यदि मैं आज लूँगा, तो कल फिर से लाएँगे।' उन्होंने दृढ़तापूर्वक मना कर दिया। वे प्राय: कहा करते हैं, 'जो कुछ मिलता रहे, उन्हें भोगते रहना नहीं चाहिए, उनका त्याग करते रहना चाहिए।'

सन् 2007 से उन्होंने दोपहर का भोजन पूर्णत: बन्द किया है, केवल दो समय अल्पाहार करते हैं। ऐसी तपस्या में उनके इन्द्रिय-निग्रह की एक विशेष प्रतिभा दिखाई देती है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने तीन प्रकार के तप की परिभाषा दी है: जिनमें शील, शम, तथा दम तीनों सद्‌गुणों का समावेश होता है।

प्रथम तप है – शारीरिक तप। *देव-द्विज-गुरु-प्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्। ब्रह्मचर्य-अहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥* अर्थात् देव, ब्राह्मण, गुरु, विद्वान आदि का पूजनपूर्वक आदर प्रदान करें, अंतर-बाह्य पवित्रता एवं सरलता रखें, ब्रह्मचर्य तथा अहिंसा का पालन करें, क्योंकि यही शारीरिक तप है। (17-14)

दूसरा तप है – वाणी का तप। *अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियं हितं च यत् ।* (17-15)

अर्थात् किसी को मानसिक कष्ट न हो, ऐसी वाणी बोलिए। सत्य, प्रिय और हितकर वाणी बोलना ही तप है।

तीसरा तप है – मन का तप। संयम द्वारा मन की प्रसन्नता, सौम्यता, मौन अर्थात् व्यर्थ की बातें न बोलना, आत्मा में सर्व इन्द्रियों का निग्रह, तथा शुद्धि अर्थात् काम-क्रोध-कपट आदि विकारों से मुक्त हृदय का शुद्धभाव। ऐसे गुण मानसिक तप हैं।

श्रीहरि ने तप को भगवत्प्रसन्नता का अमोघ साधन कहा है। स्वयं पूर्ण होते हुए भी भक्तिभाव में निमग्न स्वामीश्री तप द्वारा भगवान को प्रसन्न करने का एक भी अवसर नहीं

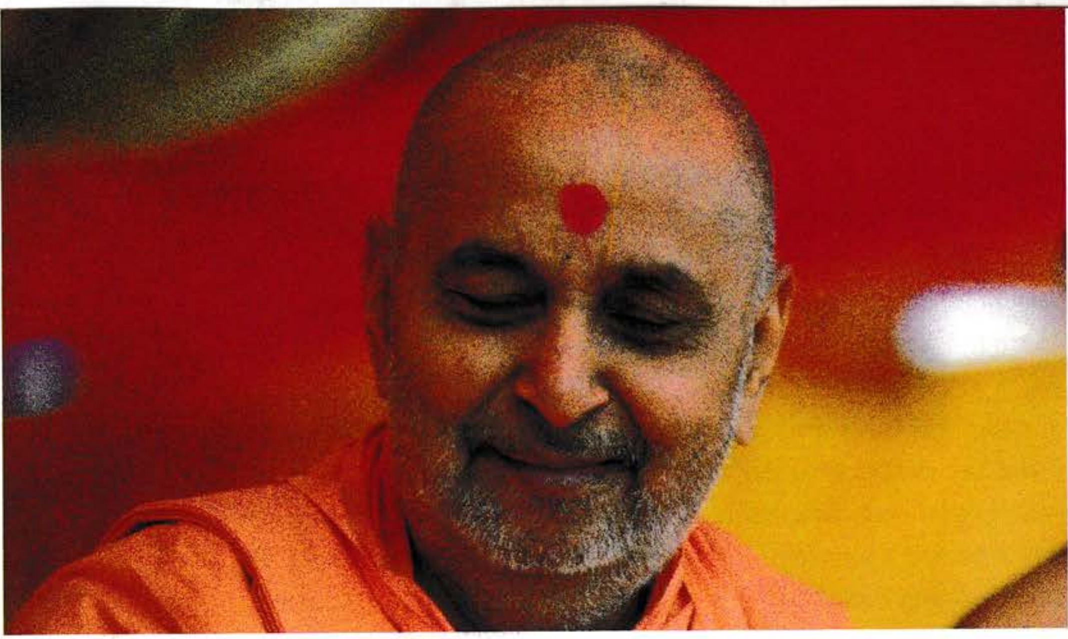

छोड़ते। उपरोक्त तीनों तपों की विभावनाओं को उन्होंने अपने जीवन का अंग बना लिया है।

जान-बूझकर शरीर का दमन करना, उनके लिए सहज है। निर्जल उपवास उनका प्रिय तप है। 57 वर्ष की उम्र तक वे चतुर्मास में धारणा-पारणा एवं निर्जल उपवास का व्रत अविरत करते रहे। भले ही एकादशी का निर्जल उपवास हो, आग बरसती धूप में भी गाँव-गाँव का उनका विचरण कभी बन्द न हुआ। 102 डिग्री तीव्र बुखार में निर्जल उपवास के दिन 122 घरों में दिन भर पधरावनी करते रहना उनकी तपस्या का ही एक विशेष लक्षण है।

स्मृतियों में कहा गया है कि शरीर स्वस्थ न हो, तो निर्जल उपवास नहीं करना चाहिए। 63 वर्ष की उम्र और हृदयरोग का प्रथम आघात हो चुकने के बावजूद 5 बड़े व्रतों पर उपवास रखने हेतु स्वामीश्री का विशेष आग्रह रहता था! हृदयरोग की दवा का कोई विपरीत प्रभाव न पड़े, इस हेतु सेवक संत उन्हें कुछ भोजन ग्रहण कर लेने का आग्रह करते हैं, तब उनका यही उत्तर होता है, 'एक दिन उपवास करने से मर थोड़े ही जाएँगे?'

स्वामीश्री को उपवास न करने के लिए मनाना, लोहे के चने चबाने जैसा है!

वे जब 6-7 साल के थे, उस समय की एक प्रसिद्ध घटना है। भादरण के छोटाभाई ने एकादशी के दिन लगभग 25 बालकों को भोजन के लिए एकत्रित कर रखा था। शान्तिलाल (प्रमुखस्वामी महाराज) भी साथ में थे। छोटाभाई ने उनको भोजन की पंक्ति में आग्रहपूर्वक बैठाया, किन्तु वे भोजन के लिए तैयार ही नहीं थे। उस दिन उन्होंने एकादशी का व्रत रखा था। व्रत तोड़ने के लिए बालकों एवं अन्य लोगों का दबाव बढ़ जाने से शान्तिलाल ने रोना शुरू कर दिया, अंततः छोटाभाई ने पूछा, 'अरे भाई, तुझे क्या चाहिए?'

'मुझे भोजन नहीं करना है।' शान्तिभाई ने धीरे से कहा, 'मुझे एकादशी करने दीजिए...' शान्तिलाल की रुचि देखकर छोटाभाई का हृदय पिघल गया था!

आज 91 वर्ष की उम्र हो जाने पर भी तपस्या सम्बंधित स्वामीश्री की रुचि वैसी की वैसी ही है। वे व्रत-उपवास के लिए डॉक्टर एवं अन्य अग्रणी हरिभक्तों के विनम्र परामर्श की भी अनदेखी करते हैं। नियम-त्याग के लिए वे आज तक कभी तैयार नहीं हुए।

कोई वरिष्ठ संत व्रत-उपवास के दिन भोजन के लिए अधिक आग्रह करते हैं, तो

स्वामीश्री अत्यंत दृढ़तापूर्वक कहते हैं, 'आप लोग अपनी शक्ति को व्यर्थ में व्यय मत कीजिए। वैसे भी आज का अच्छा दिन है, इसे दोनों के लिए व्यर्थ में बिगाड़ना मत।'

चंद्रग्रहण-सूर्यग्रहण आदि में स्वामीश्री वेधकाल के समय से ही भोजन का त्याग कर देते हैं। यद्यपि शास्त्रों में विधान है कि 80 वर्ष के पश्चात् ग्रहण के वेधकाल का कोई नियम स्वास्थ्य को देखते हुए लागू नहीं होता। परन्तु ऐसे नियमों के बावजूद तपस्या के लिए स्वामीश्री अपने स्वास्थ्य के सामने झुकने को तैयार नहीं होते। उनके मतानुसार गुरु-आज्ञा का पालन करना अथवा भगवान के आदेशों का अनुसरण भी बहुत बड़ी तपस्या है। उनकी तपस्या का प्रभाव उनके सैकड़ों संतों एवं सहस्रों भक्तों के जीवन को भी प्रभावित कर चुका है। वेदव्यासजी *'कामस्त्यागस्तप: स्मृतम्'* कहकर कामनाओं के त्याग को तप कहते हैं। (श्रीमद् भागवत : 11-39-37) इस प्रकार मन पर विजय प्राप्त करके स्वामीश्री ने 'शम:' का दर्शन करवाया है।

उनके अक्षुण्ण ब्रह्मचर्य व्रत में, उनके मनोविजय की प्रतीति सतत मिलती रहती है। 70 वर्ष के उनके त्यागी जीवन में ब्रह्मचर्य की शुभ्र चादर में लेशमात्र भी दाग नहीं लगा। भगवान स्वामिनारायण द्वारा प्रदत्त अष्टांग ब्रह्मचर्य की गरिमा उनके व्यक्तित्व के प्रत्येक आयाम में रची-बसी दिखाई देती है। वे ब्रह्मचर्य के नियमों का अक्षरश: पालन करते हैं, ऐसा कहने के बजाए यही कहना श्रेयस्कर है कि ब्रह्मचर्य के सभी उत्कृष्ट नियम, उनके जीवन के विभिन्न अंग बन गए हैं!

दुबई की एक सार्वजनिक सभा में जैन धर्मगुरु आचार्य पुष्पराजजी ने अपने संबोधन में कहा था, 'प्रमुखस्वामी किस देव को मानते हैं और उनका सिद्धान्त क्या है, उस विषय पर न जाकर मैं उनके आचरण को ही देखता हूँ। कोई मनुष्य यदि एक दिन के लिए भी ब्रह्मचर्य के नियमों का सत्यत: पालन करता है, तो उसके घर देवगण भी सिर झुकाते हैं, फिर प्रमुखस्वामी तो आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किए हैं। ब्रह्मचारियों में यदि मैं प्रमुखस्वामी को प्रथम स्थान दूँ, तो उस विधान में कोई अतिशयोक्ति न होगी।'

8 अगस्त, सन् 1988 को अमेरिका के रेसिन नगर में एक साक्षात्कार में पत्रकार ने स्वामीश्री से पूछा था, 'आपको स्त्री का अनुभव कब हुआ?' 'त्रिकाल में भी नहीं।' स्वामीश्री ने तत्काल दृढ़तापूर्वक उत्तर दे दिया था। उनके शील का परिचय जिसने भी पाया है, वे उनके उक्त विधान की सत्यता ह्रदय की गहराइयों तक महसूस करते हैं।

अठारहवीं शताब्दी में श्रीहरि द्वारा कहे गए उनके आत्मकथन का पुनरावर्तन स्वामीश्री के उत्तर में देखने को मिलता है। भगवान स्वामिनारायण ने कहा था, 'मैंने जिस दिन जन्म लिया, तबसे आज तक जाग्रत अथवा स्वप्न अवस्था में भी यदि मुझे द्रव्य या स्त्री का विकृत संकल्प हुआ हो, तो समस्त परमहंसों की सौगन्ध है।' (वच. ग.म. 33)

स्वामीश्री वास्तव में मन और इन्द्रियों के भावों से परे आध्यात्मिक शिखर पर बिराजमान महापुरुष हैं। जहाँ उन्हें केवल परमात्मा के आत्यंतिक आनन्द की ही अनुभूति होती रहती है।

श्रीमद् भगवद्गीता का कथन है : 'इन्द्रियातीत ब्रह्मानन्द में डूब चुके योगीपुरुष, कभी भी अपनी स्थिति से चलायमान नहीं होते।' (6-21)

यही योग है और यही निर्विकल्प समाधि!

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

ऐश्वर्यम् बलम् भगः

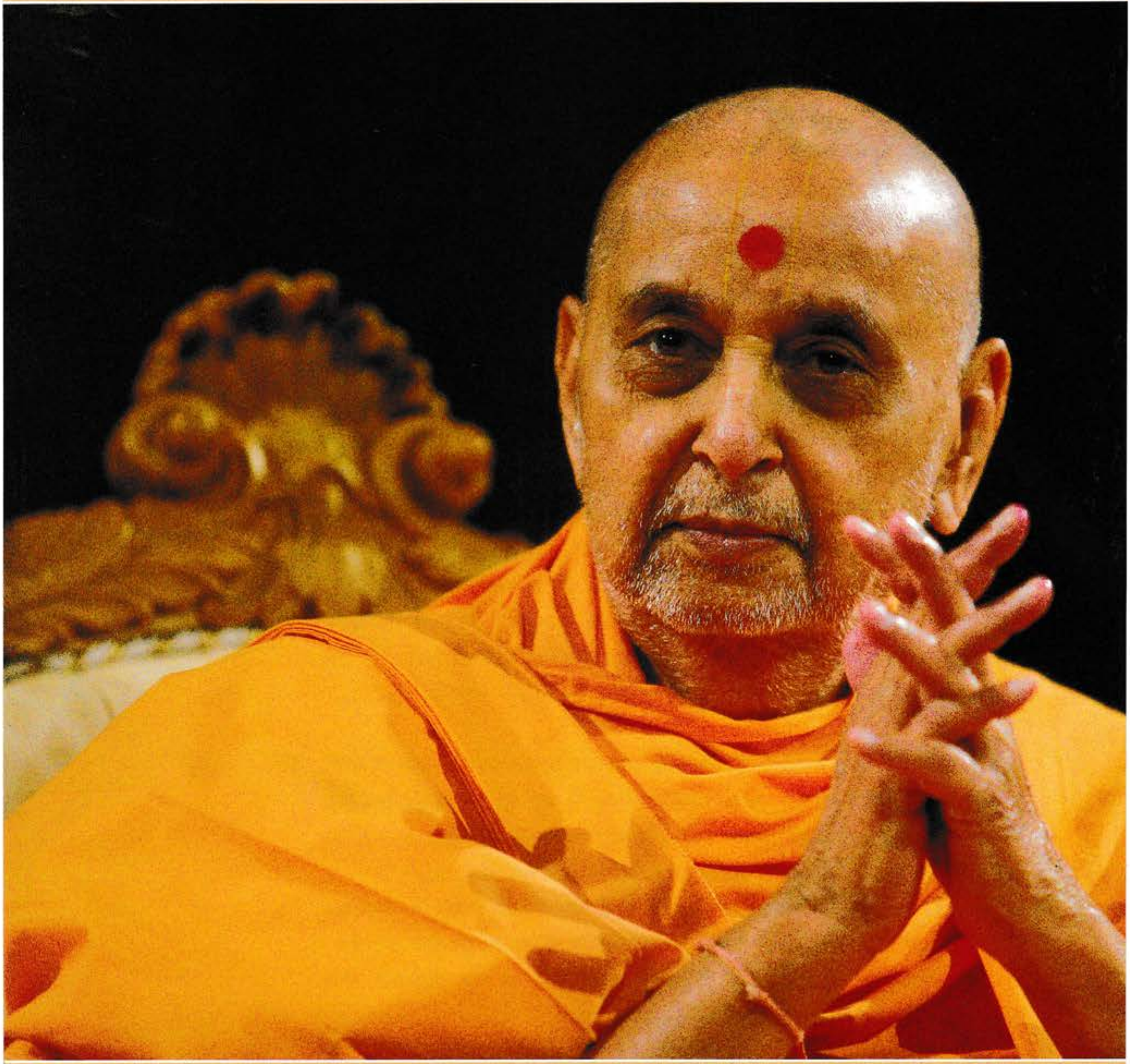

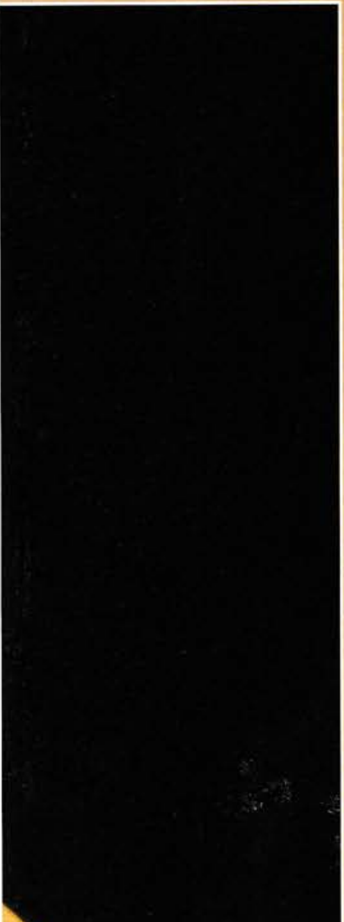

ऐश्वर्यम् अर्थात् सर्व जीव-प्राणीमात्र का नियंता-भाव।
बलम् अर्थात् सर्व की प्राणवृत्तियों का नियमन करने की शक्ति।
भगः अर्थात् ऐश्वर्य, बल, ज्ञान, शक्ति आदि गुणों का समन्वय।
बृहदारण्यक उपनिषद् भगवान की महिमा गान करते हुए कहती है :
यः सर्वाणि भूतानि अन्तरो यमयत्येष स आत्मा अन्तर्यामी-अमृतः ॥
अर्थात् सर्व प्राणियों में रहकर जो सर्व का नियमन करता है,
वही अंतर्यामी और आपकी अमर आत्मा है !
जिन्हें परमात्मा का साक्षात्कार है, ऐसे गुणातीत संत को भी
भगवदकृपा से ऐसा ऐश्वर्य-बल प्राप्त होता है, भगवान के अनन्य
सम्बंध से ऐसे संत भी ऐश्वर्यवंत, भगवंत, बलवंत बनते हैं।

संत के ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए भगवान स्वामिनारायण कहते हैं, 'वे भगवान के प्रताप से अनंत प्रकार के ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं और अनंत जीवों का उद्धार करते हैं... उनके नेत्र द्वारा देखनेवाले भगवान हैं... उनके पैर से चलनेवाले भगवान हैं, वे ब्रह्मांड में सर्व जीव को चलने की शक्ति का पोषण करते हैं। ऐसे संत की सर्व इन्द्रियों में भगवान रहते हैं, इसलिए वे ब्रह्मांड के सर्व जीवों की इन्द्रियों को प्रकाशित करने में समर्थ होते हैं। ऐसे संत तो सर्व जगत के आधार रूप हैं।' (वच. ग.प्र. 27)

वे आगे कहते हैं, 'जितने में राजा का राज्य उतने में ही रानी का राज्य होता है। उसी तरह जितना भगवान का प्रताप, उतना ही संत का प्रताप होता है।' (वच. ग.म. 22)

भगवान की तरह गुणातीत संत भी अपने ऐश्वर्य एवं प्रभाव को गुप्त ही रखते हैं। फिर भी कभी-कभी उनका ऐश्वर्य प्रकट हो जाता है।

भगवान के साथ अखंड तादात्म्य के कारण प्रमुखस्वामी महाराज दिव्य गुणों के धारक हैं और अगणित मुमुक्षुओं ने विविध प्रकार से उनके ऐश्वर्य का अनुभव किया है।

उनके ऐश्वर्य का प्रथम अनुभव है : चित्त की वृत्तियों पर नियमन होते ही अत्यंत दिव्यता तथा अकथ्य शान्ति की अनुभूति।

श्रीहरि के दिव्य व्यक्तित्व में जिस प्रकार अनेक महानुभावों को दिव्यता की अनुभूति होती थी, उसी प्रकार वही पारलौकिक अनुभूति आज स्वामीश्री के सांनिध्य में भी होती है।

उनके प्रथम परिचय में आनेवाले अपरिचित मुमुक्षु भी स्वामीश्री से मिलते ही असीम आनंद में विहार करने लगते हैं, जैसे परमात्मा की दिव्यता का स्पर्श हुआ हो! उनके मन-प्राण पर ब्रह्म के आनन्द का अनुभव होता है। अंतर्मन में आजीवन एक अविस्मरणीय

सुखानुभूति स्थायी हो जाती है; जो शब्दातीत, इन्द्रियातीत और समयातीत होती है।

विभिन्न धर्मों, विविध देशों तथा विभिन्न स्तर के लोग स्वामीश्री से मिलते हैं, तो उनके स्पर्श, उनकी दृष्टि, उनके दर्शन अथवा उनके सान्निध्य मात्र से ही दिव्य अनुभूति होने लगती है। बड़े-बड़े साहित्यकारों को भी अपने उक्त अनुभव को व्यक्त करने हेतु शब्दों की कमी पड़ जाती है।

कुछ ऐसे अनुभव यहाँ यथावत् प्रस्तुत हैं –

भारत की विख्यात पिलानी युनिवर्सिटी के स्थापक-सलाहकार डॉ. ए.डी. बोहरा ने 13 मार्च 1994 को जोधपुर में अपना दिव्य अनुभव इन शब्दों में व्यक्त किया था, 'इस छोटी सी सभा में इतने महान व्यक्तित्व का आना ही हमारे लिए भाग्य की बात है! '...स महात्मा स दुर्लभ:' ऐसे महापुरुषों के दर्शन मात्र से हम शान्ति पाते हैं। मैंने 15 वर्ष पहले स्वामीजी का दर्शन नैरोबी में किया था। आज भी उतनी ही स्फूर्ति मैं देख सकता हूँ। मैंने आपके चरणों का स्पर्श किया और आपने मेरे सर पर हाथ रखा, तब आपकी पोटेन्शियल-विद्युत का जो संचार हुआ, उसका मैं शब्दों में वर्णन नहीं कर सकता। वह एक दिव्य अनुभव था।'

भारत के प्रखर संविधान-विशेषज्ञ डॉ. एल.एम. सिंघवीजी को प्रथम दर्शन में ही स्वामीश्री की दिव्यता ने प्रभावित कर दिया था। 9 नवम्बर 1997 को लंदन में स्वामीश्री के चरणस्पर्श करते ही उन्हें जो दिव्य अनुभव हुआ, उसका वर्णन करते हुए वे बोल उठे थे कि 'स्वामीजी ने जब मुझे स्पर्श किया, तब एक अलौकिक झुनझुनी सी हो गई। उनके प्रवचन से नहीं, किन्तु उनके स्पर्श से ही मैं आकर्षित हुआ हूँ। आज तक ऐसी अनुभूति मुझे कभी भी नहीं हुई!'

सभा में उन्होंने कहा था, 'जब से उनका आशीर्वाद और अनुकंपा प्राप्त हुई, मुझे लगता है कि ऐसे महापुरुष के साथ मेरा अंतरंग सम्बंध स्थापित हो रहा है, जिनको व्यक्ति नहीं कहा जा सकता, उन्हें तो 'भगवान का तत्त्व' ही कहा जा सकता है। वे एक तीर्थ समान हैं, पवित्र, निश्चल, निर्मल। मनुष्य शरीर में वे साक्षात् ब्रह्मस्वरूप हैं; जिनके स्पर्श और दृष्टि मात्र से मन में नयी प्रेरणा एवं शुद्धि उत्पन्न होती है। वे प्रकटरूप में हरि हैं, जिसकी प्रतीति मुझे विगत वर्षों में हुई है। वह इसलिए नहीं कि उन्होंने इतने विशाल मंदिर बनाए, इतने पढ़े-लिखे साधुओं का शिष्यवृन्द उनके सान्निध्य में हैं, इतना बड़ा जनसमुदाय उनके दर्शन हेतु उमड़ता है, परन्तु उनके सान्निध्य में और उनके स्पर्श से मुझे परमात्मा की अनुभूति होती है।'

बाहरीन के इन्टरनेशनल अस्पताल के सूत्रधार, डॉ. फैजल झीरा पक्के मुस्लिम होने के बावजूद स्वामीश्री के प्रति बेहद श्रद्धानत रहते हैं। वे कहते हैं, 'स्वामीजी हमारे विचारों में, हमारे नित्य जीवन की आध्यात्मिकता में महान स्थान आरक्षित रखते हैं। वे मेरे गुरु हैं और मैं प्राय: जो कुछ भी कर सकता हूँ, उसमें वे आदर्शरूप हैं। जब मैं सर्वप्रथम बार उनसे मिला, तब मुझे अनुभव हुआ कि उनके आसपास हवा में एन्जल्स-देवदूत विहरते हैं, निर्वाणपद को प्राप्त हुई आत्मा की भाँति!

'हम तर्कवादी होते जा रहे हैं। हमारे वैज्ञानिकों ने हमें जो कुछ दिखाया, वे हमारे अनुभव में लाए, हम सब उन्हीं की ओर देखते हैं। हम प्रमाणों की दुनिया में जीते हैं, 'पहले

'अध्यात्मजागृति प्रसारित करनेवाले प्रमुखस्वामी महाराज द्वारा
आज भगवान स्वामिनारायण कार्य कर रहे हैं।
हमारा अध्यात्म, हमारा ज्ञान, हमारी संस्कृति एवं हमारी भक्ति
सबकुछ शास्त्रों के पृष्ठों में बंद थे। शास्त्रों की उन जटाओं में से
संस्कृति की गंगा को प्रमुखस्वामी महाराज ने प्रवाहित की है। वे पूरे
विश्व में भारतीय संस्कृति की गंगा को प्रवाहित करनेवाले अभिनव भगीरथ हैं।'

- पूज्य स्वामी विश्वेशतीर्थजी महाराज

(मध्वाचार्य, पेजावर मठ)

मुझे बताओ बाद में मैं मानूँ।' परन्तु जब मैंने स्वामीजी को देखा, तो वह एक ऐसी दुनिया थी कि जिससे मैं अपरिचित था! उस अनुभव का निरूपण करना अत्यंत कठिन है, परन्तु इतना निश्चित है कि मुझे पहले कभी ऐसा अनुभव नहीं हुआ था, वैसा वह दर्शन था। मैं एक दिव्य तत्त्व, आध्यात्मिक शक्ति के सान्निध्य में था और ऐसा ही सतत अनुभव रहा। वह अनुभव आत्मा का था, मन का नहीं और जब कभी मैं प्रमुखस्वामीजी से मिला हूँ, प्रत्येक बार मुझे समान अनुभव हुआ है। जिससे मुझे कोई असाधारण शक्ति प्राप्त होती है। एक बात सच है कि सारे धर्ममार्ग हमें भगवान की ओर ले जाते हैं, परन्तु मैं अपने अनुभव से कहता हूँ कि भगवान की ओर ले जानेवाला सबसे विशाल और सबसे अधिक सानुकूल मार्ग यदि कोई है, तो वह स्वामीश्री का बताया हुआ मार्ग है।'

एटलान्टा के विख्यात सर्जक डॉ. आसिफ तौफिक रमजान के दिनों में 22 सितम्बर 2007 को ईस्ट ब्रुन्सविक नगर में स्वामीश्री के दर्शन के लिए आए थे। अपनी अनुभूति का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा कि 'स्वामीश्री ने मेरे सिर पर जब अपना हाथ रखा, तब दिव्य विद्युत प्रवाह मेरे शरीर में प्रवाहित होने लगा था। ऐसे रोमांच तथा दिव्यानंद के अनुभव से मुझे रात को नींद तक नहीं आयी। स्वामीश्री का मुखारविन्द पूरी रात आँखों के समक्ष दिखता रहा!'

विश्व विख्यात पत्रिका 'रीडर्स डायजेस्ट' के टाइटल पृष्ठ पर जिनको 'अन-कॉमन मैन' के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त हुई है, टाइम्स ऑफ इन्डिया के प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट एवं आलोचक आर.के. लक्ष्मण (राशीपूरम् कृष्णास्वामी लक्ष्मण) दिल्ली में राष्ट्रपति श्री अब्दुल कलाम के आग्रह पर अक्षरधाम देखने आए थे। श्री लक्ष्मण, अक्षरधाम में अपने अंतर्मन को बदलता हुआ अनुभव करने लगे। लगातार दो दिनों तक उन्होंने अक्षरधाम की सृष्टि का भरपूर आनंद लिया और अंत में स्वामीश्री के दर्शनार्थ आ पहुँचे।

वे वास्तव में भावविभोर थे। उन्होंने कहा, 'मुझे राष्ट्रपतिश्री ने मुंबई से निमंत्रण देकर बुलाया। उन्होंने मुझे अक्षरधाम परिसर देखने के लिए विशेष निवेदन किया। उन्होंने यदि नहीं कहा होता, तो मैं बहुत ही बड़े लाभ से वंचित रह जाता। मैंने पूरा अक्षरधाम देखा। नख-शिख अभिभूत हो गया हूँ। वर्णन के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। मेरे स्वभाव के विरुद्ध कोई अदृष्ट मोहनी सी कर दी है अक्षरधाम ने।' इतना बोलते ही वे एकदम मौन हो गए। शब्द खो गए, होंठ फड़फड़ाते रहे और आँखें बोलने लगीं। अंतर की भावोर्मियाँ आँसू बनकर बहने लगीं। थोड़ी देर तक तो उनकी आँखें बरसती रहीं। क्या हुआ आर.के. लक्ष्मण

को? उस दृश्य को देखनेवाले सभी स्तब्ध और विस्मित थे। आर. के. लक्ष्मण केवल इतना ही कह सके थे, 'नथिंग टु से। मैं कुछ भी कह सकूँ, ऐसी स्थिति में नहीं हूँ। मैं दुनिया के कोने-कोने में गया हूँ, परन्तु मुझे ऐसी अनुभूति कभी और कहीं नहीं हुई।'

स्वामीश्री से मिलने के बाद उन्होंने कहा, 'मैंने शान्ति के महासागर में गोता लगा लिया हो, ऐसी अनुभूति कर रहा हूँ।' आज उनकी नास्तिकता स्वामीश्री की दिव्यता में बह निकली! उनकी पत्नी ने स्वयंसेवकों से कहा, 'अपने पति को इतने अभिभूत हुए मैंने कभी नहीं देखा। यह सचमुच एक चमत्कार है।'

हॉलैन्ड स्थित शिक्षक मि. हनकोप ने अपनी पड़ोसी श्रीमती जिनेट को स्वामीश्री के विषय में जानकारी दी, तो एकाएक उसे सत्संग का ऐसा रंग लगा कि उसके पति ने सोचा कि कहीं मेरी पत्नी अति धार्मिक हो जाएगी, तो अपना व्यक्ति स्वातंत्र्य खो बैठेगी। उसी समय, सन् 1984 में स्वामीश्री बेल्जियम पधारे। जिनेट अपने पति के साथ स्वामीश्री के दर्शनार्थ आ पहुँची। जब उसका पति स्वामीश्री से मिलकर बाहर निकला, तब तक उसका पूर्वग्रह पिघल गया था। उसने तुरन्त जिनेट से कहा, 'प्रमुखस्वामीजी से मिलने के पहले उनके बारे में कोई भी अनुमान लगाना व्यर्थ है! मैं किसी भी अपरिचित व्यक्ति को स्पर्श नहीं करने देता हूँ, परन्तु स्वामीश्री का स्पर्श मुझे अलौकिक लगा, कुछ अनोखा सा अनुभव पाकर मुझे परम शान्ति की अनुभूति हो रही है।'

मिस्र के काहिरा निवासी तथा हिन्दुत्व-प्रेमी एक मुस्लिम नागरिक मौसरी इमाम, दिल्ली में अक्षरधाम की यात्रा पर आए थे। दर्शन के बाद उनको अक्षरधाम के निर्माता स्वामीश्री के दर्शन की प्रबल उत्कंठा हुई। वे गुजरात के सारंगपुर गाँव में स्वामीश्री के दर्शनार्थ पहुँच गए। 20 मार्च 2007 को स्वामीश्री प्रात:पूजा में दर्शन दे रहे थे। ठाकुरजी की मूर्ति में तन्मय स्वामीश्री के दर्शन से उनको ऐसी दिव्य अनुभूति हुई, जो जीवन में प्रथम बार हुआ था। सहज ही उनकी आँखों से अस्खलित अश्रुधारा बहने लगी। स्वामीश्री का स्पर्श होते ही वे अवर्णनीय आनंद में डूब गए। गद्‌गद भाव से उन्होंने प्रार्थना की, 'आप हमेशा मेरे साथ रहिएगा। मैं इजिप्त में अपने सारे मित्रों को आपके साथ जोड़ दूँगा।'

सन् 1988 में स्वामीश्री की दिव्यता का प्रबल अनुभव त्रिनिदाद, वेस्ट इन्डीज़ के निवासी पीटर हेन्कल को हुआ था। एटलान्टा में दर्शन करते ही पीटर ने स्वामीश्री से हिन्दुत्व की दीक्षा ले ली। स्वामीश्री ने उनको परीक्षित नाम धारण करवाया। 19 वर्ष के बाद वे 18 सितम्बर 2007 को न्युयॉर्क में पुन: स्वामीश्री के दर्शनार्थ आए, तब उनके उद्‌गार उतने ही ताज़ा थे कि जैसे वे 19 वर्ष पुरानी स्मृति नहीं, परंतु कल की ही घटित हुई घटना का वर्णन कर रहे हों! परीक्षित ने कहा था, 'मैं एटलान्टा में स्वामीश्री के दर्शनार्थ पहुँचा, तब वे अपने नित्यपूजा कर्म में व्यस्त थे। पूजा के बाद उन्होंने मेरी ओर एक दृष्टि की, उस समय जो दिव्य अनुभव हुआ, मैं आज तक भूल नहीं सका। मेरे अंतर्मन में स्वामीश्री की दिव्य मूर्ति बस गई है। उसकी स्मृति करते ही मैं गद्‌गद हो जाता हूँ।'

5 जून, 1988 को न्युयॉर्क के फोरेस्ट हिल क्षेत्र में एक सत्संग सभा का आयोजन था। स्थानीय कांग्रेसमेन श्री जेम्स एच. रोबर्ट सभा में उपस्थित थे। मि. रोबर्ट भी स्वामीश्री के असाधारण व्यक्तित्व में खो गए। उन्होंने प्रवचन में कहा, 'दो महीने पहले ही इंग्लैण्ड में मैं धार्मिक और राजकीय सम्मेलन में गया था। वहाँ केन्टरबरी के आर्कबिशप, ऑस्ट्रिया के

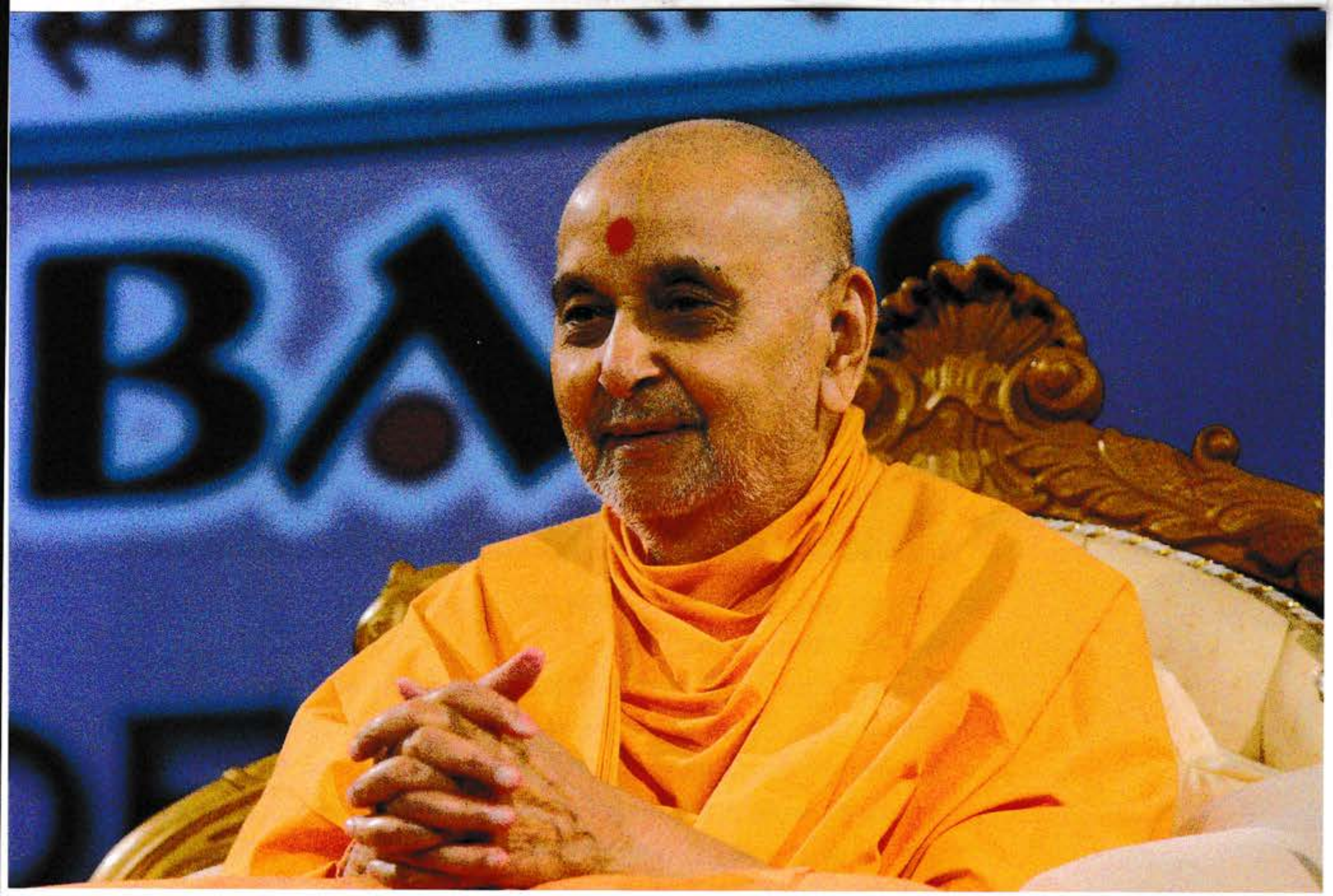

कार्डिनल, कोलकाता की मदर टेरेसा तथा भारत और पूर्व देशों के अन्य धार्मिक नेताओं से मैं मिला, जिसे मैं आश्चर्यजनक घटना मानता था। किन्तु आज स्वामीश्री से मिलते ही मुझे जो आनंद और चित्त की प्रसन्नता का अनुभव हुआ है, वह अद्‌भुत है।'

दुबई के गुजराती समाज के सूत्रधार और जाने-माने व्यापारी श्री भरतभाई शाह को कहीं पर भी सिर झुकाने की आदत न थी। परन्तु सन् 1997 में दुबई में स्वामीश्री के सत्संग में वे पहली ही बार आए। उस अनुभव का वर्णन उन्होंने 30 नवम्बर 1997 को सुरेन्द्रनगर में किया था, 'मैं नास्तिक था और प्रमुखस्वामीजी ने मुझे एक क्षण में ही आस्तिक बना दिया है, यह वास्तविक घटना है। जब मैंने उनको पहली बार देखा, तब मुझे लगा कि मेरा उनसे पूर्वजन्म का कोई सम्बंध है। प्रथम दर्शन के साथ ही मेरी आँखों से आँसू बहने लगे। उनके नेत्रों से करुणा का जो प्रवाह प्रवाहित होता था, उसे देखकर मुझे लगा कि मुझे आजीवन यहाँ आकर समाजसेवा में जुड़ जाना चाहिए। 28 वर्ष से मैं गुटखा खाता था, सभी ने छुड़वाने का प्रयत्न किया था, किन्तु स्वामीजी के योग में एक ही सेकण्ड में छूट गया। छ: महीने के बाद मैंने केवल चखने के लिए पाउच से दो दाने मुख में रखे कि तुरंत ही थूक दिया! मुझे लगा कि ऐसे ज़हर में लोग इतने क्यों लुब्ध हैं?'

विश्वविख्यात कार्डियाक-वास्क्युलर सर्जन डॉ. वी.ए. सुब्रह्मण्यम्, स्वभावत: नास्तिक और कर्म को ही योग माननेवाले पुरुषार्थी महानुभाव हैं। उन्होंने ही स्वामीश्री के हृदय की बायपास सर्जरी की थी।

20 दिसम्बर 2000 को एक इन्टरनेशनल टी.वी. चैनल पर आधे घंटे के इन्टरव्यू में

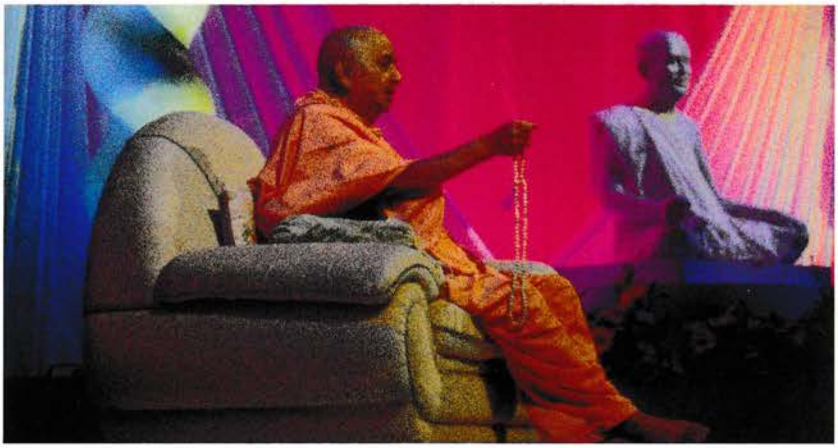

'हम तो प्रार्थना करते हैं, कार्यसिद्धि भगवदिच्छाधीन है। बाक़ी चमत्कारों से कल्याण नहीं है।''

उनसे पूछा गया, 'आपने 20,000 जितने हृदय के आपरेशन किए हैं, उस दौरान आपको कभी कोई विशिष्ट अनुभव हुआ है?'

उन्होंने कहा था, 'मुझे ऐसा कोई विशिष्ट अनुभव नहीं है, मुझमें हमेशा रोगी के लिए करुणा है। परन्तु एक बार बी.ए.पी.एस. संस्था के धर्मगुरु प्रमुखस्वामीजी पर मैं लेनोक्स हिल होस्पिटल में सर्जरी कर रहा था और जब उनका हृदय मैंने अपने हाथ में लिया, तब मुझे अद्वितीय अनुभव हुआ था। मानो समग्र ऑपरेशन थियेटर में कोई दिव्यता का अवतरण हुआ हो! जो अन्य 20,000 ऑपरेशन के दौरान कभी भी नहीं हुआ है और यह अनुभव मात्र प्रमुखस्वामीजी के हृदय के स्पर्श से ही हुआ है!'

सन् 1988 में पूर्व अफ्रीका के नैरोबी काउन्सिलर सायमन ने स्वामीश्री के प्रति अपना अनुभव खुले मन से कहा था, 'स्वामीजी के दर्शन से मेरे हृदय में सचमुच शीतलता व्याप्त हो गई! मैं उन्हें प्रथमबार मिल रहा हूँ, किन्तु मुझे निश्चय हो गया है कि स्वामीजी में भगवान ही कार्य कर रहे हैं। मैं, स्वामीजी और आप सभी के समक्ष प्रतिज्ञा करता हूँ कि आज से मैं कभी मांसाहार नहीं करूँगा और अंडें का भी त्याग करता हूँ!'

ऐसे अज्ञात आकर्षण का अनुभव असंख्य लोगों को होता रहता है। धीरे-धीरे यह आकर्षण पवित्र स्नेह में परिवर्तित हो जाता है और एक क्षण ऐसा आता है कि उन्हें स्वामीश्री से अलग होने का मन ही नहीं होता है! देश-विदेश में कितने ही सुशिक्षित नवयुवकों को स्वामीश्री से दूर होते ही नेत्र से जल बरसने लगते हैं!

सन् 1998 में बायपास सर्जरी के दौरान न्युयॉर्क की लेनोक्स हिल हॉस्पिटल के स्टाफ सदस्यों को ऐसे ही अद्‌भुत आकर्षण की अनुभूति हुई थी।

7 जुलाई, सन् 1998 से 13 जुलाई, 1998 के दौरान स्वामीश्री अस्पताल में रहे थे। मात्र सात दिन के निवास ने हार्टसर्जन डॉ. सुब्रह्मण्यम् से लेकर आई.सी.यु. एटेन्डन्ट रोबर्ट तक सभी को अपूर्व आकर्षण और दिव्य आनंद का अनुभव हुआ।

संप्रदाय की स्त्री-पुरुष मर्यादानुसार, हॉस्पिटल की महिला नर्स दूर से ही मात्र सी.सी. टी.वी. रिमोट मोनिटरिंग द्वारा ही स्वामीश्री का दर्शन कर सकती थीं। परन्तु एक रोगी के रूप में भी स्वामीश्री ने सभी के चित्त को कैसे आकर्षित कर लिया था, उसका परिचय विदाई के समय मिला। कार्डियाक थोरासिक विभाग के सभी सदस्य विदाई देने पंक्तिबद्ध खड़े थे;

अहा ! कितने विनम्र पुरुष हैं! हमारे देश के
कुछ अति दुर्लभ आत्माओं में से एक प्रमुखस्वामी महाराज हैं।
मेरे जीवन में मिले सबसे अधिक प्रभावशाली पुरुषों में से एक वे भी हैं।
वे शान्त रहकर भी असंख्य लोगों को सक्रिय बनाते हैं।

- पूज्य स्वामी आत्मानंदजी

(अध्यक्ष, रामकृष्ण मिशन, रायपुर)

सभी के मुख और आँखों में चैतन्यमय प्रेमभाव प्रतिबिंबित हो रहा था।

दो-चार दिन के बाद होस्पिटल से स्वामीश्री के दर्शनार्थ आए हुए डॉ. नीलेश पटेल ने कहा, 'स्वामीजी, अस्पताल के सभी कर्मचारियों ने आपके लिए शुभेच्छा जतायी है और पुनः आशीर्वाद की कामना की है। आपके जाने के बाद सभी को लगा कि मानो पूरा अस्पताल खाली हो गया है। हरकोई कहता है कि जैसे अस्पताल का प्राण चला गया।'

ऐसे असंख्य दिव्य अनुभवों की अन्तहीन श्रृंखला रची जा सकती है, जिसकी प्रत्येक कड़ी से एक उद्‌गार निकलता है, 'यह आकर्षण, ऐसी शान्ति की अनुभूति, ऐसी दिव्यता किसी मानव या महामानव का नहीं; यह तो साक्षात् परमतत्त्व का ऐश्वर्य है!'

खेड़ा जिले के सोखड़ा-मातर गाँव के मुखिया जशभाई को ऐसी ही दिव्यता की रोमांचक अनुभूति हुई थी : 'साधु-संन्यासी मेरे गाँव में चाहिए ही नहीं।' ऐसी द्वेष-भावना के कारण उन्होंने कभी किसी साधु-संन्यासी को गाँव में निमंत्रित नहीं किया था। स्थानीय हरिभक्त पुरुषोत्तमदास की विनती से वहाँ योगीजी महाराज का आगमन तय हुआ; परन्तु उनके लिए उचित सुविधा केवल जशभाई के घर ही थी। पुरुषोत्तमदास की विनती के कारण जशभाई ने अनिच्छा होते हुए भी हामी तो भरी, किन्तु कठोर वाणी में कह दिया, 'मैं गाँव में किसी अन्य स्थान पर रहने चला जाऊँगा। मुझे उनके दर्शन के लिए बुलाना मत।'

संजोगवश योगीजी महाराज नहीं आ सके। उन्होंने अपने स्थान पर स्वामीश्री को भेज दिया। वे जशभाई के भवन में दो दिन रुके। विदाई के समय उन्होंने घर के स्वामी के विषय में पूछा, तो पुरुषोत्तमदास ने जशभाई की साधु-संतों के प्रति घृणा का परिचय दिया। स्वामीश्री ने कहा, 'हमें उनका आभार तो व्यक्त करना चाहिए न!' आखिर वे आग्रहपूर्वक जशभाई को ले आए। उन्हें भी मित्रतावश आना पड़ा, इसलिए मन की घृणा दुगनी हो गई थी। मानो अभी स्वामीश्री के सामने ही बरस पड़ेंगे! परन्तु यह क्या? स्वामीश्री के दर्शन से ही उनका आवेश शान्त हो गया। बर्ताव में विनम्रता छलकने लगी। स्वामीश्री के चरणों में गिरकर हर्षाश्रु के साथ वे कहने लगे, 'भगवन्! दो दिन आप मेरे घर रहे, क्या दो दिन और अधिक नहीं रह सकेंगे?'

जशभाई का परिवर्तन देखकर सभी लोग आश्चर्य में पड़ गए। किन्तु जशभाई को लेशमात्र आश्चर्य नहीं था। क्योंकि वे दिव्य अनुभव को व्यक्त करने की स्थिति में नहीं थे। इसके बाद जशभाई एक समर्पित सत्संगी के रूप में जीवनभर सत्संग की सेवा करते रहे!

अमेरिका के इ.एन.टी. और रिकन्स्ट्रक्टिव सर्जन के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त डॉ. नवीन सी. मेहता, एक विलक्षण दृष्टि से स्वामीश्री के प्रति आकर्षित हुए हैं। हॉलिवूड के विख्यात कलाकारों और पोपसिंगरों के यह चिकित्सक, अनेक धर्मगुरुओं के भी नज़दीकी

सम्बंध में आए हैं। 21 सितम्बर 1998 को वे अपनी कार में स्वामीश्री को न्यूयॉर्क से न्यूजर्सी ले जा रहे थे। पुलिस एस्कोर्ट मार्ग को खुला कर रहा था। स्वामीश्री बातचीत के दौरान अमेरिका के उस नगर के रास्ते पर जाते हुए अपना अभिप्राय देने लगे कि इस रास्ते से तो हमें लंबा चक्कर काटना पड़ेगा। ये एस्कोर्ट हमें इस ओर कहाँ ले जाती है? नवीनभाई विस्मित हो गए। उन्होंने कहा कि मैं पिछले 15-20 वर्षों से इस रास्ते पर ड्राईविंग करता हूँ, किन्तु मुझे यहाँ के विभिन्न रास्तों का इतना ज्ञान नहीं है, जितना स्वामीजी को है!

अगले दिन दो संत नवीनभाई के मेनहेटन स्थित क्लिनिक पर गए। 24 घंटों के बाद भी उनके हृदय में स्वामीश्री की दिव्य संगत से रोमांच उत्पन्न हो रहा था। वे कहने लगे, 'कल के तीन घंटे तो जीवन के अवर्णनीय आनंद के थे। पोप जॉन पॉल से भी मैं मिला हूँ और अन्य कई धर्मगुरुओं से मिला हूँ, परन्तु स्वामीश्री इज़ समथिंग डिफरन्ट! मैं वर्णन न कर सकूँ, ऐसा वह अनुभव है, दिव्य! वे तो साक्षात् भगवान के ही स्वरूप हैं!'

राष्ट्रीय और आंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त ऐसे अनेक लोग स्वामीश्री के अतीन्द्रिय अनुभवों से धन्य हुए हैं। स्वभाव, प्रकृति, दुविधाओं, अनुमानों, शंका-संशयों से परे आत्मिक स्पर्श प्राप्त करनेवाले स्वामीश्री के लिए मात्र एक ही विशेषण शेष रहता है, 'अतुलनीय! अनिर्वचनीय!'

स्वामीश्री के ऐश्वर्य का अन्य आयाम है – भक्तों की रक्षा करना। जिसे लोग सही अर्थ में चमत्कार कहते हैं, ऐसे अद्भुत चमत्कार का अनुभव भी स्वामीश्री के पास सहस्रों भक्तों ने किया है। किसी का असंभव कार्य संभव हुआ हो अथवा किसी की अकल्प्य रक्षा हुई हो आदि। परन्तु स्वामीश्री चमत्कारों को न तो समर्थन देते हैं और न ही प्रोत्साहन। वे कहते हैं कि 'हम तो प्रार्थना करते हैं, कार्य तो भगवान की इच्छा से होता है। चमत्कारों से आत्मा का कल्याण कभी नहीं होता, केवल चमत्कार की आशा तो कल्याण में विक्षेप ही है। इसलिए ऐसी बातों से दूर रहने से ही भक्ति का लाभ मिल सकता है।' परन्तु जिन अनुभवों के हम प्रत्यक्षदर्शी हैं, ऐसी घटनाओं को अस्वीकार करना भी कैसे संभव है? हॉलेन्ड के उत्साही अध्यापक श्री हनकोप का अनुभव स्वतंत्र प्रकरण की अपेक्षा रखता है।

सन् 1971 में विश्वयात्रा के लिए निकला यह डच नागरिक पूर्व अफ्रीका पहुँचा। मोम्बासा के स्वामिनारायण मंदिर में योगीजी महाराज का चित्र देखते ही उन्हें इतना आकर्षण हुआ कि अपने यात्रा-कार्यक्रम को बदलकर वे भारत आ पहुँचे। भारत में गुजरात स्थित गोंडल में उनको स्वामीश्री का प्रथम दर्शन हुआ। अब उन्हीं के शब्दों में उनका अनुभव पढ़ें, 'हम गोंडल पहुँचे। लगातार यात्रा और असह्य गर्मी के कारण मुझे सख्त सिरदर्द हो रहा था। असह्य भूख की आग से मैं व्याकुल था। मंदिर में प्रवेश किया, उस समय स्वामीश्री भोजन ग्रहण कर रहे थे। जब वे बाहर आए, उसी समय मुझे उनके प्रथम दर्शन हुए। इस प्रथम दर्शन से ही मुझे उनमें विलक्षणता लगी। मोम्बासा में योगीजी महाराज की मूर्ति में, तथा उनके नेत्रों में जो निर्दोषता और दिव्यता का अनुभव हुआ था, बिल्कुल वैसी ही पवित्र आँखें प्रमुखस्वामीजी की देखीं। मुझे आश्चर्य यह था कि उसी क्षण योगीजी महाराज के प्रत्यक्ष दर्शन की भूख मिट गई, संतुष्ट हो गया! असह्य भूख का शमन हो गया, सिरदर्द तो कोसों दूर हो गया। थकावट मिट गई! अंतर में परम शान्ति का गहरा अनुभव होने लगा। स्वामीश्री की मात्र उपस्थिति और दर्शन से मिले इस दिव्य अनुभव को मैं आज

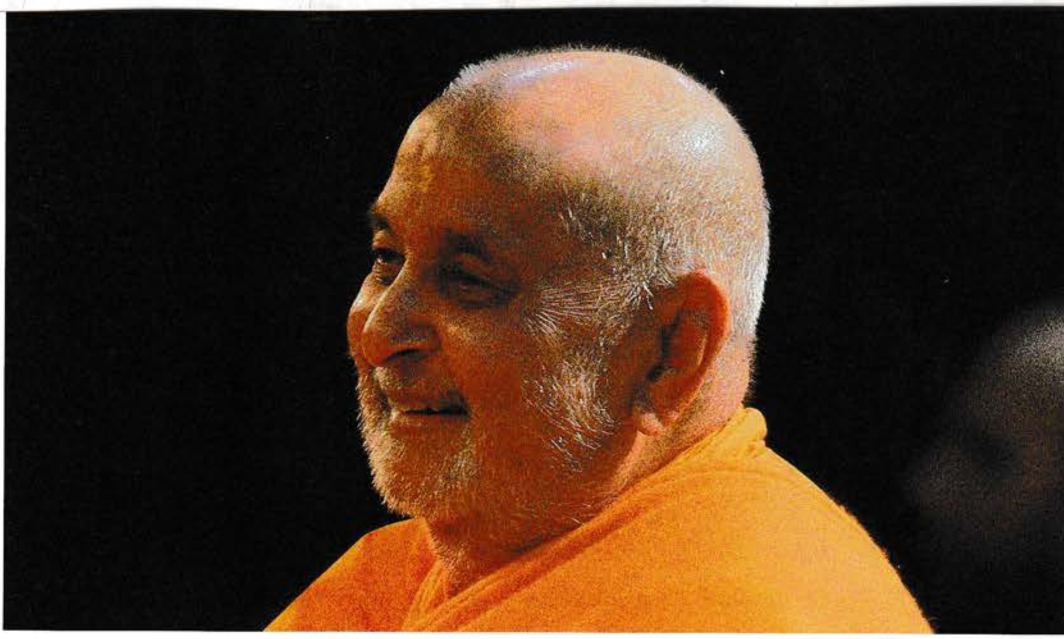

स्वामीश्री का दिव्य प्रभाव लोगों को न केवल आकर्षित करता है, अपितु उनका जीवन परिवर्तन कर देता है। स्वामीश्री का वही सच्चा ऐश्वर्य है।

तक भूल नहीं पाया।

'कुछ दिनों के बाद उनकी आज्ञा लेकर हम हवाई मार्ग से कराची पहुँचे। यहाँ हम दस दिनों तक समुद्र-तट पर एक होटल में रुके थे। एक दिन मैं अपने भाई के साथ समुद्र के किनारे गया, तो देखा कि वहाँ छोटे-छोटे बच्चे खेल रहे थे। ट्यूब में बैठकर समुद्र के जल में खेलते इन बच्चों में से एक के हाथ से ट्यूब छूट गई और समुद्र की लहरों में बहती हुई दूर जाने लगी। वह बच्चा जोर-जोर से रोने लगा। उसे सांत्वना देकर मैं ट्यूब पकड़ने के लिए आगे बढ़ा, जो लगभग 300 मीटर की दूरी पर दिख रही थी। अंत में मैंने ट्यूब तो पकड़ ली, परन्तु मैं थक चुका था। ट्यूब पर बैठकर किनारे पहुँचने की सोच रहा था कि अचानक मेरी आँखें फटी-सी रह गईं। मेरे ठीक सामने महाकाय शार्क नज़र आयी, जो देखते ही मनुष्य को मार डालती है। मेरे चाचा ने मुझे शार्क की भयंकरता के बारे में बताया था और कहा था कि जब शार्क नज़दीक आए, तो पानी पर थपकी मारकर आवाज़ करना चाहिए, तो कदाचित् वह दूर चली जाए। मैंने ऐसा प्रयत्न भी किया, किन्तु शार्क मेरी ओर झपट रही थी। मेरे लिए बचना असंभव था। ऐसी भयावह स्थिति में मुझे स्वामीश्री की स्मृति हो आयी। गोंडल में देखी हुई उनकी पवित्र आँखें, मेरी आँखों के सामने स्पष्ट दिखने लगीं। तुरन्त ही मैं आँखें मूंदकर 'स्वामिनारायण...' मंत्रजाप करने लगा। स्वामीश्री ने मेरी प्रार्थना सुन ली। उनकी मूर्ति देखकर मेरा हौसला बढ़ा। मुझे तुरन्त ही प्रेरणा हुई कि ट्यूब छोड़कर तीव्रता से किनारे की ओर तैरना चाहिए, मैंने वैसा ही किया। उस समय न तो मुझे जल दिखता था, न ही आकाश; न ट्यूब दिखती थी, न शार्क! मेरी आँखों के सामने थी, तो केवल स्वामीश्री की करुणामय मूर्ति! मैं बच गया! मैं पुनः किनारे कैसे पहुँचा, मुझे कुछ पता नहीं है। पता मात्र इतना है कि स्वामीश्री ने ही मेरी ज़िन्दगी बचाई है।'

केनेडा के पूर्व सोलिसिटर जनरल बाब कप्लान, स्वामीश्री के ऐसे दो अनुभवों के प्रत्यक्ष अनुभवी हैं। अनेक अवसरों पर उन्होंने हज़ारों लोगों के समक्ष अपने अनुभवों को खुले हृदय से व्यक्त किया है।

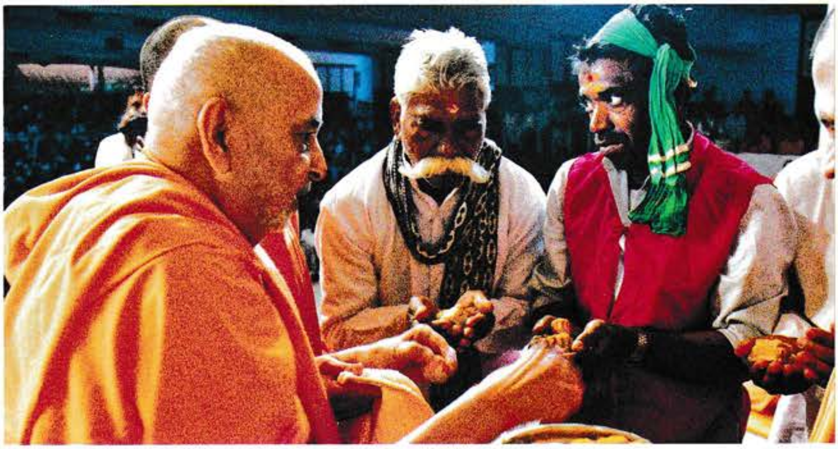

स्वामीश्री के सत्संग से वालिया जैसे न जाने कितने काँच से कंचन बन गए हैं।

17 जुलाई, 2007 को टोरन्टो में उन्होंने कहा था : 'सन् 1984 में केनेडा में संसद का चुनाव हुआ, अपने पक्ष के नेता श्री टुडो प्रधानमंत्री के पद पर पुन: चुने जाएँ, इसलिए मैंने स्वामीश्री से आशीर्वाद की याचना की थी। वे उस समय केनेडा में नहीं थे, उन्होंने पत्र द्वारा आशीर्वाद दिया था। पत्र लेकर भगवानजी मांडविया तथा चन्द्रकान्त सचदेव मेरे यहाँ आ पहुँचे। मुझे पत्र पढ़कर आश्चर्य हुआ। फिर भी मैंने आशीर्वाद पत्र श्री टुडो के सामने रखा। स्वामीश्री ने लिखा था कि श्री टुडो पुन: केनेडा के प्रधानमंत्री बनेंगे। परन्तु तब तक तो टुडो पराजित हो चुके थे! श्री टुडो भी पत्र पढ़कर मुस्कुराने लगे। परन्तु थोड़े ही महीनों में स्वामीश्री के शब्द साकार बने। केनेडा में अल्पमत सरकार का पतन हुआ और टुडो प्रधानमंत्री पद पर आरूढ़ हुए! उनको विश्वास हो गया कि यह असंभव घटना केवल स्वामीश्री के आशीर्वाद से ही संभव हुई है।

श्री बाब कप्लान, स्वामीश्री के आशीर्वाद से अपनी त्वचा के कैंसर से मुक्त हुए थे, वह प्रसंग भी वे अपने जीवन का एक रहस्यमय अनुभव मानते हैं।

स्वामीश्री ऐसे अनुभवों को कभी प्रोत्साहन नहीं देते। उनके मुख से चमत्कारों की घटना सुनने के बाद यही शब्द निकलते हैं कि 'सबकुछ भगवान की कृपा' 'भगवान की प्रार्थना का प्रताप' तथा 'भगवान की इच्छा'। चमत्कारिक घटनाओं की प्रसिद्धि से वे हमेशा दूर रहते हैं।

विख्यात जादूगर के.लाल स्वामीश्री के ऐश्वर्य को भिन्न दृष्टिकोण से देखते हैं। वे कहते हैं, 'महावीर और बुद्ध के समय में लोगों का आकर्षण उनकी ओर था। उनके बाद यदि कोई युगपुरुष भारतभूमि पर है, तो वे हैं – प्रमुखस्वामीजी! यह भीतर की भावना से बोलता हूँ; अंत:प्रेरित होकर बोलता हूँ। स्वामीजी की आँखों में ऐसा क्या है कि लोग उनके पीछे पागल हो जाते हैं? यह अलौकिक जादू नहीं तो और क्या है?' स्वामीश्री का दिव्य प्रभाव लोगों को मात्र आकर्षित करता है, इतना ही नहीं; लोगों के जीवन का आमूल परिवर्तन भी कर देता है और उसी में स्वामीश्री का यथार्थ ऐश्वर्य प्रकट होता है।

पीतल को सोने में बदलने का चमत्कार स्वामीश्री नहीं करते, परन्तु मानव को देव में बदलने की कला स्वामीश्री की अपनी अमानत है। अपना प्रभाव दिखानेवाले तो बहुत से लोग होते हैं, किन्तु मानवरूपी धातु को पिघलाकर देवत्व में परिवर्तित कर देनेवाले महापुरुष विरले ही होते हैं। उनके पारस-स्पर्श से न जाने कितने लोग काँच से कुंदन बन चुके हैं; कई

लुटेरे वाल्मीकि बन गए और कई नास्तिक, आस्तिक बने हैं। ऐसे हज़ारों अनुभवों में से यहाँ पर थोड़ा सा आचमन करेंगे।

गुजरात में साबरकांठा-आदिवासी क्षेत्र के वालिया नामक दुर्दान्त लुटेरा की कथा, रामायण-प्रसिद्ध वाल्मीकि की याद दिला देती है।

पोशीना गाँव की भरी दोपहरी में जब वालिया प्रवेश करता था, तब पूरा बाज़ार काँपने लगता था। शराब के नशे में चूर आँखों से वह जिस दुकान पर टकटकी लगाकर देखता था, व्यापारी समझ लेता था कि आज रात उसकी दुकान का सत्यानाश हो जाएगा और ऐसा ही होता था। उस रात को दुकान लूट ली जाती थी!

वह अपने आदिवासी गिरोह के साथ गड़रियों की भेड़ों को भी निर्दयता से लूट लेता था। एकबार भेड़ों की एक लूट के बाद थोड़े ही घंटों में पुलिस जंगल में पहुँच गई। वहाँ उनको मात्र 50 किलो कच्चा मांस मिला; बाक़ी भेड़ों और मांस का क्या हुआ होगा, कुछ पता नहीं! संयोगवश वही वालिया जब स्वामीश्री के सत्संग से जुड़ा, तो वालाभाई के रूप में तिलक-टीका लगाकर निर्मल और नैतिक जीवन जीने लगा। उसकी आँखों की चमक तो आज भी वैसी ही है, परन्तु वहाँ शैतानियत का स्थान इन्सानियत ने ले लिया है।

वालाभाई कहते हैं, 'हमारे गाँव पालियाबिया में सत्संग का बूंद भर परिचय नहीं था। पशुवत् जीवन जीनेवाली हमारी 60 मित्रों की गिरोह को चुनौती देने की किसी की भी हिम्मत नहीं थी। लेकिन अब सबकुछ छोड़ दिया है। जब मैं सत्संग में बैठता हूँ और संत भी पैदल चलकर मेरे गाँव में आते हैं, तो पुलिस और प्रजा दोनों को विस्मय होता है। मेरी गिरोह के 60 लोगों के परिवार भी अब स्वामीजी के आदेशानुसार सत्संगी बन चुके हैं। प्रमुखस्वामीजी ने कहा था, इसलिए हमने संकल्प किया है कि मेहनत करके खाएँगे, परन्तु हराम का इकट्ठा नहीं करेंगे!'

वालाभाई की झोपड़ी में अब टेपरिकोर्डर भी आ गया है और उससे निकलते आरती और भगवद् धुन के स्वर पालियाबिया गाँव के हरेभरे टीले पर गूँजते रहते हैं! वालाभाई स्वयं पुरुषार्थ से सेवा में जुड़ जाते हैं, साथ में उनके साथी भी! ऐसे महापुरुष के ऐश्वर्य से अधम मनुष्यों की आंतरिक वृत्तियों में कैसा परिवर्तन आता है?

दादरा-नगर हवेली क्षेत्र के आप्टी गाँव के आदिवासी बारकुभाई से आप मिलेंगे, तो इस प्रश्न का उत्तर सहजता से मिल जाएगा। हँसिया लेकर चोरी के लिए निकल पड़ना ही उसका मुख्य पेशा था। उसका सामना करने की किसी की भी हिम्मत नहीं होती थी। बातों ही बातों में किसी को भी घायल कर देना या मार देना, उसकी सहज प्रतिक्रिया थी। परन्तु जबसे स्वामीश्री की संगति लग गई, तबसे जीवन बदल गया। चोरी से टूटा हुआ सम्बंध अब भक्ति, सेवा और सत्संग से जुड़ गया। जीवन निर्वाह के लिए चोरी का पेशा बदलकर वह ऑटोरिक्शा चलाने लगा है। एकबार कोई यात्री का मोबाईल उसकी रिक्शा में छूट गया। बारकुभाई ने उसके मालिक को ढूँढ़ निकाला और वह बेशकीमती मोबाईल उसे लौटा दिया।

एकबार किसी यात्री की रुपयों से भरी थैली, उसकी रिक्शागाड़ी में छूट गई थी। बारकुभाई ढूँढ़ते हुए उस रुपयों के मालिक तक जा पहुँचे। उस व्यक्ति ने अपनी बेटी के विवाह के लिए वह रुपये रखे थे। पैसे मिलते ही वह आनंदविभोर हो गया और कहने लगा,

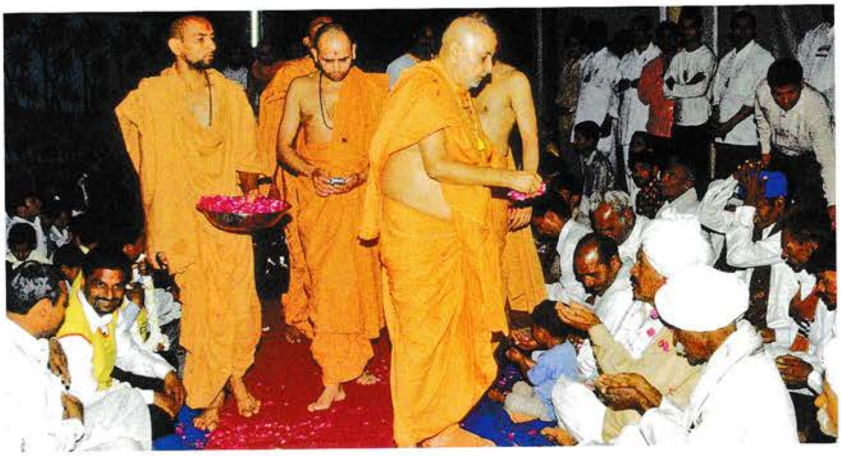

स्वामीश्री के दिव्य प्रभाव से सुणसर गाँव के दरबारों का जीवन-परिवर्तन हुआ...

'मैं तुम्हें कुछ भेंट देना चाहता हूँ।'

'मैं भेंट नहीं ले सकता। यह तो मेरा कर्तव्य है।' बारकुभाई ने नम्रता से कहा। परन्तु आदिवासी दिखनेवाले इस रिक्शा ड्राईवर को देखकर उसने अपने तरीके से उपहार देने का प्रस्ताव रखा, 'मैं तो तुम्हें बार में ले जाकर शराब की पार्टी देने की सोच रहा था।'

'ऐसी पार्टी तो मेरे लिए असंभव है।' 'क्यों? पार्टी तो मैं अपनी ओर से दे रहा हूँ।'

'जो भी हो, मुझे अब शराब से कोई नाता नहीं रहा। शराब मैंने कब से छोड़ दी है।'

'अरे भाई! खा-पीकर मज़ा उड़ाने के लिए तो शरीर मिला है। ऐसा मौका बार-बार थोड़े ही मिलता है?' – उस व्यक्ति ने कहा।

'मुझे जब से प्रमुखस्वामी जैसे गुरु मिले हैं और मैंने उनके आगे नशा नहीं करने की प्रतिज्ञा ली है, तो मुझे निभानी ही चाहिए। इस शरीर से अब मैंने आत्मकल्याण को ही ध्येय बना लिया है। खाना-पीना तो चौरासी लाख जन्मों तक होता ही रहा था!' बारकुभाई की ऐसी अप्रतिम दृढ़ता देखकर वह नतमस्तक हो गया।

पाटण जिले के चाणस्मा तहसील का सुणसर गाँव गुजरात पुलिस की सूची में वर्षों तक काले अक्षरों में लिखा हुआ था। उत्तर गुजरात के छोटे-से बच्चे को भी सुणसर की कुख्याति के विषय में पता होता था। पीढ़ियों से यहाँ बसते राजपूत-दरबारों के लिए कहा जाता था कि वे दो काम में माहिर थे : किसी को भी लूट लेना और नशे का व्यसन करना। महेसाणा क्षेत्र की किसी भी चोरी की जाँच-पड़ताल सबसे पहले सुणसर से प्रारंभ होती थी। फिर भी आश्चर्य की बात यह थी कि पुलिस भी गाँव के सरपंच की सहमति के बिना गाँव में प्रवेश नहीं कर पाती थी! गाँववालों का भयानक तेवर देखकर पुलिस अधिकारी अपने पूरे दल के साथ गाँव के बाहर महीनों तक पड़े रहते थे। गुजरात के लोकसेवक रविशंकर महाराज ने इस गाँव का परिवर्तन करने के लिए लगातार सात वर्षों तक झोपड़ी बनाकर यहीं पड़े रहे; परन्तु यहाँ के अपराधी लोग उनके जूते भी चुरा ले गए थे!

समग्र क्षेत्र में आतंक और भय का पर्याय बन चुके सुणसर गाँव के वे असामाजिक तत्त्व, संतों से संपर्क के फलस्वरूप सन् 2006 में महेसाणा के बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण मंदिर में आकर, स्वामीश्री के चरणों में जब अपने अपराधी जीवन का समर्पण कर दिया, तो लोगों के आश्चर्य की सीमा न थी। उन्हीं असामाजिक तत्त्वों में 35 वर्षीय शूरवीर मोंघाजी

लालूजी दरबार भी थे, जो बचपन से ही लड़ाई-झगड़े, खून-खराबा तथा अपनी आपराधिक गतिविधियों से पूरे गाँव में आतंक मचाये रहते थे। सुबह से शाम तक शराब के नशे में चूर मोंघाजी, अपने 25-30 राजपूत युवकों का गिरोह लेकर कहीं न कहीं मारपीट-लूटपाट किया ही करते थे।

आज उन्होंने अपने तमाम साथियों के साथ स्वामीश्री के चरणों में समर्पित होकर अपने पापों का प्रायश्चित्त धारण किया। इतना ही नहीं, अपने गाँव में अपने पैसे से ज़मीन खरीदकर, अपने ही खर्च से भगवान स्वामिनारायण का मंदिर बनाना प्रारंभ कर दिया है।

अधम से अधम व्यक्ति में आध्यात्मिक ज्योत प्रकट करके स्वामीश्री ने उसे देवत्व प्रदान किया है।

तंजानिया के दार-ए-स्सलाम के निवासी सुभाषभाई पटेल के जीवन परिवर्तन की कथा अनोखी है। मारपीट, हिंसा, शराब, व्यभिचार जैसे अपराधों में डूबे हुए सुभाषभाई से शहर की पुलिस भी भयभीत रहती थी! कितने ही पुलिसवालों को उन्होंने पीटा होगा! परन्तु सन् 1995 में स्वामीश्री दारेस्सलाम पधारे। अपने मित्र महेश पटेल के अत्यंत आग्रह पर वे स्वामीश्री से मिलने के लिए तैयार हुए। प्रथम मिलन में ही स्वामीश्री ने उनसे कहा था, 'मैं तुम्हें जानता हूँ। सन् 1959 में तुम्हारे पिता के साथ तुम भी योगीजी महाराज का दर्शन करने के लिए आए थे।' इस एक मात्र वाक्य ने सुभाषभाई के अंत:करण को परिवर्तित कर दिया। स्वामीश्री ने उनकी आँखों में आँखें डालकर ऐसी दिव्यता उंडेल दी कि सुभाषभाई अपनी हर बुरी आदतों को छोड़ने के लिए मज़बूर हो गए।

आज मानो दूसरे जोबनपगी का परिवर्तन हो रहा था। उसी दिन से सुभाषभाई ने शराब छोड़कर प्रात:पूजा को अपनाया। व्यभिचार छोड़कर प्रात:कथा एवं संध्या आरती में आने का नियम बनाया। प्रतिदिन शास्त्र-पठन तथा सत्संग की सेवाओं को अपना नित्यक्रम बना लिया। आज व्यसनमुक्त एवं सदाचारयुक्त जीवन जीते हुए सुभाषभाई के हाथ में जपमाला देखी जाती है। तंजानिया के राष्ट्रपति एवं सुभाषभाई के मित्र श्री किकवेटे भी इस परिवर्तन से आश्चर्यचकित हैं!

ये ऐसे-ऐसे लोग हैं, जो हमारे आसपास रहते हैं और उनके जीवन का परिवर्तन समाज के लिए एक सुखद आश्चर्य ही नहीं, परन्तु एक चमत्कार है!

सौराष्ट्र के ओदरका गाँव के खूँखार क्षत्रिय रामसंग बापू (मूल नाम - रामसिंहजी तख्तसिंहजी गोहिल) तथा टेमभा के उदाहरण चरमसीमा के समान हैं। उनकी दुस्साहसपूर्ण लूटपाट से पूरा भावनगर जिला संत्रस्त था। 50 के दशक का कुख्यात बागी भूपत भी उनका साथ लेने के लिए लालायित था! डाकू भूपत ने रामसंगजी को अपनी गिरोह में शामिल होने का निमंत्रण देते हुए कहा था कि 'तुम्हारे जैसा वीर यदि मेरा साथ दे, तो मैं दिल्ली की सरकार को भी हिला सकता हूँ। मेरे साथ बगावत और लूटपाट में शामिल हो जाओ, तो आधा हिस्सा तुम्हारा!' किन्तु रामसंगजी ऐसे महत्त्वाकांक्षी नहीं थे। उन्होंने भूपत का साथ नहीं दिया, परन्तु उनकी क्रूरता का परिचय स्वयं उन्हीं के शब्दों में 'हम तो रावण और कंस के भाई थे। हमारी मौत कुत्ते की मौत के बराबर होनेवाली थी। परन्तु जिस दिन स्वामीश्री ने हमें अपनी शरण में लिया, उस दिन से मेरा जीवन ही परिवर्तित हो गया। उनकी आज्ञा का

पालन ही अब मेरा सबसे बड़ा धर्म है।'

स्वामीश्री स्वयं रामसंग बापू के घर पधारे थे। पश्चात्ताप की पावन गंगा में स्नान कराकर, स्वामीश्री ने उन्हें पवित्र करके हिंसा का त्याग तो कराया ही; साथ ही उनके भयानक क्रोध का शमन करके पूरे क्षेत्र में शान्तिं और शीतलता स्थापित की। स्वामीश्री की आज्ञा शिरोधार्य करके अपने अंतिम श्वास तक रामसंग बापू पवित्र जीवन जीते रहे। यह स्वामीश्री के ऐश्वर्य का ही प्रताप था कि रामसंग बापू, रावण और कंस की पंक्ति में से एक महान मुक्तात्मा बन सके।

13 अक्टूबर, 1997 को स्वामीश्री ने उन्हें कहा था, 'आपको भगवान स्वामिनारायण अब अपने अक्षरधाम में ले जाएँगे।' तत्पश्चात् केवल 13 दिनों के बाद ही रामसंगबापू ने अपने पुत्र जनकसिंह से कहा था, 'भगवान स्वामिनारायण और प्रमुखस्वामी महाराज मुझे अक्षरधाम में ले जाने आए हैं, मैं जा रहा हूँ...' इन शब्दों के साथ उन्होंने नश्वर शरीर का त्याग करके अक्षरधाम के लिए प्रयाण कर दिया!

स्वामीश्री के दिव्य ऐश्वर्य से कई काँटे फूल बने हैं, तो कई पत्थर देव बने हैं! ऐसे परिवर्तनों की कथाएँ प्रमाणित करती हैं कि स्वामीश्री उपनिषद् युग के महापुरुष हैं।

वासना एवं स्वभावगत विकृतियों की जन्मों पुरानी जंजाल से लोगों को मुक्त कराना कोई साधारण ऐश्वर्य नहीं है। स्वामीश्री के सत्संग से कई क्रोधियों के क्रोध का शमन हुआ है, तो कई लोगों की वासनाग्रंथि टूटी है; कई लोग लोभ से परे हुए हैं, तो कितनों के अहंकार चूर-चूर हुए हैं। किन्तु ऐसे व्यक्तिगत अनुभव की बातें बहुत ही कम लोग खुले आम करते हैं।

यदि आप खेरालु गाँव के वीरचंद मोदी से सम्पर्क करेंगे, तो उनके शान्त एवं सौम्य आचरण को देखकर आप शायद ही सोचें कि यह व्यक्ति किसी समय क्रोध का मूर्तिमान स्वरूप रहा होगा! वे स्वयं कहते हैं, 'स्वामीश्री की कृपा से मेरा अति क्रोधी स्वभाव कब दूर हो गया, उसका मुझे पता तक नहीं चला!'

18 जुलाई, 1996 को डलास (यू.एस.ए.) के एक सक्रिय सत्संगी युवक ने स्वामीश्री से कहा था, 'स्वामीजी! पिछली बार आपने मेरे सिर पर हाथ रखा था, उसी दिन से मेरा क्रोध नष्ट हो गया! अब मैं न तो मांस को छूता हूँ, न ही चिकन को छूता हूँ! इस जन्म में मैं नास्तिक ही रहता, लेकिन यह सब आप ही का जादू है...।'

30 अगस्त, 2006 को चेन्नाई में स्वामीश्री के दर्शनार्थ आकोला के हरिभक्त रश्मिभाई आए थे। उन्होंने स्वामीश्री से कहा, 'मेरे पिताश्री छोटाकाका कभी-कभी इतने छोटे मन के हो जाते थे कि किसी को पाँच रुपये की भी मदद नहीं करते थे। उनको अचानक आपका सत्संग हो गया। गुजरात में उन्होंने एक साथ 3,33,000 रुपये सेवा में अर्पण कर दिए। हमें जब इस बात का पता चला, तो लगा कि निश्चित ही वे पागल हो गए हैं! ज़िन्दगी में एक पैसा भी किसी को न देनेवाला व्यक्ति, इतना दान कैसे दे सकता है? अवश्य ही स्वामीजी ने कोई जंत्र-मंत्र का प्रयोग किया होगा, वरना ऐसा होना असंभव है। परिवार के लोग तो उन्हें मेन्टल होस्पिटल में भी ले गए थे! हमारे मन में उस समय आपके प्रति उतनी श्रद्धा नहीं थी, परन्तु जब से सत्संग में आने लगा, आपकी मोहनी सी लग गई है।'

बोचासण स्थित पुरुषोत्तम भगत से लेकर पूर्वी अफ्रीका के मंत्री श्री जोसेफ मटुरिया

तक, अनेक लोगों का एक जैसा अनुभव है कि स्वामीश्री की कृपा और उनके ऐश्वर्य से क्षणमात्र में मनुष्य की विकार युक्त प्रकृति मिटकर सहज और स्वाभाविक हो जाती है।

केन्या के पर्यटन मंत्री श्री जोसेफ मटुरिया ने सन् 1985 में स्वामीश्री के आशीर्वाद से खुले मंच से ही शराब छोड़ने की प्रतिज्ञा घोषित की थी। श्री मटुरिया ने उस प्रतिज्ञा का न केवल पालन ही किया; अनेक लोगों को शराब के व्यसन से मुक्त भी किया, जो अति आश्चर्यजनक है! 22 वर्ष के पश्चात् 12 मई, 2007 को नैरोबी में उन्होंने कहा था, 'स्वामीश्री ने जब से मेरी शराब छुड़वाई, तब से नशे की इच्छा ही नहीं होती, यह मेरे लिए महत्त्वपूर्ण अनुभव है।'

अपने शान्त प्रभाव से सदाचार और आध्यात्मिकता का सिंचन करते हुए स्वामीश्री के ऐश्वर्यों का प्रभाव सत्संग समुदाय पर युगों-युगों तक छाया रहेगा। आज भी ऐसे हरिभक्त हैं, जो संसार में भले ही रहते हैं, परन्तु सांसारिक विकृतियों से दूर रहते हैं। स्वामीश्री के एक वचन पर निःस्वार्थभाव से तन-मन-धन और सर्वस्व समर्पित करने के लिए वे सदैव तत्पर रहते हैं! यौवन की दहलीज पर खड़े सैकड़ों नवयुवक स्वामीश्री के ऐश्वर्य की जीवंत मिसाल हैं, जो समृद्धि और ऊँची महत्त्वाकांक्षा की तिलांजलि देकर, स्वामीश्री के चरणों में जीवन समर्पित करके त्यागाश्रम स्वीकार कर लिए हैं।

कितने लोगों के जीवन में उन्होंने अध्यात्म के दीप प्रज्वलित किए हैं; मन की मलिनता धोकर शुद्ध किए हैं; उसकी गिनती करना असंभव है।

भले ही सामान्य मानव चमत्कारों की दृष्टि से महापुरुषों का मापन करता हो, परन्तु सनातन धर्म की आध्यात्मिकता में चमत्कारों का स्थान न के बराबर है। मुक्तानंद स्वामी ने कहा है, 'परचो इच्छे तेने पामर जाणवो' अर्थात् चमत्कार की इच्छा रखनेवाला भक्त तुच्छ है। संत की महत्ता, चमत्कारों से नहीं, उनकी अपरिमित आध्यात्मिक ऊँचाई से है।

गुणातीत संत का सबसे बड़ा ऐश्वर्य उनकी सर्वोच्च आध्यात्मिकता है अर्थात् वे अपने रोम-रोम में परब्रह्म पुरुषोत्तम नारायण को धारण किए रहते हैं। स्वामीश्री ने यह ऐश्वर्य आत्मसात् कर लिया है, जिसे समझने के लिए हमें एक अलग आध्यात्मिक स्तर पर पहुँचना होगा।

विख्यात हार्टसर्जन डॉ. वी.ए. सुब्रह्मण्यम् के मित्र डॉ. सुरेशभाई पटेल कई वर्षों से स्वामीश्री के दिव्य कार्यों के साक्षी रहे हैं। 19 मई, 2008 को उन्होंने स्वामीश्री से कहा था कि 'जैसे भगवान करोड़ों पर नियंत्रण रखते हैं, वैसे आप भी लाखों का नियमन करते हैं, इसलिए मेरे मतानुसार आप भगवान ही हैं।'

स्वामीश्री ने त्वरित उत्तर दिया था, 'नहीं, नहीं, हम तो दास हैं, सेवक हैं। संत में रहकर भगवान कार्य करते हैं।' यह उनका केवल सदैव का उत्तर मात्र नहीं है, उनके रोम-रोम से प्रस्फुटित होती परमात्मा की प्रतीति है। भगवत् कृपा से भगवान के समान ऐश्वर्य को प्राप्त करने के बावजूद ऐश्वर्य के मद से निर्लिप्त रहना और परमात्मा के प्रति सेवकभाव न मिटाना, क्या अपने आपमें एक बड़ा ऐश्वर्य नहीं है?

वचनामृत में भगवान श्रीस्वामिनारायण 'माया के गुण से पराभूत न होने के सामर्थ्य' को ही ऐश्वर्य कहते हैं। (वच. ग.प्र. 19)

स्वातन्त्र्यम्

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

शौर्यम् तेजः

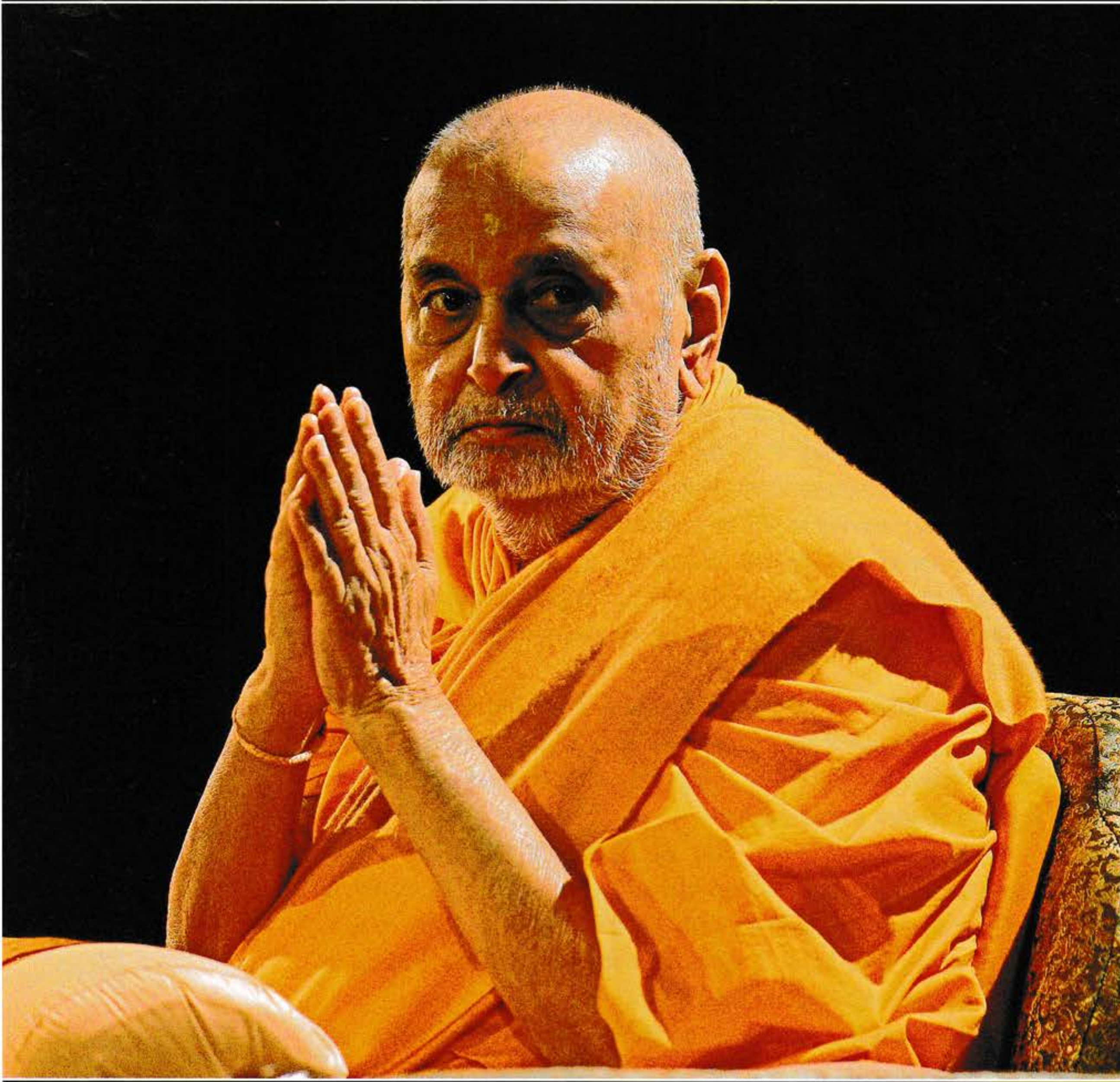

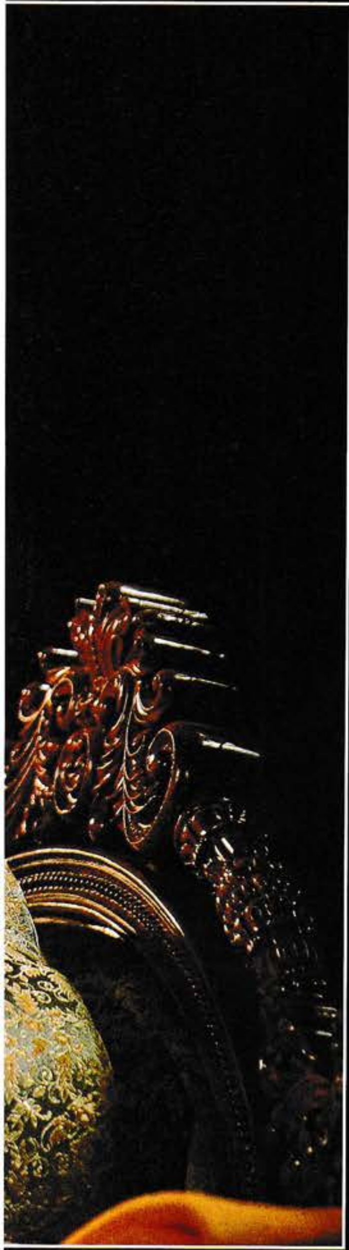

शौर्यम् अर्थात् शूरवीरता। तेजः अर्थात् किसी से भी पराजित न होना, अजेयता।
स्वातंत्र्यम् अर्थात् अन्य किसी भी अपेक्षा से रहित होना।
परमात्मा के कल्याणकारी गुणों में ऐसे दिव्य सद्‌गुण विरोधाभासी संपत्ति के रूप में सुशोभित हैं। दयालुता, क्षमा, सहनशीलता, मृदुलता, सरलता आदि गुणों के धारक परमात्मा समर्थ भी हैं, शूरवीर भी।
वे पराजित न हों, ऐसे अजेय भी हैं और किसी भी अपेक्षा से परे अपनी ही इच्छा अनुसार बर्ताव करनेवाले स्वतंत्र भी।
सामान्यतः विविध शास्त्रों में वर्णित किए संत के लक्षणों में इस गुण त्रिपुटी को समाविष्ट नहीं किया है। परन्तु भगवान के कल्याणकारी गुणों के धारक गुणातीत संत इन सद्‌गुणों से भी अलंकृत होते हैं।

दया, क्षमा, सरलता, मृदुलता आदि गुणों की एक विलक्षण अनुभूति करानेवाले प्रमुखस्वामी महाराज में शौर्य, तेज और स्वतंत्रता का भी दर्शन होता है; परन्तु उनका शौर्य किसी को आघात अथवा पीड़ा नहीं पहुँचाता। उनके तेज से कोई दग्ध नहीं होता तथा उनका स्वातंत्र्य, किसी की स्वतंत्रता को जंजीर नहीं पहनाता।

स्वामीश्री का ब्रह्मतेज किसी को पराजित करने के बजाए उसे प्रकाशित करता है।

उनकी शूरवीरता का प्रयोग धर्मपालन और सिद्धांत के रक्षण के लिए ही होता है।

धर्म के पालन, रक्षण और जतन में उनका ब्रह्मतेज पूर्ण रूप से निखरता है। वे विशाल हृदय से क्षमाशील भी रह सकते हैं, तो शूरवीरतापूर्वक कायरता का ध्वंस भी कर सकते हैं। यही उनकी असाधारण विलक्षणता है। बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था के अध्यक्ष के रूप में, संस्था के सभी संतों और अनेक हरिभक्तों को उनके मृदु और कठोर, दोनों आयामों का अनुभव है। ऐसे अवसर पर उनकी आँखों का तेज बड़े-बड़ों के लिए भी असह्य हो जाता है।

भगवान द्वारा प्रबोधित नियमों तथा सिद्धांतों के पालन में जब भी किसी भक्त में कोई कमी दिखाई दी, तो स्वामीश्री बिना किसी लागलपेट के जैसा है, वैसा कह देते हैं। उनके कहने में कभी वाणी की क्लिष्टता अथवा किसी के प्रति तुच्छता नहीं दिखती। उस समय उनके प्रत्येक शब्द में वज़न होता है। वाणी को सदा संयम में रखते हुए, स्वामीश्री अत्यंत ही अल्प शब्दों में जब स्पष्टीकरण करते हैं, तो उस समय उपस्थित सभी को उनका जो अनुभव होता है, वह शब्दातीत है। श्रीहरि शूरवीर को परिभाषित करते हुए कहते हैं,

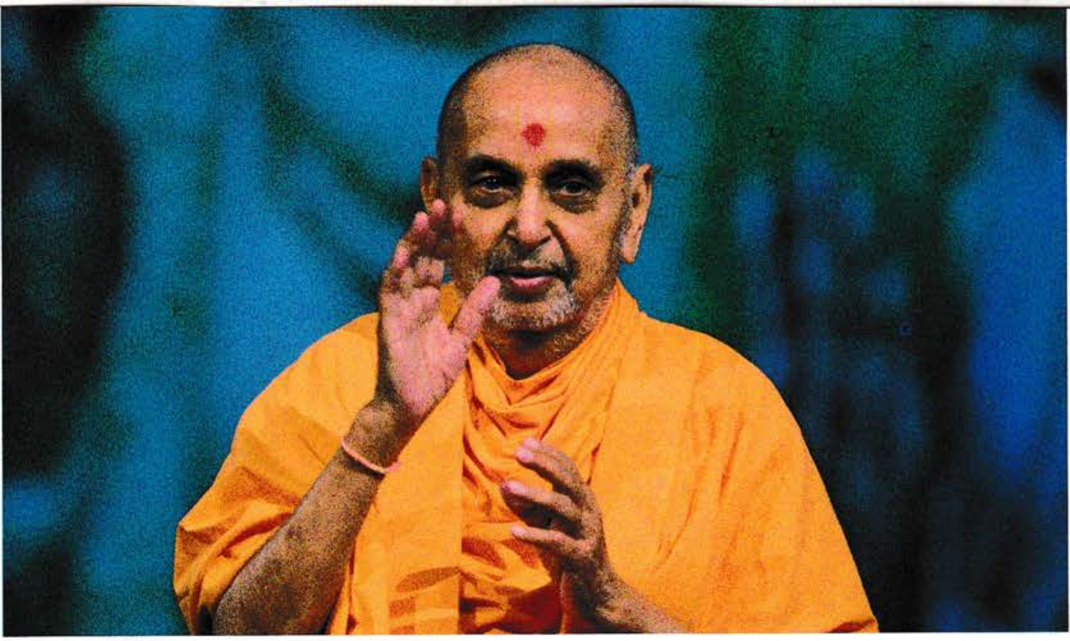

'लोगों को पसंद हो या न हो, हमारे लिए तो एक ही सत्य है, वह है भगवान की आज्ञा!'

'भगवान की आज्ञा का भंग किसी भी रूप से न होने दे, वही शूरवीर है।' (लोया. 2)

श्रीहरि द्वारा निर्धारित साधुओं के लिए पंचव्रतों के पालन में स्वामीश्री कितने शूरवीर हैं, इसका दर्शन अनेक अवसरों पर होता रहता है।

भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दी महोत्सव के उपलक्ष्य में, अखिल भारत साधु समाज का सम्मेलन आयोजित हुआ था। सम्मेलन के मुख्य मंच पर राष्ट्रीय स्तर की एक महिला नेता को विशिष्ट अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जाए, ऐसा प्रस्ताव साधु समाज के महामंत्री श्रीहरिनारायणानंदजी द्वारा रखा गया। स्वामीश्री ने उन्हें धीरे से परन्तु दृढ़तापूर्वक कहा था, 'स्वामीजी, आप ऐसा कर सकते हैं, परन्तु भगवान स्वामिनारायण के आदेशानुसार हम उस सभा में उपस्थित नहीं रह सकेंगे, इसलिए क्षमा कीजिएगा।'

प्रसिद्ध गुजराती लेखक श्री ईश्वर पेटलीकर ने सन् 1981 में स्वामीश्री से कहा था, 'आपको धर्म का प्रचार बढ़ाना है, तो साधुओं के ब्रह्मचर्य सम्बंधी कठोर नियमों में थोड़ी छूट देनी चाहिए।'

इस पर अपनी स्वस्थ प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए स्वामीश्री ने कहा था, 'भगवान द्वारा दिए हुए नियमों को त्यागकर प्रचार करना, उसे हम सेवा नहीं मानते। सत्संग का ऐसा प्रचार हमें नहीं करना है, जिसमें भगवान की आज्ञा का भंग हो। प्रचार हुआ तो भी ठीक है, नहीं हुआ तो कोई बात नहीं। धर्म का प्रवर्तन तो स्वामिनारायण भगवान के हाथ की बात है, किन्तु नियम-पालन करना तो साधुओं का धर्म है और उन्हीं के हाथों में है! कई बड़े लोगों ने हमसे कहा है कि आप इतनी कठोर मर्यादाओं में रहते हैं, अत: आपके सम्प्रदाय की आयु लम्बी नहीं होगी। हम उन्हें कहते हैं कि कोई दिक्कत नहीं, जब तक सम्प्रदाय चलेगा चलाएँगे, अन्त में भगवान की इच्छा। एक कोने में बैठकर भगवान का भजन करेंगे।'

श्री पेटलीकर आज यह देखने के लिए हमारे बीच नहीं रहे कि स्वामीश्री ने साधुओं की धार्मिक मयार्दाओं को अखंडित रखते हुए भी विश्वभर में किस स्तर का सफल प्रचार किया है!

वरिष्ठ पत्रकार कान्ति भट्ट ने एक इन्टरव्यू में स्वामीश्री से पूछा था, 'आपने कभी सोचा

है कि आपको स्त्री-पुरुष मर्यादा के विषय में आधुनिक समय के साथ बदलना चाहिए?'

स्वामीश्री ने दृढ़तापूर्वक कहा था, 'हमारी जो मर्यादा है, वही ठीक है। उसमें परिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं है। भले ही हम रूढ़िवादी कहलाएँ, हमें मान्य है। परन्तु भगवान द्वारा दिए गए नियमों का उल्लंघन मान्य नहीं है। हमें नियमों का यथार्थ पालन करना है। लोगों को पसंद हो या न हो, हमारे लिए एक ही सत्य है, वह है भगवान की आज्ञा!'

विश्व के विशिष्ट लोगों के साथ मुलाकातों में अथवा किसी समारोह के अवसर पर स्वामीश्री ने नियम-पालन की दृढ़ता बरकरार रखी है।

तंजानिया के राष्ट्रपति जुलियस न्यरेरे के साथ मुलाकात हो या अपने हृदय की बायपास सर्जरी, अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिन्टन के साथ मुलाकात हो अथवा संयुक्त राष्ट्रसंघ में मिलेनियम शान्ति धर्म परिषद में संबोधन, अरब शहनशाहों के महल में पधरावनी हो या संयुक्त राष्ट्रसंघ के महामंत्री कोफी अन्नान के साथ मुलाकात, स्वामीश्री ने अपनी धार्मिक मर्यादाओं का दृढ़तापूर्वक पालन किया है।

स्वामीश्री ने अपने शाश्वत मूल्यों को विपरीत समय में भी पूर्ण निश्चय के साथ बचाये रखा है।

इस प्रक्रिया में स्वामीश्री ने कभी जड़ता या मूढ़ता का आश्रय नहीं लिया। ब्रह्मचर्यनिष्ठा में अविचल रहकर उन्होंने स्त्री-उत्कर्ष के कार्य में असाधारण शूरवीरता दिखाई है। कंचन और कामिनी से मुक्त रहकर भी नारी उत्कर्ष की ज्योति उनके द्वारा प्रज्वलित की गई है, यह उनकी तेजस्विता का परिणाम है।

बी.ए.पी.एस. संस्था के माध्यम से स्वामीश्री ने नारी के सर्वांगीण विकास का राजमार्ग तैयार कर दिया है, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, आध्यात्मिकता, नैतिकता, सामाजिक-सांस्कृतिक जागृति आदि स्तरों पर नारी की प्रतिभा को नया मोड़ दिया है।

15 वर्ष से बी.ए.पी.एस. महिला प्रवृत्ति पर शोध कर रही न्यूयॉर्क की कोरियन विदुषी प्रो. हाना कीम लिखती हैं कि 'स्वामीश्री के आशीर्वाद से बी.ए.पी.एस. संस्था द्वारा संचालित महिला प्रवृत्तियों की भक्ति, शक्ति और रचनात्मकता की मैं साक्षी हूँ। मैंने उनकी आयोजन क्षमता, संचालन क्षमता और समुदाय को प्रोत्साहित करने की क्षमता देखी है, जिससे उनका परिवार ही नहीं, अन्य लोग भी संस्कारी बनते हैं। इस संस्था की महिलाएँ वास्तव में भाग्यशाली हैं, जो अपनी प्रतिभा को विकसित करके अपने कला-कौशल्य को प्रस्तुत कर सकती हैं, जिससे समाज लाभान्वित होता है। कैसा सर्जनात्मक और अर्थपूर्ण जीवन जीना चाहिए, उसकी प्रेरणा यहाँ स्वामीश्री के उपदेश से प्राप्त होती है। यह एक अद्‌भुत उपहार है, जो हमें सशक्त और संयमित करता है।'

संस्था के माध्यम से स्वामीश्री ने महिला - शिक्षा के लिए भी एक प्रेरक दृष्टिकोण अपनाया है। वे कहते हैं: 'महिला सुशिक्षित होगी, तो पूरा परिवार सुशिक्षित होगा।'

एकबार उन्होंने कहा था कि 'भारत को आजादी मिले 50 वर्ष बीत चुके हैं, फिर भी देश में अधिकतर प्रजा निरक्षर है। इसका कारण है, नारी शिक्षा का अभाव। यदि शिक्षा का प्रचार महिलाओं में होगा, तो बच्चे अपने आप पढ़ने में रुचि लेंगे। स्त्री-शिक्षा से समाज को बहुत बड़ा लाभ है। शिक्षा प्राप्त करने के लिए समय निकालना ही पड़ता है। हमें लालच रहती है कि दिनभर की मजदूरी से तो पैसे मिलते हैं, पढ़ाई से क्या मिलेगा! परन्तु शिक्षा के

बिना अंधापन के सिवा कुछ नहीं। ऐसे विवश लोग बार-बार ठगे जाते हैं। अत: मजदूरी अथवा अन्य कोई भी काम करनेवाले को शिक्षित होने के लिए हमारी बिनती है। महिला शिक्षा का प्रारम्भ 200 साल पहले भगवान स्वामिनारायण ने किया था। यदि हमें समाज को श्रेष्ठ बनाना है, तो महिला-शिक्षा का प्रबन्ध अवश्य करना पड़ेगा।'

कभी-कभी स्वामीश्री की आध्यात्मिक वीरता से समाज अचंभित हो जाता है। वीरता के बाहरी दिखावे को छोड़कर वीरता पूर्ण कार्यशैली ही स्वामीश्री का अद्‌भुत कौशल्य है।

अहमदाबाद में एक सत्संग सभा में एक लोकगायक ने केवल मनोरंजन के लिए अपने गीत में राम और सीता पर व्यंग्य तथा रावण की प्रशंसा की थी। स्वामीश्री ने उसे स्पष्ट रूप से कहा, 'भगवान श्री रामचंद्रजी मर्यादापुरुषोत्तम हैं और सीताजी उनकी सती हैं, जिन्होंने प्रलोभन तथा भय के बीच भी पतिव्रता धर्म नहीं छोड़ा था। दोनों हमारे लिए आदर्श हैं। जब कि रावण, अपने विचार और कर्म से असुर था, उसका जीवन किसी भी प्रकार से अनुकरणीय नहीं है।'

मंदिरों, शास्त्रों और शास्त्रीय परंपराओं का जब भी खंडन होता है, तब सत्य कहने में स्वामीश्री सदैव आगे रहते हैं। कई लोग मंदिरों का खंडन करते हुए कहते हैं कि 'यहाँ तो पत्थर पर पत्थर चढ़ाकर पहाड़ खड़ा कर दिया!'

ऐसे लोगों को समझाते हुए स्वामीश्री कहते हैं, 'किसी को लगता होगा कि पत्थरों में क्यों इतने पैसे और समय गँवा रहे हैं। मंदिरों की क्या जरूरत है? किन्तु समाज में शिक्षा के लिए जैसे पाठशाला की आवश्यकता है, उसी प्रकार अस्पताल, पुलिस-थाना, विधानसभा भवन, संसद भवन, अदालतें एवं मिलिटरी केन्टोन्मेन्ट आदि की आवश्यकता है कि नहीं? प्रजा के लिए हर प्रकार की व्यवस्था बनाए रखनी है। मंदिर हमारी आत्मा की जरूरत है, जहाँ से शान्ति प्राप्त होती है। समाज के सभी अंग एक-दूसरे के पूरक हैं, इसलिए 'मंदिरों की जरुरत नहीं' ऐसा कहनेवाले भूल करते हैं। बिना स्कूल के बच्चे कहाँ पढेंगे? उसी प्रकार आध्यात्मिक शान्ति के लिए मंदिर अनिवार्य है। हमारा देश मंदिरों के कारण ही उज्ज्वल रहा है।

'मंदिर से लोग संस्कारी बनने की प्रेरणा पाते हैं। मंदिर में भगवान के दर्शन से लोगों की आस्था दृढ़ होती है। बिना श्रद्धा के कुछ भी सम्भव नहीं; मंदिर हमारी श्रद्धा को सुदृढ़ बनाते हैं। दर्शन करनेवाले को शान्ति का अनुभव होता है। समाज में सदाचार, धर्मभावना, दयाभाव आदि गुण मंदिर के कारण ही आते हैं।

'मंदिर, धर्म तथा संप्रदाय सत्य है। नीति-नियम और सदाचार में रहकर निर्व्यसनी जीवन जीने से परिवार में शान्ति होगी, समाज सुखी बनेगा। भारत की आदि संस्कृति हमें यही सिखाती है कि हम उसकी रक्षा करेंगे, तो वह हमारी रक्षा करेगी। 'धर्मो रक्षति रक्षित:।' जो धर्म की रक्षा करता है, वही धर्म से रक्षित है।'

इसी प्रकार सामाजिक बुराइयों के प्रति भी उनका स्वर स्पष्ट है।

दहेज जैसी सामाजिक बुराई की आलोचना करते हुए वे कहते हैं, 'आजकल दिखावे के लिए लोग विवाह में इतना अधिक खर्च करते हैं कि व्याज के भँवर में डूब जाते हैं। उसी प्रकार दहेज का प्रश्न भी गंभीर है। वैवाहिक सम्बंध पवित्र घटना है; कोई व्यापारिक सौदा

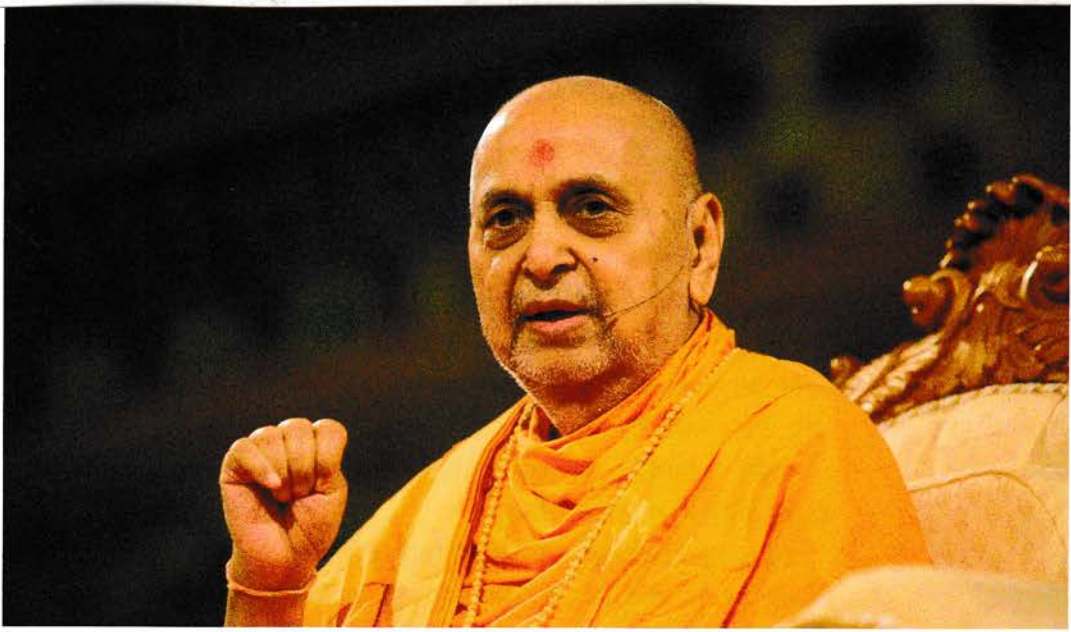

'प्रत्येक जीवप्राणी मात्र को जीने का अधिकार है। किसी को भी मारकर जीना इन्सानियत नहीं है।'

नहीं। लेन-देन तो केवल परिवारों की भावना की अभिव्यक्ति है। लेकिन आज समाज में लेने-देने की प्रथा इतनी गहरी जड़ें डाल चुकी है कि कन्या का पिता परिवार सहित बरबाद हो जाता है। झूठी प्रतिष्ठा के प्रदर्शन हेतु उसे अपना घर तक बेचना पड़ता है। अंततः वह समाज में प्रतिष्ठाहीन हो जाता है। विवाह का उत्सव मनाने हेतु, यह जरूरी नहीं कि लाखों-करोड़ों रुपये व्यर्थ में खर्च किए जाएँ, इससे बचने के लिए 'समूहविवाह' सर्वोत्तम विकल्प है। जो लोग 'समूहविवाह' करते हैं, उनका गृहस्थाश्रम मिट तो नहीं जाता!

अत: दूसरों से धन ऐंठकर अपना शौक पूरा करने से अच्छा है, उदारता और संवेदनशीलता अपनाइए।'

वर्तमान युग में माता-पिता और उनकी संतानों के बीच जो दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं, उसी के गर्भ से नये-नये 'वृद्धाश्रमों' अथवा 'वृद्धालयों' का जन्म होता है। ऐसे वृद्धाश्रमों को देखकर स्वामीश्री का हृदय आहत हो जाता है। वे कहते हैं कि 'अपनी संतानों को हमें ऐसे संस्कार देने चाहिए कि वे चाहे जितने बड़े हो जाएँ, परन्तु वे अपने वृद्ध माता-पिता की सेवा करें...'

वे आगे कहते हैं, 'वृद्ध माता-पिता की सेवा करो। तुम जब छोटे थे, तब कितनी ही बार माता-पिता को परेशान किया होगा! कपड़े बिगाड़े होंगे, लातें भी मारी होंगी! सब कुछ उन्होंने सहन किया था, हमें भी उनके स्वभावों को सहकर उनकी सेवा करनी चाहिए।'

धर्म और धर्म के प्रचार के नाम पर यदि किसी बुराई का पोषण होता हो, तो स्वामीश्री वहाँ निःसंकोच रूप से उचित मार्गदर्शन देते हैं।

ह्युस्टन में एक केथलिक चर्च के बिशप जॉन ए. मार्कोव्यस्की अपने चर्च की प्रवृत्तियों के विषय में स्वामीश्री को जानकारी दे रहे थे। चर्च के संचालन में विद्यालयों-अस्पतालों का खर्च पूरा करने के लिए वहाँ एक जुआघर (बिंगो) कार्यरत था। बिशप ने जब यह बताया, तब स्वामीश्री ने तुरन्त पूछा, 'जुआ खेलने के लिए बाईबल में कहीं लिखा है?'

बिशप ने कहा, 'ऐसा कोई निर्देश नहीं है।'

'तो फिर एक धार्मिक संस्थान में जुआ खेलाकर लोगों की हरामवृत्ति का पोषण करना उचित है? यदि हम धार्मिक नेता ही जुआ खेलने के लिए लोगों को प्रेरित करेंगे, तो युवा वर्ग उस बुराई को धर्ममान्य कहेगा, जिससे मनुष्य में चौर्यवृत्ति ही पनपती है।'

बिशप के पास स्वामीश्री के कथन के लिए कोई उत्तर नहीं था। उन्होंने कहा, 'मानव तो मानव ही है। उसे कुछ मनोरंजन भी तो चाहिए।'

स्वामीश्री ने कहा, 'मनोरंजन के लिए कोई दूसरी विधा भी तो संभव है। मनुष्य बाहर रहकर चाहे जो भी करे, किन्तु धर्मस्थल की मर्यादा उसे बनाये रखनी चाहिए। धर्म का कार्य चोरी, जुआ, ड्रग्स और व्यसन आदि को छुड़वाने का है।'

बिशप, स्वामीश्री के अभिप्रायों से प्रभावित हो बोल उठे थे, 'आपके आदर्श बहुत ऊँचे हैं, हमें उसी मार्ग पर चलना चाहिए।'

रिश्वत, लाटरी और जुए को स्वामीश्री 'हरामवृत्ति' कहते हैं। इसमें उन्हें देश का विनाश दिखाई देता है। उसके पथ पर चलनेवालों को स्वामीश्री कहते हैं, 'थोड़ा खर्च करके, अधिक प्राप्त करने की वृत्ति हरामवृत्ति है। जैसे : जुआ और लॉटरी। आज विद्यार्थियों को ठीक से पढ़ाई नहीं करनी है। नकल और हड़ताल करके पास होना है; शिक्षकों को अपने हक के लिए लड़ना है; पढ़ाने से कोई मतलब नहीं। व्यापारी माल में मिलावट करके पैसे कमाते हैं। बिना मेहनत और इमानदारी के देश की प्रगति कैसे होगी? यदि पूरा भारत प्रामाणिकता के साथ, नियमित रूप से प्रतिदिन आठ घंटा काम करे, तो नि:संदेह, समग्र विश्व में देश का नाम रोशन हो जाए, यहाँ आबादी की कहाँ कमी है?'

मांसाहार और शराब के प्रचलन की जानकारी मिलते ही स्वामीश्री की आँखें चमक उठती हैं। वे कहते हैं, 'आज जगह-जगह मुर्गीपालन केन्द्र और मत्स्य उद्योग खुल चुके हैं। पैसे के लिए कैसा दुष्प्रचार होता है! 'अंडे से शक्ति मिलती है, अंडे शाकाहार हैं।' कौन कहता है अंडे से शक्ति मिलती है? अंडे को शाकाहार कैसे कहते हैं? क्या वे पेड़ पर फलते हैं? परंतु लालच के कारण विज्ञापन दिए जाते हैं कि 'सन्डे हो या मन्डे, रोज रोज अंडे!' मुर्गीपालन उद्योग ने पर्यावरण का सत्यानाश कर दिया है। दूसरों को मारकर आप सुखी होना चाहते हैं? ऐसे धन से बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। जीवप्राणी मात्र को जीने का अधिकार है। दूसरों को मारकर जीना इन्सानियत नहीं है।'

स्वामीश्री समाज को दूषित करनेवाली प्रवृत्तियों के खिलाफ नि:संकोच भाव से अपना अभिप्राय व्यक्त करते हैं। गुजरात की जीवनदाता नर्मदा नदी के बाँध की समस्या के निराकरण के लिए स्वामीश्री के वचन से एक ही दिन में अमेरिका में हज़ारों लोगों ने सहमति के हस्ताक्षर करके गुजरात का शौर्य दिखाया था।

धर्मपरिवर्तन के विषय में स्वामीश्री के स्पष्ट विचार हैं; वे कहते हैं, 'लालच देकर, लोगों की अज्ञानता का लाभ उठाकर उन्हें ठगते हुए धर्मपरिवर्तन करना सर्वथा अनुचित है।'

इस विषय पर इंग्लैण्ड के ईसाई धर्माध्यक्ष आर्क बिशप ऑफ केन्टरबरी से स्वामीश्री ने पूछा था कि, 'ईसाई कहलानेवाले लोग विश्व में सबसे अधिक संख्या में हैं, परन्तु बाईबल के टेन कमान्डमेन्ट्स का यथार्थ पालन करनेवाले ईसाई कितने होंगे?'

बिशप ने कहा था, 'ऐसे तो बहुत कम होंगे!'

स्वामीश्री ने अद्‌भुत तर्क दिया : 'फिर तो जो आपके अनुयायी हैं, उन्हीं को सच्चे ईसाई क्यों नहीं बनाते? वे दस आदेशों के पालक बनें, ऐसा करना चाहिए। केवल संख्या बढ़ाने

के लिए धर्मान्तरण करना पाप और निरर्थक है।'

स्वामीश्री कहते हैं, 'प्रत्येक धर्म का अनुयायी अपने-अपने धर्म का अनुसरण सही ढंग से करता रहे, तो धर्म के नाम पर होनेवाला झगड़ा कभी पैदा ही न हो।'

हिन्दुत्व की रचनात्मक अस्मिता को भी स्वामीश्री के ब्रह्मतेज का प्रकाशपुंज आलोकित करता है।

स्वामीश्री हिन्दुत्व के मात्र समर्थक ही नहीं हैं, बल्कि प्रखर ज्योतिर्धर के रूप में हिन्दुत्व की ज्योति समग्र विश्व में प्रसारित करके, उन्होंने हिन्दुओं को गौरवान्वित भी किया है। उसमें कट्टरता अथवा आक्रमकता का प्रवेश नहीं होने दिया; यह उनके शौर्य का ही प्रभाव है।

देश की राजधानी दिल्ली में 'स्वामिनारायण अक्षरधाम' का सर्जन, उन्होंने ऐसी ही गौरवमयी भावना से प्रेरित होकर किया है।

91 वर्ष की आयु में देश-विदेश में भव्य नूतन शिखरबद्ध मंदिरों के निर्माण का संकल्प ही कौन कर सकता है? इस आयु में अक्षरधाम जैसे संकुलों का सर्जन करने का उत्साह किसे होता है? 85 वर्ष की आयु में वे विश्व का अजूबा सा स्वामिनारायण अक्षरधाम की रचना करते हैं तथा टोरन्टो और एटलान्टा जैसे महानगरों में शिखरबद्ध मंदिरों की रचना करते हैं; भूकंपग्रस्त गाँवों को गोद लेते हैं अथवा विश्व के अनेक स्थानों में आध्यात्मिक संदेश के प्रसारण के लिए अप्रतिम ऊर्जा के साथ कार्य करते हैं; सर्वत्र उनके प्रखर शौर्य का दर्शन होता है।

भारत के मानव अधिकार आयोग के निर्देशक और सी.बी.आई. के पूर्व निर्देशक श्री कार्तिकेयन ने कहा था, 'मुझे विश्व में सबसे हिम्मतवान पुरुष प्रमुखस्वामी महाराज प्रतीत होते हैं। नये युग के सात आश्चर्यों का मूल्यांकन कोई करे, तो सर्वप्रथम अक्षरधाम का क्रम होगा। प्रत्येक भारतीय को इसका गर्व होना चाहिए। स्वामीश्री के चमत्कारों में से यह एक चमत्कार है। मेरे अनुसार कोई शहंशाह, कोई सरकार अथवा कोई अन्तर्राष्ट्रीय संस्था भी ऐसा महान कार्य नहीं कर सकती। विश्वभर की सरकारों और संस्थानों को स्वामीश्री से प्रेरणा लेनी चाहिए कि एक संत, संपूर्ण त्यागी होकर, समाज के लिए इतना प्रेम और समर्पण का भाव प्रकट कर सकते हैं। ऐसा संकुल (अक्षरधाम) बनाने के लिए हिम्मत चाहिए। मुझे लगता है कि समग्र विश्व के लिए वे एक आदर्श हैं।'

स्वामीश्री के शौर्य और तेजस्विता के ऐसे अनेक परिमाण हैं, जिनमें सभी को एक पवित्र आध्यात्मिक प्रकाश प्राप्त होता है। शौर्य की आध्यात्मिक विभावना इससे भी विशेष है। श्रीमद्‌भागवत का कथन है, *'स्वभावविजयः शौर्यम्'* (11-19-37) – स्वभाव पर विजयी होना ही शौर्य है।

भगवान स्वामिनारायण कहते हैं, 'जो शूरवीर होता है, उससे इन्द्रियाँ-अंत:करण थर थर काँपते रहते हैं।' (वचनामृत लोया प्रकरण 2)

स्मृतिः

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

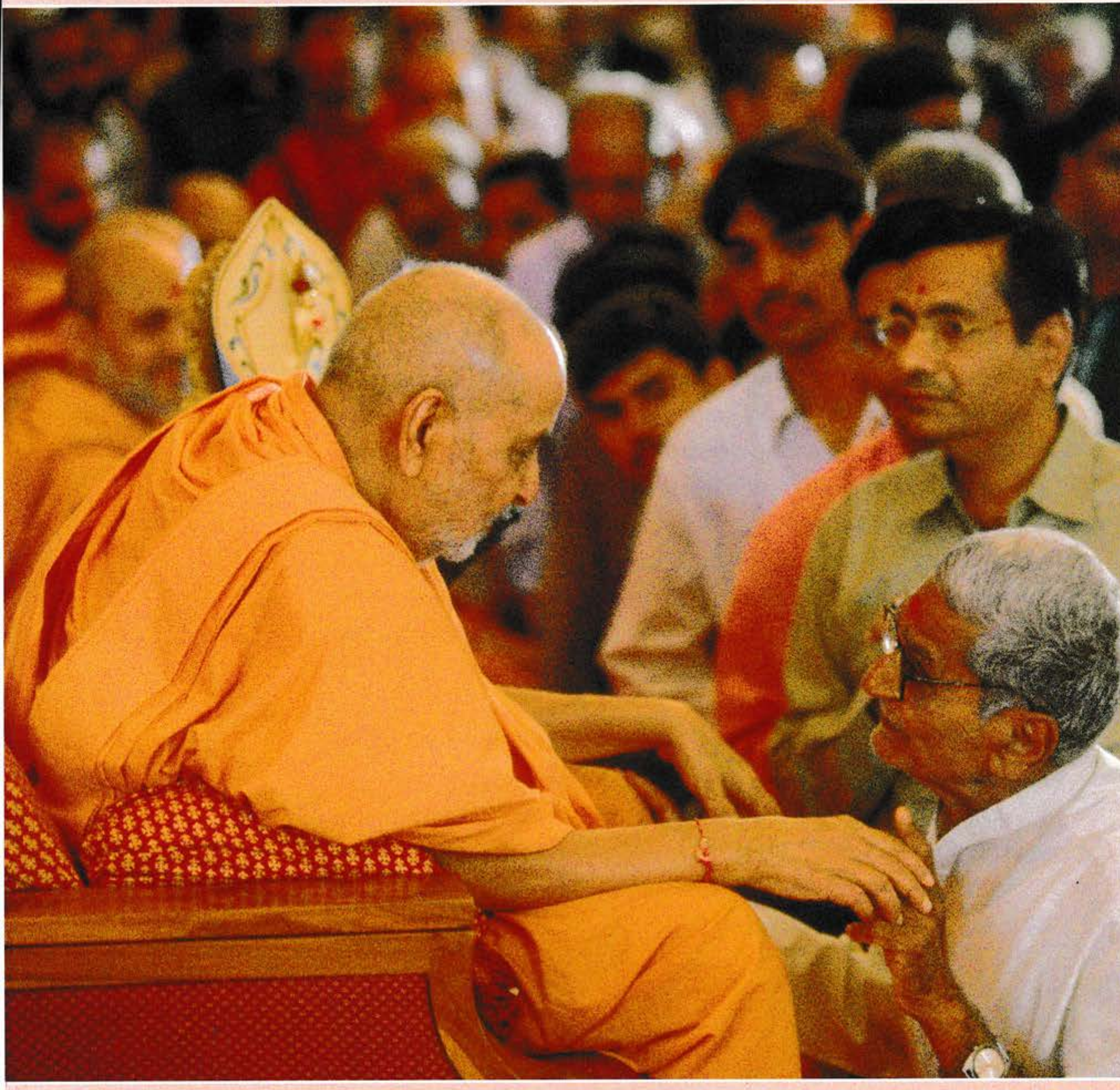

तीव्र याददाश्त को ही स्मृति नहीं कहते, वह तो भक्तों पर भगवान के अनुग्रह का अनूठा वरदान है। भगवान अपने भक्तों और उनकी भक्ति का निरंतर स्मरण रखते हैं, इसकी प्रतीति ही यह सद्‌गुण प्रदान करती है; क्योंकि भगवान सदा भक्तवत्सल हैं। इस सद्‌गुण में परमात्मा की भक्तवत्सलता का दर्शन होता है, अपने भक्तों के प्रति भगवान की अक्षय प्रीति का दर्शन है।
जिनको भगवान की निरंतर स्मृति है, ऐसे स्मृतिनिधि गुणातीत संत भी भक्तों का स्मरण करके, महिमा पूर्वक वात्सल्य का अभिषेक करते हैं।
भगवान की वैसी वत्सलता के धारक प्रमुखस्वामी महाराज ऐसी भक्त-स्मृति के एक अतुलनीय उदाहरण हैं।

स्वामीश्री का लोक-संपर्क अद्वितीय है। प्रतिदिन सैकड़ों लोगों से व्यक्तिगत मुलाकात करना, बड़ी ही आत्मीयता से उनकी समस्याओं को सुनना, उन्हें मार्गदर्शन देना, वर्षों से चला आ रहा यह उनका नित्य जीवन क्रम है। स्वामीश्री की ये मुलाकातें केवल औपचारिकतावश नहीं, उनमें निःस्वार्थ आत्मीयता का कल्पनातीत स्पर्श होता है।

सतत विचरण कर रहे स्वामीश्री ने सहस्त्रों गाँवों और लाखों घरों में विचरण किया है। प्रत्येक गाँव की धूल तथा प्रत्येक घर के वातावरण का उन्होंने हृदय से स्पर्श किया है। लाखों भक्तों को उन्होंने निःस्वार्थ स्नेह की दृष्टि से निहारा है। यही कारण है कि प्रत्येक भक्त, स्वामीश्री के लिए स्वजनतुल्य है। आत्मीयता के इन्हीं भावों के परिणाम स्वरूप स्वामीश्री के हृदय में समुद्र जैसा एक स्मृति-कोश निर्मित हो चुका है, जिसमें स्मृतियों का अक्षुण्ण खजाना भरा हुआ है। उसके अंतर्गत असंख्य भक्तों, उनकी सेवाओं तथा उनकी महिमा का समावेश है। कभी-कभी अचानक ही जब स्वामीश्री के मुख से स्मृति-मण्डल का द्वार खुल जाता है, तो आसपास के लोग, पल-दो पल के लिए स्तब्ध रह जाते हैं। न जाने कितने भक्तों के नाम, गाँव, पता और उनके द्वारा की गई सेवाओं की उन्हें ताजी स्मृति है। भक्तों के साथ ही जुड़े हुए न जाने कितने गाँव, नगर समाज और प्रदेश भी उनके स्मृति-मण्डल में सुरक्षित हैं। न जाने कितने दशक व्यतीत हो चुके, परन्तु स्मृतियाँ वैसी की वैसी ही ताजी!

स्वामीश्री के ऐसे अनुभवों की कुछ स्मृतियों पर दृष्टि डालें -

23 फरवरी, 2006 को स्वामीश्री वल्लभ विद्यानगर में भोजन ले रहे थे। संस्था के छात्रालय के विद्यार्थियों का परिचय दिया जा रहा था, 'यह मितेश जेसंगपुरा गाँव का निवासी है।' स्वामीश्री ने तुरन्त पूछा, 'वह नरसिंहभाई वाला गाँव?'

'हाँ।' मितेश बोला।

लाखों भक्तों को उन्होंने नि:स्वार्थ स्नेह की दृष्टि से देखा है। यही कारण है कि हर कोई स्वामीश्री के लिए स्वजन के समान है।

संतों ने कहा, 'अपने पुरखों की पीढ़ियों के नाम तुझे मालूम है?'

'जी हाँ।' मितेश ने कहा।

उसी क्षण स्वामीश्री ने कहा, 'इसके पुरखों का नाम तो मैं बताऊँगा, देख, तेरा नाम मितेश, तेरे पिताजी रमेश, रमेश के नरसिंह और नरसिंह के पिता नारायणभाई!' फिर आगे बोले, 'नरसिंहभाई छोटे थे और गिरधरभाई बड़े; दोनों बहुत पुराने सत्संगी थे। शास्त्रीजी महाराज के समय से सत्संग में जुड़े थे।' इतना कहकर उन्होंने पुन: पूछा, 'गजानन कहाँ है?'

मितेश ने कहा, 'वे मेरे पड़ोस में ही रहते हैं।'

स्वामीश्री ने कहा, 'मितेश के दादा नरसिंहभाई, देवचरण स्वामी के मामाजी लगते हैं।'

यह सुनकर मितेश भी विस्मित हो गया। अभी कल की ही बात थी कि साधुजीवन स्वामी ने स्वामीश्री को कहा था कि 'अब मुझे कुछ याद नहीं रहता।' तब स्वामीश्री भी बोले थे कि 'मुझे भी याद नहीं रहता!'

26 दिसम्बर, 1998 को सारंगपुर में एक संत, एक हरिभक्त को स्वामीश्री के दर्शन हेतु लाये थे। परिचय देते हुए उन्होंने कहा, 'यह बेचरभाई, रोहिशाला गाँव के हैं।'

स्वामीश्री ने उनकी ओर देखकर एकाएक पूछा, 'पहले कौन से गाँव में रहते थे?'

संत ने कहा, 'रोहिशाला में ही।' स्वामीश्री को संतोष नहीं हुआ। उन्होंने बेचरभाई से फिर एकबार पूछा, तब उन्होंने कहा, 'चकमपर गाँव में... पंद्रह वर्ष रहा था।'

स्वामीश्री की आँखों में चमक आ गई, वे तुरंत बोले, 'हाँ... चकमपर में दो बार तुम्हारे घर पधरावनी के लिए आए थे।' इतना कहकर उत्साहपूर्वक आशीर्वाद देने लगे।

बाहर आकर संत ने उनसे पूछा, 'बेचरभाई, स्वामीश्री आपके घर कब पधारे थे?'

'लगभग पैंतालीस वर्ष पहले!' बेचरभाई ने कहा।

13 दिसम्बर, 1993 को स्वामीश्री मुंबई में अपने निवास की तीसरी मंजिल पर सांध्य-भ्रमण कर अपने कक्ष में पधार रहे थे। विवेकसागर स्वामी लिफ़्ट के पास एक भक्त के साथ खड़े थे। स्वामीश्री उनको देखते ही बोले, 'कैसे हो नरेन्द्र!'

स्वामीश्री ने 50 वर्ष पहले उनको बचपन में देखा था और यथावत् उनका स्मरण था! उन्होंने कहा, 'कराची में हमने कथा-पारायण की थी, तब तुम बहुत छोटे थे!'

फिर विवेकसागर स्वामी से कहा, 'ये जीवराजाणी सेठ के बेटे हैं। शास्त्रीजी महाराज

उनकी ही मोटरकार उपयोग करते थे।'

एडिसन में 25 मई, 2004 को एक युवक स्वामीश्री के पास आया। स्वामीश्री ने उसका गाँव पूछा तो उसने कहा, 'डूंगरी टींबा।'

'किसके बेटे हो?'

'हरिभाई का।' युवक ने कहा। इतना सुनते ही हरिभाई की पीढ़ियाँ स्वामीश्री के होठों पर थिरकने लगीं, 'हरिभाई गोविंदभाई, गोविंदभाई मथुरभाई, मूल गाँव सारसा के...।'

अपने पूर्वजों की बात स्वामीश्री के मुख से सुनकर वह युवक स्तब्ध रह गया!

सारंगपुर में प्रातः क्रम के बाद स्वामीश्री शास्त्रीजी महाराज के स्मृति मंदिर से लौट रहे थे कि उनके आगे दो बालक दौड़ रहे थे। दोनों को दिखाते हुए स्वामीश्री साथ चल रहे संतों से कहने लगे, 'यह देवराज और यह अरविंद, दोनों ताजपुर गाँव के रवजी के बेटे हैं। रवजी के बाप धरमशी तथा लक्ष्मण और कानजी उसके भाई थे। उनके बाप थे बेचर, जो अधेड़ अवस्था में साधु बने थे। बहुत ज्ञानी थे, कीर्तन, साखी, श्लोक बहुत अच्छा गा लेते थे।'

22 नवम्बर, 1994 को बोचासण में पेटलाद के एक मुमुक्षु दर्शनार्थ आए थे। स्वामीश्री ने पूछा, 'रमणभाई आपके क्या लगते हैं?' वे बोले, 'पिताजी।'

स्वामीश्री ने कहा, 'ओ...हो...हो... आपके यहाँ तो शास्त्रीजी महाराज कईबार पधारे थे। आप गाँव में जो संस्कृत पाठशाला चला रहे थे, उसमें मैंने परीक्षा भी दी थी।' इतना कहकर स्वामीश्री रमणभाई के भाई का नाम भी बता दिए।

29 जून, 2007 को शिकागो में एक मुमुक्षु डिट्रोइट से दर्शनार्थ आए हुए थे। स्वामीश्री ने उनके गाँव का नाम पूछा, तो उत्तर मिला, 'पलियड!'

स्वामीश्री ने कहा, 'अहो! आप पलियड के हैं? पलियड में तो हमारे गोविंदभाई शिवाभाई रहते हैं।'

'वही मेरे पिताजी हैं!'

स्वामीश्री प्रसन्न हो गए और बोले, 'तब तो बहुत अच्छा! गोविंदभाई की भाँति ऊँचे स्वर से जयघोष कीजिए न! वे तो इतनी बुलंद आवाज़ से जयघोष करते हैं कि सारे गाँव में सुनाई दे।' युवक ने अपने पिताजी की भाँति उत्साहपूर्वक जयघोष किया और उसकी यह मुलाकात यादगार बन गई।

7 अगस्त, 2007 को एडिसन (अमेरिका) में ईस्ट विन्डसर मंडल का परिचय दिया जा रहा था। एक युवक का परिचय दिया गया कि 'स्वामीजी! यह चंद्रेश कहता है कि स्वामीबापा मुझे पहचानते हैं! तो आप ही बताइए, आप इसको जानते हैं?'

स्वामीश्री ने कहा, 'हाँ, आणंद गाँव के पास गाना गाँव का यह कार्यकर्ता था न!'

विवेकसागर स्वामी ने युवक से पूछा, 'तेरे पिताजी अथवा दादाजी का नाम?'

चंद्रेश से पहले स्वामीश्री ने ही उत्तर दिया, 'फुलाभाई मूलजीभाई!'

चंद्रेश यह सुनकर चकित रह गया! उसने कहा, 'सच बात है, वे मेरे दादाजी के पिता थे!'

14 अगस्त, 2007 को एडिसन में एक हरिभक्त स्वामीश्री का दर्शन करने आए थे। उन्होंने कहा, 'मैं पुरुषोत्तम लल्लू का बेटा हूँ!'

स्वामीश्री तुरंत ही बोले, 'हाँ, पुरुषोत्तम लल्लू भादरण गाँव में रहते थे। उनकी पत्नी को

स्वामीश्री के हृदय में विशाल सत्संग परिवार कैसा चिरंतन बना हुआ है!

सत्संग की अनन्य दृढ़ता थी। जब मैं भादरण में रहकर संस्कृत पढ़ता था, तब हर द्वादशी को पारणा (व्रत का उद्यापन) के लिए भोजन सामग्री महिमापूर्वक भेजती थीं।'

स्वामीश्री के स्मृतिपटल पर अपने माता-पिता की सूक्ष्म सेवा की भी स्मृति देखकर, वह हरिभक्त आश्चर्य में पड़ गए!

जब स्वामीश्री को किसी का भी परिचय दिया जाता है, तो वे उसके पैतृक गाँव का नाम अवश्य पूछते हैं और उस गाँव से संबंधित भक्तों और उनकी विशेषताओं का विवरण उनके मुख से सहज ही निकलने लगता है! स्वामीश्री किसी परिचित परिवार के वर्षों पुराने इतिहास का इतना सजीव वर्णन करते हैं कि सुननेवालों को प्रतीत होता है कि स्वामीश्री मानो कल की ही देखी हुई घटना का विवरण सुना रहे हैं!

28 अप्रैल, 2008 को लंदन के एक भक्त मनुभाई पटेल, एक वृद्ध हरिभक्त को स्वामीश्री के दर्शनार्थ लाये थे। उन्होंने स्वामीश्री से कहा, 'आप तो बहुत परिश्रम करते हैं।' स्वामीश्री ने कहा, 'सब महाराज की दया से चलता है...' कहकर बगल में खड़े प्रियदर्शन स्वामी को उनका परिचय देने लगे, 'यह वृद्ध, मनुभाई के ससुर हैं, इनका नाम सोमाभाई है। सन् 1959 में भानुभाई के विवाह के अवसर पर हम कंपाला में उनको आशीर्वाद देने के लिए गए थे!' स्वामीश्री की स्मरण शक्ति देखकर 89 वर्ष के सोमाभाई चकित रह गए।

वर्षों के बाद मिलनेवाले मुमुक्षुओं को भी अनेकबार स्वामीश्री की स्मरण शक्ति का चमत्कार देखने को मिलता है। उस समय हरिभक्तों की पुरानी सेवाओं तथा उनकी खूबियों के विषय में जानकर सभी अभिभूत हो जाते हैं!

सन् 1994 में स्वामीश्री भुज पधारे हुए थे। एक वृद्ध को देखकर उन्होंने कहा, 'ये गोविंदभाई, 85 वर्ष के होने पर भी अकेले ही घूमते हैं। शास्त्रीजी महाराज के समय में (सन् 1937 में) नैरोबी में जब प्रथम स्वामिनारायण मंदिर स्थापित हुआ, तो उस समय वे ट्रस्टी थे। मंदिर निर्माण करनेवाले भी वे ही थे। हरमानभाई, मगनभाई आदि हरिभक्तों के साथ उन्होंने सेवा की है और संस्था का पक्ष भी दृढ़तापूर्वक रखते थे।'

किसी को पता नहीं कि 50 वें दशक के बाद स्वामीश्री उनसे कब मिले थे और गोविंदभाई को भी आशा नहीं थी कि इतने समय के बाद भी स्वामीश्री मुझे पहचानेंगे!

24 मार्च, 1995 को सारंगपुर में एक वृद्ध को देखते ही स्वामीश्री के हृदय में प्रेम उमड़

पड़ा और बोले, 'मोहन! कैसे हो?' मोहन, गाँव का अति साधारण कोली जाति का भक्त था। शास्त्रीजी महाराज के समय में मोहनभाई ने बहुत ही भक्तिभाव से मंदिर की सेवा की थी। स्वामीश्री उससे इस प्रकार मिले, जैसे किसी विशिष्ट महानुभाव से मिलते हैं। वहाँ उपस्थित संतों-भक्तों को परिचय देते हुए स्वामीश्री ने कहा, 'यह मोहन बहुत पुराना भक्त है। इसके पिता मोती, धोलका के निवासी थे, वह कोन्ट्राक्टर शेरमिंया का, यहाँ का कारोबार संभालते थे और फूलदोल उत्सव के लिए हम जिस भूमि का उपयोग करते हैं, वह इसी की थी।' मोहनभाई भी यह सुनकर पुरानी स्मृतियों में खो गए। वे जो कुछ कहने लगे, जिसे स्वामीश्री एकाग्र होकर सुन रहे थे और बीच-बीच में हामी भी भर देते थे।

स्वामीश्री ने कहा, 'जब शंकर भगत इस मंदिर के कोठारी थे, उस समय से मोहन मंदिर की सेवा में था। बहुत पुराना सेवक है। मंदिर के बड़े दरवाजे का काम शुरू हुआ था और पावर हाउस का निर्माण हुआ, उस समय यह मेरे साथ सेवा में था।'

मोहनभाई ने सन् 1945 की बात करते हुए कहा, 'अटलादरा में मंदिर का काम चल रहा था, तब मैंने इन नारण स्वामी (प्रमुखस्वामी) को देखा था। फावड़े से मिट्टी निकालने का काम करते थे और सिर पर पंद्रह-प्रंद्रह ईंटों का बोझ उठाकर ले जाते थे। यहाँ दरवाजे का काम चल रहा था, तब बैल भी स्वयं ही हाँकते थे!'

स्वामीश्री उसकी सेवाओं को याद करने लगे, 'अटलादरा में शास्त्रीजी महाराज ने इसको पत्थर काटने के लिए खास रखा था।'

स्वामीश्री की दृष्टि और स्नेह प्रवाह में भीगे मोहन कुछ भी बोलने से सक्षम नहीं था। स्वामीश्री अत्यन्त ही प्रेमपूर्वक अपना हाथ मोहनभाई के सिर पर आशीर्वाद के रूप में फिरा रहे थे? इस दृश्य को देखते हुए मोहन के बेटे की आँखें भावविभोर होकर बरस रही थीं!

30 दिसम्बर, 1998 को अहमदाबाद में नगासर गाँव के एक वृद्ध हरिभक्त को अत्यन्त ही स्नेह और आदर के साथ स्वामीश्री ने कहा, 'आइए पोपटभाई!'

पोपटभाई बोले, 'मैं तो वर्षों के बाद स्वामीश्री से मिल रहा हूँ, फिर भी वे मुझे पहचान गए! शास्त्रीजी महाराज के समय में कठलाल गाँव में पारायण थी, तब मैं गया था। शास्त्रीजी महाराज ने पलंग से उठकर मुझे गले लगाया था, उस समय प्रमुखस्वामी टाट पर सोये थे। उस मूर्ति का मुझे अच्छी तरह स्मरण है।'

पालीताना से डॉ. घेलानी अपने समधी के साथ दर्शन के लिए आए थे। वे उनका परिचय देते हुए बोले, 'यह मेरे समधी, नवागाँव के बकुभाई हैं।' स्वामीश्री ने उनके पिता का नाम पूछा, किन्तु डॉ. घेलानी को कुछ याद न था।

स्वामीश्री ने कहा, 'शंकरभाई!' यह सुनते ही डॉ. घेलानी प्रसन्नचित्त बोले, 'हाँ जी, वे ही।' डॉक्टर घेलानी आज स्वामीश्री का स्मृति-भंडार देखकर आश्चर्यचकित थे।

सारंगपुर में एक ग्वाला से मिलते ही उन्होंने पूछा, 'भाई रत्ना! कैसे हो?'

'आपकी दया है, महाराज!' सभी लोग सोचने लगे कि यह रत्ना कौन है? तब स्वयं स्वामीश्री ने ही परिचय दिया, 'रत्ना हमारे सारंगपुर का पुराना पड़ोसी है, मंदिर के इमलीवाले खेत के साथ ही इसका खेत था!'

सारंगपुर में एकबार एक वृद्ध को दूर खड़े देखकर स्वामीश्री ने उसे निकट बुलाया और कहा, 'विठ्ठल! कैसे हो? ठीक है न! क्या करते हो, दर्शन करने आते हो न?'

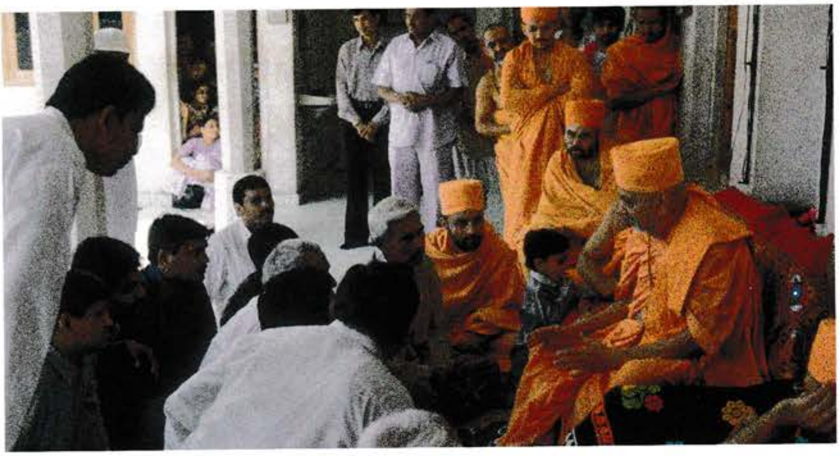

न जाने कितने हरिभक्तों और परिवारों की गाथाएँ उनके स्मृतिपट पर तथा जिह्वाग्र है! स्वामीश्री अर्थात् एक चैतन्यमय एवं महिमापूर्ण स्मृतिकोश !

विठ्ठल को स्वप्न में भी पता नहीं रहा होगा कि विश्वविभूति बन गए स्वामीश्री मुझ गरीब को पहचान जाएँगे। स्वामीश्री तुरंत ही संतों से विठ्ठल की पहचान कराने लगे, 'यह विठ्ठल, इस गाँव का कुम्हार है। यह, इसका भाई तथा तीसरा हरि था। जब मैं यहाँ 40 वर्ष पहले कोठारी था, तब मंदिर के अन्नकूट का प्रसाद देने के लिए ये सभी घर-घर हमारे साथ दौड़ते रहते थे। इन्होंने बहुत सेवा की है!'

लाखों हरिभक्तों के बीच भी यदि कोई पुराना हरिभक्त मिल जाता है, तो स्वामीश्री की एक नई प्रतिभा का दर्शन होता है।

12 सितम्बर, 2003 को सारंगपुर में स्वामीश्री के दर्शनार्थ नेनपुर के हरिभक्त आए थे। स्वामीश्री ने प्रसन्नतापूर्वक कहा, 'आप सब अच्छी तरह से सत्संग कीजिए और गाँव में सभी को सत्संग करवाइएगा। नेनपुर पर शास्त्रीजी महाराज की बहुत कृपादृष्टि थी। आत्मारामभाई, सोमाभाई आदि हरिभक्त बहुत ही उत्साही तथा निष्ठावान थे। सोमाभाई का इतिहास तो आप सभी जानते ही होंगे।' अगले ही क्षण स्वयं कहने लगे, ''सोमाभाई के तीन बेटे थे : डाह्याभाई, नारणभाई तथा मणिभाई। गाँव में मंदिर बनाने की इच्छा थी, लेकिन उस जमीन में बैगन की खेती करके व्यापार में ही व्यस्त रहते थे। इसलिए मंदिर न बनने के कारण बहुत दु:खी रहते थे। एकबार सोमाभाई ने अपने बेटे डाह्याभाई को खेत का बैगन काट डालने की आज्ञा दी, ताकि अतिशीघ्र मंदिर का कार्य शुरू हो सके। इस प्रकार घर के सभी लोग मंदिर की सेवा में जुट गए। वे एक पतिव्रता जैसे निष्ठावान भक्त थे। चाहे कैसा भी दु:ख आए, स्वामिनारायण भगवान की ही शरण में अपना सिर झुका देते थे। ऐसे निष्ठावान परिवार में फिलहाल शान्तिभाई हैं। सोमाभाई का बेटा डाह्याभाई, डाह्याभाई का बेटा शान्तिभाई और शान्तिभाई का बेटा यह है, इस प्रकार मैं इनकी चौथी पीढ़ी देखता हूँ।'

स्वामीश्री के स्मृतिपटल पर ऐसे असंख्य भक्तों की स्मृतियाँ अंकित हैं।

सन् 2006 में स्वामीश्री मुंबई में विराजमान थे। उनके समक्ष संस्था के पिछले 50-60 वर्ष के उत्सवों और ऐतिहासिक अवसरों की फिल्में प्रदर्शित की गईं। उन्हें देखते हुए स्वामीश्री के स्मृतिकोश से एक के बाद एक हरिभक्त की स्मृतियाँ प्रकट होने लगीं।

'यह वसो गाँव के जशभाई... इस समय जो दिनूभाई अमीन हैं, उनके पूर्वज। जशभाई भाईलालभाई, भाईलालभाई पुरुषोत्तमभाई; जिन्होंने भगतजी महाराज का दर्शन किया था।

'प्रमुखस्वामी महाराज गुरु के रूप में एक उदात्त उदाहरण हैं।
भक्तों की आध्यात्मिक प्रगति के लिए, वे अति सुलभ होते हैं,
वे यंत्रवत् आशीर्वाद नहीं देते हैं, बल्कि अपने शिष्यों के जीवन में गहरा रस लेते हैं।
उन्हें तो अपने शिष्यों के बाप-दादा तक के नाम स्मरण रहते हैं।
मुमुक्षुओं के पत्रों के उत्तर, वे संतोषजनक देते हैं।
उनके और शिष्यों के बीच प्रगाढ़ सम्बंध है।'

- पूज्य स्वामी बोधिनाथ वेलयन

(हिमालय एकेडेमी, हवाई टापू, अमेरिका)

जशभाई बहुत बड़े भक्त थे। शास्त्रीजी महाराज जब मुंबई पधारते, तब वे घर-घर पैदल जाकर समाचार देते कि 'स्वामीश्री पधारनेवाले हैं।' यदि उनका कार्यक्रम बदल जाता तो वे पुनः कहने जाते कि 'अब स्वामीजी नहीं आएँगे।' ऐसे सेवाभावी भक्तराज थे...।'

दशकों पूर्व देखे हुए चेहरे आज भले ही संसार से विलुप्त हो चुके हों, परन्तु स्वामीश्री की स्मृति में वे आज भी चिरंजीव हैं।

'यज्ञपुरुष उपनिषद्' ग्रंथ की रचना हो रही थी। शास्त्रीजी महाराज की तसवीरें छापने से पहले स्वामीश्री के समक्ष रखी गईं। तसवीरों को देखते ही वे इतिहास का वर्णन करने लगे। सभी का इतना गहन परिचय देने लगे कि उनके पारिवारिक सदस्यों, सेवाओं तथा विलक्षणताओं का वर्णन भी उनके वक्तव्य में शामिल हो गया! यह सब वे इतनी सहजता से करते थे कि मानो वे अभी-अभी उन हरिभक्तों से प्रत्यक्ष मिलकर आए हैं!

कभी किसी हरिभक्त की स्मृति स्वामीश्री को ताज़ा नहीं होती, तब वे सहज ही कह देते कि 'उसे मैं पहचानता हूँ, किन्तु नाम का स्मरण नहीं हो रहा।' फिर उस भक्त की स्मृति ढूँढ़ने का प्रयास करने लग जाते हैं। अचानक बातों के बीच में ही वे बोलने लगते हैं कि 'अरे, उनका नाम मिल गया। वह पुरुषोत्तमदास, मूल गाँव नार के हैं...'

गुरुपरंपरा एवं भगवान के जीवनचरित्रों का पाठ जब स्वामीश्री के समक्ष होता है, तब वही अनुभव पाठक को होने लगता है। असंख्य हरिभक्तों के गाँव के नाम और उसका संपूर्ण विवरण स्वामीश्री के होंठ पर रहता है।

कितने पुराने हरिभक्तों और संतों की गाथाएँ, उनकी जिह्वा पर मौजूद होगी! लगता है कि स्वामीश्री एक चैतन्यमय तथा महिमापूर्ण विश्वकोश हैं! कभी-कभी वे हरिभक्तों के रोगों की जानकारी अथवा उनके प्रिय भोजन का भी स्मरण करने लगते!

स्वामीश्री जब भी खानदेश (महाराष्ट्र) पधारते, तो वे एक-एक हरिभक्त को याद करके, उसके घर जाते और पुरानी स्मृतियाँ ताज़ी करते।

सन् 1982 में स्वामीश्री खानदेश में वरखेड़े पधारे थे। दोपहर के भोजन के समय स्वामीश्री की दृष्टि एक पुराने हरिभक्त गजमल भीखा पर पड़ी। एक संत उनकी थाली में हलुवा परोस रहे थे। स्वामीश्री ने तुरन्त ज्ञानप्रिय स्वामी को भेजा और बोले, 'अरे, गजमल भीखा को डायाबिटिस है। उन्हें हलुवा नहीं, सूरन की सब्जी दो...!'

दशकों तक स्वामीश्री ने संतों-हरिभक्तों के बीच समूह में भोजन किया था; इसलिए साथ में बैठे हुए संतों-भक्तों की रुचि का उन्हें पूरा परिचय है। कईबार वे नम्रतापूर्वक संतों

को सूचित करते देते हैं, 'भाईकाका को नेनुए के पकोड़े प्रिय हैं, उन्हें ठीक तरह से देना।' 'घनश्याम बापा! लीजिए मठिया-नमकीन...' 'श्रीहरि स्वामी... पापड़ लेंगे?' 'भाई, हकाबापू की थाली में दही नहीं है, यहाँ से लो, दही की कटोरी उनको दीजिए...' 'सामाणी साहब घी नहीं लेते हैं... उनको बिना चुपड़ी चपाती दीजिए...' 'आइए सी.एम.! आज तो जलेबी है, लेनी ही पड़ेगी!...' महंत स्वामी को लवणरहित परोसना।' 'यह पपीता संत स्वामी के लिए कोई सारंगपुर जा रहा हो, तो भेज दीजिएगा...।'

स्वामीश्री के स्मृति भंडार में इतना सब कुछ सुरक्षित है कि उनका स्मरण होते ही उनके प्रति महिमामय प्रेम का महासागर उमड़ पड़ता है; जिसे कोई जीवनभर भूल नहीं सकता! हर किसी के लिए व्यवस्था-सुविधा देना उनकी प्रकृति है। व्यक्ति पर आए संकट को ध्यान में रखकर, किसी भी तरह का प्रबंध करने का उन्हें अच्छा-खासा अनुभव है!

दिल्ली में अक्षरधाम महोत्सव में आए देश-विदेश के सहस्रों हरिभक्तों की भिन्न-भिन्न व्यवस्था करवाने से वे नहीं चूके तथा उनकी संपूर्ण सुविधा उपलब्ध करवाने की चिन्ता उनके मन में सदैव बनी रहती थी। वे प्रतिदिन सैकड़ों हरिभक्तों से मिलते थे, परन्तु यदि कोई न मिला, तो उसे याद करके बुला लेते थे!

त्यागवल्लभदास स्वामी अपने अनुभव के विषय में लिखते हैं, 'धर्मज में वयोवृद्ध बिस्तर पकड़ चुके, पुराने निष्ठावान हरिभक्त ए.पी. पटेल के घर स्वामीश्री पधारे थे। उनको आशीर्वाद देकर हम स्वामीश्री के साथ मंदिर आने के लिए मोटरकार में बैठे। आगे फीयाट में चार संत बैठे थे। स्वामीश्री के सेवक को भी उसी कार में बैठना था, परन्तु लंदन के सी.एम. पटेल के लिए कार में से एक संत को उतर जाना पड़ता। अत: मैंने एक हरिभक्त द्वारा कहलवाया कि साधु बिना जोड़ के नहीं रह सकेंगे। इसलिए संतों को कार में जाने दीजिए; सी.एम. पैदल ही आ जाएँगे, क्योंकि मंदिर इतना दूर भी तो नहीं। परन्तु स्वामीश्री ने मना करते हुए कहा, 'भले ही संतों को जोड़ के साथ उतर जाना पड़े, संत पैदल आ जाएँगे; परन्तु सी.एम. को कार में बैठा लो।' बाद में ऐसा ही किया गया। कार के चले जाने पर स्वामीश्री ने कहा, 'गठियारोग के कारण सी.एम. पटेल को चलने में दिक्कत है!'

स्वामीश्री को संतों-भक्तों की विपत्ति ठीक समय पर याद आ जाती है, इसके अनेक उदाहरण हैं -

'ईश्वरचरण स्वामी आए हैं, मीटिंग में उनके लिए कुर्सी रखनी चाहिए, उनको कमर का

दर्द है, नीचे नहीं बैठाना...।'

'बालमुकुंद स्वामी के लिए कैसी व्यवस्था है? उनका निवास नीचे रखिएगा, सीढ़ी नहीं चढ़ पाएँगे...' 'त्यागवल्लभ स्वामी की सेहत अच्छी नहीं है, उनको मिठाई मत देना।'

'सर्वमंगल स्वामी को ठीक से परोसना...।'

यदि किसी गाँव में किसी परिचित से मिलना बाक़ी रह गया हो, तो उनकी तीव्र स्मृति में वह बात स्वत: अंकित हो जाती है।

सन् 2007 में स्वामीश्री एडिसन (यू.एस.ए.) में पधारे थे, तब प्रतिदिन हजारों भक्त मंदिर और सभाखंड में उमड़ पड़ते थे। 6 अगस्त, 2007 को प्रात:काल में स्वामीश्री सैकड़ों हरिभक्तों से मुलाकात कर रहे थे; उसी दौरान एक वृद्ध हरिभक्त, स्वामीश्री को नमस्कार करके आगे निकल गए। स्वामीश्री ने स्वयं ही उनको निकट बुलाया और कहा, 'अरे कान्तिभाई! आप ऐसे ही क्यों चले जा रहे हैं? निकट आइए, आप तो कितने दिनों से दिखाई ही नहीं देते?'

कान्तिभाई ने कहा, 'स्वामीजी, मैं हररोज आता हूँ, किन्तु दूर से ही दर्शन करके चला जाता हूँ।'

स्वामीश्री ने कहा, 'आप तो पहले से ही दूर रहते हैं, लेकिन अब निकट आने की आदत डालिए।' इतना कहकर स्वामीश्री अन्य संतों को बतलाने लगे, 'कान्तिभाई शुरू से ही निष्ठावान भक्तराज हैं। 51 युवकों को योगीजी महाराज ने जब दीक्षा दी थी, तो यह भी त्यागी हुए थे। डॉक्टर स्वामी के पूर्वाश्रम के रिश्ते में लगते हैं। उन दिनों त्यागवल्लभ स्वामी के साथ रसोई में सेवा किया करते थे।'

इतना कहकर स्वामीश्री ने उन्हें प्रेमपूर्वक आशीर्वाद दिया।

एडिसन में एक मुमुक्षु को देखते ही स्वामीश्री ने कहा, 'क्यों, अब दिखते नहीं हो, कहाँ रहते हो?'

'पार्सीपनी के निकट ही रहता हूँ।' मुमुक्षु ने कहा।

'आते रहना।' इतना कहकर स्वामीश्री संतों से बोले, 'इसके पिता नारायणभाई, दारेस्सलाम सत्संग मंडल के प्रमुख थे। उनका यह बेटा है। यह तो हमारी ही अमानत है...' इतना कहकर जितेन्द्रभाई के कंठ में देखा तो कंठी नहीं थी; यह देखकर स्वामीश्री ने कहा, 'कंठी नहीं पहनी है? आज से शुरू करो; तुम भी पहनना और हज़ारों को सत्संग के आश्रित बनाना।'

30 मार्च, 2006 को सारंगपुर में लगभग डेढ़ सौ दर्शनार्थियों के बीच स्वामीश्री ने एक अधेड़ मुमुक्षु को देखते ही पहचान गए कि 'वह तो आणंद के भगवत जोषी हैं!'

सन् 1956 से 58 के दौरान योगीजी महाराज के साथ विचरण करके सेवा करनेवाले इस हरिभक्त को वर्षों बाद देखकर, स्वामीश्री ने स्नेहपूर्वक उलाहना देते हुए कहा, 'मैं बोचासण में इतने दिनों तक रुका रहा, लेकिन तुम मुझसे मिलने क्यों नहीं आए?'

भगवतभाई ने कहा, 'बापा! आपका दर्शन दुर्लभ हो गया है। कोई अंदर तक आने दे तब मैं आऊँ न!'

स्वामीश्री ने स्नेहपूर्वक कहा, 'कोई तुम्हें क्यों नहीं आने देगा? यदि तुमने अपने मन में ठान लिया होता, तो सबकुछ सम्भव हो जाता। तुम कितने समय से नहीं मिले! पहले तो सत्संग मंडल में हमेशा आते रहते थे। अब मैं जब भी आऊँ, तब तुम अवश्य आ जाना।'

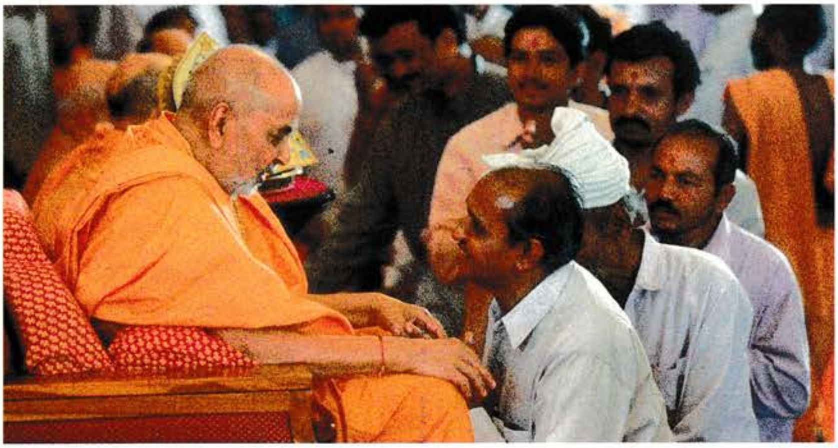

लाखों हरिभक्तों के बीच जब वे चिर-परिचित हरिभक्तों से मिलते हैं, तो उनकी स्नेहमयी स्मृति प्रतिभा का दर्शन हो जाता है।

स्वामीश्री का निर्मल वात्सल्य देखकर भगवतभाई की आँखों में आँसू आ गए।

कईबार सभा के बाद अथवा ठाकुरजी का दर्शन करके अपने कक्ष की ओर लौटते समय, स्वामीश्री सेवक संतों से कहते थे, 'अहमदाबाद से दिनूभाई आए हैं, उनको बुला लीजिएगा... उनके साथ पत्र भेजने हैं।' यदि किसी को उनका पता नहीं होता, तो स्वामीश्री कहते कि 'बाहर चबूतरे पर खिरनी के पेड़ के नीचे बैठे होंगे।'

तब सुननेवाले को ताज्जुब होता कि स्वामीश्री की सूक्ष्म दृष्टि से कोई नहीं छूटता!

स्वामीश्री अपने दिनभर किए जानेवाले महत्त्वपूर्ण कार्यों की सूची याद कैसे रखते हैं? न तो उनकी कोई व्यक्तिगत 'डायरी' है; न ही कोई कार्यालय! फिर भी किसे, कब और क्या कहना है, उन्हें यथातथ स्मरण रहता है। उस व्यक्ति को देखते ही स्वामीश्री को स्मरण हो जाता है और अपेक्षित बात कहने लगते हैं।

20 अक्टूबर, 1994 को स्वामीश्री गोंडल स्थित अक्षरदेहरी में परिक्रमा कर रहे थे। संतों-पार्षदों के बीच एक खंभे के पीछे आजादी मिलने के बाद कलेक्टर रह चुके भक्तराज गोविंदसिंह चुडासमा बैठे थे। स्वामीश्री ने उन्हें देखा, तो उन्होंने ठाकुरजी का प्रासादिक गुलाब का फूल उठा लिया और चलकर उनके पास जा पहुँचे। फिर झुककर आशीर्वाद के साथ गुलाब का पुष्प दे दिया। गोविंदसिंह को आश्चर्य हुआ कि स्वामीश्री ने मुझे कब देख लिया!

स्वामीश्री के सतत होते विचरण के दौरान, उनकी स्मरण-शक्ति के अगणित अनुभव नित्य-प्रति होते रहते हैं। वर्षों तक गाँवों में विचरण की अवधि में न जाने कितनों की सेवाओं का स्मरण करके, उन हरिभक्तों की इच्छापूर्ति हेतु उनके गाँव पधारते, परन्तु विचरण के दौरान उपस्थित शारीरिक कष्टों की वे तनिक भी परवाह नहीं करते थे।

बोचासण में कार्तिक पूर्णिमा के उत्सव के बाद स्वामीश्री नडियाद पधारे थे। चालू सत्संग सभा में ही नरसंडा गाँव के गोरधनभाई झवेरभाई पटेल स्वामीश्री के दर्शनार्थ मंच के किनारे आकर खड़े हो गए और बोले, 'जय स्वामिनारायण!' स्वामीश्री ने पत्र लिखते हुए आँखें उठाईं, तो वरिष्ठ भक्त को देखकर फौरन अपने आसन से उठकर मंच के किनारे तक जा पहुँचे और झुककर गोरधनभाई से बातें करने लगे। एक स्थानीय संत को जिज्ञासा हुई कि स्वामीश्री इस वृद्ध के साथ क्या बातें करते होंगे? वे स्वामीश्री के पास आ पहुँचे; उस समय गोरधनभाई स्वामीश्री को अपने घर पधारने के लिए आग्रह कर रहे थे।

स्वामीश्री ने कहा कि आगे का कार्यक्रम निश्चित हो चुका है, इसलिए फिर कभी अवश्य आ जाएँगे। यह सुनते ही उस संत ने स्वामीश्री से धीमी आवाज़ में कहा, 'स्वामीजी! वहाँ जाने की जरूरत नहीं है।' स्वामीश्री मौन रहे। गोरधनभाई के जाने के बाद स्वामीश्री ने स्थानीय संत से पूछा, 'आपने ऐसा क्यों कहा कि वहाँ जाने की ज़रूरत नहीं है?'

'इसलिए कि जब वे आपको पहले अपने गाँव ले गए थे, तब आपको बुखार होने के बावजूद दो-पाँच करते-करते उन्होंने 50 घरों में पधरावनी करा दी थी। आपको अधिक कष्ट सहन न करना पड़े, इसीलिए मैंने मना किया।'

स्वामीश्री ने कहा, 'आपको पता है? उन्होंने शास्त्रीजी महाराज के समय में हमारी संस्था और सम्प्रदाय का पक्ष रखते हुए कितनी सेवा की थी? वह समय ऐसा था कि हमें गाँव में कोई घुसने भी नहीं देता था, ऐसे समय में वे स्वामी का पक्ष लेकर अपने गाँव के मंदिर में निवास का प्रबन्ध करते और स्वयं सीधा-सामान अर्पण करते थे।'

इतना कहकर स्वामीश्री ने उन्हें शान्तिपूर्वक समझाया, 'भले हम व्यस्त होने के कारण नहीं जा सकते, किन्तु 'वहाँ जाने की जरूरत नहीं है' ऐसा नहीं बोलना चाहिए।' संत ने क्षमा याचना की।

स्वामीश्री वडताल दर्शन करने जा रहे थे कि अचानक 'नरसंडा' गाँव का बोर्ड पढ़कर उस ओर मुड़ गए। गोरधनभाई अपने घर में झूले पर झूल रहे थे। अचानक स्वामीश्री की कार उनके दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई। स्वामीश्री को अचानक देखकर गोरधनभाई गद्गद हो गए। उनकी आँखों में हर्ष के आँसू छलक पड़े। उन्होंने स्वामीश्री के चरणों में साष्टांग दंडवत् प्रणाम किए। घर के दो नवनिर्मित कमरों में पदार्पण करवाए। स्वामीश्री ने भावपूर्वक पधरावनी में उनके परिवार को लाभान्वित किया। विदा होकर वहाँ से प्रस्थान करते समय स्वामीश्री स्वत: बोलते जा रहे थे, 'आपने बहुत सेवा की है...!'

स्वामीश्री लींबासी गाँव के डाह्याभाई पटेल के घर भी इसी प्रकार अचानक पधारे थे। उस समय वे कैंसर की बीमारी के कारण जीवन और मौत के बीच झूल रहे थे! पूर्व कार्यवाहक प्रधानमंत्री गुलज़ारीलाल नंदाजी के घर भी उनकी पधरावनी इसी प्रकार से हुई थी, तो जिटोडिया गाँव के किसान हरिभक्त ईश्वरभाई के घर भी स्वामीश्री उनके प्रेम को देखकर पधारे थे। सभी का कारण एक ही – उनकी स्मृति में विद्यमान यह महिमा कि 'उन्होंने सत्संग की कैसी सेवा की है!'

महोत्सव के विविध आयोजनों के विवरण पढ़ते हुए अथवा 'स्वामिनारायण प्रकाश' में प्रकाशित विवरण पढ़ते हुए उन्हें तुरन्त पता चल जाता है कि किस संत या स्वयंसेवक का नाम छूट गया है। स्वामीश्री उस समय संपादक संतों को अवश्य याद दिलाते हैं कि 'अमुक' नाम छूट क्यों गया?

जब स्वामिनारायण मंदिर, अहमदाबाद के इतिहास में शिवलाल परमार का नाम छूट गया, तो स्वामीश्री ने उनको याद करते हुए संपादक संतों को पत्र लिखकर गलती पर ध्यान खींचा था कि उन्होंने बहुत मेहनत की थी! फिर भी हम उनका नाम छापना कैसे भूल गए?' बोचासण में संस्था द्वारा लगे पशुशिविर का विवरण पढ़ते हुए उन्होंने मिलन नामक एक छोटे से युवक को याद किया कि 'इसमें मिलन की सेवा का उल्लेख ही छूट गया है।'

एक दिन उन्होंने कहा था कि 'गांधीनगर स्थित अक्षरधाम के विवरण में लंदन के आर. के. पटेल का नाम छूट गया है। हम उनकी सेवा को कैसे भूल गए?'

उसी प्रकार से उन्हें शास्त्रों के संदर्भों का स्मरण भी सहज है। 'भक्तचिंतामणि' ग्रंथ की पंक्ति हो कि 'सत्संगिजीवन' या 'रघुवंश' ग्रंथ की बातें, स्वामीश्री ग्रंथों के श्लोक या पंक्तियाँ संतों के साथ गाने लगते हैं! कभी स्मृतिदोष से कोई रुक गया, तो आगे की पंक्ति याद करा देते हैं!

स्वामीश्री के स्मरण शक्ति का एक विलक्षण परिमाण है : संतों की स्मृति। सैकड़ों संतशिष्यों में किस संत की क्या विशेषता है; वे कौन सी कला में निपुण हैं; उनके जीवन में कौन से सद्‌गुण हैं तथा किस में किस प्रकार के भजन-भक्ति की विशेषता है, यह सबकुछ उनके हृदय में अंकित है!

बायपास सर्जरी के बाद स्वामीश्री न्युयॉर्क में डॉ. महेन्द्रभाई पटेल के घर विश्राम कर रहे थे। यहाँ के पेप्सीको पार्क में संध्या भ्रमण के लिए जाने का उनका नित्यक्रम था। 30 अगस्त, 1998 को स्वामीश्री भ्रमण के बाद विशाल पार्क में व्हीलचेयर पर विराजमान थे। प्रार्थना और कथा की समाप्ति के बाद वच. ग.प्र. 27 का पाठ हुआ। स्वामीश्री ने उस पर अद्‌भुत निरूपण किया। वचनामृत की अंतिम पंक्तियाँ सुनते हुए स्वामीश्री ने कहा, 'योगीजी महाराज के जीवन चरित्र में इस वचनामृत में लिखे हुए प्रत्येक लक्षण देखने को मिलते थे।' इतना कहकर उन्होंने, 'योगीजी महाराज का जीवनचरित्र अद्‌भुत रूप से लिखा गया है' कहते हुए लेखक ईश्वरचरण स्वामी की बार-बार प्रशंसा करते रहे। निरूपण के बाद किसी को भी कल्पना नहीं थी कि स्मृतियों के प्रवाह में स्वामीश्री अब क्या बोध देना चाहते हैं?

इसके पश्चात् संतों का गुणगान करते हुए स्वामीश्री ने बालमुकुन्द स्वामी, डॉक्टर स्वामी, महंत स्वामी, त्यागवल्लभ स्वामी, कोठारी स्वामी, विवेकसागर स्वामी आदि वरिष्ठ संतों की महिमा का गुणगान किया। फिर भी उनकी वाणी रुकने का नाम नहीं लेती थी। उनके स्मृतिपटल पर संतों के नाम तैरने लगे। जिह्वा द्वारा संतों का गुणगान निर्बाध रूप से निकलने लगा। छोटे-बड़े संतों का स्मरण करते-करते स्वामीश्री महिमा सागर में गोता लगाने लगे। उनके पास संतों के गुणगान का खजाना इतना बृहत्तर था कि चाहते तो वे सारी रात अपना वही क्रम जारी रख सकते थे। उनकी महिमा-तरंगें सभी को गद्‌गद कर रही थीं। वचनामृत का निरूपण तो कभी का समाप्त हो चुका था। परन्तु स्मृति की वह गंगा रुकने का नाम नहीं लेती थी। उन्हें यह भी भान न रहा कि नीचे उतरने के लिए उठाया हुआ पैर अभी एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा है।

संतों की महिमा गाने में स्वामीश्री इतना निमग्न हो चुके थे कि समय का भी ध्यान न रहा। सूर्यास्त के पश्चात् अंधेरा छाने लगा था। स्वामीश्री का मुखारविंद भी अस्पष्ट-सा दिखने लगा था, परन्तु लगता था कि आज उन्हें अपने प्रिय संतों के नाम जपने की ही धुन सवार थी। दो-चार या दस-बीस नहीं, सैकड़ों संतों का स्मरण करते हुए स्वामीश्री ने भावनिमग्न हो ऐसा महिमागान किया कि सभी गद्‌गद हो गए! स्वामीश्री के मुख से प्रकट हुई संतमहिमा की सरिता में पाषाण को भी पिघला देने की क्षमता थी। विश्व के कोने-कोने में अंतरंग गाँवों में विचरण कर रहे संतों को अनुमान भी नहीं होगा कि स्वामीश्री के हृदय में उनका स्मरण कैसे आदरपूर्वक सुरक्षित है! रसोई-भंडार में, दूध-दही की केबिन में, खेतीवाड़ी की सेवा में, हरिभक्तों की सेवा में, बालमंडल में, युवक मंडल में, बीमार संतों

की सेवा में, छोटे-बड़े सत्संग केन्द्रों के संचालन में, उत्सवों के संचालन में, संगीत-चित्रकला में, वक्तृत्व में, लेखन में, अध्ययन में, मंदिर निर्माण के कार्य में, स्वच्छता में, कोठारी अथवा पुजारी की सेवा में दिन-रात निमग्न होकर, स्वामीश्री की प्रसन्नता के लिए पुरुषार्थ करते संतों को कल्पना भी नहीं होती होगी कि स्वामीश्री के निर्मल अंत:करण में उनका कितना अद्भुत प्रतिबिंब अंकित है! मात्र संतों की प्रवृत्ति की ही महिमा नहीं, उनकी साधुता, त्याग, निष्ठा, उत्साह एवं सत्संग-रुचि, सहनशीलता, धैर्य तथा स्थिरता आदि, ऐसे तो अनेक गुणों का गान भी स्वामीश्री की स्मृति-मंजूषा से निकलता रहा! अंधकार के कारण स्वामीश्री का मुख धुँधला दिखने लगा था। स्वामीश्री की आँखों एवं उनकी वाणी द्वारा सहज ही अनुमान लगाया जा सकता था कि उनके अंत:करण में संतों के प्रति कितना महिमापूर्ण आदर है!

आज का सत्संग 70 मिनट तक चला! महिमागाथा में समय कहाँ चला गया, किसी को भी पता नहीं चला। परन्तु स्वामीश्री तृप्त नहीं हो रहे थे। 7.50 बजे रात को व्हीलचेयर पर से उठने के लिए उन्होंने जो पैर उपर उठाकर भूमि पर रखा था, वह अभी तक उसी स्थिति में था। अभी तो कई संतों का नाम स्मरण बाकी था, परन्तु अंधकार ने उन्हें उठने के लिए विवश कर दिया। महिमागान से कृतकृत्य हो रही स्वामीश्री की आँखों में विलक्षण चमक थी।

हमने कहा, 'स्वामीजी! आपने हम सभी की बातें कही, परन्तु यह सबकुछ आप ही के प्रताप से है! हमें तो साधु होने की कल्पना तक नहीं थी।'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'वह सब जोगीबापा के (योगीजी महाराज) संकल्प के कारण हो सका। उन्होंने संकल्प किया, इसलिए आप सभी को साधु बनने की प्रेरणा मिली!'

अब वे व्हीलचेयर से खड़े होकर धीरे-धीरे पार्किंग की ओर जाने लगे। चलते-हाँफते भी स्वामीश्री संतों के गुणगान कर रहे थे। बीच में उन्होंने कहा, 'हमें सभी के गुण देखने चाहिए। आपस में एकता, एक रुचि, एक विचार! प्रत्येक में ऐसी-ऐसी शक्तियाँ छिपी हैं। सभी के गुणों को देखने से अंतर में शान्ति रहेगी! भगवान स्वामिनारायण ने कहा है कि भगवान और उनके भक्त का गुणगान प्रतिदिन करना चाहिए। हम गुण गाएँगे, तो हमें ही बल मिलेगा।'

स्वामीश्री 70 मिनट तक बोलते रहने के कारण कुछ थके हुए से लग रहे थे, फिर भी वे मोटरकार के दरवाजे तक संतों की चर्चा करते ही रहे। मोटरकार में बैठने के बाद, निवास स्थान पर पहुँचने तक महिमागान जारी रहा। अपने कक्ष में कुछ देर तक शवासन करने के बाद वे जब उठे, तब भी कुछ संतों की महिमामय स्मृतिगान करते ही रहे। इस महिमा की गंगा में स्नान करके हृदय गद्गद हो गया! आज की संध्या, जीवन की अविस्मरणीय संध्या बन गई!

यही है - स्वामीश्री की मधुर स्मृतियों का महासागर ! इसे करुणा का सागर कहें या स्नेह का, इसकी व्याख्या करना असंभव है! क्योंकि स्वामीश्री की स्मृतियाँ समयातीत, सीमातीत एवं गुणातीत स्नेह की स्मृतियाँ हैं! यह कोई 'मेमोरी पावर' की कथा नहीं है। यह तो शाश्वत बहनेवाली नितान्त प्रेम और वात्सल्य की भागीरथी है।

भगवान की अखंड स्मृति में डूबे हुए हज़ारों हरिभक्तों-संतों की स्मृति तादृश रखनेवाले स्वामीश्री की भक्तवत्सलता का यह एक अनोखा दर्शन है! ◆

कौशलम्

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

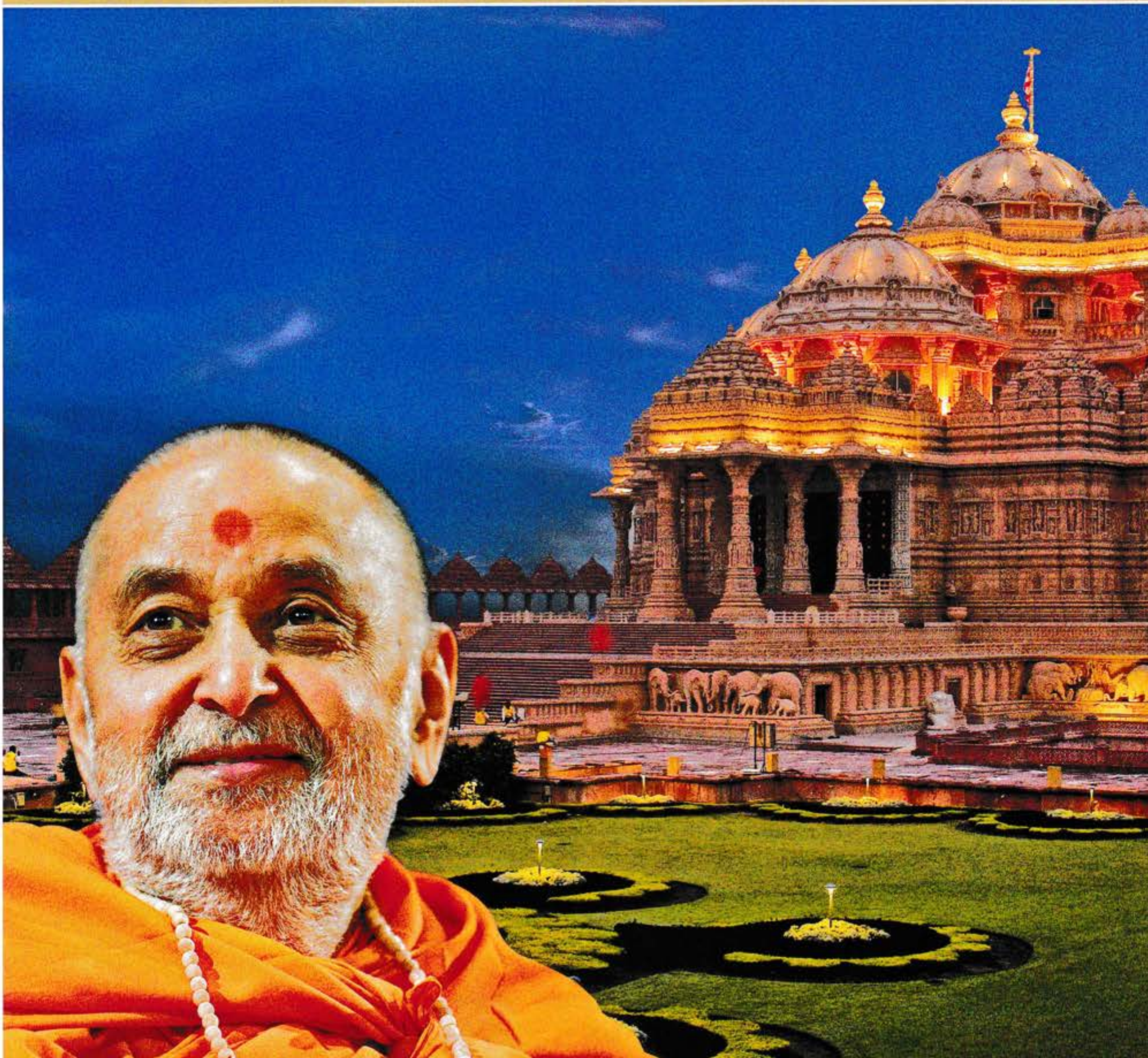

राजधानी दिल्ली में स्वामिनारायण अक्षरधाम तथा उसे सर्जक प्रमुखस्वामी महाराज...

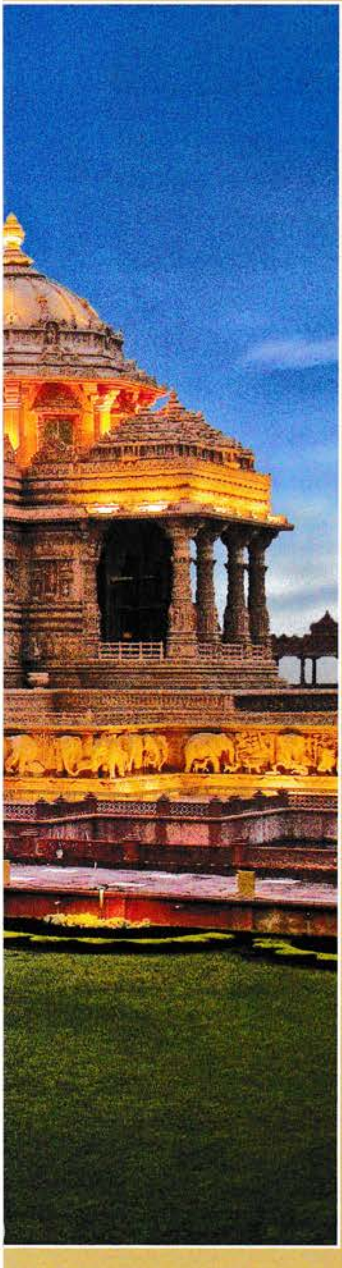

कौशलम् अर्थात् कुशलता, दक्षता।
शास्त्रकारों ने भगवान के लिए कहा है, *'रसो वै सः।'* और *'सर्वकला-कोविदः।'*
भगवान जब पृथ्वी पर अवतार धारण करते हैं,
तो उनके अनेक लक्षणों में से एक है : सभी क्षेत्र में कुशलता, दक्षता !
परन्तु संसार से विरक्त और प्रभु में आसक्त संत को लौकिक दक्षता से
क्या लेना देना ? भगवान के सभी कल्याणकारी गुणों के धारक संत में,
विरक्ति और भगवद्-भक्ति के साथ, अनेक रूपों में कौशल्य-दर्शन भी होता है,
जिस कौशल्य के द्वारा वे लाखों लोगों को परमात्मा के अभिमुख करते हैं !
प्रमुखस्वामी महाराज के विरक्त, शान्त, धैर्यवान और गंभीर व्यक्तित्व में
ऐसी अनन्य कुशलता का अद्भुत दर्शन होता है।

स्वामीश्री की कुशलता अनेक आयामों में विस्तृत हुई है। स्थापत्य के विषय में उनकी निपुणता, कला के विषय में उनकी गहनरुचि, मूर्ति एवं शिल्पकला में उनका गहरा अनुभव, भक्ति-संगीत में उनका प्रेम, उत्सवों तथा मंदिर-निर्माण के आयोजन में उनकी क्षमता तथा विरक्त होते हुए भी उनकी प्रशासकीय दक्षता आदि; विभिन्न क्षेत्रों में उनकी गहरी पैठ दिखाई देती है; यह उनके कौशल्य का ही प्रतिबिंब है।

बाल्यकाल से ही तेजस्वी प्रतिभा के धनी स्वामीश्री बचपन से भले ही शान्त रहे, परन्तु तैराकी, विद्याध्ययन, खेलकूद आदि में उनकी अनूठी निपुणता थी। गाँव के तालाब में जब वे छोटे शान्तिलाल के रूप में तैराकी-स्पर्धा में भाग लेते थे, तो अपने हलके-फुल्के शरीर के कारण तालाब के जल में तीव्रगति से तैरते हुए सहज ही विजेता बन जाते थे। दूसरों को पढ़ने में कठिन लगनेवाले गणित और इतिहास उनके प्रिय विषय थे। शिक्षक को इस बालक पर कभी भी मेहनत करने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी। क्रिकेट के खेल में सभी मित्रों ने उनको सहज ही अपना सूत्रधार बना दिया था। उनकी उपस्थिति मात्र से खिलाड़ियों में नयी चेतना का संचार हो जाता था। क्रिकेट के साधन खरीदने के लिए, उन्होंने गाँव से चार-पाँच सौ रुपये चंदे द्वारा इकट्ठे किए थे। एक दिन वे मित्रों के साथ खेल रहे थे कि उन्हें, गुरु शास्त्रीजी महाराज का पत्र मिला। पत्र पढ़ने के बाद उसी क्षण वे एकत्रित किए गए रुपये अपने एक मित्र को सौंपकर त्याग के पथ पर प्रस्थान कर गए।

परन्तु इस महापुरुष की दक्षता बचपन के मित्र या गाँव के लोगों तक ही सीमित न रही। उनके अंदर विद्यमान कुशलता और गुण, अगणित मुमुक्षुओं को मुक्ति-मार्ग दिखाने के लिए उपयोग में आनेवाली थीं। विश्वव्यापी विचरण ही उनकी कुशलता का दर्शन

लाखों लोग प्रश्नों की झड़ी बरसाते हैं : 'केवल पाँच सालों में अनेक विघ्नों के बीच स्वामीश्री ने दिल्ली में स्वामिनारायण अक्षरधाम का निर्माण किस प्रकार संभव बनाया ?'

करानेवाला था। शास्त्रीजी महाराज ने शान्तिलाल का कौशल्य परख लिया था। उनकी कृपादृष्टि से स्वामीश्री ने त्यागाश्रम स्वीकार किया, उसी के साथ उनके कौशल्य के विस्तार हेतु खुला आकाश मिल गया। शास्त्रीजी महाराज, इस नवदीक्षित संत को मंदिर के छोटे-बड़े कारोबार में अपने साथ ही रखने लगे। कथा के आयोजनों तथा व्यासपीठ पर अपने साथ ही उनको भी बिराजमान करने लगे।

सन् 1945 में केवल 23 वर्ष की आयु के युवा संत नारायणस्वरूपदासजी को शास्त्रीजी महाराज ने संस्था की प्रशासन समिति में अग्रिम स्थान दे दिया। वे जब 24 वर्ष के थे, तब उन्हें सारंगपुर के विशाल मंदिर के मुख्य प्रशासनिक (कोठारी) पद पर नियुक्त किए और 28 वर्ष की आयु में 21 मई, 1950 को उन्होंने स्वयं के स्थान पर स्वामीश्री को बी.ए.पी.एस. संस्था के अध्यक्ष (प्रमुख) पद पर नियुक्ति की।

यद्यपि पद-प्रतिष्ठा सम्बंधी प्रत्येक अवसर पर वे अपनी राय अवश्य देते, परन्तु अन्ततः गुरुआज्ञा की ही विजय होती थी। परिस्थितियाँ कुछ इस प्रकार से निर्मित हो जातीं कि स्वामीश्री गुरुआज्ञा स्वीकार करके उसके प्रति समर्पित हो जाते। प्रत्येक अवसर पर उनकी उच्च साधुता का ही नहीं; उनकी प्रशासनिक एवं व्यवस्थापन कुशलता का भी दर्शन होता था। प्रमुख पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद भी उन्होंने न तो कभी अपने अधिकारों का दावा किया; न ही किसी पर धाक जमाने की कोशिश की। फिर भी अपने गुरु की छत्रछाया में उनका सहज एवं लोकहितकारी कौशल्य प्रकट होता रहा।

बी.ए.पी.एस. संस्था का विकास एवं उसके आध्यात्मिक मूल्यों के संरक्षण का इतिहास अध्ययन-योग्य है; क्योंकि आध्यात्मिक मूल्यों की क्षति किए बगैर, उन्होंने संस्था का चतुर्दिक् विकास किया, यही उनका विलक्षण परिचय है।

सन् 1971 में स्वामीश्री गुरुपद पर आरूढ़ हुए, तबसे आज तक बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था के परिमाण किस हद तक बदले हैं, यह कोई तुलना या उपमाओं का विषय नहीं है। स्वामीश्री की छत्रछाया में हुए संस्था के विस्तार पर थोड़ी दृष्टि डालें।

- विश्व के 55 देशों में बी.ए.पी.एस. का विस्तार।
- समस्त विश्व में 17,500 सत्संग मंडल। (युवा-बाल-महिला-बुजुर्ग सत्संग मंडल)
- विश्व भर में 1000 नये मंदिरों का निर्माण।

- 3,65,000 रोगियों की प्रतिवर्ष सारवार, 7 सुविधासज्ज अस्पताल और 11 चल चिकित्सालय द्वारा।
- 12,000 विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष शिक्षा हेतु 40 शिक्षासंकुल। आपत्तिग्रस्त 55 पाठशालाओं का पुन:निर्माण, जिसमें 5,000 विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष शिक्षा-प्रदान।
- गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा तथा तमिलनाडु सहित 21 गाँवों को दत्तक लिया और कुल 500 गाँवों में राहत-सामग्री का वितरण।
- लाखों संकटग्रस्त लोगों को राहत सेवा।
- 6,500 बाल संस्कार केन्द्रों में 1,30,000 बाल-बालिकाओं को नि:शुल्क संस्कार सिंचन।
- प्रतिवर्ष विश्व भर में 8,00,000 सत्संग सभाएँ।
- 3 करोड़, 50 लाख लोगों में महोत्सवों द्वारा सांस्कृतिक गौरव का प्रस्थापन।
- प्रतिवर्ष 63 लाख से अधिक लोगों को अक्षरधाम (दिल्ली एवं गांधीनगर) द्वारा आध्यात्मिक संदेश।

पूर्व में न्यूजीलैण्ड-ऑस्ट्रेलिया से लेकर पश्चिम में अमेरिका तक, उत्तर में केनेडा से लेकर दक्षिण में साउथ अफ्रीका तक, संस्था की व्यापक सत्संग प्रवृत्तियों और सैकड़ों सेवाओं का निरंतर चलता धर्म चक्र!

ऐसे विराट कार्यों का संचालन स्वामीश्री कैसे कर रहे हैं? वह भी नि:स्वार्थ, नि:शुल्क स्वयंसेवकों के सेवा-समर्पण पर! साधारण आर्थिक स्थितिवाले हरिभक्तों की दानराशि पर निर्भर रहकर! यहाँ का मैनेजमेन्ट अन्तर्राष्ट्रीय कुशल प्रबंधकों से नहीं, मात्र मध्यम वर्गीय हरिभक्तों द्वारा विशाल संस्था की सैकड़ों सेवा प्रवृत्तियों का संचालन हो रहा है।

इसीलिए श्रीमद् भागवत में भगवान के लिए प्रयुक्त शब्द 'कौशलम्' उनके व्यक्तित्व पर यथार्थ सिद्ध होता है।

स्वामीश्री की विभिन्न कुशलताओं को देखकर बड़े-बड़े मैनेजमेन्ट-गुरु भी आश्चर्यचकित रह जाते हैं। मात्र पाँच वर्ष में अक्षरधाम, 23 महीनों में लंदन तथा 17 महीनों में अमेरिका महाद्वीप के टोरन्टो, एटलान्टा, ह्युस्टन, शिकागो जैसे महानगरों में कल्पनातीत कलाकृतियों से अलंकृत भव्य मंदिरों का निर्माण कैसे हुआ?

अमेरिका और इग्लैण्ड में 'भारतीय सांस्कृतिक महोत्सवों' का अभूतपूर्व आयोजन, देश-विदेश में निरंतर हो रही सत्संगप्रवृत्ति की बहुआयामी सभाओं का संचालन, लाखों बालकों-युवकों की आंतरिक शक्ति को प्रेरित और विकसित करती विश्वस्तरीय बाल-युवा-प्रवृत्तियों का वहन किस प्रकार होता है? सैकड़ों मंदिरों के साथ-साथ शैक्षणिक संस्थानों, चिकित्सालयों तथा आपत्तिग्रस्तों के लिए राहत कार्य आदि का संचालन एक साथ कैसे संभव हो जाता है? लाखों भक्तों में स्वार्पण-समर्पण की दिव्य ज्योति कैसे प्रकट होती है?

कच्छ-गुजरात में भूकंप राहत का सेवाकार्य हो या दक्षिण में सुनामी राहत कार्य, सबकुछ अद्‌भुत आयोजन पद्धति द्वारा समाज के लिए उदाहरण कैसे बन जाता है?

इन जिज्ञासाओं का एक ही उत्तर है, 'स्वामीश्री का आध्यात्मिक कौशल्य!' अपने सहयोगियों में भी विशेष कौशल्य का सिंचन करने में उनका कौशल्य अनन्य है!

कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामीश्री अपने कौशल्य से एक साथ अनेक रूपों

देश-विदेश में निर्मित हो रहे विशाल मंदिरों के समग्र परिसर की प्लानिंग, जहाँ स्वामीश्री की दक्षता निपुण स्थपतियों को भी विस्मित कर देती है!

में व्यापक हैं। पिछले चार दशकों से प्रचंड पुरुषार्थ करके अपनी विलक्षण बुद्धि प्रतिभा से सामान्य शक्ति के साधारण मनुष्यों में उन्होंने असाधारण तेज:पुंज प्रकट किया है, जो आज संस्था की विराट प्रवृत्ति के ऊर्जा-केन्द्र बन चुके हैं।

यह उनका मानवसंसाधन कौशल्य है। साधारण स्तर के भक्तों-संतों में विश्वास का बीज अंकुरित करके उन्होंने कैसे दिव्य कार्य किए हैं? इस संदर्भ में कुछ ही उदाहरण प्रेरणा की ज्योति प्रकट कर देते हैं।

युवा संतों को प्रशिक्षित करके उनमें पूर्ण विश्वास रखकर, उनमें असाधारण क्षमताओं को प्रकट कर स्वामीश्री ने स्वच्छ और कार्यदक्ष संचालन का उदाहरण दिया है।

मंदिर निर्माण की शैली और उसकी कलापूर्णता में उन्होंने प्राचीन भारतीय शिल्प संहिता का जैसे पुन: अवतरण करवाया है! आनेवाले हज़ारों वर्षों तक भारतीय शिल्पकला, संस्कृति तथा वैदिक उपासना के मूल्यों का निदर्शन प्राप्त होता रहे, ऐसे मंदिरों के सृजन के लिए उन्होंने अपनी अद्‌भुत कला-कौशल्य को संतों और समर्पित स्वयंसेवकों में सर्जित किया है।

मंदिर के लिए उचित भूमि, सुयोग्य पत्थर की पसंद, निर्माण-कार्य के लिए स्थपति तथा कारीगरों की देखभाल आदि से लेकर मंदिर की असाधारण कला-नक़्क़ाशी, ठाकुरजी के भव्य सिंहासन, भगवान के गर्भगृह तथा निज मंदिर की आनुषंगिक व्यवस्था, ठाकुरजी की पवित्रता पूर्वक पूजा पद्धति, विधि-विधानों तथा कर्मकांड, उत्सवों तथा सदाव्रतों का प्रबंध, संतनिवास-सत्संगभवन-सभाखंड आदि के निर्माण एवं व्यवस्थापन में उनका अनुभवपूर्ण मार्गदर्शन सुननेवाले बड़े-बड़े कला विशेषज्ञ भी विस्मित हो जाते हैं। इसी कारण भारत में लुप्त होती जाती मंदिर निर्माण की कला में संस्था के युवक एवं कार्यकर्ता अत्यंत निपुण एवं परिपक्व बन चुके हैं! मंदिर में प्रतिष्ठित ठाकुरजी की मूर्ति को सुंदरतम एवं भावपूर्ण आकार देना उनकी ही कलारुचि को प्रतिबिंबित करता है, 'इस मूर्ति का एक कान थोड़ा ऊपर हो गया है।' 'इस मूर्ति का एक कंधा पतला दिखता है।' 'मूर्ति के मुख पर गाल को थोड़े उभारने चाहिए।'

प्रमुखस्वामी महाराज से मिलते ही ऐसा असाधारण अनुभव हुआ कि
मानो साक्षात् भगवान से मिलन हुआ हो! सर्वदा नम्र ! सबसे मृदु !
मेरे लिए यह कल्पनातीत है कि इतनी साधारण दृश्यमान शक्ति से
इतना भव्य कार्य कैसे फलित हुआ ! वास्तव में मुझे ऐसी कल्पनां ही नहीं करनी चाहिए;
क्योंकि सम्पूर्ण सादगी से ही ऐसे अद्‌भुत कार्य निष्पन्न होते हैं।
जैसे मौन से संगीत का जन्म होता है, उसी प्रकार सादगी से
अद्‌भुत चीजों का सृजन हो जाता है। इसीलिए स्वामीश्री मेरे हृदय को छू गए हैं!

- पूज्य स्वामी निखिलानंदजी महाराज

(चिन्मय मिशन)

उनके निर्देश के अनुसार जब कलाकार परिवर्तन करता है, तो मूर्ति का स्वरूप निखरने लगता है। कला की अपनी सूझ एवं समझ का विस्तार उन्होंने संतों की नयी पीढ़ी में भी किया है, जो आज बी.ए.पी.एस. संस्था के मंदिरों के लिए अद्‌भुत कलाकृतियों का सृजन करते हैं!

स्वामीश्री नूतन युग में पुरातन शैली के स्थापत्य को प्रस्थापित करनेवाले आधुनिक युग के विश्वकर्मा हैं। स्वामिनारायण अक्षरधाम जैसा विराट प्रकल्प हो अथवा विश्व के अनेक महानगरों के कलापूर्ण मंदिरों का सृजन हो, प्रत्येक पत्थर में स्वामीश्री का कला-स्पर्श चैतन्य का संचार कर देता है। मानो अभी-अभी पत्थर भी गीत गाने लगेंगे! स्थापत्य का प्रामाणिक मार्गदर्शन तथा समग्र संकुल के आयोजन में उनकी दक्षता देखकर बड़े-बड़े ऑर्किटेक्ट्स भी चकित रह जाते हैं।

दिल्ली में स्वामिनारायण अक्षरधाम का निर्माण करके उन्होंने एक सांस्कृतिक क्रान्ति ही कर दी है। गिनीज वर्ल्ड रेकॉर्ड्स बुक में 'विश्व के सबसे बड़े हिन्दू मंदिर' की ख्याति प्राप्त करनेवाले इस अद्वितीय परिसर ने भारतीय मंदिर परंपरा की तो परिभाषा ही बदल दी है। सांस्कृतिक गौरव के प्रत्येक पहलू को उन्होंने आध्यात्मिकता से जोड़कर उसका ऊर्ध्वीकरण किया है। भारत की प्राचीन विरासत का दर्शन कराने के लिए आधुनिकतम तकनीक का विनियोग किया है। ऐसा अपूर्व कौशल्य ही उनको जगद्‌गुरु के पद पर आरूढ़ कराता है। अपनी ऐसी ही कुशलता उन्होंने अपने संतों-युवकों के हृदय में प्रस्थापित किया है; जिससे हमारे सांस्कृतिक गौरव की विरासत के समर्थ वाहकों की एक नई पीढ़ी तैयार होती रहे!

आधुनिक युग में 'मृत:प्राय' भाषा कहकर जिसको गौरवहीन करने का प्रयत्न किया जाता है, ऐसी देवभाषा संस्कृत के प्रखर विद्वानों को तैयार करने की अग्रिमता स्वामीश्री ने दिखायी है। अपने संतों को व्यक्तिगत रूप से प्रोत्साहित कर उन्होंने संस्कृत विद्वानों का विद्वत्‌वर्ग तैयार किया है। इसी कारण न्याय, षड्‌दर्शन, साहित्य, पुराण आदि में पारंगत संतों का एक सक्षम विद्वत् वर्ग तैयार हुआ है। इसके उपरांत संप्रदाय के तत्त्वज्ञान को केन्द्र में रखते हुए श्रीमद् भगवद्‌गीता, उपनिषद् और ब्रह्मसूत्रों पर भाष्य रचने का उपक्रम भी तो अनन्य है! पिछले दो सौ वर्ष के संप्रदाय के इतिहास में, 'स्वामिनारायण

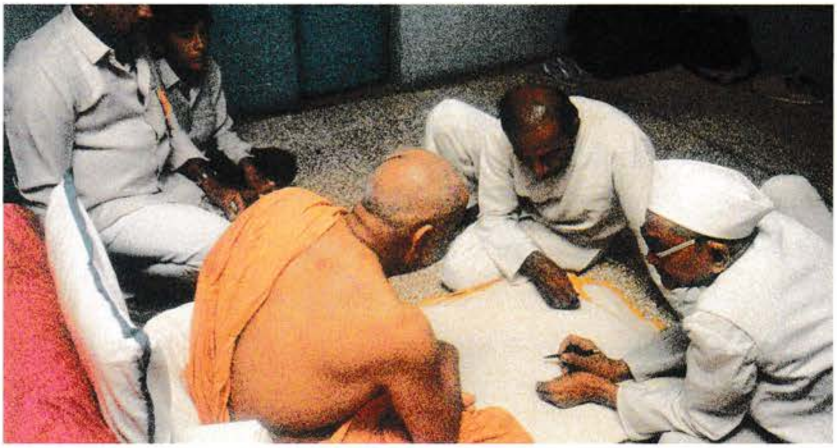

यह उनका सातत्यपूर्ण विचार है। इसलिए निरंतर कर्मठ रहते हुए भी वे कुशलतापूर्वक अकर्मण्य रह पाए हैं।

वेदांत दर्शन' में सद्‌गुरु गोपालानंद स्वामी के बाद, सर्वप्रथम प्रस्थानत्रयी पर सफल और परिपूर्ण भाष्य की रचना स्वामीश्री ने भद्रेशदास स्वामी जैसे विद्वान संत से करवाई! अन्य साहित्य सृजन में उनकी प्रेरणा निरन्तर बहती सुरसरि धारा की भाँति नवविद्वानों की फ़सल तैयार कर रही है। विभिन्न भाषाओं में प्रबुद्ध लेखकों और चिंतकों की साहित्यिक रचनाएँ आधुनिक प्रवाह के साहित्य में एक नई रोशनी फैला रही हैं।

वे संस्था के प्रत्येक प्रकाशन का आदि से अन्त तक का पाठ कर लेते हैं अथवा पाठ करवाकर इतिहास या सिद्धांत की दृष्टि से कहीं सुधार महसूस हो, तो तुरन्त संपादक संतों को निर्देशित करते हैं, जिससे वह प्रकाशन पूर्णता प्राप्त कर लेता है!

उनकी सृजनशीलता के कारण आज संस्था का प्रकाशन विभाग कलात्मक रूप से सतत श्रेष्ठ एवं मूल्य परक साहित्य प्रदान कर रहा है। परंपरागत भारतीय संगीत को भी उन्होंने सदैव प्रोत्साहित किया। वे स्वयं भले ही गायन-वादन में विशारद न हो, परन्तु गायन-वादन में कुशल संतों की एक विशाल श्रेणी उन्होंने तैयार कर दी है। तबलावादन, सितारवादन, वीणा-वादन, सरोदवादन, वंशीवादन, शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत आदि कलाएँ उन्होंने संतों के जीवन में विकसित की हैं और उन्हें प्रोत्साहित किया है। परंपरागत भजनों की लुप्त हो रही परंपरा को जीवंत रखने में आज उन्हीं के संतों का कौशल्य उपकारक सिद्ध हुआ है।

खेती और गो-पालन में स्वामीश्री की अनूठी सिद्धि है। हज़ारों किसान हरिभक्त स्वामीश्री के इस कौशल्य के प्रत्यक्ष साक्ष्य हैं। उन्होंने मंदिरों की विशाल जमीनों पर हो रही खेती स्वयं देखी है तथा कुशलतापूर्वक गो-धन की सुरक्षा की है। इस विषय में किसान भी उनसे मार्गदर्शन लेते हैं। संस्था में कृषि विशेषज्ञों ने टपक पद्धति द्वारा सिंचाई करके प्रेरक क्रान्ति की है। संस्था की गो-शालाओं के पशु राष्ट्रीय स्तर पर पशु मेले में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त करते हैं। ऐसी सिद्धियों में स्वामीश्री का सतत मार्गदर्शन कारणभूत है। संस्था की गोशालाओं तथा कृषि को स्वामीश्री ने वैज्ञानिक रूप दिया है, जो समग्र गुजरात में प्रेरणा का एक स्रोत बन गया है और विराट महोत्सवों का आयोजन तो वास्तव में अनन्य एवं अद्‌भुत!

उन्होंने सन् 1945 में मात्र 23 वर्ष की आयु में अपने गुरु शास्त्रीजी महाराज के 80 वें जन्मोत्सव का संचालन बोचासण में किया था। तत्पश्चात् एक के बाद एक विराट महोत्सवों का क्रम चलने लगा। हर समय महोत्सव का परिमाण बढ़ता ही रहा था। सन् 1961 में गढ़डा मंदिर में कलश जयंती महोत्सव, सन् 1965 में शास्त्रीजी महाराज जन्म

शताब्दी महोत्सव, सन् 1967 में योगीजी महाराज अमृत महोत्सव, सन् 1975 में योगी-स्मृति मंदिर उद्घाटन, सन् 1981 में भगवान स्वामिनारायण जन्म द्विशताब्दी महोत्सव, सन् 1985 में गुणातीतानंद स्वामी जन्म द्विशताब्दी महोत्सव, सन् 1985 एवं सन् 1991 में लंदन तथा अमेरिका में भारतीय सांस्कृतिक महोत्सव तथा अनेक शिखरबद्ध मंदिरों के महोत्सव, अन्तर्राष्ट्रीय बाल-युवा महोत्सवों आदि उत्सवों की लम्बी श्रृंखला! प्रत्येक उत्सव को स्वामीश्री ने नया रूप और आकार प्रदान किया है। स्वामीश्री के मार्गदर्शन में उत्सव कोई मेला नहीं, परन्तु लाखों लोगों को मूल्यों की शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन का पाठ सिखानेवाली महा विद्यापीठ ही बन जाती है!

नाच-गान और खाने-पीने के विलास को लोग उत्सव कहते हैं, परन्तु स्वामीश्री ने इसे सौम्य एवं सुसंस्कृत रूप प्रदान करके 'महोत्सव' बना दिया; जहाँ संस्कारों का संवर्धन होता है, दूषणों से रक्षा पाने की प्रेरणा मिलती है तथा आध्यात्मिक मूल्यों का सिंचन होता है। विशाल पैमाने पर आयोजित महोत्सवों में उन्होंने लोक शिक्षण की गंगा प्रवाहित करके उन्हें समाज सेवा का महान अध्याय बना दिया है।

समाज पर अचानक टूट पड़ी दैवी आपदाओं के समय, सहायता-कार्यों का संचालन कितना तीव्र और कुशलतापूर्वक होना चाहिए; विभिन्न प्राकृतिक प्रकोपों के समय स्वामीश्री ने इसका ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत किया है।

महाराष्ट्र अथवा गुजरात का भूकम्प हो, उड़ीसा अथवा दक्षिण के तटवर्ती प्रदेशों में आया विनाशक समुद्री तूफान-सुनामी हो, सौराष्ट्र में अकाल अथवा अमेरिका में केटरिना नामक भयंकर चक्रवात हो; स्वामीश्री ने सहायता-कार्यों के संचालन में संतों-स्वयंसेवकों को जोड़कर त्वरित गति से सहायता पहुँचाई है; जिससे सम्बंधित सरकारें भी अहोभाव से नतमस्तक हो जाती हैं। लाखों लाभार्थी स्वामीश्री का स्मरण करते ही गद्‌गद हो उठते हैं। विकट परिस्थितियों में घिरे लाखों लोगों को दी गई सहायता और सान्त्वना भला वे कैसे भूल सकते हैं! स्वामीश्री द्वारा दत्तक लिए गए आपदाग्रस्त गाँवों का पुनर्निर्माण होने के बाद समग्र राष्ट्र में आदर्श गाँव का राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त करके वे गाँव, एक उदाहरण बन चुके हैं।

एक 'चेरिटेबल' संस्था का अर्थ-तंत्र तथा उसका हिसाब-किताब आदि कैसे संचालित होना चाहिए, इसे स्वामीश्री से सीखा जा सकता है। गुजरात के चेरिटी कमिशनर इसके लिए सदैव स्वामीश्री की वंदना करते रहे हैं।

संस्था के चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स जब स्वामीश्री के पास संस्था के हिसाब-किताब का विवरण लेकर जाते हैं, तो सूक्ष्म दृष्टि डालते हुए स्वामीश्री किसी बिन्दु पर विनम्रतापूर्वक ऐसा असाधारण प्रश्न पूछ लेते हैं कि महीनों तक बौद्धिक कसरत करने के बाद भी उत्तर ढूँढ़ पाना विशेषज्ञों के लिए संभव नहीं हो पाता! 'लोगों द्वारा दी गई दान-राशि का एक-एक पैसे का सही हिसाब चाहिए।' - स्वामीश्री ने यह मंत्र, देश-विदेश में स्थित संस्था के हिसाबकर्ताओं के मस्तिष्क में स्थापित कर दिया है; फलस्वरूप संस्था में समर्पित एवं निष्ठावान हिसाबकर्ताओं की एक पीढ़ी तैयार हो गई है।

संस्था के कानूनी विशेषज्ञों को भी स्वामीश्री की अद्‌भुत सूझबूझ का अनुभव होता रहता है। उनका सदा यही आग्रह रहा है कि देश-विदेश में सम्बंधित सरकारी नियमों के अधीन प्रामाणिक एवं निष्ठावान रहकर ही संस्था का विकास होना चाहिए। संस्था की ऐसी

कानूनी पवित्रता एवं स्वच्छ हिसाब-किताब के कारण ही भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली के स्वामिनारायण अक्षरधाम को वैधानिक रूप से पूर्ण, शुद्ध तथा गढ़डा (गुजरात) में हो रहे विकास कार्यों को गुजरात उच्च न्यायालय ने विधि सम्मत कार्य घोषित किया है। इस प्रकार से स्वामीश्री के अगणित कार्यों, विभिन्न आयोजनों, असंख्य प्रकल्पों आदि में, उनकी प्रतिभा के विभिन्न आयामों का दर्शन होता है। कभी उनकी तीव्र विचारशक्ति, त्वरित एवं प्रखर निर्णयशक्ति, कभी उनका धैर्य और शौर्य, कभी कठिनाइयों के बीच उनकी पहाड़-सी अडिगता, कभी लोकहृदय का स्पर्श करनेवाली उनकी वत्सलता आदि के दर्शन होते रहते हैं।

विश्वव्यापी संस्था के मात्र संचालन में ही नहीं, अपितु लाखों हरिभक्तों के निजी व्यवहार में भी स्वामीश्री का कौशल्य झलकता रहता है। देश-विदेश में समृद्धियों की ऊँचाई पर पहुँचे हुए बड़े-बड़े उद्योगपति हों अथवा सामान्य स्तर के किसान, सभी अपने व्यावहारिक एवं आर्थिक समस्याओं में स्वामीश्री का मार्गदर्शन प्राप्त करके कुशलता हासिल करते हैं।

हमें स्पष्टरूप से समझना चाहिए कि ऐसा व्यावहारिक कौशल्य ही स्वामीश्री की सच्ची विशेषता नहीं है। वर्षों से स्वामीश्री के कौशल्य का निकट से अवलोकन करनेवाले संस्था के वरिष्ठ संत ईश्वरचरण स्वामी लिखते हैं, 'कदाचित् ऐसा कार्य कोई कर सकता है अथवा करवा सकता है, किन्तु लाखों मनुष्यों के मन को संभालकर, सभी को प्रसन्न रखते हुए, लेशमात्र के भी अहंभाव के बिना, ऐसे कार्यों को करने का महत्त्व ही अलग है। लाखों मनुष्यों को प्रेम से वशीभूत करके, प्रत्येक के मन का आपस में ताल-मेल बिठाकर, परस्पर पूर्ण आदर के साथ कार्यभार को उठाना और उसे लक्ष्य तक पहुँचाना, वास्तव में अति कठिन कार्य है। एकबार उनको इस दृष्टि से परखने के बाद हमें पार्थिव नेत्रों को मूँदकर, उन्हें अलख की आराधना करनेवाले ओलिया महापुरुष के रूप में देखेंगे, तो उनके अंतरंग स्वरूप में कितने ही सद्गुणों का सागर लहराता हुआ दिखाई देगा तथा वे हमेशा परमात्मा की प्राप्ति की मस्ती में संतुष्टि पानेवाले परितृप्त एवं पूर्णकाम महात्मा के रूप में दिखाई देंगे।'

"प्रमुखस्वामी महाराज के पास लोगों को प्रेरित करने की प्रचंड शक्ति है। बिना किसी आग्रह अथवा अभियान के, बिना किसी प्रचार के; यहाँ तक कि किसी को बिना कुछ कहे, एक महात्मा सहस्रों लोगों को ऐसा असाधारण सृजन करने के लिए प्रेरित कर सकता है, वह भी बिना किसी स्वार्थ के शांति और प्रेम के वातावरण में! इससे यही प्रतीत होता है कि स्वामीश्री में प्रेम, विवेक तथा भगवान का साक्षात्कार अवश्य होना चाहिए। ऐसी महान आत्मा में पर्वतों को हिलाने तथा संस्कृतियों को बदल देने की शक्ति होनी चाहिए।"

अमेरिकी सरकार के विश्वभर के डिप्टी चीफ ऑफ मिशन की श्रेष्ठ कार्यवाही के पारितोषिक विजेता श्री रोबर्ट ब्लेक दिल्ली में स्वामीश्री का दर्शन करने आए थे। भारत में उक्त मिशन का खर्च देख रहे यह तेजस्वी अधिकारी, अक्षरधाम परिसर देखकर अत्यंत प्रभावित हुए थे। उन्होंने कहा था, 'आप मात्र आध्यात्मिक गुरु ही नहीं, किन्तु कार्यकुशल लीडर भी हैं। मात्र पाँच वर्ष में हज़ारों को साथ में रखकर इतनी सुंदरता से कार्य सम्पन्न करना, यह सारा यश आप ही को है। हमें आप से बहुत कुछ सीखना है कि एक लीडर के रूप में हमें कैसे कार्य करना चाहिए।'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'यह सारी क्रेडिट भगवान को समर्पित है। उनके प्रताप और

आशीर्वाद से ही सभी कार्य सम्पन्न होते हैं। यहाँ आप जो भी शक्ति देख रहे हैं, वह भगवान की है और हमारे गुरु योगीजी महाराज के संकल्प की है।'

जूनागढ़ में 30 अगस्त, 2006 को ओर्थोपेडिक सर्जन डॉ. प्रशान्त छाया ने स्वामीश्री से पूछा, 'हम अपने अस्पताल में एक साथ पाँच रोगियों को भी अच्छी तरह मैनेज नहीं कर सकते हैं। आप इतनी बड़ी संस्था को कैसे मैनेज करते हैं?'

'भगवान करते हैं।' स्वामीश्री ने तीन ही शब्दों में उत्तर दे दिया।

'यह तो ठीक है, किन्तु निमित्त तो आप हैं न! आप कैसे मैनेज करते हैं?' डॉ. प्रशान्त ने पुनः पूछा। स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान को कर्ता मानने से प्रत्येक व्यक्ति को प्रेरणा मिलती है। हर एक में भगवान का निवास है और वे ही सभी कार्यों के प्रेरक भी हैं। प्रत्येक मुमुक्षु की महिमा समझकर, केवल भगवत्-प्रसन्नता के लिए भगवान को कर्ता मानकर हमें सेवा करते रहनी चाहिए और प्रतिदिन प्रार्थना करनी चाहिए कि मेरे प्रत्येक भाव शुभ रहे और भगवान सभी को कार्य करने की शक्ति प्रदान करें।'

26 दिसम्बर, 1998 को अहमदाबाद में, 'टोरेन्ट फार्मास्युटिकल्स' के मालिक यु.एन. महेता ने स्वामीश्री से कहा था, 'आप हमें उचित मार्गदर्शन दीजिएगा। अक्षरधाम का निर्माण करके आपने महान कार्य किया है। कितना मौलिक विचार और आयोजन!'

स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान ने प्रेरणा की, संतों ने पुरुषार्थ किया।'

'वह तो है, परन्तु आपके भक्तों में मैंने देखा 'यह काम मुझसे नहीं होगा' ऐसा दुर्बल विचार उनके जीवन में दिखता ही नहीं। आपके संतों में भी कई संत सुशिक्षित हैं एवं प्रत्येक प्रोफेशन के हैं। आप सबकुछ समय की माँग के अनुसार दे रहे हैं।'

स्वामीश्री ने कहा, ''भगवान ने शरीर दिया है, तो दूसरों का भला ही करना चाहिए। शरीर का मुख्य लाभ मोक्ष है। इस शरीर से जितना अधिक धर्म सम्बंधी कार्य हो, उतना कर लेना चाहिए। सत्संग से ही हमें सार-असार का विवेक होगा। भले ही हम संसार व्यवहार करते रहें, परन्तु 'सब कुछ छोड़कर चले जाना है।' ऐसा विचार दृढ़ रहना चाहिए।'' इस विचार के कारण ही वे कर्मठ रहते हुए भी कुशलतापूर्वक अकर्मण्य रह पाए हैं।

अमेरिका की वॉबॉश कॉलिज के 'तत्त्वज्ञान' के प्रोफेसर रेमंड विलियम्स ने स्वामीश्री से पूछा था, 'बाह्यदृष्टि से तो आपको संसार का अनुभव नहीं है, फिर भी आप हरिभक्तों की सांसारिक समस्याओं का समाधान कैसे करते हैं?'

स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान प्रेरणा देते हैं भगवान के पास हर बात का अनुभव है।'

'कभी ऐसा हुआ है कि पहले कुछ और जवाब दिया हो और बाद में लगे कि इससे अच्छा होता कि मैं दूसरा जवाब दिया होता?'

'नहीं। भगवान हमें उत्तर के लिए प्रेरणा देते हैं। वे भूत-भविष्य और वर्तमान को जानते हैं, अतः भक्त का अच्छा ही होगा। इसलिए हम कभी झिझकते नहीं।'

जी हाँ, स्वामीश्री के प्रत्येक निर्णय का मूल परमात्मा है। प्रत्येक कार्य का मूल परमात्मा है। प्रत्येक कौशल्य का मूल परमात्मा है। प्रत्येक सिद्धि का श्रेय परमात्मा को समर्पित है। इसीलिए वे स्थिर हैं, उनकी प्रज्ञा स्थित है। यह है उनकी विलक्षणता और यही है गीता-कथित कौशल्य की यथार्थ परिभाषा, 'योगः कर्मसु कौशलम्!' कर्ता होते हुए भी अकर्ता रहकर, परमात्मा में अनुराग पूर्वक मन को लुब्ध रखना - यही कौशल्य है, यही योग है। भौतिक और पराभौतिक दोनों कौशल्ययोग के दर्शन स्वामीश्री में होते हैं। ◆

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

धैर्यम् स्थैर्यम् प्रागल्भ्यम् सह

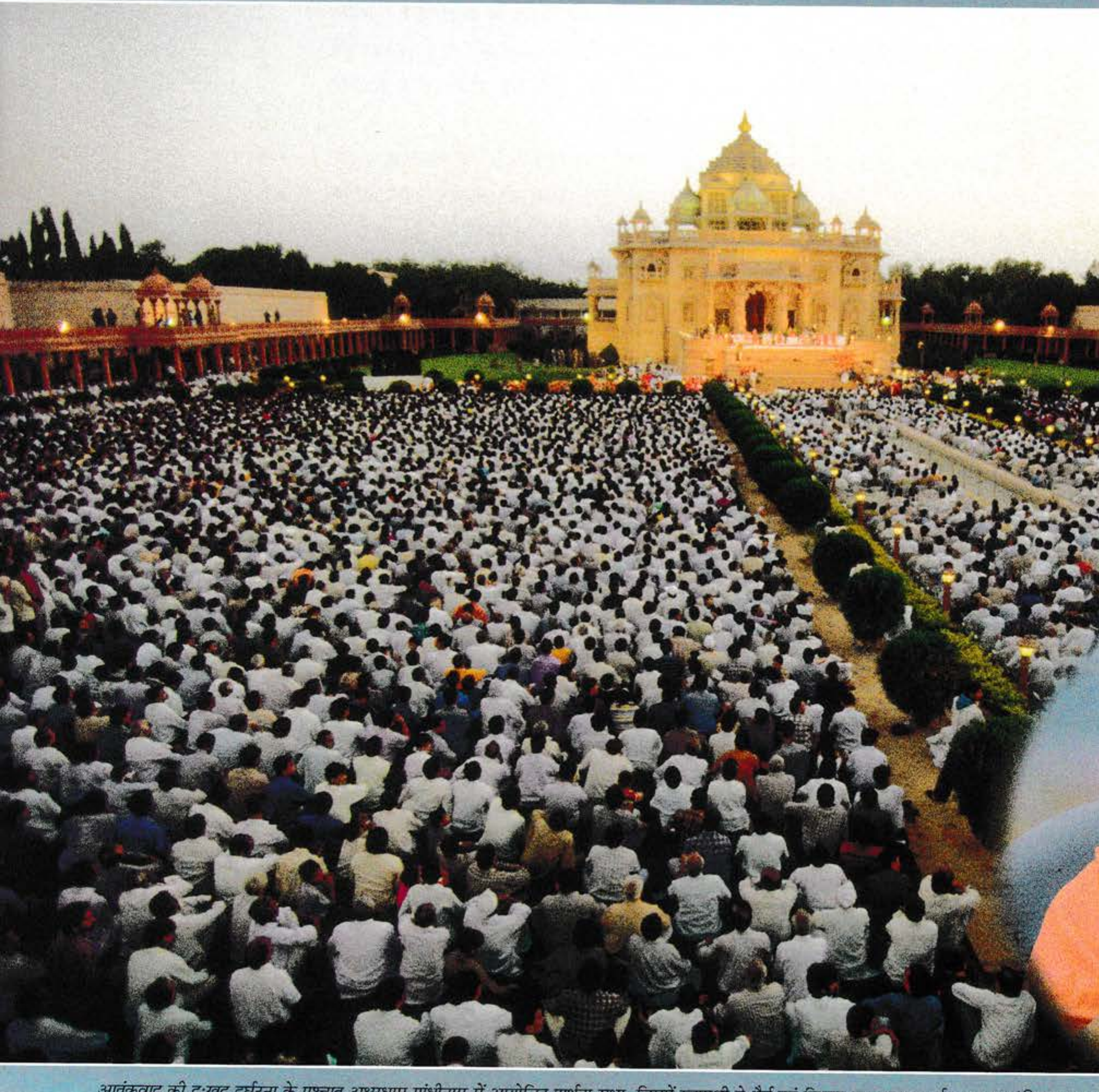

आतंकवाद की दुःखद दुर्घटना के पश्चात् अक्षरधाम गांधीनगर में आयोजित प्रार्थना सभा, जिसमें स्वामश्री ने धैर्य एवं स्थिरता का अद्भुत दर्शन कराया। (सितम्बर, 20

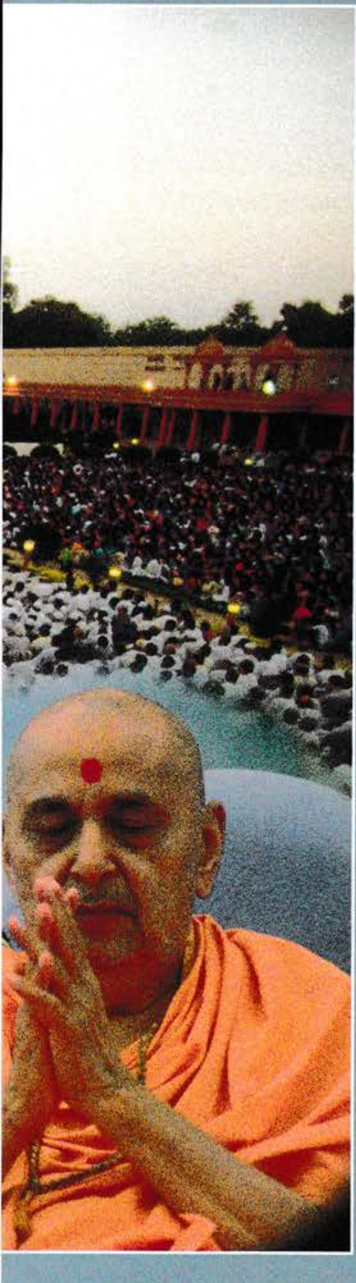

धैर्यम् अर्थात् धीरज।
स्थैर्यम् अर्थात् व्याकुल कर देनेवाली घटनाओं में भी मन की स्थिरता।
सहः अर्थात् भक्तों के लिए कष्ट सहन करना।
प्रागल्भ्यम् अर्थात् परिपक्वता, परिपूर्ण होते हुए भी गंभीरता।
जो समर्थ एवं सर्व शक्तिमान हैं, जिनमें धैर्य तथा ऐश्वर्य हैं,
शक्ति और प्रखर तेज भी है, ऐसे परमात्मा के गुणों का
जिनमें दर्शन होता है, ऐसे संत परमात्मा के गुणातीत संत होते हैं,
उन्हीं के पास परमात्मा की ऐसी विलक्षणता होती है।

समर्थ होते हुए भी धीरज रखना, शूरवीर होते हुए भी शान्त रहना,
ज्ञान होते हुए भी गंभीर रहना, ऐश्वर्य होते हुए भी दिखावा न करना,
आपत्तियों में घबड़ाहट नहीं, आपदाओं में उत्तेजना नहीं,
संघर्ष के समय स्थिरता तथा आक्षेपों के बीच भी गंभीरता,
यही स्वामीश्री की विशिष्टता है। विकट परिस्थितियों एवं विभिन्न संघर्षों के बीच भी उनकी स्थिरता-धीरता महा आश्चर्य है। गांधीनगर-अक्षरधाम पर हुआ आतंकवादी हमला हो या हृदय की बायपास सर्जरी हो, वे हमेशा पर्वत की भाँति अविचल रहते हैं।

समुद्र का परिचय उसकी लहरें नहीं; अंतराल में स्थित उसकी गंभीरता है। स्वामीश्री का परिचय, उनकी निश्रा में संचालित विविध प्रवृत्तियाँ नहीं, परन्तु स्वामीश्री के हृदय की धीरता-स्थिरता और गंभीरता है।

मनुष्य के धैर्य अथवा स्थिरता की परीक्षा रोज़-रोज़ नहीं, कभी-कभी होती है। स्वामीश्री इसके अपवाद हैं। उनके धैर्य की परीक्षा प्रतिक्षण होती रहती है। यदि किसी को धैर्य का पाठ सीखना हो, तो स्वामीश्री का दैनिक जीवन एक गुरुकुल के समान है। वे भले ही मौन रहें, परन्तु उनके जीवन का अल्प निरीक्षण भी हमारे हृदय के तारों को झनझना देता है।

स्वामीश्री के धैर्य का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है, उनके पास आनेवाले दर्शनार्थियों को दिया जानेवाला समय। प्रतिदिन सैकड़ों लोग उनसे मिलकर अपने दु:ख और परेशानियों से मुक्त हो जाते हैं, आशीर्वाद एवं आत्मबल प्राप्त करके प्रसन्नचित्त हो धन्य बन जाते हैं। हम जानते हैं कि मानव प्रतिक्षण बदलता रहता है, समस्याएँ भी समय के साथ परिवर्तित होती रहती हैं, नई उलझनें और जटिलताएँ घेर लेती हैं; ऐसे हताश लोगों को स्वामीश्री धैर्यपूर्वक सुनते हैं। चलते-चलते या भोजन के समय भी मुलाकातें चालू रहती हैं, सभागृह

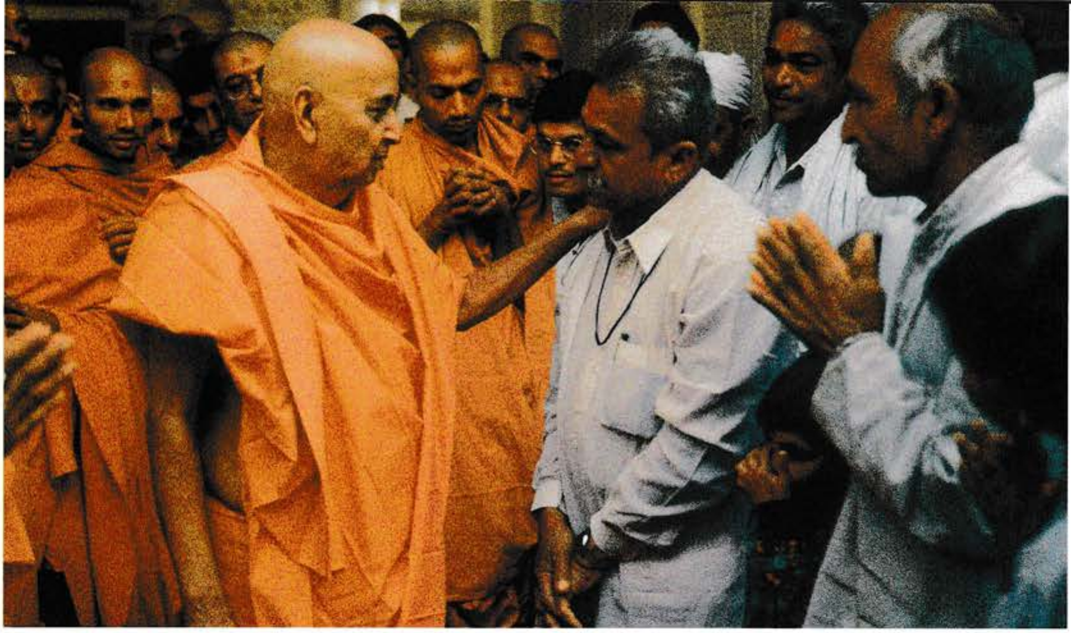

इतने सारे लोगों की इतनी सारी समस्याएँ नित्य-प्रति सुनना और प्रतिदिन उन सबका निर्णय देना! किन्तु कभी भी स्वामीश्री विचलित नहीं होते...

हो या विश्रामकक्ष, प्रात:काल हो या चिलचिलाती दोपहरी, देर रात का समय हो अथवा ट्रेन या प्लेन में यात्रा-प्रवास, उनकी मुलाकातों का दौर रुकता ही नहीं! अब विश्राम के समय भी फोन द्वारा लोगों से उनका संपर्क चालू रहता है!

इतने लोगों की समस्याएँ रोज-रोज सुनना, उस विषय पर संतोषजनक निर्णय देना, सूक्ष्म उलझनों में भी नित्य-प्रति रुचि रखना; इससे व्याकुलता नहीं होती? नहीं! कभी नहीं।

एकबार धारी गाँव में स्वामीश्री स्नान करके निकले कि उसी समय एक भक्त ने आकर कहा, 'स्वामीजी! मुझे आपसे कुछ कहना है।' स्वामीश्री को सभा में शीघ्र पहुँचना अनिवार्य था, किन्तु वे उसी जगह सीढ़ी पर बिना कुछ बिछाये बैठ गए। शौचालय के पास अंधेरी-गंदी सीढ़ियाँ तथा दुर्गन्धयुक्त माहौल में भी स्वामीश्री ज़ीने पर बैठकर लगातार पंद्रह मिनट तक उसकी बातें सुनते रहे और उसकी समस्याओं को सुलझाते रहे।

कभी-कभी दर्शनार्थियों की संख्या इतनी बढ़ जाती है कि कैसा भी धैर्यवान हो, उसका धैर्य टूट जाए! यह कोई एक-दो दिन या एक-दो सप्ताह का मामला नहीं है; पिछले 40 वर्षों से नित्य-प्रति वे इतने ही लोगों की समस्याएँ सुनते रहे हैं! न तो एक दिन की छुट्टी न कभी विश्राम ! कठिन से कठिन बीमारी के समय भी अपवाद स्वरूप कोई न कोई व्यक्ति मिलने हेतु आ ही जाता! हृदय की 'बायपास सर्जरी' के बाद स्वामीश्री होश में आए ही थे कि अस्पताल के कमरे में अटेन्डेन्ट मि. राबर्ट, स्वामीश्री से मिलने आ पहुँचे और बोले, 'स्वामीजी! मेरी समस्या सुनिये और आशीर्वाद दीजिए, मैं जहाँ चाहता हूँ, वहाँ मेरा विवाह हो जाए।' ऐसी स्थिति में भी राबर्ट के लिए स्वामीश्री ने आशीर्वाद दिया!

मुलाकात के समय भाँति-भाँति के लोगों की भिन्न-भिन्न प्रकृति, अलग-अलग समस्याएँ, जिन्हें सुनकर सामान्य व्यक्ति पागल हो जाए! ब्रिटेन के राजकुमार से लेकर गाँव के एक अनपढ़ किसान तक, क्षण-प्रतिक्षण पूरा परिप्रेक्ष्य बदलते रहने के बावजूद, स्वामीश्री सभी को धैर्यपूर्वक सुनते हैं और मार्गदर्शन के साथ आशीर्वाद प्रदान करते हैं!

दशकों से उनके पास गंगा-प्रवाह की भाँति आनेवाले पत्रों में भी यही स्थिति है!

जीवन की मूलभूत समस्याओं के साथ ही, कुछ पत्र ऐसे भी होते हैं, जिनसे क्षणमात्र में मनुष्य व्याकुल हो जाए, किन्तु स्वामीश्री के जीवन में व्याकुलता का कोई स्थान ही नहीं!

5 मार्च, सन् 2006 को अहमदाबाद में स्वामीश्री को लंदन स्थित एक संत ने पूछा, 'बापा! आप क्या कर रहे हैं?'

'पत्र पढ़ रहा था, तभी आपका फोन आया।'

'आपने जिन्दगीभर यही किया और लोगों की समस्याएँ सुलझाईं!'

'इसमें भी तो भगवान का भजन होता है न!'

'मैं तो घबरा जाता हूँ, लोग पत्रों में कैसे-कैसे प्रश्न लिखते हैं!'

'आपको घबड़ाहट होती है? भगवान के कार्य में घबराहट नहीं होनी चाहिए।' स्वामीश्री ने कहा।

'मेरा तो मस्तिष्क ही जाम हो जाता है।'

'ऐसा नहीं सोचना चाहिए, हमें तो सुख या दु:ख में धीरज के साथ अपनी सेवा चालू ही रखनी है।' यही है उनका जीवनमंत्र : कैसी भी परिस्थितियों में निर्भयता के साथ हाथ में लिया हुआ कार्य समाप्त करना!

सन् 2006 के मार्च महीने में स्वामीश्री सारंगपुर में विराजमान थे। उनकी आँखों में भारी इन्फेक्शन हो गया था। दर्द के कारण सूजन आ गई थी। डॉक्टरों ने एक आँख पर पैड बांधकर दूसरी आँख के लिए काला चश्मा पहनने की हिदायत दी थी। फिर भी स्वामीश्री हरिभक्तों से मिल रहे थे। स्वामीश्री को एक महत्त्वपूर्ण पत्र पढ़कर निर्णय लेना था। जितनी बार वे पत्र हाथ में लेते कि कोई न कोई आ जाता था। स्वामीश्री धीरजपूर्वक सभी को मिलते रहे। आधे घंटे के बाद उनको पत्र पढ़ने का अवसर मिला। फिर मुलाकात एवं भोजन के पश्चात् बोटाद के 101 भाविकों से स्वामीश्री ने मुलाकात की, जिनमें अधिकांश लोग सत्संगी नहीं थे। उनके जाते ही स्वामीश्री ने बाक़ी पत्रों को पढ़ लेने की इच्छा प्रकट की। सेवक संत ने कहा, 'आँखों में कष्ट हो रहा है, फिर भी आप रुकते ही नहीं!'

'यदि उस काम को निपटाया नहीं गया, तो लोगों के पत्र वैसे भी थोक के थोक आते ही रहेंगे और बोझ बढ़ता जाएगा। इससे तो अच्छा है कि बाक़ी पत्र हमें आज ही पढ़ लेना चाहिए।' स्वामीश्री ने पत्र मंगवा लिए। सेवक धर्मचरण स्वामी ने सोचा कि पत्र पढ़ने से स्वामीश्री की आँखों में दर्द बढ़ सकता है, इसलिए मैं पत्र का सारांश कहता चलूँ। किन्तु स्वामीश्री ने कहा, 'आप पूछते जाइये और एक-एक पत्र मुझे देते भी जाइये।' इस प्रकार डेढ़ घंटे तक लगातार पत्र-पठन का क्रम जारी रहा।

दूसरे दिन भी एक लंबा, अस्पष्ट एवं जटिल पत्र पढ़ने में स्वामीश्री को अत्यधिक परिश्रम उठाना पड़ा। ब्रह्मविहारीदास स्वामी ने कहा, 'आपकी आँखों में सूजन होने पर भी आप पत्र पढ़ रहे हैं!'

'आज तो केवल एक ही पत्र पढ़ा गया। जैसे ही पत्र को हाथ लगाता हूँ कि कोई न कोई मिलने के लिए आ जाता है, इसीलिए समय नहीं मिलता।'

ब्रह्मविहारीदास स्वामी ने कहा, 'पर आप पढ़ने का कष्ट ही क्यों कर रहे हैं?'

'भाई! हरिभक्त ने कितने प्रेम से लिखा होगा और कितना परेशान हुआ होगा! इसीलिए

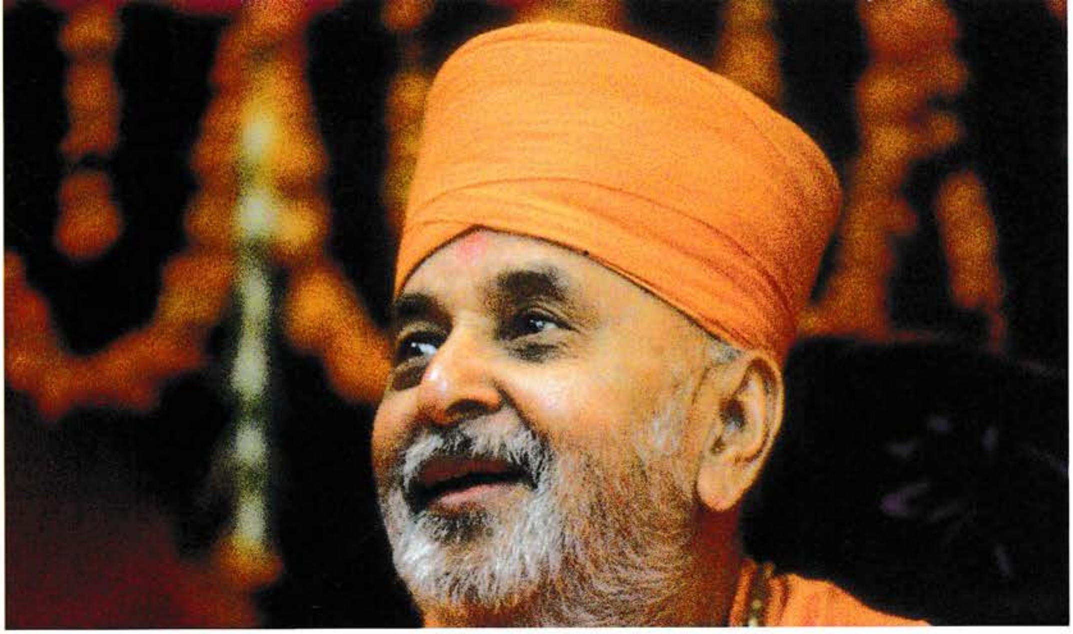

हमें पढ़ना तो पड़ेगा न !' स्वामीश्री ने कहा।

कभी-कभी तो पत्र पढ़ लेने के बाद पता चलता है कि उसमें कोई तथ्य ही नहीं, किन्तु सभी की भावनाओं का मान रखते हुए स्वामीश्री उस पत्र की उपेक्षा नहीं करते।

मुलाकात के समय भी कुछ ऐसे ही प्रसंग उपस्थित होते रहते हैं। जहाँ ब्रह्म-परब्रह्म के दिव्य ज्ञान के डंके बज रहे हों, ऐसे सात्त्विक वातावरण में अति क्षुद्र बातें करनेवाले लोगों को देखकर भी स्वामीश्री के मुख पर खिन्नता के चिह्न नहीं उभरते।

सूरत में 24 अप्रैल, 1955 को एक 78 वर्षीय वृद्ध ने आकर कहा, 'स्वामीजी, मैं आपसे शिकायत करने आया हूँ।'

'कहिए, क्या शिकायत है?'

'भगवान ने मेरी पत्नी को मुझसे पहले ही क्यों उठा लिया?'

स्वामीश्री ने धीरे से कहा, 'वह आपसे पहले भगवान के पास पहुँची, तो क्या बुरा हुआ? उसे अखण्ड सौभाग्यवती कहा जाएगा!'

'लेकिन उसने अस्पताल में अंतिम बार मुझे याद किया था, किन्तु मेरे पहुँचने से पहले ही वह चल बसी! इसमें तो मैं आपका दोष मानता हूँ, क्योंकि आपको उसे जिन्दा रखना था!' वह बुजुर्ग वास्तव में आवेश में आकर बोल रहा था।

स्वामीश्री ने कहा, 'भाई, भगवान जो भी करते हैं, वह हमारे भले के लिए करते हैं।'

'लेकिन स्वामीजी, मेरा क्या अपराध है कि मेरी ही इच्छा फलीभूत नहीं हुई? फाँसी के फंदे पर लटकनेवाले की इच्छा भी फाँसी को रोककर पूरी की जाती है, तो मेरी पत्नी की मुझे मिलने की इच्छा आपने क्यों पूरी नहीं की?'

'आप इसकी चिन्ता मत करें। वह भगवान की भक्त थी, अत: धाम में ही पहुँचीं...।'

'वहाँ तो मैं भी जानेवाला हूँ...!'

'बस, तो वहाँ आपको उनका सम्पर्क हो जाएगा!'

'नहीं, ऐसा नहीं... आपने उसे मुझसे पहले क्यों ले लिया?'

स्वामीश्री ने वृद्ध को शान्तिपूर्वक समझाते हुए कहा, 'देखो भाई, पत्नी की मृत्यु पहले

होने से उसका भला ही हुआ है, नहीं तो उसे वैधव्य भोगना पड़ता, उसमें कितने दुःख!' स्वामीश्री तो समझा रहे थे, परन्तु वह सोचने के लिए तैयार ही नहीं था। ऐसे लोगों से भी बिना परेशान हुए स्वामीश्री शान्तचित्त रहकर उनको संतुष्ट करते हैं।

लगभग 55 साल की उम्र का एक ज्योतिषी स्वामीश्री के पास आया, 'स्वामीजी! मेरा विवाह होगा कि नहीं?'

'अब? इस उम्र में!'

'रसोई वगैरह में तकलीफ पड़ती है।'

'ठीक है, तो विवाह कर लेना।'

'किसके साथ? वीणा अथवा नयना के साथ? यहीं होगा कि मुंबई में होगा?'

एक विश्ववंदनीय महापुरुष, एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था के अध्यक्ष तथा आध्यात्मिक मूल्यों के शिखर पर विराजमान संत के पास क्या ऐसे प्रश्नों को सुनने का धैर्य हो सकता है? एक ही स्थान पर बैठकर लगातार चार सौ से अधिक दर्शनार्थियों से मिलना, उनकी जटिल समस्याओं को समझना तथा मार्गदर्शन देना, उनके लिए प्रार्थना करना, कितने धैर्य और स्थिरता की अपेक्षा की जा सकती है?

अहमदाबाद में लगातार एक महीने से भी अधिक समय तक ऐसी मुलाकातों का कठिन दौर चला, तब ईश्वरचरण स्वामी को महसूस हुआ : 'स्वामीश्री कितना अधिक परिश्रम झेल रहे हैं !' उन्होंने स्वामीश्री से कहा, 'इस उम्र में आप कितना कष्ट उठाते हैं!'

स्वामीश्री ने धीरे से कहा, 'सभी को कथावार्ता का आनंद मिला, विशाल सभागृह बन गया, तो लोग भी उतने ही उत्साह से आए और सभी दर्शन-प्रवचन से बहुत संतुष्ट हुए।'

ईश्वरचरण स्वामी ने कहा, 'स्वामीजी! हरिभक्तों की मुलाकातों का तो कोई अंत ही नहीं है। अब तो इस पर रोक लगा देनी चाहिए। आपको भाँति-भाँति के प्रश्न सुनने पड़ते हैं। दूसरा कोई आपके स्थान पर हो, तो सप्ताह भर में पागल हो जाए, इतने प्रश्न आते हैं। महर्षि अरविंद लोगों से मिलते नहीं थे; अन्य कितने धर्मगुरु भी लोगों से सीधा संपर्क नहीं रखते।'

स्वामीश्री ने उत्तर में केवल इतना ही कहा, 'लोगों के कुछ प्रश्न तो प्रश्न जैसे होते ही नहीं। यदि खुद ही थोड़ा विचार करें, तो समस्या सुलझाई जा सकती है। फिर भी उनके संतोष के लिए सुनता हूँ।'

दूसरों की संतुष्टि के लिए स्वामीश्री के हृदय में कितना धैर्य है!

एक ही विषय पर घंटों तक मीटिंग चलती रहती है, कभी-कभी तो एक ही व्यक्ति, एक ही विषय पर अनेक बार विचार-विमर्श के लिए आता रहता है। कोई मुमुक्षु अपने परिवार-जनों के साथ असमय आ पहुँचता है। स्वामीश्री अन्य जरूरी विचार-विर्मश या प्रवृत्तियों में व्यस्त होते हुए भी बड़े धैर्य के साथ उस व्यक्ति पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं।

न जाने कितनी पारिवारिक समस्याएँ, व्यक्तिगत परेशानियाँ, आध्यात्मिक विचार-विमर्श, सामाजिक जटिलताएँ तथा संस्था सम्बंधी समस्याएँ इत्यादि में स्वामीश्री समय-असमय को देखे बिना सभी को धैर्य से सुनते हैं। जैसे वे अपने परिवारजनों के मुखिया हों। अपने दो कानों में उन्होंने हज़ारों कानों की क्षमता का दर्शन करवाया है।

18 अगस्त, 1998 को न्युयॉर्क के वेस्ट चेस्टर में स्वामीश्री के साथ एक गोष्ठी में

कुछ उदाहरण देते हुए विवेकसागरदास स्वामी ने कहा, '90 प्रतिशत शक्ति तो लोगों को समझाने और उनकी नासमझी को दूर करने में ही व्यय होती है, जबकि मात्र 10 प्रतिशत ही काम की बातें किया करते हैं। ऐसा कैसे चलेगा?'

स्वामीश्री ने कहा, '90 प्रतिशत ऐसा व्यय होता है, तभी हमारा 10 प्रतिशत काम हो पाता है और काम करने का यही तरीका है!'

विवेकसागरदास स्वामी ने पूछा, 'कभी मन में ऐसा विचार नहीं आता कि कहीं एकांत में जाकर माला पकड़कर बैठ जाना चाहिए?'

स्वामीश्री ने कहा, 'मन उस प्रकार विचलित न हो, उसी को ब्रह्मस्थिति कहते हैं।'

बारडोली में रात्रि को लगभग 10.30 बजे एक लम्बी मीटिंग समाप्त हुई। स्वामीश्री विश्राम हेतु उठे। डॉ. किरणभाई दोशी ने कहा, 'आपने मीटिंग में मेरी इतनी सारी बातें सुनीं, तो उठने के बाद इसका कोई बोझ आपके सिर पर...' उनका कहना पूरा भी नहीं हुआ था कि स्वामीश्री ठठाकर हँस पड़े। हाथ ऊपर उठाकर उन्होंने कहा, 'जय स्वामिनारायण... हमें किसी प्रकार का बोझ नहीं लगता। क्योंकि हम यह सब कुछ सिर पर रखकर नहीं चलते...। सर्वकर्ता एक परमात्मा हैं, ऐसा मानकर सो जाना। जो कुछ भी हुआ, सब कुछ भूलना है और कल की बात... कल।'

अपने दैनिक जीवन एवं सेवा प्रवृत्ति में सूर्य-चंद्र की भाँति निरंतर जागरूक एवं कर्मठ रहते हुए स्वामीश्री ग़ैर जिम्मेदार तथा अव्यवस्थित लोगों के साथ काम करते हुए भी अपना धैर्य नहीं खोते! किसी को कभी-कभी उलाहना भी देते हैं, पर अपनी स्थिरता नहीं खोते! उसे शिक्षा देते हैं, जीवन विकास के लिए प्रेरणा प्रदान करते हैं, उसकी भूलों को क्षमा करते है। इन कार्यों के लिए स्वामीश्री के पास अपार धैर्य है!

अपमानों तथा विरोधों के बीच स्वामीश्री की स्थिरता का विशिष्ट परिचय मिलता है! मानवता की सेवा करने में जिन्होंने अपने रक्त की एक-एक बूँद को निचोड़ा है; अपने अस्तित्व का एक-एक कण परमार्थ हेतु व्यय किया है; व्यक्तिगत आनन्द उठाने के लिए जिनके पास जीवन का एक भी क्षण नहीं, ऐसे महापुरुष को भी अपमानों एवं क्षुद्र विरोधों को सहन करना पड़ता है!

कदाचित् कोई अपने आसुरी स्वभाव के कारण अपनी क्षुद्र मनोवृत्ति प्रदर्शित करे, ऐसे

'एकाएक अक्षरधाम पर टूट पड़े भयानक संकट की जानकारी होते ही
हृदय को गहरा आघात लगा है।
आप पर क्या बीती होगी, यह कल्पना से परे है;
क्योंकि आप स्थितप्रज्ञता के सर्वोच्च शिखर पर विराजमान संत हैं।
आपके पास सहानुभूति प्रकट करने हेतु
आनेवाले हरिभक्तों की आँखों से आँसू थमते ही नहीं।
आप उन्हें सांत्वना प्रदान करते हैं,
यह आपके संतत्व की पराकाष्ठा कही जाएगी।'

- जैनाचार्य श्री चंद्रशेखर विजयजी

अवसरों पर स्वामीश्री का धैर्य पर्वत की भाँति अविचल रहता है। कभी-कभी सोचना पड़ता है कि उनके पास वज्र का हृदय तो नहीं?

सन् 1980 में कुंकावाव गाँव में विश्वविहारीदास स्वामी ने ऐसे ही संदर्भ में स्वामीश्री से पूछा था, 'आप इस तरह कहाँ तक सहन करेंगे?' स्वामीश्री ने सहजतापूर्वक कहा था, 'देवकी-वसुदेव, भगवान श्रीकृष्ण के माता-पिता थे, फिर भी उनके जीवन में आँसू कहाँ रुके थे? इसलिए ऐसा तो चलता ही रहता है...!'

ऐसे अवसरों पर स्वामीश्री एक ही बात दोहराते हैं, ''यदि हम सत्य और अच्छाई के रास्ते पर चलते हैं, तो बिना कष्ट के दिन नहीं जाते। कष्ट झेलना सच्चाई के रास्ते पर चलने के लिए अनिवार्य है। 'भले कामों में सौ विघ्न' ऐसी कहावत यूँ ही नहीं कही गई। अच्छे काम करते हुए चाहे कितने ही विघ्न आते रहे, हमें पीछे नहीं हटना चाहिए।'' इतना कहकर वे अपने गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज एवं योगीजी महाराज के झेले हुए कष्टों का स्मरण अवश्य करते हैं।

25 जुलाई, 2006 को डॉ. बी.आर. पटेल से बात करते हुए स्वामीश्री ने कहा था, 'शास्त्रीजी महाराज के जीवन में महान आत्मबल का दर्शन होता था। वे एकबार जो निश्चय कर लेते थे, तो चाहे कितने भी विघ्न क्यों न आएँ, वे अपने रास्ते पर आगे ही बढ़ते थे। एक सुभाषित उनके लिए जीवनसूत्र बन गया था कि 'कुछ लोग कार्य प्रारंभ करने के पूर्व बार-बार विचार करते हैं और बाद में काम छोड़ देते हैं, उन्हें कनिष्ठ कहते हैं; कुछ लोग कार्य तो आरंभ करते हैं, किन्तु विघ्न आने पर छोड़ देते हैं, ऐसे लोग मध्यम प्रकार के होते हैं और जो लोग बार-बार विघ्न आने पर भी प्रारंभ किए गए कार्य नहीं छोड़ते, उन्हें उत्तम पुरुष कहते हैं। शास्त्रीजी महाराज के उपासना-प्रवर्तन के कार्य में न जाने कितने विघ्न उपस्थित हुए थे, जिनकी कोई गणना ही नहीं!

गाँव, समाज तथा देश में अच्छे कार्य करने के मार्ग में रोड़ा डालनेवाले लोग मिल ही जाते हैं। इसके मूल में ईर्ष्या और द्वेष है। ऐसा विरोध करनेवाले उन दिनों असंख्य लोग थे। वे स्वामीश्री तथा संतमंडल को अपने गाँवों में प्रवेश तक नहीं करने देते थे। यदि स्वामीश्री वहाँ पहुँच भी गए, तो सभी मारपीट तक करने को तैयार रहते थे; उस समय शास्त्रीजी महाराज अपने अनुयायियों से इतना ही कहते थे कि भगवान हमारे साथ हैं, हमारा अच्छा

ही होगा। इसी निष्ठा-बल से बोचासण में भव्य मंदिर का निर्माण हो पाया।'

स्वामीश्री भी अपने गुरु के पदचिह्नों पर चलते हुए अत्यंत विपरीत परिस्थितियों में भी अपने मन को स्थिर रखते हैं।

एक व्यक्ति ने स्वामीश्री के पवित्र सेवा-कार्यों में विघ्न डालने के लिए झूठी अफवाहें उड़ाकर अत्यंत ही घिनौना प्रयास किया। उससे क्षुब्ध होकर एक भक्त ने स्वामीश्री से कहा, 'वह दो टके का आदमी, आपसे ऐसा दुर्व्यवहार करे, यह असह्य है। आप उस पर अपने ऐश्वर्य का प्रयोग क्यों नहीं करते? शास्त्रीजी महाराज की प्रार्थना से राज्य-शासन तक पलट गया था, आप भी वैसा ही करें।'

स्वामीश्री ने कहा, 'उतावला सो बहावरा, धीरा सो गंभीर। भगवान और संत धैर्य एवं विचारपूर्वक कार्य करते हैं। उनकी सहनशक्ति भी बड़ी है और उनका मन भी बड़ा है!'

'किन्तु स्वामीजी!' उस भक्त ने कहा, 'शास्त्र में कहा गया है कि भक्त-द्रोही मनुष्य के पुण्य का तुरन्त विनाश हो जाता है। लेकिन यहाँ तो ऐसा दिखाई पड़ता है कि द्रोही और पापी लोग ही भले-चंगे घूम रहे हैं!'

स्वामीश्री ने कहा, 'भले ही घूमते रहें, हृदय में आग भड़काए हुए घूमने से क्या लाभ है?' पलभर मौन रहकर वे पुनः बोले, 'श्रीजी महाराज, शास्त्रीजी महाराज, योगीजी महाराज, परमहंसों तथा संतों ने अपने विपरीत समय में अपार धैर्य रखा है। उसी प्रकार से हमें भी धीरज से ही काम लेना होगा। योगीजी महाराज बुरा समय आने पर हमेशा कहते थे कि माला फेरो, नामधुन करो, उसी प्रकार से हमें भी करना है। अपना तो व्यवसाय ही यही है। प्रचंड विरोध होने पर भी शास्त्रीजी महाराज ने विरोधियों के सिर पर अपने दिगंतव्यापी कार्य का कील ठोंक दिया। उसी तरह धीरज से और भगवान की इच्छा से सारा काम अवश्य संपन्न होगा।'

जुलाई, सन् 1998 में न्यूयॉर्क में जशभाई पटेल ने कहा, 'स्वामीजी, हमें यह समझ में नहीं आता कि भक्तों पर ही क्यों दुःख आते रहते हैं? उन्हीं को सहन करना पड़ता है!'

स्वामीश्री ने कहा, 'सत्य की राह पर चलनेवाले को सहन करना ही पड़ता है और भगवान उन्हें सहन करने की शक्ति भी देते हैं। योगीजी महाराज को तो अंदरवालों और बाहरवालों दोनों ओर से सहन करना पड़ा। तंजानिया में एक-एक पोस्ट बोक्स में एक विद्रोही ने योगीबापा के विरुद्ध काल्पनिक बुराइयाँ लिखकर रख दी थीं। 'बंडखोर' (विद्रोही) आदि शब्दों का प्रयोग किया गया था, किन्तु जब इस बात की उन्हें जानकारी दी गई, तो उन्होंने केवल इतना कहा कि हमें कोई प्रतिकार नहीं करना है।'

यह सुनकर सी.पी. पटेल ने कहा, 'स्वामीजी! ऐसे समय में मेरा तो दिमाग ही खराब हो जाता है कि मैं अभी जाकर कुछ कर डालूँ...।'

स्वामीश्री उन्हें बीच में ही टोकते हुए बोले, 'आपके समान कितने ही ऐसे भक्त थे, जिनका दिमाग हट जाता था, लेकिन शास्त्रीजी महाराज न जाने कितनों का दिमाग ठिकाने रखकर उनसे सेवा करवाते रहे।'

'लेकिन स्वामीजी! आप जैसे निर्दोष सत्पुरुष को कोई अपशब्द बोले, तो मुझसे तो सहन...' स्वामीश्री ने उन्हें रोकते हुए कहा, 'हाथी को देखकर कुत्ते भौंकने लगते हैं, किन्तु हाथी अपनी ही मस्ती में चलता रहता है। भौंकनेवाले कुत्ते पर वह दृष्टि तक नहीं डालता;

भर्तृहरि ऋषि ने कहा है : ऐसे धैर्यवान महापुरुष के धैर्य का गुण नष्ट हो जाए, यह संभव ही नहीं...

यही उसकी महानता है। महापुरुषों का भी यही सिद्धांत है।'

उन्होंने आगे कहा, 'यह जो सत्संग का प्रसार हुआ है, वह सहनशीलता और साधुता से हुआ है। साधुतापूर्ण व्यवहार से सहन कीजिए, तो सत्संग बहुत बढ़ेगा!'

'सहन करने से कभी सत्संग बढ़ेगा!' सुनकर सभी आश्चर्य में पड़ गए। सभी को लगा कि यह गणित तो मानवबुद्धि से परे और दिव्य है!

इस गोष्ठी का अध्याय जब पुनः शुरू हुआ, तो स्वामीश्री ने कहा, 'बिना भगवान की इच्छा के, किसी के हिलाए सूखा पत्ता तक नहीं हिलता। सब कुछ भगवान की मर्ज़ी से ही होता है। यदि हम दूसरों का प्रतिकार करने जाएँ, तो हमारा विरोध होगा। हम दूसरों का बुरा करने जाएँ, तो हमारा ही बुरा होगा। इसलिए हमें किसी का अहित सोचना ही नहीं चाहिए। भगवान सब कुछ देखते हैं।'

एकबार सर्वमंगलदास स्वामी ने पूछा था, 'आपने कितना सहन किया है! हृदय में अपमानों का कितना बड़ा ढेर समाया हुआ है, फिर भी लोगों के मन को संभाले रखा है! यदि कोई तिरस्कार के शब्द-बाण मारे, तो मैं एक दानाभर खा नहीं सकता। आपके मन में ऐसा उफान नहीं आता?'

स्वामीश्री एकाएक बोल पड़े : 'ना, ऐसा उफान तो मुझे पहले से ही नहीं आया!'

यही उनकी प्रगल्भता और ज्ञान की गंभीरता है।

कभी-कभी व्यक्ति को सुधरने में वर्षों व्यतीत हो जाते हैं। बेडौल पत्थर से मूर्ति का निर्माण रातों-रात नहीं होता! उसी प्रकार व्यक्ति को मानव बनाने में समय लगता है। पग-पग पर भूल करते हुए मनुष्य के मन में प्रेरणा देकर उसे धीरे-धीरे सुधारिए; उसे प्रेरक-शक्ति प्रदान करते रहिए। ऐसा करने में बहुत बड़े धैर्य की आवश्यकता पड़ती है। बुद्धिशाली हो या समझदार हो, अनपढ़-गंवार हो या सुशिक्षित, स्वामीश्री के पास उनके लिए धैर्य का अक्षुण्ण भंडार है! बातचीत का विषय आध्यात्मिक हो, नैतिक हो अथवा व्यावहारिक ही क्यों न हो? वे प्रत्येक बात को अनेक बार सुनते हैं और उसका निदान भी बताते हैं!

तीर्थधाम भादरा में सेवा करनेवाले मंदबुद्धि भरत और स्वामीश्री के आपसी सम्बंधों पर गौर कीजिए, तो आपको उनके असीमित धैर्य का तुरंत पता लग जाएगा। स्वामीश्री भादरा में दर्शन करके आ रहे थे कि रास्ते में भरत से भेंट हो गई।

'भर...त! तबियत तो ठीक है न?' स्वामीश्री ने स्नेहपूर्वक इतना ही पूछा था कि भरत ने अपनी सर्दी भरी नाक को सड़ाक से खींचते हुए उत्तर दिया, 'आप जब याद कराते हैं, तो सर्दी हो जाती है...' इतना बोलकर भरत दूसरी ओर देखने लगा।

बार-बार यही प्रश्न पूछे जाने पर उत्तर में नाक से लिया गया उसका सड़ाका सुनना पड़ता था। पूरे वातावरण में हास्य छा जाता था!

दूसरों को भले ही उपहास का आनंद मिलता हो, किन्तु मंदबुद्धि भरत इतना तो समझ सकता था कि स्वामीश्री स्नेहभाव से उसका जितना ख़याल रखते हैं, उतना अन्य कोई नहीं! स्वामीश्री जब भी भादरा पधारते, भरत की सेवा की कद्र करते, उस पर सहज वात्सल्य बरसाते और धीरे-धीरे उसे समझाकर कुछ शिक्षा भी देते थे।

भादरा अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी की जन्मभूमि है।

एक दिन स्वामीश्री ने पूछा, 'भर...त! यहाँ किसका जन्मस्थान है?'

भरत ने उत्तर दिया, 'भादला (भादरा) का है।'

स्वामीश्री ने स्नेहपूर्ण शब्दों में धीरे से कहा, 'भादरा का नहीं, गुणातीतानंद स्वामी का जन्मस्थान है। अब बोलो यह किसका जन्मस्थान हैं?' इसी उत्तर को उन्होंने पाँच बार रटाया। फिर एक और प्रश्न पूछा, 'भरत, मंदिर में किनकी मूर्तियाँ हैं?'

भरत ने कहा, 'जन्मस्थान की।'

सुननेवाले सभी हँस पड़े। किन्तु स्वामीश्री ने उपहास किए बिना कहा, 'ऐसे नहीं... चलो मैं कहूँ, वैसे बोलो। पहली मूर्ति गुणातीतानंद स्वामी की, किसकी? बोलो...'

'गुणातीतानंद स्वामी!' भरत ने सही उत्तर दिया और स्वामीश्री प्रसन्न हो गए।

'बीच में दूसरी मूर्ति सहजानंद स्वामी की और तीसरी मूर्ति गोपालानंद स्वामी की है। बोलो...' स्वामीश्री ने भरत से पाँच बार रटाया। मंदिर के एक संत को आज्ञा दी कि इससे प्रतिदिन नाम पूछकर जबानी याद कराएँ।

मंदिर के संतों-सेवकों में किसी के मन में अब तक ऐसा विचार ही नहीं हुआ था कि भरत को मूर्ति अथवा जन्मस्थान के विषय में कुछ शिक्षा दी जाए! क्योंकि वह मन्दबुद्धि युवक ऐसी शिक्षा पाएगा, ऐसा विश्वास तथा धैर्य भला किसके पास हो सकता था?

आज स्वामीश्री ने स्वयं इसकी पहल की। स्वामीश्री ने कहा था कि 'उसे जो कुछ भी सिखलाया जाता है, उसे सीखने के लिए वह तत्पर हो जाता है! तो हमें उसे क्यों नहीं सिखाना चाहिए?' भरत को भी विश्वास हो गया है कि स्वामीश्री जितना उसे समझ पाते हैं, उतना दूसरा कोई नहीं समझ पाता। यहाँ स्वामीश्री के मातृवत् धैर्य का दर्शन होता है।

कभी-कभी भारी आपत्तियों का सामना करनेवाला व्यक्ति भी, शारीरिक कष्टों से विचलित होकर धैर्य खोकर किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है, किन्तु स्वामीश्री की स्थिरता, ऐसे अवसरों पर विशेष रूप से अड़िग रहती है।

सन् 1966 में सौराष्ट्र के सरदारगढ़ गाँव में मंदिर की मूर्तिप्रतिष्ठा का अवसर था। ग्रामवासियों का आग्रह था कि योगीजी महाराज के वरदहस्तों से ही विधि संपन्न हो; किन्तु कुछ विरोधियों द्वारा विघ्न डालने की भी संभावना थी। अत: कुछ वरिष्ठ संत एवं हरिभक्तों ने उक्त कार्यक्रम को स्थगित कर देने का सुझाव रखा। परन्तु योगीजी महाराज की इच्छा थी कि मूर्तिप्रतिष्ठा भव्यतापूर्वक सम्पन्न होनी चाहिए। उनकी इच्छा के अनुसार कार्यक्रम

निर्धारित कर दिया गया। प्रतिष्ठाविधि के बाद वापस लौटते समय विरोधियों ने योगीजी महाराज तथा संतवृंद की गाड़ियों को छोड़कर, हरिभक्तों के वाहनों पर पत्थरबाजी कर दी। कुछ हरिभक्तों ने इसके लिए स्वामीश्री को ही पूरी तरह जिम्मेदार ठहराकर अपना क्रोध प्रकट किया कि आपने यह कार्यक्रम क्यों बनाया? जब कि कार्यक्रम का आयोजन स्वयं योगीजी महाराज ने अपनी ही इच्छा से किया था, परन्तु स्वामीश्री ने उस बात का जिक्र तक न करके केवल इतना ही कहा, 'मेरी भूल हो गई... !'

उस घटना के साक्षी गुणवंतभाई दाणी ने 23 वर्ष के बाद 'स्वामिनारायण प्रकाश' में पूरा विवरण दिया था। गोंडल में उसका पठन हुआ, तब उन्होंने स्वामीश्री को कहा, 'सरदारगढ के इस प्रसंग का मैं साक्षी हूँ; क्योंकि तब कुछ लोगों ने आपको ही अपमानित किया था। वस्तुत: वहाँ आपकी सहनशीलता एवं धैर्य का ही दर्शन होता है!'

स्वामीश्री यह सुनते ही बोल पड़े, 'बड़ों की डाँट-फटकार तो हमने बहुत सुनी है, चाहे कोई गलती हो या न हो, फिर भी यदि कोई सुनाता था, तो सुन लेते थे। मूल बात मन में यह रहती थी कि योगीजी महाराज किस प्रकार प्रसन्न हों, बस, यही धुन अंतर्मन में सवार थी। यदि वे प्रसन्न रहते हों, तो हमें कैसी भी विपत्ति को सहन करने में कोई आपत्ति नहीं होती।'

संस्था के संचालन में अनेक समस्याओं एवं संकटों के बीच त्वरित निर्णय लेना तथा मन को स्थिर रखकर प्रत्येक के मन को संतुष्ट करना उनका अद्‌भुत गुण है!

ऐसे अवसरों पर वे सभी को कहते हैं, 'प्रार्थना कीजिए। संकट की घड़ी में प्रार्थना से अनंत धैर्य प्राप्त होता है और मार्ग भी निकल आता है।'

24 सितम्बर, 2002 के दिन गुजरात में गांधीनगर स्थित अक्षरधाम आक्रमणकारी आतंकवादियों से घिरा हुआ था। ऐसी विकट परिस्थिति में भी मन को स्थिर रखकर, वृद्धायु में भी निरन्तर सेवारत प्रमुखस्वामी महाराज का स्मरणमात्र आश्चर्य में डाल देता है। समग्र विश्व को स्तब्ध कर देनेवाला आतंक, स्वयं के 'घर' को ही निगल जाना चाहता हो, उस समय तनिक भी घबराये बिना, स्वस्थ मन से उनके निराकरण हेतु सक्रिय हो जाना, सभी अनुयायियों और भक्तों को शान्ति और संयम रखने के लिए विवश कर देना; यह किसी सामान्य मनुष्य अथवा महामानव का भी नहीं, यह किसी अलौकिक व्यक्ति का ही पुरुषार्थ हो सकता है!

उस दिन सायं 4.50 बजे सारंगपुर (गुजरात) में विराजमान स्वामीश्री को जब फोन द्वारा यह भयावह समाचार दिया गया, तो उस समय वे कच्छ में भूकम्प पीड़ितों के लिए संस्था-संचालित पुनर्वास सम्बंधी एक मीटिंग में व्यस्त थे। समाचार सुनकर लेशमात्र विचलित हुए बिना स्वामीश्री उपस्थित संतों से कहने लगे, 'अक्षरधाम में आतंकवादी घुस गए हैं। भारी हिंसा हुई है, परन्तु आप सभी भगवान से प्रार्थना कीजिए कि हिंसा रुक जाए, जान-माल की हानि न हो और आतंकवादी पकड़े जाएँ।'

इसके बाद तुरन्त ही स्वामीश्री प्रार्थना में लीन हो गए। उस समय सारंगपुर में उपस्थित 250 से भी अधिक संत एवं लगभग 2000 भक्तजन भी स्वामीश्री की आज्ञा से धुन-प्रार्थना में जुड़ गए। स्वामीश्री की आज्ञा से देश-विदेश के सैकड़ों मंदिरों में धुन-प्रार्थना प्रारंभ हो गई थी।

उक्त दु:खद घटना के बाद अनेक महानुभावों के सहानुभूति पूर्ण फोन-संदेश आने लगे

थे। गांधीनगर में चल रही कार्यवाही के सम्बंध में स्वामीश्री को लगातार फोन द्वारा अवगत कराया जा रहा था। रात को 9.00 बजने से पहले मल्टीमीडिया थियेटर के अतिरिक्त लगभग सभी स्थानों से दर्शनार्थियों को बाहर निकाल दिया गया था। इसके पश्चात् आतंकवादियों द्वारा हो रही लगातार गोलीबारी के कारण यह निर्णय लिया गया कि यात्रियों को मल्टीमीडिया थियेटर में ही रोक दिया जाए। रात काफी बीत जाने के बाद यह समाचार फोन द्वारा स्वामीश्री को दिया गया, तो उन्होंने थिएटर में फँसे 250 से अधिक दर्शनार्थियों के लिए चाय-नाश्ता तथा पानी की व्यवस्था का प्रबन्ध करवाया। देर रात को उन्होंने सभी के लिए बाथरूम, शौचालय आदि की व्यवस्था पर भी ध्यान देने के लिए सूचना दी।

दूसरी ओर स्वामीश्री इस विषय में भी लगातार सतर्क थे कि इस हमले की प्रतिक्रिया में कहीं गुजरात पुन: प्रतिहिंसा की आग में न जल उठे। वे सारी रात जागते रहे। रात को 12.35 बजे उन्हें फोन पर जब समाचार दिया गया कि युवा संत परमेश्वरदास स्वामी आतंकवादियों की गोली के शिकार बन गए, तो स्वामीश्री के मुख पर गहरी पीड़ा झलकने लगी। फिर भी उन्होंने स्वस्थ मन से विचार किया कि वैसे भी अक्षरधाम पर हमले के आघात से पूरा हिन्दू समाज उद्विग्न है और जब प्रात:काल एक संत की हत्या का समाचार फैलेगा, तो कहीं ऐसा न हो कि लोगों का आक्रोश भड़ककर गुजरात की गली-गली में प्रतिहिंसा की बाढ़ बन जाए! उन्होंने इलेक्ट्रोनिक एवं प्रिन्ट मीडिया से फौरन संपर्क करवाया और गुजरात की जनता के लिए शान्ति की अपील जारी की, इस अपील का प्रभाव ऐसा था कि लगातार दो दिनों तक गुजरात और समग्र भारत स्वयंभू बंद रहा। परन्तु कहीं भी आगजनी एवं हिंसा की छिटपुट घटना भी नहीं सुनाई दी। बंद के एलान से भारत एवं समग्र विश्व के नेता भी अत्यधिक चिंतित हो गए थे, परन्तु स्वामीश्री की शान्ति की अपील ने सुखद एवं अपेक्षित प्रभाव डाला। प्रजा ने अद्‌भुत शान्ति एवं संयम का उदाहरण प्रस्तुत किया, जिसका यश विश्व के अनेक चिंतकों ने स्वामीश्री के चरणों में अर्पण किया।

ऐसे पवित्र धर्मस्थल पर बर्बरतापूर्ण आक्रमण तथा निर्दोष दर्शनार्थियों पर हिंसा की यह आतंकवादी घटना सभी के लिए असह्य थी। हिन्दुत्व की भावना से ओतप्रोत अनेक लोगों के हृदय पर यह घातक प्रहार था। किन्तु स्वामीश्री का एक ही स्वर लोगों के आक्रोश को शान्त कर देता था : 'इस समय देश में एकता, सहानुभूति एवं शान्ति बनाये रखने की अत्यन्त आवश्यकता है। आप सभी प्रार्थना कीजिए कि कभी, कहीं भी और किसी पर ऐसा अत्याचार न हो...' स्वामीश्री के स्वर में समग्र मानव समाज की भलाई गूंजती रही।

एक प्रसिद्ध संगठन के नेता ने स्वामीश्री से कहा कि 'स्वामीजी! यदि इस अवसर पर आपने एक इशारा भी कर दिया होता, तो लोग पूरे अहमदाबाद के नक़्शे को बदल देते। परन्तु आपकी शान्त रहने की अपील ने ऐसा कमाल किया कि गुजरात ही नहीं भारतभर में आज शान्ति का माहौल बना हुआ है! हमें आपकी शान्त ताक़त का परिचय मिल गया। आपकी तपश्चर्या के कारण ही पूरा भारत आज शान्ति की सांस ले रहा है। इस समय नागरिकों ने जो संयम दिखलाया है, उसका यश केवल आप ही के चरणों में समर्पित है।'

इस दुर्घटना के संदर्भ में सौराष्ट्र के क्षत्रियों ने एक श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया था। स्वामीश्री ने तुरन्त उन क्षत्रिय अग्रणियों को आदेश दिया, 'आप शान्तिपूर्वक प्रवचन करना। किसी भी दशा में उग्रता से लोगों को उकसाने का प्रयास मत करना!'

संकटकालीन स्थिति में स्वामीश्री की वह स्वस्थता लोगों का हृदय स्पर्श कर गई। एक प्रसिद्ध टी.वी. चैनल के न्यूज़ एडिटर ने कहा था कि 'आतंकवाद की इस घटना के बाद भारत के बौद्धिक वर्ग में प्रमुखस्वामीजी का समयोचित संयम, सबसे बड़ा आश्चर्य बना हुआ है। सामान्यत: अपने ही घर में ऐसी वारदात होने पर लोग, एक के बाद एक निवेदन करके 'हीरो' बनने का प्रयास करते हैं। जब कि प्रमुखस्वामीजी और उनके संतों ने निवेदन या आक्रमकता के बदले में मौन रहकर जनसेवा करते रहना ही उचित समझा है। इतना ही नहीं, समग्र संस्था पक्षाघात की स्थिति में होने के बजाए कार्यरत है; यह वास्तव में एक अभिनंदनीय बात है।'

हज़ारों पत्रों, टेलिफोन संदेशों तथा अन्य माध्यमों से सामान्यजन से लेकर बड़े-बड़े महानुभावों ने स्वामीश्री की सुहृदयता एवं समयोचित संयम को कोटि-कोटि धन्यवाद दिया।

जर्मनी में आतंकवाद की विश्वव्यापी समस्या के संदर्भ में आयोजित एक अन्तर्राष्ट्रीय परिषद में स्वामीश्री की इस भावना को 'अक्षरधाम रिस्पोन्स' के नाम से बार-बार धन्यवाद दिया गया। आतंकवादी समस्या के विषय में जिनकी गहरी पैठ है, ऐसे विद्वानों ने उक्त शब्द का प्रयोग करते हुए कहा था कि 'आतंकवादी दुर्घटना के समय ऐसा धैर्य ही एकमात्र यथोचित इलाज बन सकता है!'

अमेरिका के भारतीय राजदूत रोनेन सेन ने स्वामीश्री से कहा था कि 'उस दुर्घटना के समय मैं लंदन में था। आपने उस समय जिस प्रकार शान्ति और संयम से काम लिया, वह वास्तव में आपके अद्वितीय व्यक्तित्व का परिचय देता है। उस समय हमें लंदन में भी टेन्शन हो रहा था, परन्तु आपने धैर्य की मिसाल बनकर हमें प्रेरणा दी थी।'

स्वामीश्री ने उनसे कहा था, 'जो होना था, हो गया; बाद में प्रतिकार करने से निर्दोष लोग मारे जाते, इसीलिए हमने सभी को शान्त रहने की अपील की थी। हालाँकि संस्था एवं अक्षरधाम स्मारक संकुल को भारी नुक़सान हुआ है, परन्तु सारी चिन्ताएँ भगवान के चरणों में सौंपकर हम शान्त रहे। किसी को भी दंड देना अथवा न्याय करना भगवान का कर्तव्य है, तो उन्हीं को करने दें!'

मि. सेन ने स्वामीश्री की इस भावना को बहुत सराहा और कहा 'केवल अमेरिका और भारत ही नहीं, पूरे विश्व को आपके इस संदेश की आवश्यकता है।'

अमेरिकी गृहमंत्रालय के सचिव एवं न्युयॉर्क के सेनेटर माईक बाल्बनी ने 15 मई, 2004 को स्वामीश्री का अभिवादन करते हुए, कहा था कि 'मैं आतंकवाद की समस्या के साथ गहराई से जुड़ा हुआ हूँ। आतंकवाद के संदर्भ में स्वामीश्री के जीवन से मैंने शान्ति और स्वीकृति का पाठ सीखा। अक्षरधाम पर हुमले की कठिन परिस्थिति में स्वामीश्री ने सारी परिस्थिति को संभालकर अपने मार्गदर्शन में हिंसा को रोककर शान्ति की पुन:स्थापना की; यह विश्व के लिए एक महानतम भेंट एवं अद्वितीय उदाहरण था।'

8 अक्टूबर 2002 को 'टाईम्स ऑफ इन्डिया' में कौशिककुमार का लिखा हुआ यह बयान स्वामीश्री की स्थितप्रज्ञता को यथोचित अंजलि दे रहा है - 'अक्षरधाम पर हुए हमले के विरुद्ध स्वामीश्री ने किसी पर कोई दोषारोपण न करके, जो उदारता प्रदर्शित की है, वह अद्‌भुत है। अक्षरधाम उनका एक सौन्दर्यपूर्ण भव्य सृजन है; फिर भी उस पर हुए हमले के समय वे शान्त रहे। उनकी वह संत प्रतिभा हृदय को छू लेती है। इस अमानुषिक दुर्घटना में

शिकार हुए लोगों के प्रति उनका हृदय करुणा से भर उठा है। अक्षरधाम जिन मूल्यों और श्रद्धा का प्रतीक है; उसे आतंकवादी कभी भी डिगा नहीं सकते।'

गुजराती साहित्य परिषद के अध्यक्ष एवं प्रसिद्ध लेखक रघुवीर चौधरी ने 'परब' पत्रिका की प्रस्तावना में लिखा था कि 'ऐसे वहशी हमले का प्रत्याघात न हो तथा कौमी दंगे फैलाने की इच्छा रखनेवाले आतंकवादियों की एक भी न चले, यही भावना रखते हुए स्वामीश्री ने ठीक समय पर शान्ति की अपील की थी। यह सुविदित है कि बी.ए.पी.एस. संस्था वैश्विक तौर पर संगठित है। अपने धर्मगुरु को अनुयायी वर्ग श्रद्धापूर्वक गुरुहरि के रूप में देखते हैं। उनकी वाणी में आक्रोश भरा एक शब्द भी दिशाओं को कंपाने के लिए मजबूर कर सकता था, परन्तु मैंने ऐसी आपदा के समय में भी प्रमुखस्वामीजी को क्रोधित हुए नहीं देखा। उन्होंने प्रजा का हित देखा और प्रत्येक प्रजाजन प्रत्याघात के साथ नहीं, परन्तु प्रार्थना के साथ जुड़ा रहे, ऐसा आयोजन किया। केवल एक ही सप्ताह में भारतीय संस्कृति का परिचय करवानेवाली प्रदर्शनियाँ तथा अक्षरधाम मंदिर के द्वार खोल दिए गए। उन्होंने सनातन धर्म की सहिष्णुता की प्रतीति करवा दी। प्रार्थना द्वारा प्राप्त होनेवाली मानसिक शान्ति ही सामाजिक संवादिता को उजागर करने में निमित्त बन सकती है। व्यापक धर्मभाव की धरोहर को निभाने का दायित्व प्रमुखस्वामीजी जैसे संतों के पास रहने देना चाहिए। क्योंकि सदियों पहले कवि मोरार साहब ने गाया था कि 'शान्ति देनेवाले को ही संत कहते हैं...'

प्रसिद्ध जैनाचार्यश्री चंद्रशेखर विजयजी ने अपने तरीके से इस घटना का अवलोकन करते हुए स्वामीश्री के श्रीचरणों में पत्र भेजकर लिखा :

'सौजन्यमूर्ति, संतशिरोमणि, परम प्रभुभक्त प्रमुखस्वामीजी महाराज, अक्षरधाम पर टूट पड़ी इस विनाशक विपत्ति का समाचार मिलते ही हृदय दहल गया। न जाने आप पर क्या-क्या बीती होगी?, इसकी कल्पना हम नहीं कर पाते, क्योंकि आप स्थितिप्रज्ञता के सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ महान संत हैं। सहानुभूति व्यक्त करने के लिए आपके चरणों में आ रहे प्रभुभक्त बिलख-बिलखकर रोते हैं। आप उनको सांत्वना देते रहे हैं। यह आपके संतत्व की बहुत ही ऊँची भूमिका है।'

श्रीमद् भगवद्गीता में अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से प्रश्न किया था कि 'स्थितप्रज्ञ किसे कहते हैं?' भगवान उस समय ऐसे स्थितप्रज्ञ महापुरुष की गुणगाथा इस प्रकार गाते हैं : *'सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ...'* अर्थात् जिसे सुख और दुःख में, लाभ या हानि में तथा जय और पराजय में स्थिरमति रहती है, वही स्थितप्रज्ञ महापुरुष हैं। स्वामीजी का प्रत्येक कदम स्थितप्रज्ञता का ऐसा एक अमिट चिह्न है कि जो कोई उनके जीवन से प्रेरणा लेगा, उसके लिए यह विश्व नंदनवन बन जाएगा...

भर्तृहरि ने कहा था कि 'आप अग्नि की ज्योति को उलटा करके रखोगे, तो क्या वह ज्योति नीचे की ओर जलेगी? नहीं। वह तो ऊपर की दिशा में ही जलती रहेगी। उसी प्रकार ऐसे धैर्यशील महापुरुष का गुण कभी नष्ट होने की संभावना ही नहीं है। (नीतिशास्त्र - 105)

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

कान्तिः ओजः

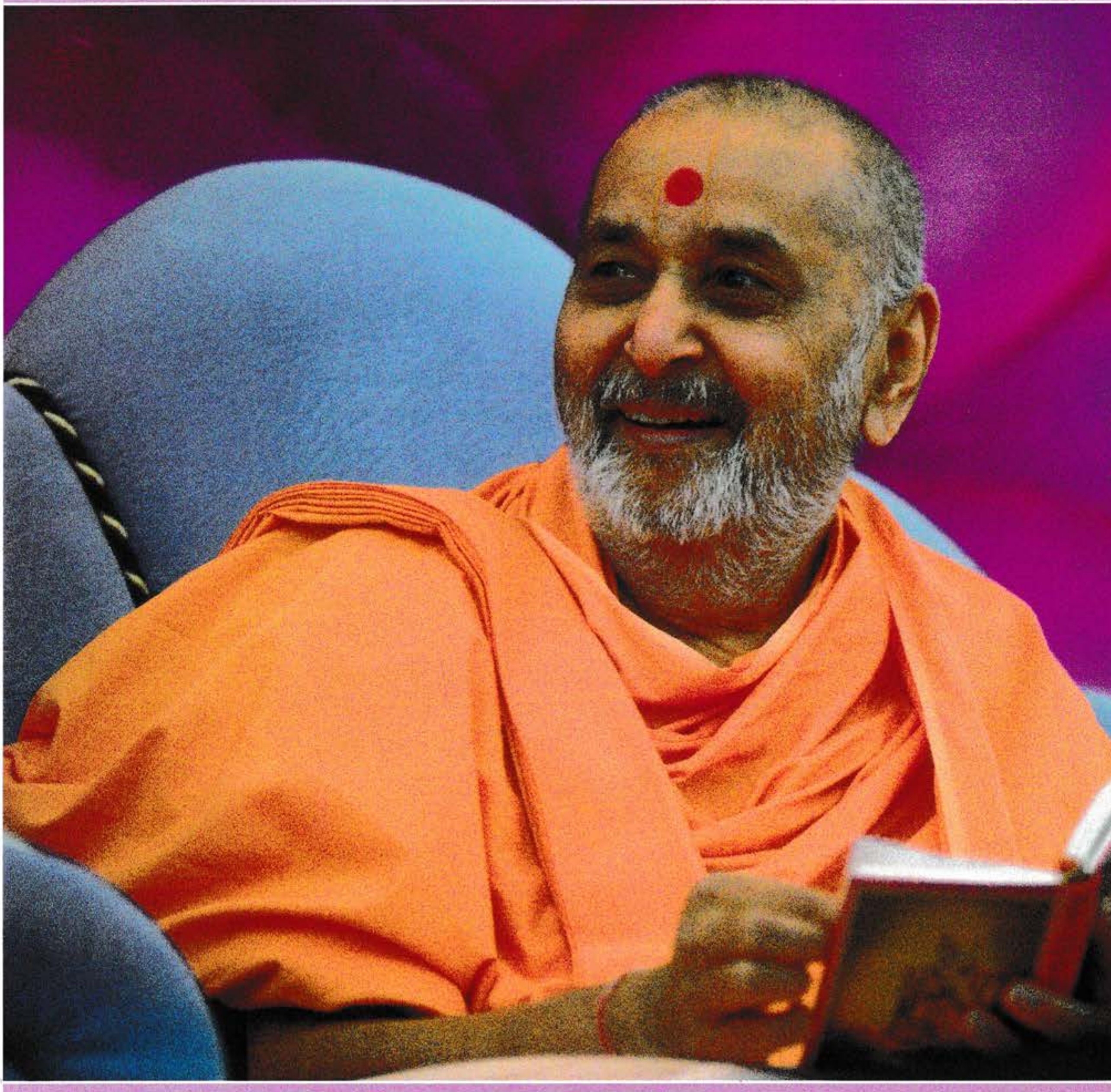

कान्ति अर्थात् परमात्मा का अलौकिक सौंदर्य।
ओजः अर्थात् परमात्मा के मुख पर प्रकट हो रहा दिव्य तेज।
परमात्मा के अलौकिक रूप-सौंदर्य और तेजोमय स्वरूप का अनुभव,
अनेक भक्तों ने स्तुतिपदों तथा स्तोत्रों में वर्णन किया है।
भगवान स्वामिनारायण का अलौकिक रूप-सौंदर्य उनके ही समकालीन
प्रेमानंद स्वामी आदि संतों-भक्तों के वर्णनों में निखरता है।
गुणातीत संत में विराजमान परमात्मा भी,
संत में ऐसे अलौकिक तेजोमय सौंदर्य का अनुभव कराते हैं।
वह अनुभव ऐसा विलक्षण होता है कि भक्त उसे न तो देख सकता है,
न ही शब्दों में अभिव्यक्त कर सकता है।

प्रमुखस्वामी महाराज का दर्शन करते समय, लोगों को सहज ही परम तेजस्विता की प्रतीति होती है। किसी को उनके नेत्रों में, तो किसी को उनके मुखारविंद पर अलौकिक तेज का अनुभव होता है। किसी को उनमें असाधारण महापुरुष का, तो किसी को उनमें परमात्मा की साक्षात् अनुभूति होती है।

सद्गुरु संतवल्लभदास स्वामी उनके दिव्य तेज का वर्णन करते हुए कहा करते थे कि 'शास्त्रीजी महाराज की प्रकृति एवं प्रतिभा पूरी तरह भगवान स्वामिनारायण की तरह ही लगती थी। उनकी ओर देखकर लोगों को झुकना ही पड़ता था। शत्रु भी उनके कार्यों तथा व्यक्तित्व की प्रशंसा करने लग जाते थे। गढ़पुर के नगरसेठ मोहनलाल मोतीचंद के साथ राज्य के आठ अधिकारी शास्त्रीजी महाराज के दर्शनार्थ आए थे। उस समय शास्त्रीजी महाराज की आयु 85 वर्ष की थी। दर्शन करने के बाद एक अधिकारी ने कहा, 'इतनी वृद्ध आयु में भी शास्त्रीजी महाराज की आँखों में कैसी चमक है!' वर्तमान में प्रमुखस्वामीजी की जीवन-शैली आदि सबकुछ शास्त्रीजी महाराज जैसी ही है।'

ऐसा ही अनुभव भिन्न-भिन्न क्षेत्र के दिग्गजों को प्रमुखस्वामी महाराज के सान्निध्य में हुआ है।

विख्यात युरोपियन 'मल्टी-मिडियामेन' प्रो. यारोस्लाव फ्रिच को भी ऐसा ही अनुभव हुआ था। गांधीनगर में 'अक्षरधाम' स्थित मल्टीमिडिया शॉ का दिग्दर्शन उन्होंने ही किया था। स्वामीजी के परिचय में आने के बाद 19 नवम्बर 1992 को उनसे एक इन्टरव्यू में पूछा गया था कि स्वामीश्री के साथ आपको ऐसा कौन सा अनुभव हुआ, जो आपके जीवन

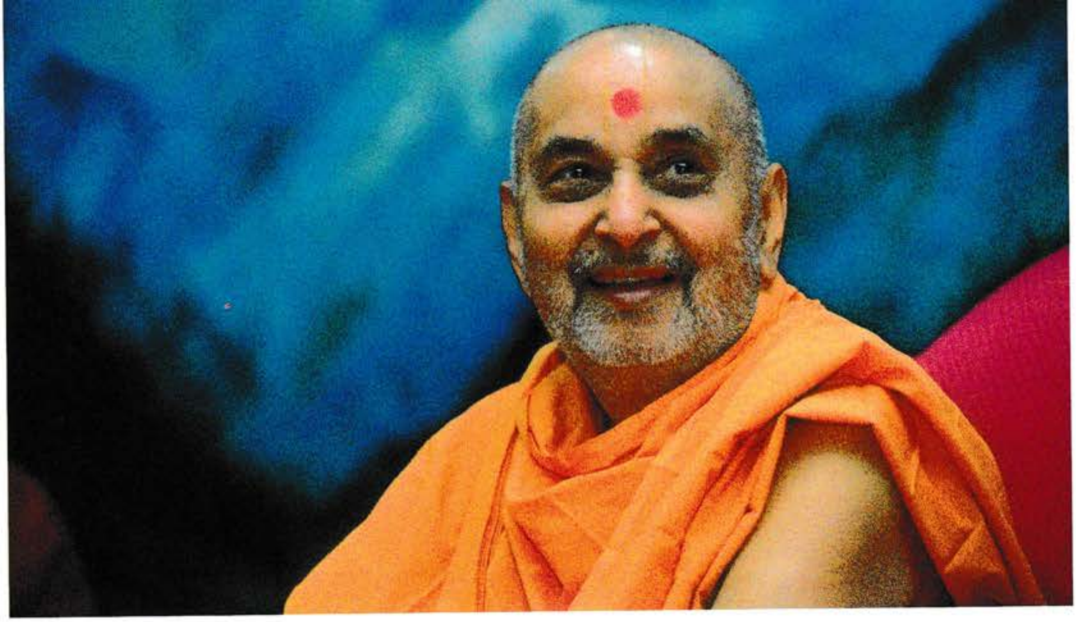

की अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटना है?'

उत्तर देते समय प्रो. फ्रिच की आँखों में आँसू आ गए। स्वस्थ होकर वे कहने लगे,

'इस प्रश्न का उत्तर देना मेरे लिए अत्यंत ही कठिन है। मैं केवल इतना कह सकता हूँ कि प्रो. फ्रिच एक ऐसा आदमी है, जो विश्व के कई स्कॉलरों से मिला है, विश्वस्तरीय विद्वानों से मिला है, विश्व के सम्राटों, साम्राज्ञियों, शाहों और राष्ट्रप्रमुखों से मिला है, किन्तु स्वामीश्री जैसे व्यक्तित्व की भेंट उसके जीवन में कभी नहीं हुई। उनसे मिलते ही अनुभव होता है कि वे विराट अनंतता का महान अंश हैं, जिसका शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता और न ही कोई व्याख्या की जा सकती है। मात्र मुझे ही नहीं, मेरे पूरे स्टाफ को वे अत्यंत प्रिय बन चुके हैं।

'मैं अपने कैमरे के माध्यम से उनके विचारों और उनकी आँखों की गहराई को नापने का प्रयास कर रहा था। उनकी एक-एक तसवीर में मुझे निरी निर्दोषता, दिव्यशान्ति और प्रेम दिखाई दिया। मेरे जीवन का यह सबसे बड़ा अनुभव था। सामान्यत: पर्दे पर फोटोग्राफिक स्टेटमेन्ट द्वारा कोई बात प्रस्तुत करनी हो, तो मैं 60 से 70 प्रतिशत फोटोग्राफ्स छोड़ देता हूँ। परन्तु स्वामीश्री की 600 तसवीरों में से मैं एक भी तसवीर न छोड़ सका।

'प्रत्येक तसवीर नया अनुभव लेकर आँखों के सामने आती थी। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि वे महान शक्ति हैं। क्षमा कीजिएगा, उनका प्रेम कोई शब्दों का खिलवाड़ नहीं और मेरे पास उनकी कोई व्याख्या भी नहीं है।'

स्वामीश्री के आध्यात्मिक सौंदर्य का यह प्रभाव है। 92 वर्ष की आयु में भी उनके मुखारविन्द पर शब्दातीत सुंदरता और तेजस्विता शोभायमान है। उनके मुखारविंद की शोभा और नेत्रों की मानवोत्तर ओजस्विता हमें मुग्ध कर देती है।

भारत के विख्यात वैज्ञानिक और सुपर कम्प्यूटर के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान देनेवाले डॉ. रघुनाथ माशेलकर दिल्ली में स्वामीश्री का दर्शन करने आए हुए थे। मुलाकात के पश्चात् उन्होंने स्वयंसेवकों से कहा था, 'मैंने जैसे ही स्वामीजी के चरणस्पर्श किए, मुझे परमशान्ति का अनुभव हुआ। स्वामीश्री के मुख पर जो तेज है, वह दिव्य है। मैं जब उनसे

मिला, समझो कि मेरे जीवन में नये 100 वर्ष जुड़ गए हों, ऐसा आनंद प्राप्त हुआ।'

27 जुलाई 2007 को स्वामीश्री जब न्यूजर्सी (अमेरिका) के मोरिस टाउन एयरपोर्ट पर उतरे, तो कस्टम एवं इमीग्रेशन विभाग के अमेरिकन अफसर श्री कोयल विमान में प्रवेश करते ही स्वामीश्री को देखकर विस्मित हो गए थे। संतों द्वारा उन्हें ज्ञात हुआ था कि स्वामीश्री की उम्र 86 वर्ष है, इसीलिए उन्होंने एक अत्यंत ही जर्जर वृद्ध की कल्पना कर रखी थी। परन्तु स्वामीश्री का प्रथम दर्शन करते ही वे आश्चर्यचकित हो बोल पड़े थे, 'ओह, 86 वर्ष की उम्र में उनके मुख पर कैसी चमक है! वे कितने स्वस्थ लगते हैं!'

स्वामीश्री के नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दिव्यप्रभा से अनेक लोग आश्चर्यचकित हो जाते हैं।

17 मई 2007 को युगान्डा (पूर्व अफ्रीका) के गृहमंत्री डॉ. रुगुन्डा, कंपाला में स्वामीश्री के दर्शनार्थ जब आए, तो उन्होंने भी आश्चर्यपूर्वक कहा था कि 'इतनी वृद्धावस्था में भी स्वामीश्री कितने युवा लगते हैं!'

'पंजाब केसरी' जैसे सम्मानित अखबार के संपादक श्री विजय चोपड़ा, स्वामीश्री का दर्शन करते ही बोल उठे थे कि 'वे 86 वर्ष के लगते ही नहीं!'

30 अक्टूबर 1996 को स्वामीश्री सिंगापुर में एक सत्संग सभा में विराजमान थे। वहाँ पर जॉन नामक एक ईसाई चाईनीज ने कहा कि 'स्वामीजी जब माला फेर रहे थे, तब मैंने उनके मुखारविंद के चारोंओर प्रकाश का एक वर्तुल देखा था... मुझे आश्चर्य हुआ कि क्या ऐसा हो सकता है!' स्वामीश्री की ऐसी ओजस्विता की अनुभूति करनेवालों में विख्यात विधि-विशेषज्ञ दिनेश व्यास भी हैं और वेस्टइन्डीज के उपराष्ट्रपति लियोनार्ड ब्रेडशॉ भी हैं।

स्वामीश्री की कान्ति, वर्णन का विषय नहीं है कि जिसे कागज में चित्रित किया जा सके। उसे केवल अनुभव किया जा सकता है। वह कान्ति है - तपस्विता की! और वह ओजस्विता है - उनकी इष्टभक्ति की!

3 जुलाई 2005, को जामनगर के विख्यात ओर्थोपेडिक सर्जन डॉ. वी.एम. शाह स्वामीश्री के दर्शनार्थ आए थे। उन्होंने कहा, 'इस उम्र में भी आपके मुख का तेज यथावत् है और उसमें भी आपकी आँखें तो गजब की हैं।'

स्वामीश्री ने कहा, 'सबकुछ भगवान की इच्छा से है। जो कुछ अच्छा होता है, वह सभी भगवान की कृपा से होता है।'

'अच्छा तो होता है किन्तु उसके पीछे बल भी तो होता है न!'

'हाँ, भगवान का बल और गुरु की कृपा।' - स्वामीश्री ने कहा।

यही उनके आंतरिक सौन्दर्य और आंतरिक ओजस्विता का रहस्य है।

भगवान स्वामिनारायण कहते हैं कि भगवान का जैसा रूप है, वैसा रूप इस ब्रह्मांड में ब्रह्मादिक से लेकर जीव प्राणी मात्र में किसी का भी नहीं है, जिसके साथ उसकी तुलना की जा सके...। (वचनामृत पंचाला-4) ऐसे तेजस्वी-सौन्दर्यवान परमात्मा को अपने हृदय में हमेशा के लिए धारण करनेवाले गुणातीत संत में ऐसा सौन्दर्य और तेजस्विता का होना स्वाभाविक ही है!

◆

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

मार्दवम् प्रश्रयः

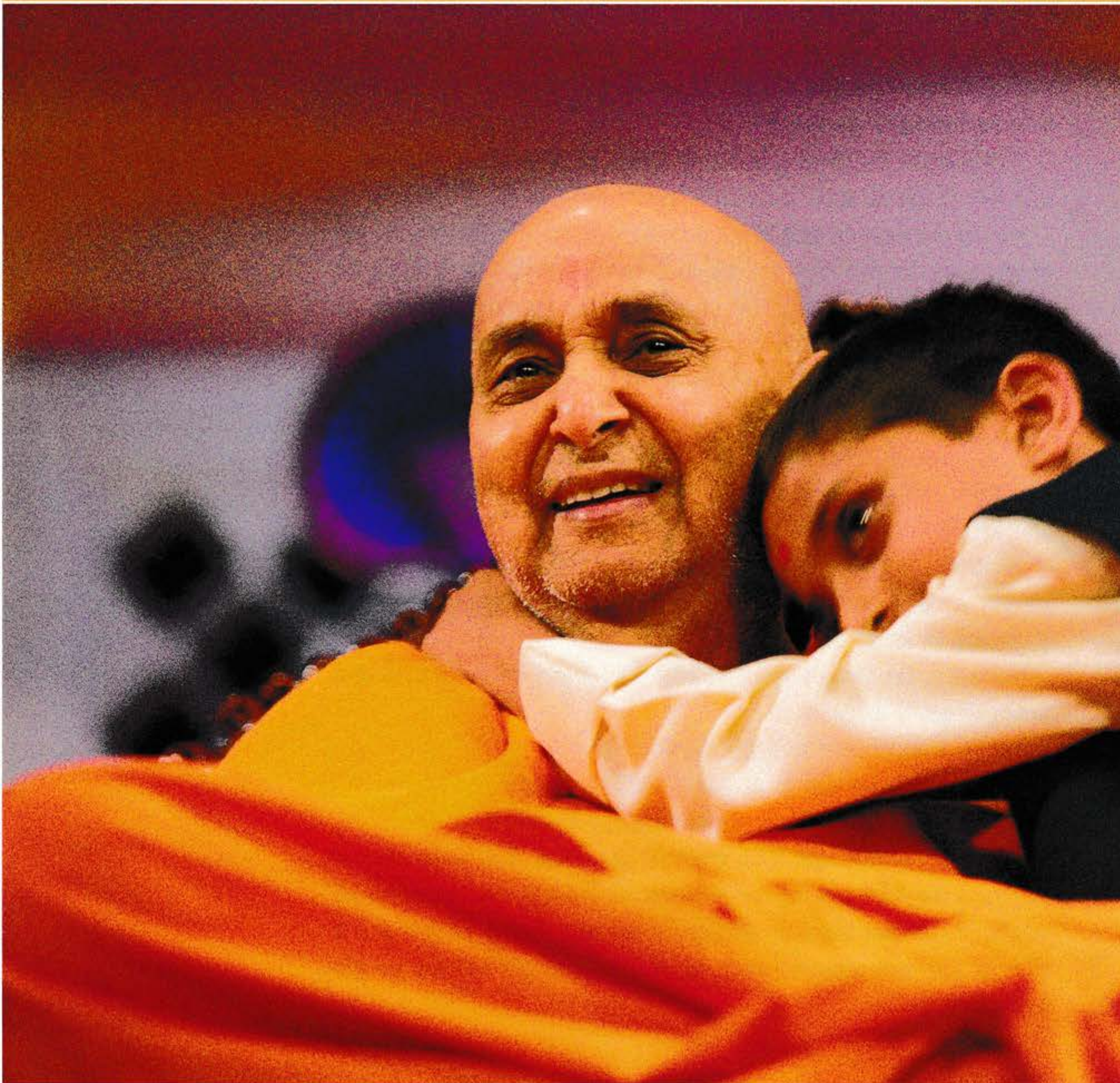

प्रश्रयः अर्थात् स्नेह। **मार्दवम्** अर्थात् चित्त की मृदुलता, कोमलता।
परमात्मा का यह दिव्य गुण भक्तों के लिए अनन्य वरदान है,
जिसके द्वारा परमात्मा अपने भक्तों को अपने स्नेह का भाजन बना लेते हैं
और अपनी मृदुता एवं संवेदना से भक्त हृदय को स्निग्ध कर देते हैं।
गुणातीत संत में जब यह भगवद्गुण विलसित होता है, तब लाखों लोग
कृतार्थता और धन्यता का अनुभव करते हैं। प्रमुखस्वामी महाराज, ऐसी ही
मृदुल, स्नेह-संवेदना से लाखों लोगों को कृतार्थ कर रहे हैं !

मृदुलता का मंगलमय स्वरूप अर्थात् प्रमुखस्वामी महाराज!
उनकी वाणी हो या स्वभाव, उनका आचरण हो या व्यवहार, सर्वत्र हमें उनकी सहज मृदुलता का दर्शन होता रहता है। उनके हृदय में सदैव एक सभानता बनी रहती है कि कोई मुझसे लेशमात्र भी आहत न हो। चींटी-सा जीव भी दुःखी न रहे, उसकी निरंतर सावधानी तथा प्रत्येक दुःखी को सहयोग देने का सन्निष्ठ प्रयास, उनके हृदय की ऋजुता और कोमलता का ही प्रतिबिंब है!

विश्वव्यापी ऐसी विराट संस्था, इतने संत और हरिभक्त तथा विराट अनुयायी वर्ग का नेतृत्व करनेवाला गुरु, मृदु स्वभाव का कैसे हो सकता है? इसके लिए तो किसी वज्र के समान व्यक्तित्व की अपेक्षा की जा सकती है। कहा भी जाता है, 'नेता तो वज्र के समान होना चाहिए।' परन्तु ऐसी व्याख्याएँ स्वामीश्री की मृदुता के आगे मिथ्या सिद्ध होती हैं।

वे नेता नहीं, संत हैं; और संस्था का संचालन वे मृदुतापूर्ण संतत्व से किया करते हैं। उनके हृदय में सभी के विकास की आकांक्षा तथा सभी को आगे उठाने की चाहत है। अपने संपर्क में आनेवाला हरकोई मुमुक्षु आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त करे, यह उनका संकल्प है। वे सबकुछ किया करते हैं, परन्तु सहजतापूर्वक, मृदुता एवं स्नेहपूर्वक! सर्व की भावनाओं को सुरक्षित रखकर वे संस्था का संचालन करते हैं। सभी की भावोर्मियों को उनके प्रेम का स्पर्श मिलता है और पूरी भावना के साथ वे सभी को सत्य की ओर अभिमुख करते हैं।

कल्पना में भी उनके स्वभाव में कठोरता नहीं प्रवेश कर सकती। जब किसी को कभी शिक्षा देने के लिए भी वे हृदय और वाणी को थोड़ा सा कठोर बना भी लेते हैं, तो उनके हृदय में दर्द की एक टीस उठती है। फिर भी वे अपना कर्तव्य निभाते हैं, परन्तु

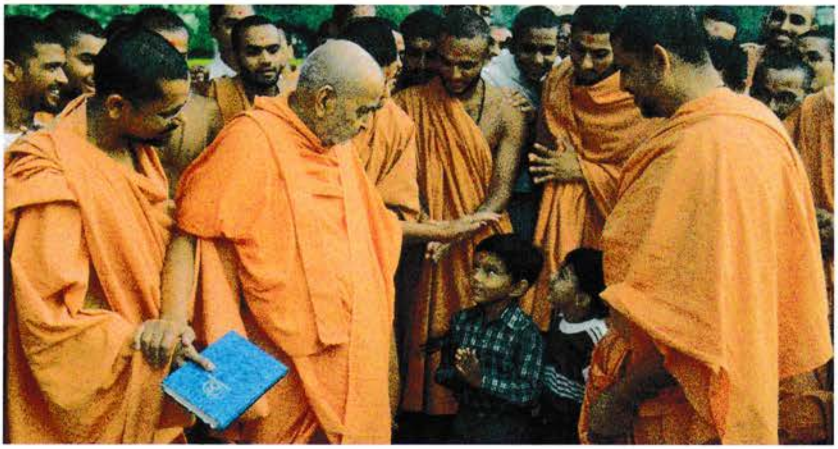

मासूम बच्चों को भी स्वामीश्री का मातृतुल्य आकर्षण...

अंतर में मृदु स्नेह की एक धारा तो शाश्वत रूप से प्रवाहित होती ही रहती है।

'उस बेचारे को दु:ख हुआ होगा...' ऐसा कहकर वे कभी-कभी क्षमायाचना भी कर लेते हैं। अपने शिष्यों अथवा छोटे बच्चों से क्षमा माँगने में भी उनको संकोच नहीं होता। कभी तो वे सार्वजनिक रूप से क्षमा माँगते हैं, तो कभी-कभी आँखों में आँसू आ जाते हैं।

सन् 1994 में करजत (महाराष्ट्र) में आयोजित एक शिविर में, स्वामीश्री ने शिविरार्थियों को बहुत सीख दी। छोटी-छोटी भूलों के लिए भी सभी को स्पष्ट रूप से सावधान किया, परन्तु उनकी मुद्रा देखकर लगता था कि वे स्वाभाविकता के विरुद्ध यह सब कह रहे हैं। शिविर की पूर्णाहुति सभा में स्वामीश्री ने सभी से क्षमा माँगते हुए कहा, 'यदि मैं आपको कुछ अधिक बोल गया हूँ, तो मुझे क्षमा करिएगा...।' इतना कहते हुए तो वे सभा के समक्ष रो पड़े थे। अनेक प्रकार के सामाजिक सेवाकार्यों का संचालन करनेवाली वैश्विक संस्था का संचालन ऐसी मृदुता से करने में उनके संतत्व की कितनी मधुर सुगन्ध प्रसारित होती रहती है!

स्वामीश्री की जन्मजयंती का समारोह, हर बार उनकी नम्रता एवं मृदुता का परिचय लेकर आनेवाला विशिष्ट समारोह है। उक्त अवसर पर उपस्थित भक्तों से वे ऋजुतापूर्वक कहते हैं, 'छोटे-बड़े आप सभी से प्रार्थना है कि आज मुझे आशीर्वाद दें!'

सन् 1995 में लाखों हरिभक्तों ने उनका अमृत महोत्सव मुंबई में मनाया था। संप्रदाय के इतिहास में वह एक अभूतपूर्व समारोह था। निरंतर तीन घंटे तक संतों-हरिभक्तों ने स्वामीश्री के सद्‌गुणों की स्वानुभवपूर्ण घटनाओं का वर्णन किया। वह विशाल सभा किसी दिव्य भावनाओं के प्रवाह में बह रही थी, परन्तु स्वामीश्री उस गुणगान से अलिप्त थे।

आशीर्वचन में वे हज़ारों हरिभक्तों को संबोधित करते हुए बोले, 'आप सभी दूर-दूर से अनेक परेशानियाँ सहते हुए यहाँ आए हैं; परन्तु समीप से मिलने की आपकी इच्छा पूरी न होने का दु:ख अवश्य होगा! मेरी भी यही इच्छा रहती है कि सभी से मिलूँ और यही बात मन में कचोटती रहती है।' इतना कहते ही स्वामीश्री का गला भर आया और आँखें भीग गईं। कुछ क्षणों की खामोशी के बाद उन्होंने पुन: कहा, 'अपना इतना विशाल सत्संग समुदाय है, इसलिए आप ऐसा मत मानना कि स्वामी के साथ भेंट नहीं हो पाई। आप सभी दूर होकर भी मेरे समीप हैं। आपने जो समर्पण-सत्संग किया, उसको भगवान अनंत गुना

मानेंगे तथा आपको सुखी करेंगे। हमारी मुलाकात हो या न हो, आप सभी क्षमा कीजिएगा और प्रसन्न रहिएगा। आप सभी से मुझे यही माँगना है कि योगीजी महाराज के सभी लाडले संतों-हरिभक्तों को मैं प्रसन्न कर सकूँ और आप सभी का आशीर्वाद प्राप्त कर सकूँ, ऐसा बल महाराज (श्रीहरि) मुझे प्रदान करें...।'

लाखों भक्तों के प्रति उनका प्रेम नि:स्वार्थ रूप से बहता रहता है! अपने जन्मदिन पर शिष्यों की भावनाओं को इतनी मृदुलता से संभालकर क्षमा-प्रार्थना करते स्वामीश्री की अश्रुमय छवि, सभी के हृदय में जीवनभर के लिए एक अमिट प्रभाव छोड़ गई। इसके पीछे भी उनकी आध्यात्मिक अनुभूति है। वे मानते हैं कि 'सभी के हृदय में भगवान स्वामिनारायण विराजमान हैं, अत: अत: यदि किसी का हृदय आहत होगा, तो भगवान दु:खी होंगे।'

लोग पूछते हैं कि प्रमुखस्वामीजी में ऐसा क्या है, जो नवयुवकों को आकर्षित कर, उनको अध्यात्ममार्ग पर अभिमुख करता है और उनकी शक्ति को रचनात्मकता प्रदान करता है? स्वामीश्री के पास कौन सी जडी-बूटी है कि मासूम बच्चे भी उनका सामीप्य प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहते हैं? उनके व्यक्तित्व में ऐसा क्या है कि लाखों बाल-युवा-वृद्ध उनको प्राणों से भी अधिक चाहते हैं? विद्वान हो या निरक्षर, धनाढ्य हो, समर्थ नेता हो, प्रखर बौद्धिक हो, नास्तिक हो या विश्व का कोई सत्ताधीश... हर कोई उनके प्रति स्नेह-आकर्षण से क्यों जुड़ा रहता है? उत्तर है : स्वामीजी का वात्सल्यपूर्ण नि:स्वार्थ स्नेह।

उनके नेत्रों में पवित्र स्नेह का महासागर लहराता है। मानवमात्र के प्रति उनके हृदय में ऐसी संवेदनशीलता है, जिसकी तुलना करना ही असंभव है।

अमेरिका के जैक्सनवील नगर की 'हयात रिजन्सी' के विशाल सभागृह में अमेरिका के भौतिक वैभव और समृद्धि में पले-बढ़े हज़ारों युवक, स्वामीश्री में अनन्य आकर्षण का अनुभव करते हैं। पश्चिम की भोगवादी भूमि पर 8,000 बालक-युवक, संयम-नियम के पाठ सीखने हेतु स्वामीश्री के सान्निध्य में एकत्र हुए थे। सभी ने जी भरकर स्वामीश्री के वात्सल्य का अनुभव किया। परन्तु बिदाई के समय सभी की आँखों में मूक वेदना तैर रही थी कि 'स्वामी! क्या अब हमें, आपसे अलग होना पड़ेगा?' बिदा होते समय अनेक युवकों के नेत्रों से आँसू छलक रहे थे।

जिन उद्योगपति भक्त के घर वैभव और धन-दौलत की कोई कमी नहीं है, ऐसे स्वामीजी के लिए हमेशा समर्पित रहनेवाले भी स्वामीश्री की बिदाई के समय रो-रोकर स्वामीश्री को अपने घर रोकने के लिए प्रार्थना करते हैं, 'स्वामीजी! ऐसा अवसर हमें पुन: कब प्राप्त होगा? आप यहीं पर क्यों नहीं रुकते?'

स्वामीजी बोचासण से बिदा हो रहे थे। दर्शन के लिए उमड़ पड़े भक्तों से दूर बैठे ठासरा गाँव के अंधे भक्त मणिभाई के सिर पर हाथ का स्पर्श होते ही उन्होंने पूछा, 'कौन?'

'मैं... प्रमुखस्वामी...!' स्वामीश्री की आवाज़ सुनते ही वे गद्‌गद हो गए। 'अहो! स्वामी!...' उनका कंठ रुंध गया और वाणी लुप्त हो गई। स्वामीश्री का पवित्र स्नेह-स्पर्श पाकर उस वृद्ध हरिभक्त के नेत्रों से अश्रु की धार बहने लगी।

नर्मदा तट के अंतरंग आदिवासी प्रदेश में, चूली गाँव के आदिवासी सत्संगी बंधु

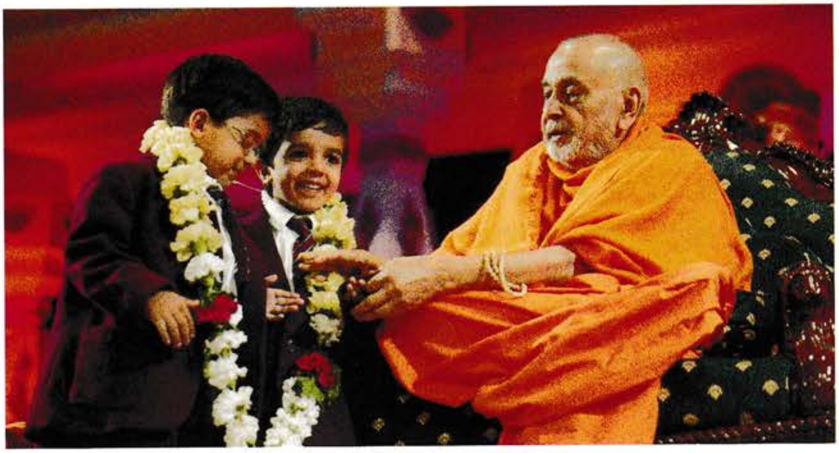

फूलों से मृदु वात्सल्य मूर्ति...

नीमाभाई वर्षों से स्वामीश्री की प्रतीक्षा कर रहे थे। सन् 1978 में एक दिन स्वामीश्री ने उनकी झोपड़ी पावन की। भीतर अंधेरा था, गोबर-मिट्टी और बाँस की लिपाईवाली दीवारों में पड़े गड्ढ़े दिख रहे थे। स्वामीश्री को पूरी तरह झुककर झुग्गी में प्रवेश करना पड़ा। वे अत्यन्त प्रसन्न थे, 'नीमाभाई! लीजिए आशीर्वाद!' नीमाभाई ने प्रेमपूर्वक दूध से बनाया हुआ उड़द का पकौड़ा स्वामीश्री को दिया। टूटी हुई खाट पर बैठकर, ठाकुरजी को भोग लगाकर स्वामीश्री ने उसे अंगीकार किया। नीमाभाई नाच उठे, 'स्वामी! इस उपकार को मैं कैसे चुका पाऊँगा?'

आदिवासी गाँव कंबोई में शनाभाई भोदुभाई का आतिथ्य स्वीकार करके स्वामीश्री उनकी झोपड़ी में गए। उस समय स्वामीश्री की आँखों से कितना प्रेम प्रवाहित हो रहा था!

अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन मायामी नगर में जब स्वामीश्री का दर्शन करने आए, तो उनके हाथ में कॉफी का कप ज्यों का त्यों रह गया; क्योंकि स्वामीश्री के नेत्रों से बहता निर्मल प्रेम उनके हृदय को झंकृत कर गया। 4 अप्रैल, 2001 को श्री क्लिंटन गांधीनगर के अक्षरधाम में पुन: स्वामीश्री के दर्शनार्थ आए, तब स्वामीश्री से मिलते ही वे भावविभोर हो गए। ग्रीष्मऋतु की असह्य गर्मी, तिस पर भी दोपहर का प्रचण्ड ताप; परन्तु स्वामीश्री के सान्निध्य में उनके हृदय के तार शान्ति और दिव्यता के स्पर्श से झंकृत हो उठे! स्वामीश्री के साथ जब वे अक्षरधाम की सीढ़ियाँ उतर रहे थे, तब तक तो उनके हृदय में स्वामीश्री के प्रति उत्कट भाव प्रकट होने लगा। अभी दो-तीन सीढ़ियाँ बाक़ी थीं कि उन्होंने सभी को संबोधित करना शुरू कर दिया, 'आपको पता है! मैं स्वामीजी से मायामी में मिला, उसी दिन से रोमांचित हो गया हूँ। जब मैं उनकी आँखों में देखता हूँ, तो कितनी शुद्ध भावनाएँ उमड़ती नज़र आ रही हैं!'

वे सौपान उतरकर जूते पहनने बैठे तो सामने खड़े स्वामीश्री को देखकर पुन: कहने लगे, 'देखिए, इस दुनिया में कई नेता, कई धर्म संस्थाएँ और कितने ही लोग ऐसे होते हैं कि दूसरों को गिराकर अपना विकास सिद्ध करते हैं। परन्तु स्वामीजी की बात कुछ और है। वे एक अत्यन्त विलक्षण पुरुष हैं। स्वामीश्री सभी के साथ स्वयं जुड़ते हैं - अपने परिमंडल में आए प्रत्येक के साथ, वे संवादिता बनाए रहते हैं। इस समन्वय द्वारा ही वे कार्य करते रहते हैं। इसी कारण वे प्रत्येक के हृदय में शान्ति और संवादिता ला सके हैं तथा इतने सारे लोगों को साथ रख सके हैं।'

'प्रमुखस्वामीजी से मायामी में मेरी पहली मुलाकात हुई, तब उनकी आँखों में मैंने देखा कि वे दूसरों को दबाकर विकसित नहीं हुए। वे दूसरों का उत्कर्ष करते हुए सफल हुए हैं।'
– श्री बिल क्लिन्टन, पूर्व राष्ट्रपति, अमेरिका

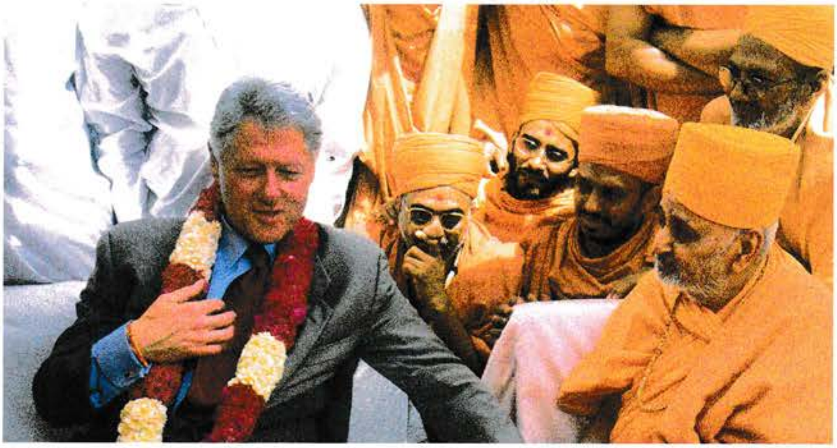

उन्होंने आगे कहा, 'स्वामीश्री से मायामी में मेरी पहली मुलाकात हुई, तब उनकी आँखों में मैंने देखा कि वे दूसरों को दबाकर विकसित नहीं हुए, दूसरों का उत्कर्ष करते हुए सफल हुए हैं। इसीलिए उनके साथ पुन: भेंट करने की मेरी हार्दिक इच्छा थी।'

इतना कहते हुए उन्होंने स्वामीश्री की ओर देखकर साथ ही में रखे दूसरे सोफे पर बैठने का संकेत किया। स्वामीश्री तथा श्री क्लिन्टन तपती हुई धूप में उस प्रकार गोष्ठी करने लगे, जैसे वातानुकूलित कमरे में बैठे हों! क्लिन्टन ने कहा, 'अपनी मान्यता को सिद्ध करने के लिए लोगों को दूसरों की मान्यताओं का खंडन करना पड़ता है, परन्तु स्वामीश्री ऐसे महापुरुष हैं कि जो इन सबसे परे हैं और मैं मानता हूँ कि आज विश्व में एकता की ऐसी विशाल भावना का प्रकट होना, विश्व के लिए बड़ी चुनौती है।'

संतों ने पूछा, 'आपको स्वामीश्री के प्रति ऐसा अनुभव मायामी में प्रथम बार मिलते ही हुआ था?' श्री क्लिन्टन तुरंत ही बोले, 'बिलकुल! मैंने उनके विषय में पढ़ा भी है और आप भी स्वामीश्री के जीवन में वही देख पाएँगे, जिन गुणों का मैंने अभी-अभी जिक्र किया।'

एफ.बी.आई. के अधिकारियों के आश्चर्य के बीच श्री क्लिन्टन समय का भान खोकर तथा सुरक्षा के विचार से परे हटकर स्वामीश्री के स्नेहपूर्ण व्यक्तित्व के गुणगान में लीन हो गए थे। अपने हाथ को उन्होंने स्वामीश्री के हाथ में अर्पण किया था। उनको आगे भी बहुत कुछ कहना था, परन्तु विशेष सुरक्षा अधिकारी श्री ज्योर्ज ने समय का निर्देश दिया, तब क्लिन्टन आनंद भंग होने की मुद्रा में बोल उठे, 'जीवन में जब सचमुच आनंद का प्रवेश होता है, उसी समय वहाँ से निकल जाना पड़ता है!!'

स्वामीश्री की सौम्य प्रभा में उनको आनंद था, किन्तु समय की पाबंदी ने उन्हें उठ खड़े होने के लिए विवश कर दिया। स्वामीश्री के स्नेह पूर्ण सान्निध्य में कितना आकर्षण है!

फिलाडेल्फिया इन्क्वायरर के संपादक श्री रोनाल्ड पटेल ने सन् 1991 में प्रथम बार स्वामीश्री का दर्शन किया। उनके मन में अनेक दुविधाएँ और कुशंकाएँ उमड़-घुमड़ रही थीं। परन्तु स्वामीश्री के दिव्य स्नेह का स्पर्श होते ही वे धन्य हो गए! उन्होंने सन् 1992 में स्वामीश्री के निमंत्रण पर पहली बार अपनी पितृभूमि भारत की यात्रा की, उस समय उनको लगा कि स्वामीश्री मेरे वत्सल पिता के स्थान पर हैं। स्वामीश्री ने रोनाल्ड को अपनी पितृभूमि के साथ कैसे जोड़ दिया, इसका एक लम्बा इतिहास है, परन्तु उक्त मुलाकात के

बाद रोनाल्ड का नाता स्वामीश्री के साथ अटूट स्नेह में बदल गया। अपनी अनुभूति को प्रकट करते हुए उन्होंने अमेरिका से एक विशेष अंक प्रकाशित किया था।

1998 में स्वामीश्री के हृदय की बायपास सर्जरी के समय उन्होंने 'शतं जीव शरदः' की शुभकामना व्यक्त करते हुए लिखा था, 'आपकी आँखों में मुझे माता और पिता का वात्सल्य दिखता है। आप मेरे माता और पिता हैं, अत्यंत प्रिय स्वजन हैं! सर्वस्व हैं।'

अमेरिकी जीवनशैली में पनपते एक तर्कशील साहित्य सर्जक तथा बौद्धिक पत्रकार के हृदय में, स्वामीश्री के स्नेह का कैसा अमिट प्रभाव छा गया! शब्दों के शहानशाहों के शब्द-तार टूटने लगे, यही स्वामीश्री के अद्‌भुत स्नेह का परिणाम है।

दूसरी ओर शाहीबाग, अहमदाबाद स्थित स्वामिनारायण मंदिर के प्रकाशन विभाग में कार्यरत चतुर नाम के एक जन्मजात गूँगे और बहरे युवक के साथ स्वामीश्री का आत्मीय नाता है! जब उसके साथ स्वामीश्री सांकेतिक भाषा में वार्तालाप करते हैं और स्नेह बरसाते हैं, तब हर किसी को स्वामीश्री की आत्मीय गोष्ठी और गूंगे की भाषा को समझने की कुशलता पर आश्चर्य होता है! जिस समय स्वामीश्री लंदन में पधारते हैं, उस समय युवकों के लिए जैसे दिव्य स्नेह का वसंत छा गया हो!

रात्रि लगभग 10 बजे का समय; समग्र महानगर को बर्फ बना देनेवाली कड़ाके की ठंड पड़ रही है। ऐसी परिस्थिति में भी लंदन स्वामिनारायण मंदिर के एक विशाल कक्ष में भारी संख्या में बाल-युवक प्रतीक्षारत खड़े हैं! किसकी प्रतीक्षा में? प्रमुखस्वामी महाराज की...! दिनभर विभिन्न सेवाओं में रत ये स्वयंसेवक मात्र 5 मिनट के लिए स्वामीश्री के दर्शन-सान्निध्य हेतु कितने आतुर हैं! ज्यों ही स्वामीश्री कक्ष में प्रवेश करते हैं, युवकों के तन-मन में दिव्य-स्नेहमयी चेतना झंकृत हो जाती है।

वे स्वयंसेवक पाँच मिनट में ऐसी अनुभूति लेकर वहाँ से जाते हैं, जिसकी व्याख्या करना संभव ही नहीं! एक प्रसिद्ध लोकनेता ने जब वह दृश्य देखा, तो वे दंग रह गए। अब उनकी समझ में आया कि युवकों के आकर्षण का मुख्य कारण क्या है?

वह आकर्षण है -स्वामीश्री के मृदुल स्नेह का...!

छोटे-छोटे बच्चे भी जब स्वामीश्री के गले लग जाते हैं, तब वे कुछ पलों के लिए माँ को भी भूल जाते हैं! यहाँ उन्हें सौ-सौ माताओं का स्नेह एक साथ मिल जाता है।

छः वर्षीय अभय जयस्वाल अपने मामा के साथ बोचासण आया था। वह तोतली बोली में बोला, 'स्वामीजी! कारवण गाँव में आओ न!' स्वामीश्री ने कहा था, 'समय मिलते ही जरूर आऊँगा।' स्वामीश्री और अभय के बीच बहुत लंबी गोष्ठी चली। स्वामीश्री ने उसे आशीर्वाद दिया, परन्तु उसके आमंत्रण को भूले नहीं।

चार वर्ष के बाद 3 मार्च 1997 को स्वामीश्री बड़ौदा जिले के पोर गाँव में पधारे थे। आगे दो दिन का कार्यक्रम निश्चित था, परन्तु स्वामीश्री के कार्यक्रम का किसी को पता नहीं था। साथ रहनेवाले सेवक संतों को भी नहीं! उसी दिन प्रातःकाल स्वामीश्री ने कहा, 'हमें कारवण जाना है!' और स्वामीश्री ने अभय के घर जाकर उसकी भावना पूर्ण की। एक छोटे से बालक के लिए ही उन्होंने दो दिन अपने कार्यक्रम आरक्षित रखे थे!

स्वामीश्री की इस मृदुता और प्रीति के कई रंग हैं। भरुच के युवक भास्कर मेहता को बचपन से ही पिता का वियोग था। स्वामीश्री के स्नेह-छत्र के नीचे उसका जीवन गढ़न

हो रहा था। भास्कर को संस्था में त्यागी होने की उमंग थी, वह युवावस्था में उसी प्रकार की जीवन-शैली अपनाने का प्रयत्न करने लगा। परन्तु अकेली माता की देखभाल कौन करेगा? यह प्रश्न उसके भीतर को कुरेद रहा था। स्वामीश्री ने इसीलिए भास्कर को विवाह करने का आदेश दिया और एक सत्संगी परिवार की संस्कारी कन्या का भी निर्देश किया। विवाह तय हुआ, परन्तु पर्याप्त धनराशि कहाँ से आती?

स्वामीश्री ने कहा, 'विवाह की चिंता मत करना। हम भरुच आनेवाले हैं, वहाँ तेरे विवाह और भोजन समारोह का आयोजन हो जाएगा। अपने सगे-सम्बंधियों को निमंत्रित कर देना।' स्वामीश्री ने कन्यापक्ष की सुविधा का भी ध्यान रखा। कन्या के भाई समीर ने स्वामीश्री से कहा, 'स्वामीजी! हमें तो मंदिर में दान देना चाहिए, मंदिर से ऋण लिया नहीं जाता और न तो मंदिर का कुछ खाया जाता है!'

स्वामीश्री ने कहा, 'वह सब ठीक है, किन्तु तेरे पिताजी और चाचाजी ने मंदिर की खूब सेवा की है। वर्तमान समय में तुम्हारी स्थिति इतनी अच्छी नहीं है, अत: इस विषय में ऐसा मत सोचना। यह विवाह भगवान स्वयं करवा रहे हैं, ऐसा मानकर चलो।'

भास्कर का विवाह मंदिर के परिसर में सम्पन्न हुआ। स्वामीश्री ने धूमधाम से उसका विवाह सम्पन्न करवाया। बचपन से ही पिता से बिछड़े हुए इस युवक के लिए स्वामीश्री 'पिता' बने, तो कन्या भी बाल्यावस्था से पिता की छत्रछाया गँवा चुकी थी। आज दोनों को जन्म-जन्मान्तर के पिता की छत्रछाया प्राप्त हो गई!

स्वामीश्री के चरण में जीवन समर्पित कर देनेवाले संतों के पास स्वामीश्री की मृदुता और स्नेह के इतने अनुभव हैं कि उनसे ग्रन्थ के ग्रन्थ भरे जा सकते हैं! किन-किन परिस्थितियों में स्वामीश्री ने अपने स्नेह और मृदुता से उन्हें सहेज रखा है; उसका स्मरण होते ही संतों की आँखें कृतार्थता के आँसू से भीग जाती हैं।

बीमार संत को देखकर स्वामीश्री के भीतर सेवा की उमंग उठने लगती हैं। डॉक्टर से लेकर उनके भोजन तक की व्यवस्था स्वयं ही करने लगते हैं। सर्वमंगलदास स्वामी बीमार हुए, तब दो वर्ष तक स्वामीश्री, उनकी संभाल करते-करवाते रहे। सारंगपुर में नव दीक्षित संत योगमुनिदास स्वामी को दुर्घटनावश फ्रेक्चर हो गया और घाव पक गया था। महीने भर के लिए शय्याधीन में ही रहना पड़ा था। उस समय स्वामीश्री का स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं था। परन्तु वे प्रतिदिन सुबह-शाम योगमुनि स्वामी को देखने अवश्य जाया करते थे!

बालमुकुंददास स्वामी और त्यागवल्लभदास स्वामी संस्था के वरिष्ठ संत हैं। बीमारी के समय स्वामीश्री का स्नेह पाकर त्यागवल्लभदास स्वामी कृतकृत्य होकर लिखते हैं कि 'उस अवसर पर मुझे अनुभव हुआ कि स्वामीश्री मुझ से कितना प्रेम रखते हैं। मैं उनका स्मरण करता हूँ, उससे अधिक तो मुझे, वे याद किया करते हैं। मुझे उनके प्रति स्नेह है, उससे अनंतगुना स्नेह स्वामीश्री को मेरे प्रति है। बस, इतनी ही प्रतीति मेरे मन को आनन्द से भर देती है। स्वामीश्री ने मेरी योग्यता से भी कई अधिक गुनी प्रसन्नता मुझे दे दी है। मुझे इससे अधिक और कुछ नहीं चाहिए।'

संतों के लिए अनिवार्य सुविधा जुटा देना तथा उनके स्वास्थ्य के प्रति तनिक भी लापरवाही न बरतना स्वामीश्री का स्वभाव है। सन् 1980 में नैरोबी के केन्याटा हॉल में सभा के उपलक्ष्य में नारायणमुनि स्वामी पूर्व तैयारी के लिए पहुँच गए थे। सभा समाप्त होते ही स्वामीश्री ने दोनों संतों को बुलाकर तत्काल भोजन कर लेने के लिए सूचित किया।

क्योंकि अगले दिन एकादशी का निर्जल उपवास था और बिना भोजन किए उन दोनों संतों को दूसरे दिन तकलीफ हो सकती थी। कितनी छोटी सी बात, किन्तु स्वामीजी की दृष्टि उससे भी नहीं चूक सकती! स्वामीश्री ने दोनों संतों के लिए निवास स्थान पर पहुँचने के लिए मोटरकार भी पहले से तैयार रखवाई थी और निवास स्थान पर भोजन भी तैयार!

इसी नि:स्वार्थ स्नेह के लिए भक्त कवि ने उनके लिए लिखा है कि 'स्नेह करत हो ऐसा, अगणित जननी जैसा।' कईबार ऐसा भी घटित हुआ है कि अस्पताल में दर्द से कराहते किसी हरिभक्त की जिह्वा पर स्वामीश्री की रटना लगी हो कि स्वामीश्री समाचार पाते ही अपने कार्यक्रम में परिवर्तन करके अस्पताल पहुँच जाते हैं।

रढु के रतनसिंह को त्वचा का असाध्य रोग था। पूरा शरीर रोग के कारण सड़ रहा था, जिसे छूने में डॉक्टर या नर्स को भी घृणा होती थी। यहां तक कि उनकी धर्मपत्नी को भी समीप रहने में असह्य संत्रास का अनुभव होता था। रतनसिंह समझ नहीं पा रहे थे कि उन्हें कौन से कर्म का ऐसा कुत्सित फल मिला है! नडियाद के एक अस्पताल में रतनसिंह मौत की प्रतीक्षा कर रहे थे। अचानक उन्हें खबर मिली कि स्वामीश्री उनको आशीर्वाद देने आ रहे हैं! समाचार सुनते ही वे पागल-से हो गए। कुछ मिनटों में ही स्वामीश्री पहुँच गए। अति सहजतापूर्वक उनके पलंग में बैठकर पूछने लगे, 'रतनसिंह, कैसे हैं? अब चिन्ता मत करना सबकुछ ठीक हो जाएगा।' स्वामीश्री के वात्सल्यसागर में गोता लगाते हुए रतनसिंह की आँखें अविरत बरसने लगीं। कैसी करुणा! मेरे जैसे गरीब के लिए कितना कष्ट उठाते हैं आप! रतनसिंह निहाल हो रहे थे। क्योंकि उनके पीब से सने हुए शरीर पर स्वामीजी का स्नेहपूर्ण मृदुल हाथ पसर रहा था। रतनसिंह के रोम-रोम में शीतलता व्याप्त हो गई। बड़ी देर तक स्वामीश्री उनके पलंग पर ही बैठे रहे और आशीर्वाद देते हुए कहने लगे, 'कुछ नहीं होगा, सब कुछ अच्छा हो जाएगा!'

रतनसिंह ने कृतज्ञतापूर्वक स्वामीश्री के करुणापूर्ण नेत्रों से प्रवाहित होता दिव्य वात्सल्य का अनुभव करते रहे, 'मेरे जैसे साधारण व्यक्ति के लिए ऐसे महापुरुष कितनी बड़ी कृपा कर सकते हैं!' उनका पूरा शरीर निरामय हो गया! वे कहते हैं कि रोग मेरे लिए अभिशाप के रूप में नहीं; स्वामीश्री के आशीर्वाद की अनमोल भेंट देने के लिए आया था!

कैंसर के दर्द से पीड़ित डाह्याभाई को कल्पना तक नहीं थी कि उनके लींबासी गाँव में

स्वामीश्री उनका घर ढूँढ़ते हुए पहुँच जाएँगे!

सन् 1988 में स्वामीश्री, भवानपुरा से बोचासण जा रहे थे। स्वामीश्री ने अचानक वाहन चालक को एक अलग रास्ते की ओर संकेत किया, जो लींबासी की ओर जाता था। स्वामीश्री की कार कुछ ही मिनटों में लींबासी गाँव में आकर रुकी। रात को 9.00 बजे एक के बाद एक गली पार करते हुए स्वामीश्री डाह्याभाई के घर पहुँच गए। दरवाजा खटखटाया, डाह्याभाई चकित रह गए, 'अरे स्वामी! आप यहाँ? इतनी रात गए?' उनकी आँखों से हर्ष के आँसू छलक पड़े। स्वामीश्री के स्नेह ने उनके जीवन के अंतिम क्षणों को धन्य कर दिया।

अब देखें जयकृष्णभाई पटेल के देहावसान के बाद घटी एक ऐसी घटना, जो हमारे हृदय की संवेदना के तारों को झंकृत कर देती है! सन् 1990 में स्वामीश्री इंग्लैण्ड के कोलचेस्टर नगर में पधारे थे। समर्पित हरिभक्त श्री मोरजरिया के घर पधरावनी की। फिर वहाँ ठाकुरजी की सामग्रियों के साथ स्वामीश्री ने जलकूजा और अपनी पघड़ी रखवा दी, फिर सभी को मंदिर जाने का आदेश दे दिया। निश्चित समय पर स्वामीश्री मोरजरिया के घर से दक्षिण लंदन की ओर निकल पड़े। वाहनचालक अरुण कुमार को उन्होंने आदेश दिया कि गाड़ी तीव्र गति से ले जाएँ, जल्दी पहुँचना है। लंदन के मार्गों को चीरती हुई मोटरकार एक स्मशानगृह के पास ठहर गई। यहाँ हिन्दुओं के लिए एक छोटा-सा अग्नि संस्कार गृह तैयार किया गया था। दूर तक एक डरावना सन्नाटा फैला हुआ था।

कुछ देर के लिए स्वामीश्री निर्जन कब्रस्तान की एक बैठक पर किसी की प्रतीक्षा में बैठ गए! पौने घंटे तक वे कब्रस्तान के टुम्बस्टोन पर लिखी नामावली पढ़ते रहे।

कोई नहीं जानता था कि स्वामीश्री किसकी प्रतीक्षा कर रहे थे, अचानक एक छोटा सा हिन्दू समुदाय जयकृष्णभाई पटेल के शव को लेकर अग्निसंस्कार के लिए यहाँ आ पहुँचा। उन्होंने जब स्वामीश्री को सुनसान कब्रस्तान में जयकृष्ण पटेल के शव की प्रतीक्षा में देखा, तो सभी आश्चर्य के साथ गद्‌गद हो गए! स्वयं जयकृष्णभाई के पुत्रों को भी पता नहीं था कि स्वामीश्री यहाँ आशीर्वाद देने के लिए आकर प्रतीक्षा करते होंगे!

कुछ दिनों पूर्व स्वामीश्री क्रोली उपनगर में थे, तब मरणशय्या पर पड़े हुए जयकृष्णभाई ने उनको फोन पर कहा था कि 'स्वामीजी मुझे अंतसमय पर आप स्वयं लेने के लिए पधारना! और मेरे अग्नि संस्कार के समय आप अवश्य उपस्थित रहने की कृपा करना!' स्वामीश्री ने उनकी अंतिम अभिलाषा इस प्रकार से पूर्ण की।

स्वामीश्री जब 21 वर्ष की आयु में गुजरात स्थित भादरण में संस्कृत का विशेष अध्ययन कर रहे थे, तब गाँव के मूल निवासी जयकृष्णभाई तथा उनके पिताश्री ईश्वरभाई का स्नेह-सम्बंध स्वामीश्री के साथ अत्यन्त घनिष्ठ रह चुका था। जयकृष्णभाई अफ्रीका में थे, फिर भी स्वामीश्री ने उनकी देखभाल की थी, उनकी भावना अंत समय तक वैसी ही बनी रही।

स्वामीश्री ने मृतदेह की अरथी का पूजन किया। स्वयं अपने हाथों से अंतिम विधि की। स्थानीय प्रथा के अनुसार मरणांत श्रद्धांजलि अर्पण की। अरथी जब तक इलेक्ट्रिक भट्ठी तक पहुँचे, स्वामीश्री ने अपना कंधा दिया। जयकृष्णभाई का शरीर भले ही पंचमहाभूत में विलीन हो गया, परन्तु स्वामीश्री का स्नेह उनकी पवित्र आत्मा का चिर साथी बन गया।

यह है स्वामीश्री का अनिर्वचनीय एवं नितांत स्नेह। यह है पुष्प से भी अधिक उनकी कोमल मृदुलता। इसलिए हर कोई उन्हें प्रिय है और वे सभी को प्रिय हैं। ◆

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

कीर्तिः मानः

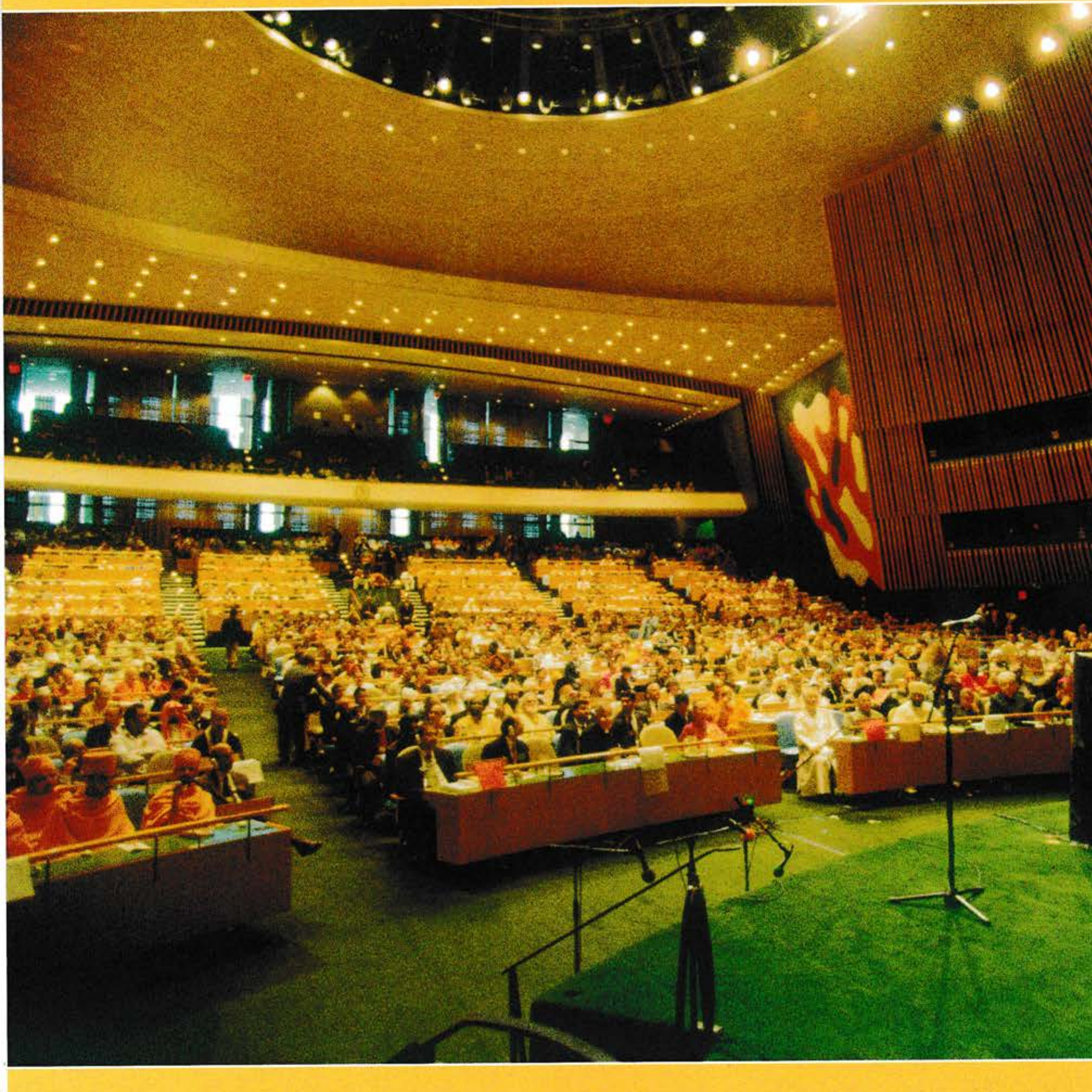

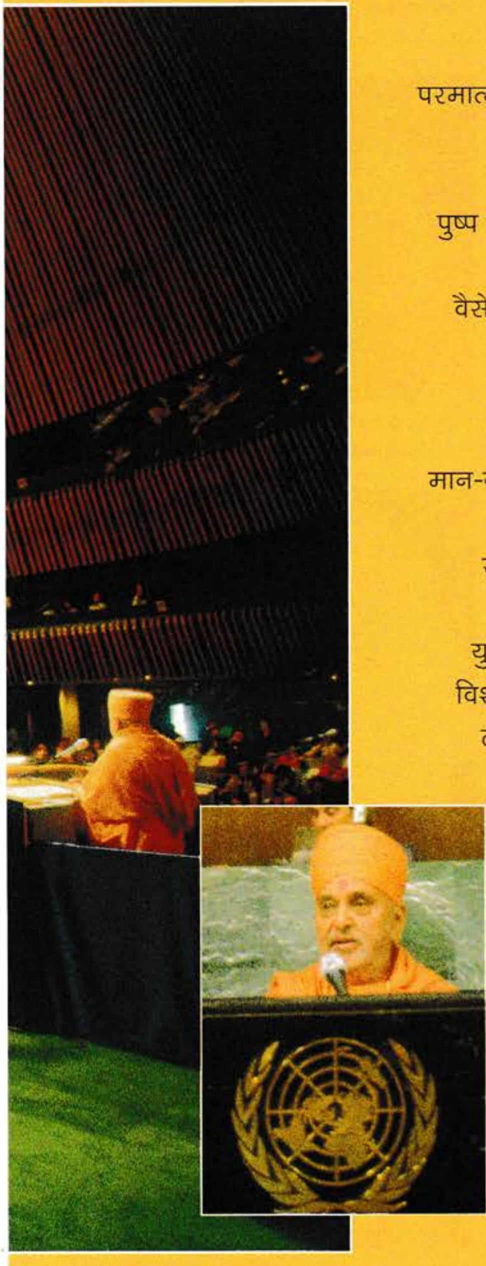

कीर्तिः अर्थात् यश।

मानः अर्थात् पूजा की योग्यता।

परमात्मा की दिव्यता का ही एक प्रभाव यह है कि सर्वत्र उनकी यश पताका फहराती है, उनके लिए मान-आदर-पूजा की वर्षा होती है।

गुणातीत संत के लिए भी ऐसा ही है।

पुष्प को अपना सौरभ प्रसारित करने के लिए प्रयास नहीं करना पड़ता, सौरभ का प्रसार सहज और स्वाभाविक होता है।

वैसे ही गुणातीत संत अपने यश के लिए न तो कोई प्रयास करते हैं; न ही उन्हें इसकी कोई आकांक्षा रहती है।

फिर भी सारे संसार में उनका यश स्वतः फैल जाता है।

यह उनकी दिव्यता का ही प्रभाव है।

मान-यश की लालसा से सदा अलिप्त, कीर्ति की कामना से सर्वथा मुक्त, प्रमुखस्वामी महाराज के मस्तक पर निरंतर और सर्वत्र आदर-सन्मान-कीर्ति तथा यश का अभिषेक होता रहा है; इसमें उनकी भगवत्प्रतिभा का दर्शन होता है।

युनाइटेड नेशन्स से लेकर सौराष्ट्र के गाँवों की ग्रामपंचायतों तक, विश्व के अग्रणी महानुभावों से लेकर गाँव के साधारण किसान तक, लोग उन्हें अतिशय चाहते हैं; असीम आदर प्रदान करते हैं और अनवरत उनके यशोगान गाते हैं;

सारे संसार में उनका सम्मान होता है।

इसकी पृष्ठभूमि में उनकी परम पवित्र और निर्मल-शुद्ध प्रतिभा है। उन सभी के आदरपूर्ण प्रतिभावों से एक महानग्रंथ की रचना हो सकती है।

उतने विशाल संचय में से कुछ अवतरण यहाँ प्रस्तुत हैं, जिसमें उनकी दिव्यकीर्ति की सुवास महकती है।

सत्ता और संपत्ति के लिए कभी न संतुष्ट होनेवाला लोभ से प्रेरित यह जगत, आजकल अधिक भौतिकवादी बनता जा रहा है। मनुष्य के मन में एक विचित्र सी शून्यता है। ऐसी स्थिति में आज के युग में धार्मिक प्रणालिकाएँ अत्यन्त ही अनिवार्य हैं। हमारे महान संतों ने अपने उदाहरण द्वारा संतोष,

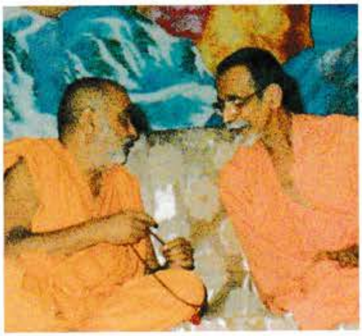

दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष
पूज्य स्वामी चिदानंदजी महाराज के साथ

चिन्मय मिशन के अध्यक्ष
पूज्य स्वामी चिन्मयानंदजी के साथ

रामकृष्ण मिशन के अध्यक्ष
पूज्य रंगनाथानंदजी के साथ...

जैनाचार्य पूज्य मुनि
श्री सुशीलकुमार के साथ...

बौद्ध धर्मगुरु पूज्य दलाई लामा के साथ...

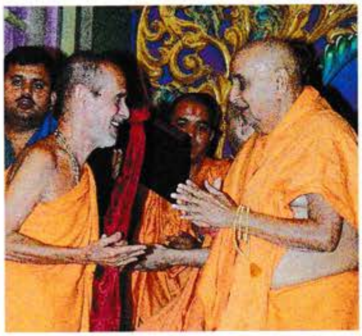

पेजावर मठ के मध्वाचार्य
पूज्य विश्वेशतीर्थजी के साथ...

अखिल भारत साधुसमाज के महान धर्माचार्यों के साथ...

ईसाई धर्माध्यक्ष जॉन पॉल द्वितीय के साथ...

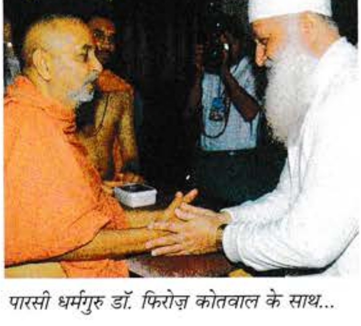

पारसी धर्मगुरु डॉ. फिरोज़ कोतवाल के साथ...

दाउदी वोरा धर्माध्यक्ष डॉ. वाय. के. नज़मुद्दीन के साथ...

इज़रायल में यहूदी धर्माध्यक्ष रबाई लाउ के साथ...

सहिष्णुता और निःस्वार्थ सेवा की प्रेरणा दी है। आज के युग में उसके उदाहरण हैं : प्रमुखस्वामी महाराज।

- पूज्य दलाई लामा (बौद्ध धर्मगुरु)

'प्रमुखस्वामी महाराज में मैंने अत्यंत ही सादगी, आचारपूर्ण विनम्रता और अहंशून्यता के दर्शन किए हैं। उनके सिर पर कितनी जिम्मेदारियाँ हैं, परन्तु वे कितने तरोताज़ा लगते हैं! कारण यह है कि सर्वोपरि भगवान श्रीस्वामिनारायण के प्रति वे अनन्य शरणागति का भाव रखते हैं और भगवान की दिव्यकृपा से प्राप्त हुई सेवा में निष्ठापूर्वक अपने आपको मात्र 'निमित्त रूप' ही मानते हैं।

- पूज्य स्वामीश्री चिदानंद सरस्वतीजी (दिव्यजीवन संघ, हृषीकेश)

'आध्यात्मिक प्रगति तो उनके ही द्वारा होती है, जिन महापुरुष के पास भगवान हों। प्रमुखस्वामी महाराज ऐसे महापुरुष हैं। उनका प्रसंग (सम्बंध) हो जाए तो संसार से वृत्ति सिमट जाती है।'

- पूज्य स्वामी चिन्मयानंदजी (चिन्मय मिशन)

'प्रमुखस्वामी महाराज में मैत्री का भाव देखकर मुझे लगा कि ऐसा वातावरण समग्र देश का हो जाए, तो सांप्रदायिक समस्याओं का शीघ्र समाधान हो सकता है। उन्होंने सचमुच त्याग किया है, तपश्चर्या की है।'

- आचार्य महाप्रज्ञजी (जैनाचार्य, तेरापंथ)

'बुद्ध और तीर्थंकर, राम और कृष्ण, कबीर और नानक आदि संतों तथा अवतारों ने भारत को संवर्धित किया है। अब कोई आए उसकी प्रतीक्षा है कि जो भारतीय संस्कृति के संस्कारों से हमें सिंचित करे। कौटुंबिक, आध्यात्मिक, सामाजिक और राजकीय स्तर पर पुष्टि दे। भगवान की कृपा से ऐसे महापुरुष हमें मिले हैं। उनका नाम है - प्रमुखस्वामी महाराज। भारत की एकता का निर्माण करना हो, तो प्रमुखस्वामी के नेतृत्व के नीचे एक बन सकेगा। प्रमुखस्वामी, स्वामिनारायण संप्रदाय के प्रमुख नहीं है, हिन्दू धर्म के प्रमुख हैं। हिन्दूधर्म के ही नहीं, परन्तु भारतीय समाज के प्रमुख हैं।'

- जैनाचार्य श्री सुशीलकुमारजी (वर्ल्ड फेलोशीप और रिलिजियन, यु.एस.)

'प्रमुखस्वामी महाराज के जीवन और बोध में मुझे भक्तिपूर्ण सौंदर्य देखने को मिला है। भारत और विश्वभर में संवादिता स्थापित करने के लिए उनके द्वारा हो रहे अविरत कार्यों में मुझे वह सौंदर्य दिखता है। सभी का स्वागत कर, उन्होंने प्रतिशोध लेने की वृत्ति का निषेध किया है, वही उनका आत्मिक सौंदर्य है और यही सौंदर्य प्रमुखस्वामी महाराज के संदेश में अभिव्यक्त हुआ है, दूसरों की भलाई में हमारा भला है और दूसरों की शान्ति में हमारी शान्ति है।'

- डो. रोवन विलियम्स (आर्कबिशप आफ केन्टरबरी, इंग्लैण्ड)

'प्रमुखस्वामी महाराज की विनम्रता और जीवप्राणी मात्र के प्रति उनकी सहानुभूति मेरे हृदय में छू गई है।'

- प्रिन्स चार्ल्स (ब्रिटिश राजकुमार, यु.के.)

'मैं जब प्रमुखस्वामी की आँखों में देखता हूँ, तब मैं देख सकता हूँ कि वहाँ शुद्ध भावनाएँ छलक रही हैं। मैंने उनकी आँखों में देखा कि वे दूसरों को दबाकर विकसित नहीं हुए। वे दूसरों का उत्कर्ष करते हुए सफल हुए हैं। वे दूसरों को आगे कर, आगे आए हैं, इसी

ब्रिटेन के प्रिन्स चार्ल्स के साथ...

अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिन्टन के साथ...

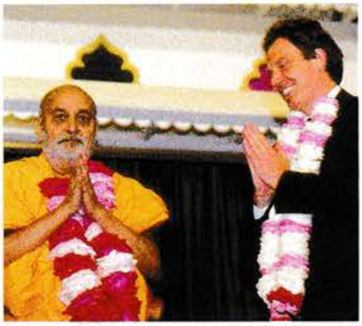

इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर के साथ...

ब्रिटेन के प्रिन्स फिलीप के साथ...

इज़राईल के प्रधानमंत्री सिमोन पेरस के साथ...

संयुक्त राष्ट्रसंघ के महामंत्री श्री कॉफी अन्नान के साथ...

केनेडा के प्रधानमंत्री श्री स्टीफन हार्पर के साथ...

बहरीन के राजा इसा बिन सलमान अल खलीफा के साथ...

सल्तनते ओमान दीवान सैयद सैफ बिन हामद के साथ...

बहरीन के प्रधानमंत्री खलीफा बिन सलमान अल खलीफा के साथ...

कारण वे समाज में शान्ति और संवादिता स्थापित कर सके हैं।'

- श्री बिल क्लिन्टन (पूर्व राष्ट्रप्रमुख, यू.एस.ए.)

'जब मैं प्रमुखस्वामीजी के सम्मुख बैठा था, तब मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि उनके व्यक्तित्व से कोई दिव्य और अत्यंत शक्तिशाली तत्त्व बह रहा है। उनके सामने बैठते ही सारी चिंता धुल जाती है। लोगों को वे सचमुच हृदयपूर्वक चाहते हैं। इसीलिए लोगों के दु:ख उनके अपने दु:ख बन जाते हैं। उनके व्यक्तित्व की यह विशेषता मैंने स्पष्टरूप से देखी है।'

- डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम (भूतपूर्व राष्ट्रपतिश्री, भारत)

'आप भारतीय संस्कृति की रक्षा कर रहे हैं। मैंने कई बार आपके विषय में सुना था, पढा था, परन्तु प्रत्यक्ष देखने से प्रभाव और अधिक पड़ा। मैं मानता हूँ कि आप समाज-सुधार तथा आध्यात्मिक जागृति के लिए प्रयत्न और आयोजन कर रहे हैं। बहुत कम समय में मैं देख सका हूँ कि अत्यन्त बुद्धिशाली इंजीनियर्स, वैज्ञानिक, तकनीशियन तथा तत्त्वचिंतकों की एक फौज आपके पास है, जो आपके मार्गदर्शन में बहुत सुंदर कार्य कर रही है। आध्यात्मिक शक्ति के बिना ऐसे लोगों को किसी भी तरह आकृष्ट नहीं किया जा सकता।'

- श्री ज्ञानी जैलसिंह (पूर्व राष्ट्रपतिश्री, भारत)

'मैं दस वर्ष पहले यहाँ आया था, तब पूज्य प्रमुखस्वामी महाराज से मिलने का सद्‌भाग्य प्राप्त हुआ था। मैं तब भी प्रभावित हुआ था और आज भी बहुत प्रभावित हूँ। उसका कारण है, पूज्य स्वामीजी द्वारा प्राप्त आध्यात्मिक अनुभूति! स्वामिनारायण भगवान की सर्व-उत्कर्ष की भावना और स्पिरिट, मैं उनमें जीवंतरूप से देख रहा हूँ।'

- श्री टोनी ब्लेयर (पूर्व प्रधानमंत्री, यु.के.)

'आपने अक्षरधाम का निर्माण करके समग्र विश्व के लिए प्रेरणाधाम बना दिया है। अपने पुरातन इतिहास को देखकर मेरे अंतर में गौरव का भाव प्रकट हुआ है। स्वामीजी, आनेवाली पीढ़ियाँ आपको याद करेंगी, आपको समस्त मानव जाति याद करेगी। आपने अक्षरधाम का निर्माण न किया होता, तो भारतीय सांस्कृतिक गौरव मिट गया होता।'

- जस्टिस श्री वाय. के. सबरवाल (चीफ जस्टिस, सुप्रीम कोर्ट)

'प्राचीनकाल से ही देश की महत्ता सत्पुरुषों के कारण ही बनी है। आज भारत में जो संत हैं, उनमें प्रमुखस्वामी महाराज का नाम और कार्य सर्वोत्तम है, उसमें कोई संदेह नहीं है और यह बात केवल भारत के लिए ही सीमित नहीं है, वे समग्र विश्व में विख्यात हैं। वे भारत की सात्त्विकता और नैतिकता के मूर्तिमंत स्वरूप हैं।'

- श्री लालकृष्ण अडवाणीजी (पूर्व उपप्रधानमंत्री)

'प्रमुखस्वामी की आत्मा की पवित्रता - निर्मलता मुझे सबसे अधिक छू गई है। एक अंतर्राष्ट्रीय पत्रकार के रूप में मैंने कई महानुभावों का इन्टरव्यू लिया है। परन्तु, उनमें मुझे जो देखने मिला है, वो अन्य कहीं भी नहीं मिला और वह है - उनकी निर्मलता। उनके उत्तरों में कहीं भी मलिनता नहीं है। निरी पवित्रता! कहीं भी प्रसिद्धि अथवा स्वार्थवृत्ति का भाव ही नहीं!'

- श्री रोनाल्ड पटेल (मुख्य संपादक, फिलाडेल्फीया इन्क्वायरर, सन्डे संस्करण, यु.एस.ए)

'विश्व के मानवों को प्रमुखस्वामी महाराज ने कितना सबकुछ दिया है, सचमुच वह अवर्णनीय है। उनके दर्शन से, उनके वार्तालाप में, उनके आशीर्वाद में मैंने जो प्राप्त किया है, वह शब्दातीत है। ऐसे संत शिरोमणि और ऋषितुल्य संत की प्राप्ति में ही अवतारवाद की

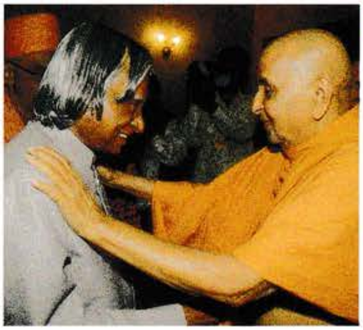

राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के साथ...

भारत के प्रधानमंत्री श्री मनमोहनसिंह तथा विरोध पक्ष के नेता श्री लालकृष्ण अडवाणीजी के साथ...

पूर्व अफ्रीका - केन्या के मुक्तिदाता राष्ट्रप्रमुख जोमो केन्याटा के साथ...

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री ज्ञानी जैलसिंह के साथ...

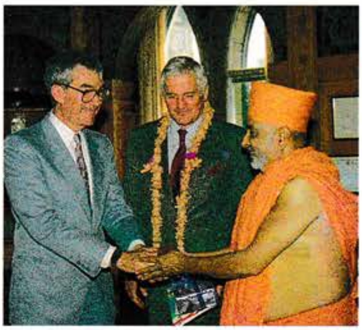

केनेडा की पार्लियामेन्ट में अभिवादन समारोह में...

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के हाउस ऑफ कोमन्स में ऐतिहासिक सम्मान समारोह के अवसर पर...

तंजानिया के राष्ट्रपति जुलियस न्यरेरे के साथ...

युगान्डा के राष्ट्रपति योवेरी कागुरा मुसेवेनी के साथ...

ट्रीनीडाड के प्रधानमंत्री वासुदेव पाण्डेय के साथ...

सार्थकता है। गीता में कहा है, 'संभवामि युगे युगे...' प्रत्येक युग में मैं अवतरित होता हूँ। भारतवर्ष का वह सनातन सातत्य, चैतन्य स्वरूप में स्वामीजी द्वारा अवतरित हुआ है।

गंगाजल समान उनका स्वभाव है। मैं जब कभी भी उनको देखता हूँ, तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे मैं गंगास्नान कर रहा हूँ! ऐसा विशुद्ध-प्रबुद्ध उनका प्रदान है।

- श्री एल.एम. संघवी (इंग्लैण्ड के पूर्व भारतीय राजदूत)

'बी.ए.पी.एस. संस्था के प्रमुख होते हुए भी मैंने प्रमुखस्वामी को सारंगपुर में धूल-मिट्टी, गोबर से छोटे से कमरे की लिपाई करते अपनी आँखों से देखा है। मैं संस्था का प्रमुख हूँ और ऐसा काम मैं क्यों करूँ? ऐसा भाव उनके मन के किसी कोने में भी नहीं है। अहंकार का अंश उनमें कहीं भी नहीं है। सभी के जीव में भगवान को देखनेवाले प्रमुखस्वामी महाराज एक विभूति हैं।'

- जस्टिस बी.जे. दीवान (पूर्व मुख्य न्यायमूर्ति, गुजरात हाईकोर्ट)

'नये युग के सात अजूबे का मूल्यांकन करने लगे, तो सर्वप्रथम 'अक्षरधाम' का क्रम आएगा। यह कल्पनातीत है। प्रमुखस्वामी महाराज के चमत्कारों में से यह एक चमत्कार है। कोई शहंशाह ऐसा काम नहीं कर सकता, कोई सरकार भी नहीं कर सकती, कोई आंतर्राष्ट्रीय संस्था भी नहीं कर सकती। विश्वभर की सरकारों और संस्थाओं को यहाँ से प्रेरणा लेनी चाहिए।'

- श्री डी.आर. कार्तिकियन् (डायरेक्टर जनरल, मानव अधिकार पंच)

'प्रमुखस्वामी इस देश के महान आध्यात्मिक नेता हैं। मैं, उनसे कई बार मिला हूँ और हर बार मुझे विशेष शान्ति का अनुभव हुआ है। कई लोग ऐसे होते हैं, जिनकी उपस्थिति में, जिनके साथ समय व्यतीत करने से, आपका जीवन उदात्त बनता है। हृदय में परम शान्ति का अनुभव होता है। स्वामीश्री की उपस्थिति ही अद्‌भुत प्रभाव डालती है। आश्चर्य होता है कि इतना अद्‌भुत कार्य अपने सारे अनुयायियों से वे कैसे करा लेते हैं! उनसे मिलना मेरे लिए एक दिव्य अनुभव है।'

- डॉ. आर. चिदम्बरम् (एटॉमिक एनर्जी कमिशन के अध्यक्ष)

'चरित्रवान समाज निर्माण करना ही राष्ट्र के निर्माण के लिए बुनियादी आवश्यकता है और यह कार्य अक्षरपुरुषोत्तम संस्था अर्थात् प्रमुखस्वामी महाराज कर रहे हैं। प्रजा का चरित्र ऊपर उठाना ही उनका प्रयत्न है और उसमें भी विशेष रूप से जब युवकों के चरित्र को विकसित करने में वे प्रयासरत हैं, इस कार्य को मैं राष्ट्रनिर्माण का कार्य कहता हूँ। आप जब युवकों के चरित्र का निर्माण करते हैं, तब वह एक महान घटना बन जाती है।'

- स्व. श्री नानी पालखीवाला (प्रसिद्ध धाराशास्त्री)

'प्रमुखस्वामी महाराज अर्थात् साक्षात् दिव्यता।'

- श्री सुदर्शन बिरला (उद्योगपति, बिरला इन्डस्ट्रीज)

'प्रमुखस्वामी महाराज ने धर्म के उपरांत समाजसेवा का कार्य भी वर्षों तक किया है। उन्होंने जो कार्य किया है, उसकी कोई गिनती नहीं हो सकती है। इस समाजसेवा से युक्त आध्यात्मिक आंदोलन के लिए प्रमुखस्वामी महाराज के श्रीचरणों में मैं नतमस्तक होकर प्रणाम करता हूँ।'

- श्री रामकृष्ण बजाज (उद्योगपति, बजाज उद्योग समूह)

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

आस्तिक्यम्

आस्तिक्यम् अर्थात् आस्तिकता।
भगवान के अस्तित्व में चिरन्तन विश्वास।
मुमुक्षुओं के हृदय में आस्तिकता को प्रकट करना परमात्मा का कर्तव्य है,
जिसे भागवतकार परमात्मा का एक दिव्य सद्‌गुण कहते हैं।
जिस प्रकार हीरा ही हीरे को वेध सकता है, उसी प्रकार मुमुक्षुओं को
परमात्मा के अस्तित्व का यथार्थ निश्चय परमात्मा द्वारा ही होता है।
ऐसी प्रतीति देनेवाला यह सद्‌गुण प्राप्त करना, परमात्मा की ही कृपा है।

आस्तिकता के कितने वैविध्यपूर्ण आशय हैं!

प्रलय के बाद भले ही सृष्टि का विनाश हो जाए, परन्तु भगवान हमेशा प्रकट हैं, सर्वदा साकार हैं, वही कर्ता एवं हर्ता हैं, ऐसी अविचल श्रद्धा रखते हुए उनकी भक्ति में डूबे रहना!

अष्ट प्रकार की मूर्तियों में परमात्मा साक्षात् निवास करते हैं तथा भक्तों के मनोरथ पूर्ण करते हैं, ऐसी दृढ़ श्रद्धा रखना। वेद, भगवान की वाणी तथा भगवान से सम्बंधित शास्त्र सत्य एवं प्रामाणिक हैं; ऐसी अविचल आस्था रखना ही आस्तिकता है!

गुणातीत संत, परमात्मा के सर्वाधिक निकट रहनेवाले संत हैं; इसीलिए वे आस्तिकता के मूर्तिमान स्वरूप हैं। उन्हें परमात्मा का साक्षात्कार है, इसलिए उनको समस्त चराचर में व्याप्त परमात्मा के अस्तित्व की प्रतीति है। अक्षरधाम में रहते हुए भी जो चराचर में व्याप्त परमात्मा को देख सकते हैं, उन्हें भगवान की प्रतिमा में कितनी अनन्य श्रद्धा होगी!

स्वामीश्री के लिए प्रत्येक मूर्ति परमात्मा का चैतन्यमय अस्तित्व है। हरिकृष्ण महाराज की पंचधातु की चलप्रतिमा उनके लिए अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है।

सन् 1988 में जाम्बिया में टी.वी. संवाददाता मोसेस फिसी ने स्वामीश्री से मूर्ति दिखाकर पूछा था कि 'यह आपके धर्म का कोई प्रतीक है?' स्वामीश्री ने तत्काल कहा था, 'यह प्रतीक नहीं, प्रत्यक्ष भगवान स्वामिनारायण हैं! हम उन्हीं को आगे रखकर, उनकी ही प्रेरणा से, उनकी आज्ञानुसार सेवा कर रहे हैं। उनको प्रत्यक्ष मानकर ही उनकी पूजा करते हैं। वे भक्तों के भक्तिभाव को स्वीकार करते हैं, उनके योगक्षेम का वहन करते हैं। भगवान वैसे तो सर्वत्र हैं, परन्तु हम उन्हें मूर्ति द्वारा प्रत्यक्ष मानकर उनकी भक्ति कर रहे हैं। उनको अर्पण करने के बाद ही किसी वस्तु को स्वीकार करते हैं।'

यही है, उनकी अनन्य श्रद्धा का सारतत्त्व! यह कोई विधान नहीं, एक दिव्य अनुभूति है। इस अनुभूति के साथ वे भगवान की मूर्ति की सेवा कैसे करते हैं, इसे देखकर भी व्यक्ति

का हृदय भक्तिभाव से छलक उठता है।

छोटी-सी हरिकृष्ण महाराज की प्रतिमा भगवान स्वामिनारायण की पंचधातु से निर्मित चलमूर्ति है। अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी ने जूनागढ़ के स्वामिनारायण मंदिर में जिस मूर्ति को पूजा था, उसी मूर्ति को योगीजी महाराज ने 23 जनवरी 1971 (साठ साल) तक पूर्ण भक्तिभाव से पूजा था। तत्पश्चात् स्वामीश्री ने उस मूर्ति की सेवा करना प्रारम्भ किया है। ठाकुरजी (भगवान) से अलग स्वामीश्री का कोई अस्तित्व ही नहीं; उन्हें अर्पण किए बिना, कोई वस्तु ग्रहण करना स्वामीश्री के लिए असंभव है।

भव्य सम्मान-समारोह हो अथवा साधारण पुष्पहार, उद्घाटन हो अथवा भूमिपूजन, भव्य महोत्सव हो अथवा किसी के घर पधरावनी, ठाकुरजी की मूर्ति के बिना स्वामीश्री के लिए कहीं कुछ भी नहीं। वे मानते हैं कि प्रत्येक सफलता ठाकुरजी के कारण ही है।

सन् 1988, एटलान्टा में स्वामीश्री एक बड़े समारोह में जाने के लिए शीघ्रता में थे। उसी समय एक भाविक ने अपनी निर्माणाधीन मॉटेल का प्लान स्वामीश्री के हाथों में रख दिया। वे कपड़े में बाँधकर उस स्थान की मिट्टी भी साथ में लाए थे। उन्होंने कहा, 'आप इस मिट्टी पर चरण डालें ताकि मेरी भूमि तीर्थ के समान बन जाए।'

स्वामीश्री ने तुरन्त ही ठाकुरजी को मिट्टी पर बिराजमान किया और मूर्ति को उस प्रकार खिसकाते रहे, जैसे ठाकुरजी भ्रमण के लिए निकले हों! भक्ति का ऐसा अनन्य दर्शन पाकर सभी आनन्द विभोर हो गए।

दीपावली के बाद स्वामीश्री प्रबोधिनी एकादशी के दिन अहमदाबाद पधारे थे। हरिभक्तों द्वारा एकत्रित दान की जानकारी देते हुए सभा में प्रभाशंकर पंड्या ने कहा, 'आज पवित्र अवसर पर अहमदाबाद सत्संग मंडल द्वारा दान के ये रुपये स्वामीश्री के चरणों में अर्पण किए जाते हैं...।'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'अरे भाई! मुझे नहीं, ठाकुरजी को अर्पण करना है...! इस पृथ्वी पर हमारा क्या है? जो भी है, ठाकुरजी का ही है। उन्हीं के कारण हमारा अस्तित्व है। अत: हमें उनके चरणों में ही सबकुछ अर्पण करना है। हम तो उनके सेवक ठहरे !'

केनेडा की पार्लियामेन्ट में सन् 1988 में स्वामीश्री का भव्य सम्मान आयोजित किया गया था। स्वामीश्री ठाकुरजी के साथ संसद भवन में पधारे, तब संसदीय अध्यक्ष ने स्वामीश्री का परिचय देते हुए निवेदन किया कि 'भारत के महान संतवर्य प्रमुखस्वामीजी का हम पार्लियामेन्ट की ओर से सम्मान करते हैं।'

उस समय सभी की आश्चर्यचकित आँखों के सामने स्वामीश्री नहीं, परन्तु उनके निर्देश से सेवक निर्भयस्वरूपदास स्वामी खड़े हुए, क्योंकि ठाकुरजी उनके हाथों में थे। बाद में स्वामीश्री उनके सेवक की भाँति हाथ जोड़कर खड़े हुए! भले ही लोग वी.आई.पी. मानकर स्वामीश्री की सेवा में लगे हुए थे, परन्तु स्वामीश्री के लिए वी.आई.पी. तो एक परमात्मा ही हैं।

भारत के राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम, अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिन्टन, ब्रिटिश राजकुमार प्रिन्स चार्ल्स, बहरीन के शेख इसा बिल सलमान, ईसाई धर्मगुरु पोप जॉन पॉल अथवा बौद्ध धर्मगुरु दलाई लामा, युनो के चेयरमेन कोफि अन्नान आदि महानुभावों के साथ जब भी स्वामीश्री की मुलाकात होती है, तो वे सर्वप्रथम ठाकुरजी का परिचय उस

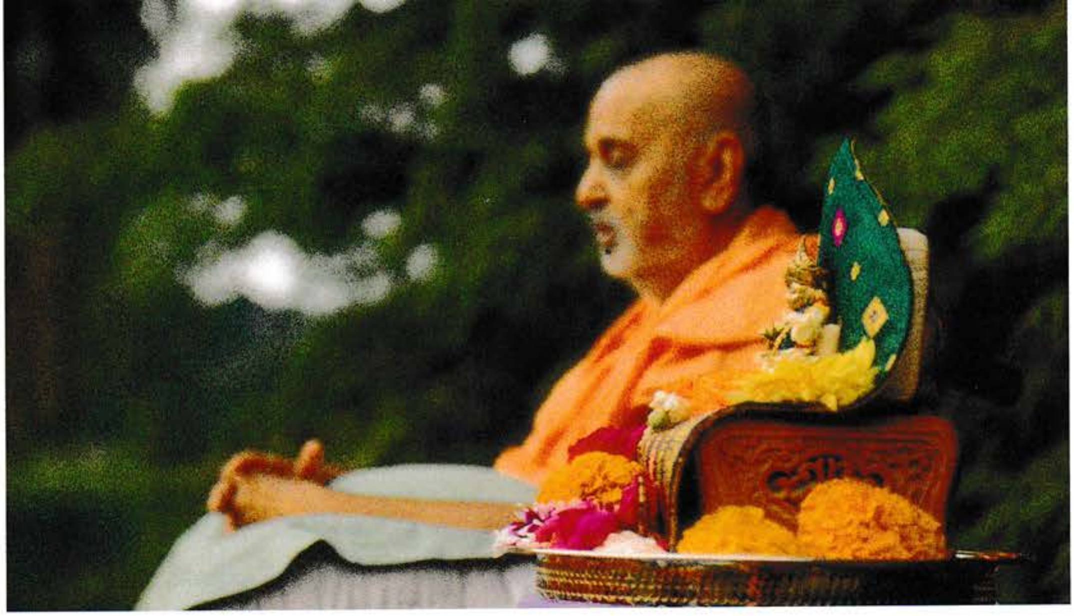

प्रकार प्रस्तुत करते हैं, जैसे वे एक जीवंत व्यक्ति हों!

सन् 1977 में केन्या के राष्ट्रपति डेनियल आरप मोई के अतिथिविशेष पद पर नैरोबी में एक विशेष सत्संग सभा का आयोजन किया गया था। सभा के बाद श्री मोई के बिदा होते समय, उन्हें रोककर स्वामीश्री उन्हें हरिकृष्ण महाराज की प्रतिमा के पास ले गए और उनका परिचय देने लगे कि यही हैं, हमारे आराध्य इष्टदेव! फिर मूर्ति का इतिहास सुनाने लगे।

कदाचित् किसी समारोह में हरिकृष्ण महाराज का आसन, स्वामीश्री के आसन से नीचे लगाया गया हो, तो स्वामीश्री तुरन्त टोक देते हैं कि 'ठाकुरजी हमारे मालिक हैं। हम तो उनके सेवक हैं।' भगवान के आसन से अधिक ऊँचे आसन पर बैठना स्वामीश्री अपराध मानते हैं।

एकबार वडदला गाँव की सत्संग सभा में स्वामीश्री के लिए एक कुर्सी के अलावा स्टेज पर और कुछ नहीं था। सेवक संत अपने हाथों में ठाकुरजी की प्रतिमा लेकर खड़े थे। स्वामीश्री ने कहा, 'मैं मंच पर नीचे ही स्थान ले लूँगा, आप ठाकुरजी को इस कुर्सी पर बिराजमान करें!'

सूरत की जे.जे. एअरकंडिशन्ड मार्केट के उद्घाटन समारोह में उन्होंने देखा कि ठाकुरजी का आसन उतना सुंदर नहीं है, जितना कि अपना आसन है। स्वामीश्री ने सेवक को बुलाया और कहा, 'इस अच्छे सिंहासन पर ठाकुरजी को बिराजमान करें। हमारी शोभा तो सादगी भरे आसन से ही है।' इतना कहकर वे स्वयं ही सादे आसन पर बिराजमान हो गए।

बडौदा जिले के कुणपाड गाँव में सामूहिक तसवीर खिंचवानी थी। स्वामीश्री के आसपास युवकों ने अपना स्थान ले लिया। स्वामीश्री की दृष्टि ठाकुरजी की ओर थी। उन्होंने देखा कि दो लड़के मूर्ति को ढाँककर बैठ गए थे। स्वामीश्री ने तुरन्त उनको आदेश दिया, 'जरा उस प्रकार बैठें कि ठाकुरजी का दर्शन भी हो पाए। हमें केवल अपना ही स्वार्थ दिखता है, लेकिन ठाकुरजी के कारण ही हमारा अस्तित्व है, उन्हें कभी नहीं भूलना।'

ठाकुरजी के चरणों में अर्पण किए बिना यदि कोई चीज स्वामीश्री को समर्पित की जाती है, तो वह चाहे कैसी भी कीमती चीज हो, या पानी से भरा गिलास ही क्यों न हो, स्वामीश्री

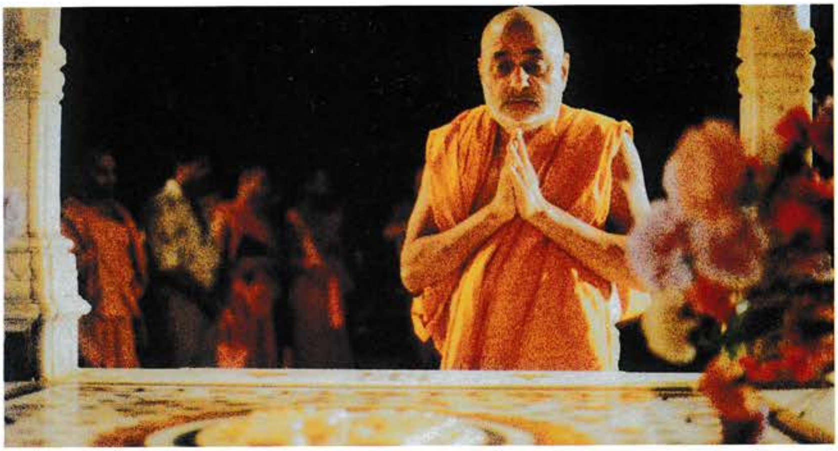

'हे महाराज, हमारे हर अपराधों को क्षमा करें। हमारे हृदय में हमेशा के लिए बिराजमान रहें।'

उसे स्वीकार नहीं करते। एकबार उन्होंने कहा था, 'ठाकुरजी को अर्पण किए बिना किसी भी चीज का उपयोग करना धूल खाने के बराबर है।'

परमात्मा के प्रति दासत्वभक्ति स्वामीश्री का स्थायीभाव है।

17 अप्रैल 1988 को लंदन के युवक मंडल ने स्वामीश्री से प्रार्थना की, 'आप पालकी में बिराजमान होकर सत्संग सभा में पधारें। हमने सुंदर पालकी तैयार की है।'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'जहाँ ठाकुरजी बिराजमान हों, वहाँ उच्च आसन पर बैठकर जाना अच्छा नहीं है। आप हरिकृष्ण महाराज के लिए पालकी का आयोजन करें। मैं पीछे-पीछे चलकर सभास्थल पर आऊँगा।' परन्तु सत्संग मंडल के अग्रणी सी.एम. पटेल आदि के अत्यन्त प्रेमाग्रह को देखकर स्वामीश्री इस बात पर सहमत हुए कि आप पालकी को कंधों तक नहीं उठाएँगे और भूमि से एक फुट की ऊँचाई पर उठाकर सभागृह के द्वार तक ही ले जाएँगे। अंततः ऐसा ही हुआ।

दूसरे दिन स्वामीश्री हरिकृष्ण महाराज को लेकर पालकी में बिराजमान हुए, परन्तु मुख पर वही अपराधभाव झलक रहा था, उन्होंने उस समय अपनी भावना इन शब्दों में व्यक्त की, 'यदि हम ठाकुरजी से ऊँचे ऊठेंगे, तो हमारा पतन निश्चित है। ठाकुरजी और मंदिर परिसर की मर्यादा का उल्लंघन कभी नहीं करना।'

उनका अटूट विश्वास है कि ठाकुरजी सशरीर हमारे भक्तिभाव को स्वीकार कर रहे हैं। अपने कष्टों को भूलकर वे ठाकुरजी के कष्टों का विचार करने लगते हैं। अपनी भूख-प्यास, थकान या निद्रा को भूलकर वे ठाकुरजी की सेवा-शुश्रूषा में मन को जोड़ देते हैं।

समय-समय पर ठाकुरजी के लिए भोजन, जलपान, विश्राम या पूजन में वे हमेशा सावधान रहते हैं। किसी से भी भक्तिविधि में चूक हो गई, तो वे खिन्न मन से बार-बार प्रार्थना करके भगवान से क्षमा माँगने लगते हैं। उनकी आँखें भक्ति की धारा में भीगने लगती हैं। यदि थाल में विलम्ब हो गया अथवा जलपान या आरती-पूजन में विलम्ब हो गया, तो स्वामीश्री के लिए वह असह्य हो जाता है। ऐसी घटनाओं के बाद कोई स्वामीश्री से कहता है कि स्वामीजी, आप तो भगवान की बहुत देखभाल रखते हैं! तब वे कहते हैं कि 'हम तो उनके लिए कुछ नहीं कर पाते। हम उनकी देखभाल करनेवाले कौन हैं? देखभाल

'विश्ववंद्य प्रमुखस्वामी के रहन-सहन और उपदेश पवित्र आदर्श
दिखानेवाले त्रिवेणीसंगम का स्मरण दिलाते हैं।
उनके सम्पर्क में आनेवाले हर किसी को स्वामीश्री के कर्तव्यनिष्ठ
स्वरूप का दर्शन होता है।
धर्म, समाज तथा राष्ट्र के प्रति
जाग्रत ऐसे महापुरुष की कर्तव्यनिष्ठा देखकर
हम श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते हैं।

- पूज्य रामस्वरूप शास्त्रीजी
(पूर्व अध्यक्ष : अखिल भारत साधुसमाज)

तो वे हमारी करते हैं। हमारा पालन-पोषण करने का उत्तरदायित्व तो उन्होंने लिया है!'

चाहे कैसी भी बीमारी हो, स्वामीश्री पलभर के लिए ठाकुरजी को नहीं भूलते।

व्यारा गाँव में स्वामीश्री का शरीर बुखार से संतप्त था। कमरे में खिड़कियों पर भी पर्दा लगाकर अंधेरा कर दिया गया था। परन्तु ठीक 12.00 बजे स्वामीश्री की आँखें खुल गईं। सेवक संत से उन्होंने तुरन्त पूछा, 'समय हो चुका है। ठाकुरजी को नैवेद्य के लिए ले गए क्या?'

गोलब्लेडर या ट्युमर के ऑपरेशनों में, सामान्य बुखार या हृदयरोग के हमले की बीमारियों में भी स्वामीश्री बार-बार ठाकुरजी के विषय में पूछते रहते हैं।

सन् 1998, न्युयॉर्क के लेनोक्स हिल अस्पताल में डॉ. ज्योफरी मोसेस तथा डॉ. विलियम श्वोर्ट्ज ने स्वामीश्री के हृदय की एन्जियोग्राफी संपन्न की। सभी को सावधान करते हुए उन्होंने निर्देश दिया कि 'स्वामीश्री को तत्काल बायपास सर्जरी करना अनिवार्य है! एक मिनट का विलम्ब भी खतरे से खाली नहीं होगा!'

इस निर्देश के बाद तुरन्त ऑपरेशन के लिए चक्र गतिमान कर दिए गए। डॉ. वी.ए. सुब्रह्मण्यम् ने स्वामिनारायणीय नियमों के अनुसार ऑपरेशन थिएटर में पुरुष नर्स की व्यवस्था कर दी। शारीरिक जाँच के बाद दोपहर 11.30 के निश्चित समय पर ऑपरेशन थिएटर से निर्देश मिला कि स्वामीश्री को ऑपरेशन थिएटर की ओर प्रस्थान करवाएँ।

जब कि स्वामीश्री ने अपनी ओर से पहले ही निर्देश दिया था कि 'हम ऑपरेशन थिएटर में अभी नहीं जाएँगे; दोपहर 3.00 बजे ऑपरेशन के लिए जाएँगे।' स्वामीश्री के हृदय की गंभीर स्थिति को समझनेवाले समझ नहीं पा रहे थे कि स्वामीश्री क्यों देरी कर रहे हैं? अस्पताल के आई.सी.सी.यु. कमरे में श्रीहरिचरित्रामृतसागर का पाठ होता रहा और कीर्तन गान भी चलता रहा। स्वामीश्री अपने हाथ में माला घुमाते हुए भगवत्भजन के आनन्द में डूब चुके थे।

अस्पताल का अधिकारी वर्ग सोच रहा था कि स्वामीश्री किन्हीं शास्त्रीय विधि-विधानों के कारण 3.00 बजे तक ऑपरेशन को विलम्ब में रख रहे हैं। स्वामीश्री ठीक 3.00 बजे हरिकृष्ण महाराज की मूर्ति को साथ में लेकर ऑपरेशन थिएटर में पधारे!

78 वर्ष की वृद्ध उम्र में हुआ यह ऑपरेशन संपूर्ण सफल हुआ। एक सप्ताह के बाद स्वामीश्री से किसी ने पूछा था कि 'आपने उस दिन 3.00 बजे तक ऑपरेशन को टाल

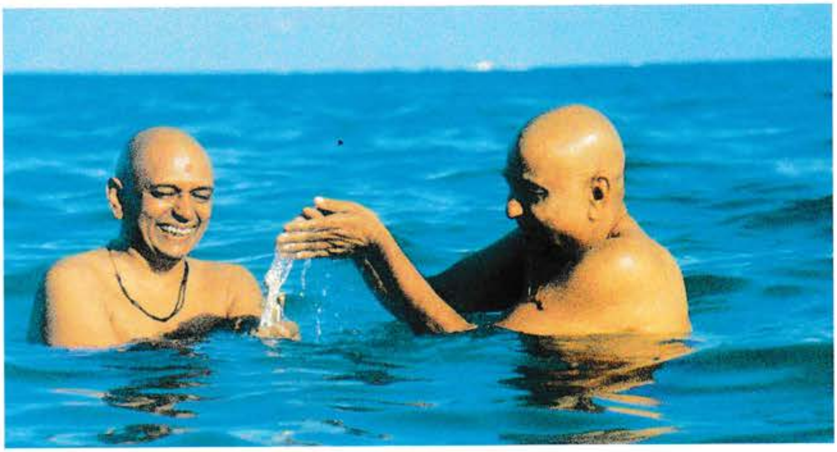

दिया था, उसकी क्या वजह थी?' स्वामीश्री ने स्मित करते हुए कहा था कि 11.00 बजे ठाकुरजी को ऑपरेशन थिएटर में नहीं ले जा सकते थे, किन्तु ठाकुरजी को नैवेद्य अर्पण करके जब वे विश्राम के बाद दर्शन दें, उस समय उन्हें लेकर ऑपरेशन में जाना अनुकूल था; इसलिए ठाकुरजी की अनुकूलता को देखते हुए हमने 3.00 बजे के बाद ऑपरेशन करवाना ठीक समझा!'

जीवन-मरण के प्रतिकूल वातावरण में और हृदय की अत्यंत गंभीर हालत में भी स्वामीश्री के लिए हरिकृष्ण महाराज ही प्रथम अग्रिमता में रहते हैं।

26 फरवरी 1990 को बोचासण के निकट 'श्रीजी कोल्ड स्टोरेज' के उद्घाटन हेतु स्वामीश्री पधारे थे। भगवत्चरण स्वामी ने ठाकुरजी को अपने साथ में रखा था। स्वामीश्री एक के बाद एक कमरे में प्रासादिक पुष्प बिखेरने लगे। लकड़े की पट्टियों द्वारा बनाया गया फ्लोर पानी आदि के कारण चिपचिपा हो गया था। एक समान अंतर को छोड़ते हुए ऐसी पट्टियाँ लगाई गई थीं कि सावधानी न बरतने से आदमी के पाँव उसमें फँस सकते थे। स्वामीश्री सावधानी के साथ पुष्प छिड़क रहे थे। परन्तु भगवत्चरण स्वामी का एक पैर पट्टियों के बीच फँस गया। वे तुरन्त गिर पड़े। उनके हाथों से छूटकर ठाकुरजी की मूर्ति भी कुछ दूरी पर गिर पड़ी। स्वामीश्री यह देखते ही हतप्रभ हो गए। स्वामीश्री के मुखारविंद पर क्षमा-याचना, पीड़ा और दु:ख के मिश्रित भाव दिख रहे थे। लगता था कि मानो अभी उनकी आँखों से आँसू निकल पड़ेंगे। ठाकुरजी को फौरन उठा लिया गया। परन्तु स्वामीश्री जड़वत् खड़े रह गए थे। आँखें भीगी हुई थीं; हाथ जोड़े हुए थे और कंठ गद्‌गद हो गया था। उन्होंने ठाकुरजी से बार-बार क्षमा माँगी। उनकी स्थिर दृष्टि को देखकर आसपास खड़े हुए संत और भक्त परमात्मा के साथ हो रहे स्वामीश्री के नीरव संवाद को देखते रहे।

उन्होंने कोल्ड स्टोरेज के प्रत्येक कोने में पुष्प तो डाले, परन्तु मन उचट गया था। वे सभास्थल की ओर चल पड़े। कार में बैठे तब ठाकुरजी को अपने सन्मुख रखकर वे बार-बार प्रणाम करते रहे; ठाकुरजी के चरणों में बिनती और प्रार्थना करते रहे। उस प्रार्थना में दोनों के बीच एक ऐसा तादात्म्य स्थापित हो गया था कि वे पूरे संसार को भूल चुके थे।

सभा में स्वामीश्री के पास माइक तो रखा गया, परन्तु दो-तीन मिनट में ही उनका कंठ अवरुद्ध हो गया। वे कुछ नहीं बोल पाए। अपने ही हाथों से उन्होंने माइक हटा दिया।

उदासी के उस माहौल में सभा समाप्त कर दी गई!

सन् 1980 में अमेरिका में एक बार ट्रेन-यात्रा के दौरान ऊपर रखी हुई ठाकुरजी की मूर्ति नीचे गिर पड़ी। स्वामीश्री को गहरा आघात लगा। बार-बार क्षमा याचना करते हुए उन्होंने केरेवान में ही 25 दंडवत् प्रणाम कर लिए : 'हे प्रभु! हे महाराज! मेरे अपराध को क्षमा कर दीजिए।' फिर रात के समय उन्होंने भगवान को प्रेमपूर्वक नैवेद्य अर्पण करके थालगान किया, परन्तु उनका मन किसी प्रकार शान्त होने का नाम नहीं ले रहा था। वे रात भर गुमसुम कार की अगली सीट पर बैठकर स्वामिनारायण महामंत्र की माला घुमाते रहे।

ऐसा है स्वामीश्री की पराभक्ति का दर्शन!

स्वामीश्री की आस्तिकता का मूर्तिमान प्रमाण है - उनके द्वारा विश्व के कोने-कोने में स्थापित हुए मंदिर। ये मंदिर केवल कला-कौशल के नमूने ही नहीं; उनकी पराभक्ति के शाश्वत प्रतीक हैं। हृदय में असीम भक्ति का गंगा प्रवाह बहता हो, तब जाकर एक मंदिर की रचना हो पाती है! और जिस हृदय में पराभक्ति का महासागर उमड़ रहा हो, वही विश्व के कोने-कोने में 1,000 मंदिरों का निर्माण करा सकता है!

स्वामीश्री की अनंत आस्था का चिरंतन प्रमाण, विश्व के कोने-कोने में उनके द्वारा स्थापित किए गए मंदिर हैं। यही कारण है कि आनेवाले लाखों दर्शनार्थियों के हृदय में श्रद्धा की ज्योति प्रकट हो जाती है। स्वामिनारायण अक्षरधाम - दिल्ली तथा अनेक विदेशी महानगरों में स्थापित मंदिर, मानो आस्तिकता प्रकट करनेवाले ज्योति:पुंज ही हैं! यहाँ लाखों मुमुक्षुओं को अपनी श्रद्धा को दृढ़ बनाने की शक्ति मिलती है, हृदय को परिपूर्ण करनेवाली भक्ति मिलती है तथा उनकी आध्यात्मिक प्रगति भी होती है।

दिल्ली अथवा गाँधीनगर के अक्षरधाम में प्रतिदिन ऐसे अनेक अनुभव देखने को मिलते हैं कि हजारों श्रद्धाहीन लोग हृदय में श्रद्धा की ज्योति लेकर बिदा होते हैं।

नडियाद के महेन्द्रभाई जे. अमीन, योगीजी महाराज के समय से सत्संग में जुड़े हुए थे। समृद्ध एवं प्रतिष्ठित परिवार से आई उनकी पत्नी भानुबेन की दृष्टि में समाज सेवा ही, प्रभु सेवा है। एक दिन वसो गाँव में मंदिर-निर्माण सम्बंधी मीटिंग में स्वामीश्री के साथ विचार-विमर्श करके जब वे घर लौटकर मंदिर सम्बंधी बातें अपनी पत्नी को बतलाए, तो भानुबहन के मुँह से सहज ही निकल पड़ा कि 'तुम्हारे स्वामी तो केवल पत्थर पर पत्थर का ढेर लगवाते जा रहे हैं। इसके बदले में अस्पताल या धर्मशाला का निर्माण करते तो कितना अच्छा होता!'

उसी दिन संध्या के समय स्वामीश्री उनके घर पधारे। मंदिर के विषय में चर्चा शुरू होते ही स्वामीश्री ने महेन्द्रभाई को कहा, 'आपके गाँव में मंदिर बहुत ही अच्छा बनेगा; लेकिन कुछ लोग मानते हैं कि यह मंदिर नहीं, पत्थरों पर पत्थरों के ढेर हैं, जो गलत सोच है। मनुष्य जीवन में एक क्षण ऐसा आता है कि हृदयपूर्वक भगवान के चरणों में एक नमस्कार भी हो गया, तो उसका काम बन जाता है। जीवनभर के लिए व्यक्ति के हृदय में शान्ति बनी रहती है।' भानुबहन ने जब अपने कमरे में रहकर स्वामीश्री की वाणी सुनी, तो वे पश्चात्ताप से रो उठीं। आज उन्हें जीवन का नया दर्शन प्राप्त हुआ।

स्वामीश्री की संगति, उनके दिव्य कार्य-कलाप तथा उनके सान्निध्य से बड़े-बड़े नास्तिकों की नास्तिकता टूटकर बिखर जाती है। उनका हृदय परिवर्तित होकर आस्तिकता

के प्रकाश में नहा उठता है!

10 नवम्बर 2005 को उद्योगपति बिपिन कोटक अपने नास्तिक पुत्र के साथ दिल्ली में स्वामीश्री के दर्शन-मुलाकात के लिए आए हुए थे। स्वामीश्री से चन्द क्षणों की मुलाकात के बाद अपने पुत्र को भक्तिभाव से सराबोर देखकर, वे आश्चर्यचकित हो गए।

उस युवक ने स्वामीश्री से कहा, 'मैं ठहरा संपूर्ण नास्तिक। आज तक मैं किसी के सामने झुका नहीं हूँ, न तो किसी का चरण स्पर्श ही किया है; लेकिन जब मैं प्रमुखस्वामी से मिला और उन्होंने मेरा स्पर्श किया, तो मुझे लगा कि एक करंट सा पूरे शरीर में बहने लगा है। मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मुझे प्रतीत होने लगा कि स्वामीश्री वास्तव में साक्षात् भगवत्-स्वरूप हैं। ऐसा अनुभव मेरे जीवन में कभी नहीं हुआ।'

अमेरिका के प्रसिद्ध अखबार 'फिलाडेल्फिया इन्क्वायरर' के एडिटर श्री रोनाल्ड पटेल भी स्वामीश्री की अनन्य भगवत्श्रद्धा देखकर रोमांचित हो गए थे।

13 सितम्बर, 1998 को उन्होंने स्वामीश्री के साथ एक 'इन्टरव्यू' में विभिन्न प्रश्नों की झड़ी लगा दी, परन्तु स्वामीश्री के उत्तरों में बार-बार यही भाव झलकता था कि भगवान ही सर्वकर्ता-हर्ता हैं। उनके द्वारा जो भी हो रहा है, वही ठीक है। उनकी इच्छा के बिना कहीं-कुछ भी संपन्न नहीं हो पाता। प्रत्येक वाक्य में भगवान के प्रति स्वामीश्री की दृढ़ आस्था देखकर मि. रोनू पटेल गद्गद हो गए!

उन्होंने कहा, 'मैंने अपनी पूरी ज़िन्दगी में किसी को इतनी परम श्रद्धा से छलकता हुआ नहीं देखा!' रोनाल्ड के हृदय में श्रद्धा के दीप जल उठे!

दुबई के प्रसिद्ध उद्योगपति भरत शाह ने भी स्वामीश्री के प्रथम दर्शन के बाद नास्तिकता छोड़कर आस्तिकता स्वीकार कर ली।

भारत के विख्यात आर्किटेक्ट तथा प्रखर बौद्धिक सतीश गुजराल जन्मजात नास्तिक थे। न तो उन्हें किसी मंदिर में श्रद्धा थी, न ही किसी मूर्ति में, परन्तु सन् 2005 में स्वामिनारायण अक्षरधाम (दिल्ली) के यश को सुनकर वे अपनी पत्नी के साथ अक्षरधाम देखने आए। अक्षरधाम से बाहर आने के बाद उनको लगा कि उनके भीतर ही भीतर कुछ बदल रहा है। वे अपने स्वभाव और मान्यताओं से परे हटकर अक्षरधाम के सर्जक स्वामीश्री का दर्शन करने गए। इसके बाद का वर्णन उन्हीं के शब्दों में - 'वैसे तो मैं एक नास्तिक हूँ। परन्तु नास्तिक को भी आस्तिक बनानेवाला यह अति सुन्दर एवं सुआयोजित स्थान है। यहाँ तर्क से परे एक दैवी शक्ति का स्पर्श मैं अनुभव कर रहा हूँ। यहाँ से मैं अपने साथ बहुत कुछ ले जा रहा हूँ, जो शब्दातीत है। मेरे लिए ऐसे विशाल स्थान को देखना कोई आश्चर्य की बात नहीं है, मैंने पूरी दुनिया घूमी है। भव्यातिभव्य स्मारक देखे हैं, लेकिन यहाँ दिग्मूढ़ और अभिभूत हो गया। कोई सर्वश्रेष्ठ शक्ति है, जो मानव को ऐसे स्थान के निर्माण की शक्ति देती है। मैं केवल आर्टिस्ट ही नहीं, एक आर्किटेक्ट भी हूँ। निर्माण के कई प्रोजेक्ट्स मैंने अपनी निगरानी में सफल किए हैं। भारत की कुछ सीमाओं एवं क्षतियों को लक्ष्य में रखकर यदि कोई इस भगीरथ कार्य को सम्पन्न करना चाहे, तो 50 वर्ष की समयावधि लग सकती है। जब कि मैंने सुना है कि यह केवल पाँच वर्ष में ही सम्पन्न हुआ है। इतने कम समय में आपने स्मारक का निर्माण किया, केवल यही प्रशंसनीय विषय नहीं है, परन्तु आपने क्या बनाया है, वास्तव में यह प्रशंसनीय है। कुछ चीजें ऐसी होती हैं, जिनका वर्णन तर्क अथवा

शब्दों में नहीं हो सकता। पूर्व के जिन स्मारकों ने जितने लोगों को आकृष्ट किया है, यहाँ उनसे कई गुना लोग आकृष्ट होकर आएँगे।'

3 मार्च 1994 को दिल्ली में रशियन राजदूत ऐनेरोली द्रुकोफ से स्वामीश्री ने कहा था कि 'यदि आप भगवान में श्रद्धा रखेंगे, तो उनका साक्षात्कार अवश्य हो जाएगा।'

मि. द्रुकोफ गांधीनगर के अक्षरधाम स्मारक का दर्शन करके अत्यंन्त प्रभावित हुए थे। उन्होंने अभिनन्दन करते हुए स्वामीश्री से कहा था, 'मैं इस स्मारक से अति प्रभावित हूँ, हालाँकि मैं नास्तिक हूँ, परन्तु मुझे लगता है कि श्रद्धा की शक्ति अनन्य है।'

स्वामीश्री प्राय: कहते हैं, 'श्रद्धा ही जीवन है, श्रद्धा के द्वारा ही विकास और प्रगति है।'

आज लाखों भक्तों के हृदय में एक अनन्य श्रद्धा जाग्रत है कि परमात्मा इस पृथ्वी पर सर्वदा प्रकट हैं, क्योंकि स्वामीश्री हमारे बीच बिराजमान हैं। यह श्रद्धा कभी विचलित न हो, इसलिए दिव्य आत्मबल देनेवाले भी वही हैं।

23 जनवरी 2006 को योगीजी महाराज की 35 वीं अंतर्धान तिथि पर एक युवक ने स्वामीश्री से कहा, 'जब भगवान स्वामिनारायण ने देहत्याग किया था, तब उनके विद्वान् संतकवि ब्रह्मानंद स्वामी का विरह कितना हृदयविदारक रहा होगा! क्या भविष्य में हमारी दशा भी ऐसी ही होगी?'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'ऐसा क्यों सोचते हो? हमें तो समझना चाहिए कि भगवान कहीं बिदा हुए ही नहीं और होंगे भी नहीं। मृत्युलोक में यह शरीर आज या कल तो जाएगा ही, परन्तु वे अपने गुणातीत संत के द्वारा हमेशा इस धरती पर प्रकट रहते हैं। अत: आनेवाले अन्य स्वरूपों में भी उतना ही स्नेह हो जाएगा!'

7 नवम्बर, 1997 स्वामीश्री लंदन से बिदा ले रहे थे। किशोरों की छोटी सी सभा में किसी ने कहा, 'आप जब बिदा लेंगे, तब हमारा कौन?'

सुनकर स्वामीश्री मौन रहे। कार्यक्रम के उद्घोषक ने कहा, 'आज आप किशोरों को एक जपमाला दीजिएगा। सभी सोने से पहले एक माला घुमाएँगे। आप हमें वचन दीजिए कि हमें ऐसी शक्ति देंगे, ताकि हम आपको प्रसन्न कर सकें।'

स्वामीश्री ने कहा, 'वचन तो भगवान स्वामिनारायण ने दिया ही है, परन्तु कोई कहता है कि आप जाएँगे, तब हमारा क्या होगा? ऐसी सोच ठीक नहीं है। वह ज्ञान नहीं है। हमारे साथ तो भगवान स्वामिनारायण एवं गुरुपरंपरा बिराजमान हैं। योगीजी महाराज ने एक हरिभक्त को कहा था कि कभी ऐसा मत मानना कि मैं अकेला हूँ। अनंत अक्षरमुक्त हमारे साथ ही बिराजमान हैं। अत: हमें ऐसा ही मानना है कि भगवान सदैव प्रकट हैं। वे कभी हमसे दूर नहीं होते। ऐसी श्रद्धा ही हमारा जीवन है।'

भगवान स्वामिनारायण कहते हैं, 'जिसके हृदय में भगवान की भक्ति हो और जो यह समझता हो कि जिस प्रकार प्रकट भगवान पृथ्वी पर विराजमान हैं... वैसे के वैसे ही आत्यन्तिक प्रलय होने पर भी रहते हैं और... वे सदा साकार ही हैं ऐसा समझता है... ऐसी निष्ठावाले सन्त की चरणरज को हम भी सिर पर चढ़ाते हैं... ऐसे संत का दर्शन तो भगवान के दर्शन के समान है। उनके दर्शन से अनेक पतित जीवों का उद्धार होता है, ऐसे ये महान हैं।' (वच. ग.प्र. 37)

जिनके गुण रीझत गिरिधारी

अनहंकृतिः

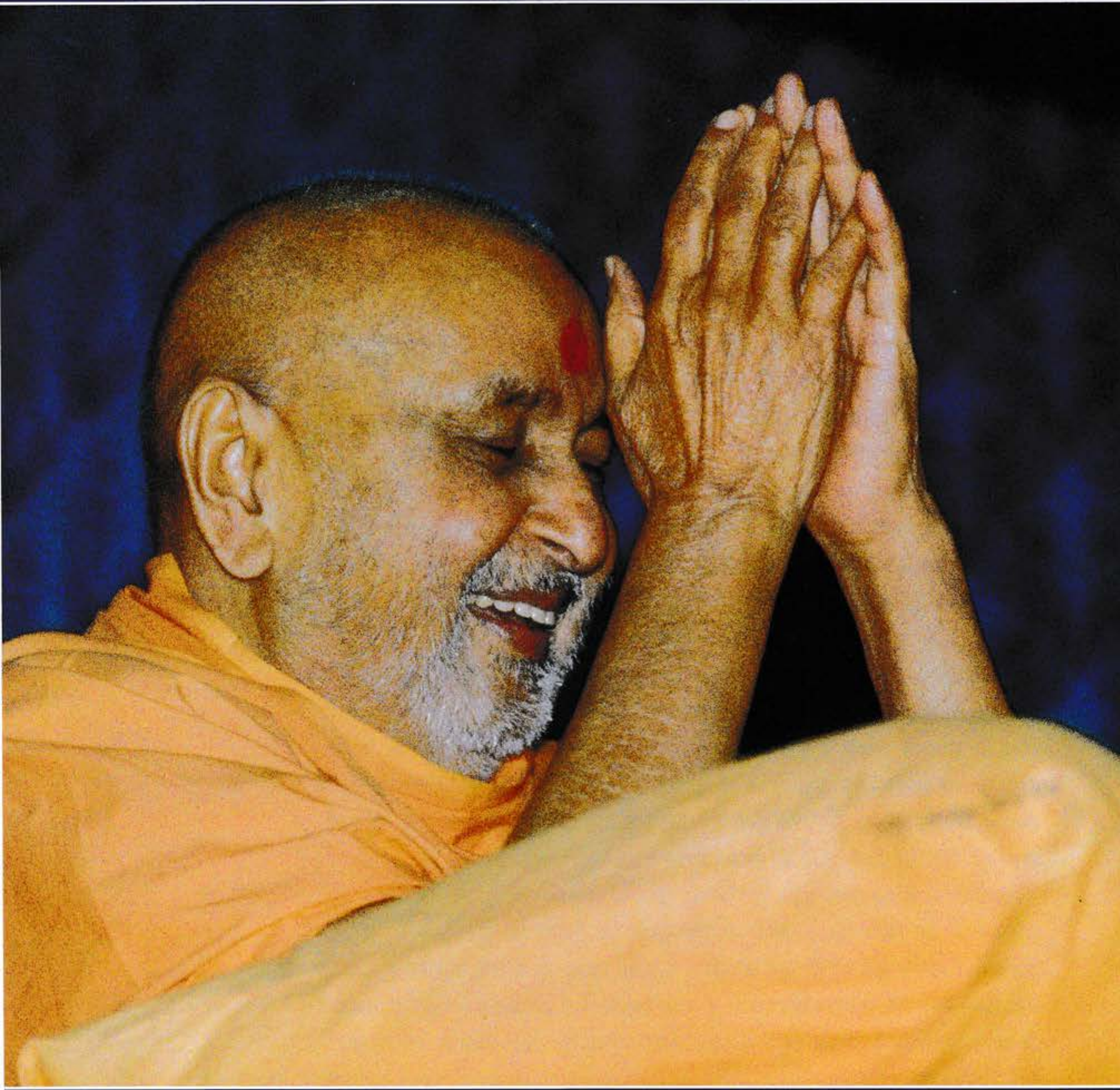

अनहंकृति अर्थात् अहंकार-शून्यता।
परमात्मा के समग्र सद्गुणों का योग इसी एक सद्गुण में
समाविष्ट हो जाता है। कदाचित् इसी कारण महर्षि वेदव्यासजी ने
सर्व सद्गुणों के वर्णन में इसका क्रम अन्तिम रखा है।
स्वयं सर्वोपरि सर्वकर्ता होने के बाद भी अहंकार के स्पर्श से
अलिप्त होना, उसी में भगवान की भगवत्ता की प्रतीति है,
उसी में उनका भगवद्भाव है। और भगवद्-योग से
जो सर्व सामर्थ्य और सर्व सद्गुणों से पूर्ण हैं ऐसे संत भी,
इसी सद्गुण से संतत्व की यथार्थ प्रतीति कराते हैं।
विनम्रता तो सज्जनों का भी एक सर्व सामान्य सहज गुण है।
परन्तु यहाँ ऐसी लोक प्रसिद्ध विनम्रता की बात नहीं है।
यहाँ तो पूर्ण अर्थ में अहम्रिक्त स्थिति का बोध है,
जहाँ 'मैं' भाव का संपूर्ण विसर्जन हो गया हो।

आस्तिकता के सर्वोच्च शिखर पर विराजमान प्रमुखस्वामी महाराज के लिए 'मैं' अथवा 'अहंभाव' का कोई अस्तित्व ही नहीं।

जिन्होंने परहित के लिए जीवनभर सत्कर्म किया है, प्रचंड पुरुषार्थ किया है और स्वयं को समर्पित कर दिया है, ऐसे महापुरुष के पुरुषार्थ की गाथा को सुनते ही हम श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते हैं। लेकिन वे अपनी सिद्धियों, सद्गुण अथवा अपने कार्यकलापों से कभी रोमांचित नहीं हुए तो उन्हें किसी बात के गर्व की अनुभूति भी न हुई।

अर्वाचीन संत-महर्षि के रूप में उन्होंने उपनिषद्कालीन आध्यात्मिक चिंतन को विश्व के लाखों लोगों के जीवन में साकार किया है।

सनातन भारतीय परंपरा में एक महान परिव्राजक के रूप में आज तक उन्होंने 17,000 गाँवों-नगरों में परिभ्रमण करके लोगों को सच्ची राह दिखाई है।

संस्कृति के प्रखर ज्योतिर्धर के रूप में उन्होंने संस्कृति की ऐसी गंगा प्रवाहित की है, जिससे पीढ़ी-दर पीढ़ी लोगों का जीवन संस्कृति की सुवास से महकता रहे। इसके लिए उन्होंने संस्कृतिपुरुष के रूप में, विश्व के कोने-कोने में भव्य मंदिरों तथा अक्षरधाम की रचना करके संस्कृति का प्रचंड शंखनाद किया है।

एक आर्षद्रष्टा महापुरुष के रूप में उन्होंने ऐसी परंपराओं का सृजन किया है, जिससे

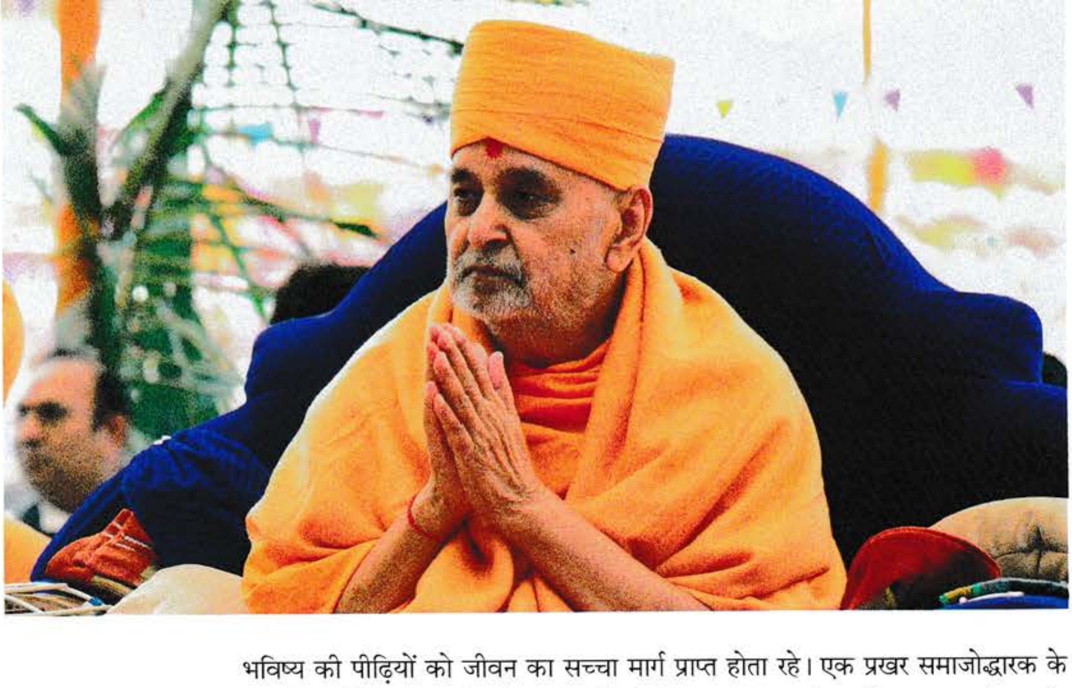

भविष्य की पीढ़ियों को जीवन का सच्चा मार्ग प्राप्त होता रहे। एक प्रखर समाजोद्धारक के रूप में उन्होंने समाज की अनेक बुराइयों के विरुद्ध सनातन परंपराओं का नवमार्जन करके समाज को सही मार्ग पर अग्रसर किया है।

एक अधमोद्धारक संत के रूप में उन्होंने अनेक पतित लोगों की झोपड़ियों तक जाकर उन्हें पवित्र करके, उनका जीवन परिवर्तित किया है। एक करुणामूर्ति संत के रूप में उन्होंने शोषितों, पीड़ितों तथा संत्रस्तों के उत्कर्ष हेतु कठोर परिश्रम किया है।

विश्वशान्ति के पुरस्कर्ता के रूप में उन्होंने जगतभर में शान्ति-प्रसारण का अनन्य पुरुषार्थ किया है। अपने जीवन के प्रत्येक पल को जीवप्राणी मात्र के हित के लिए ही बिताया है। उनके युगकार्य की समीक्षा शब्दों में करना असंभव है। इसे तो मात्र अनुभव किया जा सकता है।

बी.ए.पी.एस. संस्था को एक छोटे से बिन्दु में से हिन्दुत्व के विश्वव्यापी आंदोलन तक पहुँचानेवाले स्वामीश्री के कार्यों की समीक्षा करना वास्तव में असंभव है।

सात दशकों से भी अधिक वर्षों की उनकी निष्कलंक संन्यास-यात्रा पर एक दृष्टि डालने से एक जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि उनके दिव्य व्यक्तित्व के असंख्य पहलुओं में सबसे अधिक प्रभावशाली परिमाण कौन सा है?

वह है, उनका अहंशून्य एवं भक्तिपूर्ण दिव्य व्यक्तित्व। नम्र और सरल; सहज और पारदर्शक; जहाँ मान-बड़प्पन की कोई आशा या अपेक्षा नहीं होती।

विश्व उनके प्रति आदर तथा गौरव की पुष्पांजलि अर्पण करते हुए रुकने का नाम नहीं लेता...। पिछले 38 वर्षों में एक भी दिन ऐसा नहीं बीता, जिस दिन उनका कोई मान-सम्मान या अभिवादन न हुआ हो; उनकी उपस्थिति में ही उनका महिमागान न हुआ हो!

संसार के किसी भी व्यक्ति को विस्मित कर देनेवाले तथा सभी स्तरों पर अपार आदर और यश प्राप्त करनेवाले स्वामीश्री की आध्यात्मिक स्थिति कैसी है? उसी तरह से, जैसे मोम पर से पानी फिसल जाता है! किसी भी प्रकार की प्रशंसा अथवा सम्मान उनका स्पर्श नहीं कर पाते। इसका कारण यह है कि उनके अंदर लेशमात्र का भी ऐसा विचार नहीं

'प्रमुखस्वामी महाराज न केवल विनयशीलता के ही स्वरूप हैं,
किन्तु धर्म एवं संस्कृति के भी साकार स्वरूप हैं।
उनसे मिलनेवाला प्रत्येक व्यक्ति उनकी विनयशीलता से
प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाएगा।'

- पूज्य महंत अवैद्यनाथजी

(गोरक्ष पीठाधीश्वर, गोरखपुर उत्तर प्रदेश)

उत्पन्न होता कि 'इसे मैंने किया है' अथवा 'मैं करता हूँ!' अपनी समग्र प्रवृत्तियों एवं सिद्धियों को वे भगवान एवं गुरु के चरणों में समर्पित कर देते हैं। वे स्वयं को सेवक के अतिरिक्त अन्य कुछ मानते ही नहीं!

लंदन में क्यु.पी.आर. स्टेडियम में आयोजित किए गए स्वर्णतुला के ऐतिहासिक सम्मान के अवसर पर स्वामीश्री ने जो प्रवचन दिया था, उसमें अहंशून्यता का ऐसा अद्‌भुत प्रभाव था, जिसका कैसेट सुनकर गुजरात के प्रसिद्ध उद्योगपति श्री सी.के. पीठावाला, स्वामीश्री से मिलने के लिए उत्साहित हो उठे और अंततः सत्संगी बन गए!

स्वामीश्री ने प्रवचन में कहा था, 'सर्वप्रथम परब्रह्म सर्वावतारी पुरुषोत्तमनारायण भगवान स्वामिनारायण को वंदना करता हूँ, जिन्होंने मुझे यह मनुष्य शरीर दिया। तत्पश्चात् मेरे गुरु शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज की वंदना करता हूँ, जिनका आशीर्वाद मिले और जिन्होंने मुझे स्वीकार किया। उनकी कृपा और आशीर्वाद से ही मैं आज आपके समक्ष उपस्थित हूँ। यदि उनका अनुग्रह न होता, तो मैं इस स्थान पर नहीं होता। उन्होंने आशीर्वाद और सेवा करने का अवसर प्रदान किया। भगवान के आगे, तो कई लोग हाथ जोड़कर खड़े हैं, किन्तु उन्होंने इस सेवा का मुझे मौका दिया। मुझे अक्षरपुरुषोत्तम संस्था की सेवा तथा श्रीहरि के सिद्धांतों का प्रचार करने की सेवा मिली, यह मेरा अहोभाग्य है! वैसे तो यह कार्य करना मेरी क्षमता से बाहर है। परन्तु उन्होंने मुझे शक्ति प्रदान की, जिससे मैं सेवा कर सका... भगवान की कृपा और मरज़ी के बिना किसी से कुछ भी करना संभव नहीं होता।'

बिहार के एस.पी. अजय वर्मा गांधीनगर का अक्षरधाम देखकर अति प्रभावित हुए। स्वामीश्री का दर्शन करते ही वे बोल उठे, 'अक्षरधाम के सर्जनहार से मिलने की बहुत ही उत्कंठा थी।' स्वामीश्री बोले, 'सर्जनहार तो एक भगवान ही हैं। सभी के प्रेरक वे ही हैं।'

3 जनवरी, 1994 को चेन्नई में, अग्रणी बिल्डर कान्तिभाई कामदार ने स्वामीश्री से कहा था, 'पंचम काल में जैसे तीर्थंकर को भेजे थे, वैसे इस कलिकाल में भगवान ने आपको भेजा है। आज वर्तमान भारत में, आप श्रेष्ठ ही नहीं, श्रेष्ठतम कार्य कर रहे हैं।'

तब स्वामीश्री ने कहा था, 'हम तो सेवक हैं, सर्वकर्ता भगवान हैं।'

अमेरिका के 'इन्डिया पोस्ट' के रिपोर्टर मि. दीपक झवेरी ने स्वामीश्री से पूछा, 'संस्था का इतना विस्तार तथा आपके निरंतर विचरण के बाद आपको थकान महसूस नहीं होती?'

'थकान इसलिए नहीं लगती कि यह भगवान का कार्य है। मैं कर्ता नहीं हूँ, ऐसा मानता हूँ। सबकुछ गुरु के आशीर्वाद तथा भगवान की प्रेरणा से होता है, ऐसा मानने से थकान नहीं

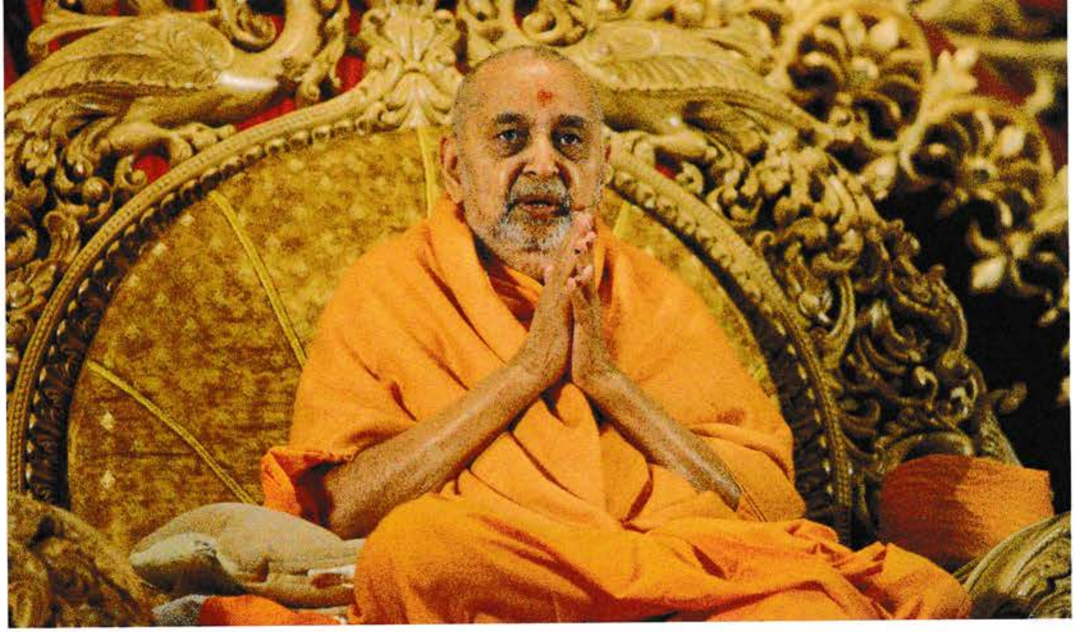

लगती। जैसे सिर पर पानी का घड़ा उठाने से बोझ लगता है, वहाँ पानी भरते ही सोच बदल जाती है कि 'यह पानी मेरा है।' वहाँ मेरेपन का बोझ पीछा नहीं छोड़ता, किन्तु समुद्र के सैकड़ों गैलन पानी में गोता लगाने पर भी पानी का बोझ नहीं लगता। क्योंकि वहाँ 'मेरेपन' की भावना नहीं होती। उसी प्रकार भगवान को कर्ता मानने पर सफलता-निष्फलता भी भगवान की इच्छा पर निर्भर रहती है। कार्य सफल होने पर अहंकार नहीं होता तथा निष्फल होने पर निराशा नहीं घेर लेती।'

दीपक : 'एक आपकी ही संस्था देखी, जहाँ अहंशून्य भाव से सेवा होती रहती है।'

स्वामीश्री : 'इसका कारण यह है कि कोई नहीं मानता कि यह कार्य मेरे कारण सफल हुआ। हरकोई महाराज-स्वामी (भगवान और गुणातीत गुरु) को कर्ता समझता है। इसीलिए सभी संत-हरिभक्त एक-दूसरे को यश दे देते हैं। इसी कारण यहाँ राग-द्वेष को फैलने का मौका ही नहीं मिलता।'

11 जनवरी, 2006 को सूरत जिले के सुल्तानाबाद में डिस्ट्रिक्ट जज जी. जे. जोषी ने स्वामीश्री से कहा था, 'मांगरोल की कोर्ट के उद्घाटन के समय गुजरात के चीफ जस्टिस भवानीसिंहजी ने मुझे कहा था कि 'दिल्ली में हरेक राज्य के चीफ जस्टिस की एक कान्फरेन्स हुई थी। उसमें राष्ट्रपति श्री अब्दुल कलाम साहब ने प्रवचन में कहा था कि विज्ञान जो नहीं करता वह प्रमुखस्वामीजी की शक्ति से हो सकता है, उसका मूर्तिमान उदाहरण स्वामिनारायण अक्षरधाम है।'

यह सुनते ही स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान के सिवा कुछ भी संभव नहीं है। इस हाथ को ऊपर उठाने के लिए भी भगवान की इच्छा ही कारणभूत होती है। हमें प्रतीति होनी चाहिए कि उसी शक्ति से पूरे विश्व का तंत्र चलता है। प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में निवास करनेवाले, प्रेरणा देनेवाले वे ही हैं। उनकी शक्ति और आशीर्वाद से असंभव भी संभव बन जाता है। अत: भगवान को आगे रखकर चलना चाहिए। हमारे कार्य में सफलता मिले या न मिले, यह भगवान पर निर्भर है। ऐसी समझ रखने से मन में सदैव शान्ति एवं आनंद रहेगा।'

समग्र विश्व को प्रेरणा देनेवाला अमूल्य उपहार, स्वामिनारायण अक्षरधाम; जिसे

देखकर बड़ी-बड़ी हस्तियाँ भी नतमस्तक होकर आश्चर्य चकित हो पूछती हैं, 'केवल पाँच वर्ष में ऐसा दिव्य सर्जन साकार करनेवाले विश्वकर्मा कौन हैं? स्वयं भगवान या भगवान के दूत?' हर कोई स्वामीश्री के चरणों में यशकलश अर्पण करके उनके चरणों में वंदन करते हैं कि आपने अद्‌भुत सृजन कर दिखाया है! किन्तु सर्वदा निर्लिप्त स्वामीश्री बोलते हैं, 'नहीं नहीं, मैंने कुछ नहीं किया। यह सब तो हमारे गुरु योगीजी महाराज के संकल्प, शास्त्रीजी महाराज के आशीर्वाद, भगवान स्वामिनारायण की कृपा और इन सभी संतों-भक्तों के पुरुषार्थ से ही संपन्न हुआ है। हमसे तो सेंका हुआ पापड़ तक नहीं टूट सकता!'

फिर भी कोई स्वामीश्री को पुनः पुनः यश देने लगे, तब गद्‌गद भाव से उनका मृदु स्वर सुनाई पड़ता है, 'नहीं भाई नहीं, हमने कुछ नहीं किया। भगवान स्वामिनारायण और योगीजी महाराज कर्ता हैं। उन्होंने ही सबकुछ किया है। जयघोष उनका करो। सभी संतों, हरिभक्तों की जय बुलाओ। हम तो सेवक हैं, दास हैं।'

किसी को भी स्वामीश्री के साथ हुई गोष्ठियों, सभाओं या आपसी चर्चा के दौरान ऐसा अवसर नहीं मिला है कि वह स्वामीश्री को 'अक्षरधाम के निर्माता' के रूप में उन्हें यश का पुष्पहार पहना सका हो! कभी एकान्त में भी नहीं!

एक महानुभाव के बिदा होने के बाद ब्रह्मविहारीदास स्वामी ने स्वामीश्री से कहा, 'यहाँ जो भी आता है, वह आपकी और अक्षरधाम की प्रशंसा करते अघाता नहीं है, यदि कोई दूसरा होता तो गर्व से फूला न समाता। परन्तु आपके मुख पर तो एक रेखा भी नहीं बदलती!'

स्वामीश्री ने कहा, 'हम से कहाँ कुछ होनेवाला है? सबकुछ महाराज (भगवान स्वामिनारायण) और स्वामी (गुणातीतानंद स्वामी) के प्रताप से होता है।'

ब्रह्मविहारीदास स्वामी ने विनोद भरे स्वर में पूछा, 'इतने सारे लोग आपके समक्ष आपका गुणगान गाते हैं, वह सुनायी तो देता है न?'

'सुनाई तो देता है, परन्तु सुनते हुए हम यही सोचते हैं कि ये लोग महाराज-स्वामी की कैसी अद्‌भुत महिमागान कर रहे हैं!'

यह उनकी पर्वत समान दृढ़ता है, जो अविचल है। उनके अहंशून्य जीवन का कारण उनकी भगवत्-प्रतीति है। इसीलिए उन्हें 'मैं' अथवा 'मुझसे' जैसी विकृति का स्पर्श नहीं हो पाता।

एक दिन किसी ने पूछा था कि 'यदि भगवान ही सर्वकर्ता हैं, तो आप क्या करते हैं?'

'हम कुछ नहीं करते, हम तो उनकी मर्ज़ी के गुलाम हैं, दास हैं, सेवक हैं।' उनके उत्तर में कैसा अनन्य सेवकभाव झलक रहा है!

कदाचित् कोई भावावेश में आकर स्वामीश्री की तुलना भगवान अथवा गुरु से करने लगता है, तो कोई अविवेकी उनको भगवान से भी अधिक कह देता है; उस समय जैसे स्वयं कोई भूल किए हों, ऐसा अपराधबोध होता है, बिना क्षणमात्र का बिलम्ब किए स्वामीश्री तत्काल कहते हैं, 'नहीं नहीं... मैं तो सेवक हूँ, दास हूँ...।'

लंदन युवक मंडल के प्रेसिडेन्ट श्री कृष्णमूर्ति पट्टणी ने सत्संग मंडल के युवकों को किसी खुशी में पार्टी देना चाहते थे। उन्होंने स्वामीश्री से पूछा, 'स्वामीजी! कौन सी पार्टी दूँ?'

स्वामीश्री ने कहा, 'भगवान की जो इच्छा हो, वह...।'

कृष्णमूर्ति ने कहा, 'आप ही हमारे भगवान हैं। आप जैसा कहें...'

स्वामीश्री ने तुरंत उन्हें टोकते हुए कहा, 'भगवान तो एक श्रीजीमहाराज हैं। हम तो उनके दास हैं, भक्त हैं।'

'परन्तु वे तो आपके हृदय में निवास करते हैं!'

स्वामीश्री ने सहजता से कहा, 'जो दास होता है, उसमें भगवान का वास होता है। परन्तु उसका अर्थ यह तो नहीं वह स्वयं भगवान बन जाता है।'

लंदन के प्रसिद्ध उद्योगपति मनुभाई माधवाणी ने लंदन में कथा और समभाव सम्मेलन का आयोजन किया था। उसमें संस्था के स्वयंसेवकों ने अपनी सेवाएँ दी थीं। उनका आभार व्यक्त करते हुए श्री माधवाणी ने कहा था कि, 'स्वामीजी, इस कथा का पुण्य हम आपके चरणों में अर्पण करते हैं।'

स्वामीश्री तुरंत ही बोल उठे, 'भगवान के चरणों में अर्पण कीजिए।'

अक्षरधाम देखकर प्रभावित हुए स्टोक होल्डिंग इन्डिया के चेयरमेन श्री आर. जयरामन् से स्वामीश्री ने कहा था कि 'जो भी कुछ भी आप देख रहे हैं, सबकुछ भगवान स्वामिनारायण के आशीर्वाद एवं प्रेरणा के कारण ही दिखाई देता है।'

जामनगर के व्यापारी शान्तिभाई, तार की चुनरी और किमखाब के कपड़े ठाकुरजी के लिए ले आए थे। जिस दिन उन्होंने भेंट दी, उस दिन उनको व्यापार में अच्छा-खासा लाभ हुआ। उन्होंने अपनी बात बताकर स्वामीश्री से कहा, 'स्वामीजी, सबकुछ आपके चरणों का प्रताप है। वहीं से लक्ष्मी निकलती है।'

स्वामीश्री ने उन्हें रोककर कहा, 'सबकुछ ठाकुरजी के चरणों से निकलता है। हम तो उनके सेवक हैं।'

बायपास सर्जरी के बाद लंदन के युवकों के साथ स्वामीश्री ने अपनी आध्यात्मिक स्थिति इन शब्दों में व्यक्त की थी, 'हम तो भगवान के दास हैं, सेवक हैं। ऐसा समझना ही हमारे लिए उचित है। भगवान के दास होने में ही महत्ता है। योगीजी महाराज ने दास बनकर ही भगवान को रिझाया, न कोई छल-कपट, न तो कोई अहंकार। हर अवसर पर उनके मुख से एक ही बात निकलती थी कि भगवान की प्रार्थना करो। उनका नाम-स्मरण करो।'

यदि उनके पास कोई अतिभावुक व्यक्ति अपनी तुलना अपने गुरु से करने लगता है, तो स्वामीश्री उसे सहन नहीं कर सकते। ओरलान्डो में एक युवक ने स्वामीश्री से पूछा, 'मैं ख्रिस्ती हूँ। हम मानते हैं कि जब भगवान मनुष्य रूप में प्रकट होते हैं, तो जीसस के रूप में ही आते हैं, तो आप कौन हैं? भगवान या मनुष्य?'

स्वामीश्री ने उत्तर दिया, 'भगवान तो एक ही हैं। हम तो उनके दास हैं, सेवक हैं। संत द्वारा भगवान का दिव्य संदेश संसार को मिलता है, किन्तु भगवान तो एक ही है। भगवान कोई हो सकता ही नहीं।'

12 अक्टूबर 1993 को सुरेन्द्रनगर में नवसारी तपोवन आश्रम के मुनि चन्द्रशेखरविजयजी ने स्वामीश्री से मुलाकात की। बातचीत के दौरान उन्होंने सहज ही कहा, 'सारे गुरुओं से आप आगे निकल गए।'

यह सुनते ही स्वामीश्री एक अपराधी की भाँति दीनभाव से बोल उठे, 'किसी से भी आगे निकलने की तो कोई बात ही नहीं है। हम आगे निकलनेवाले कौन? पूर्व में महात्माओं ने नींव रखी थी। हम उनकी नींव पर इमारत बांध रहे हैं। यदि उन लोगों ने नींव

नहीं रखी होती, तो हम क्या कर सकते थे?'

हृदय में स्थित गुरुभक्ति स्वामीश्री की आँखों में तैर रही थी। मुनिश्री नतमस्तक हो गए।

भव्य सम्मान-समारोह में स्वामीश्री कैसे स्वस्थ, तटस्थ और स्थितप्रज्ञ रह सकते हैं? यह जानने के लिए विद्यानगर में हुई गोष्ठी की घटना पर गौर करें। स्वामीश्री से उस दिन पूछा गया था कि 'जब आपका सम्मान होता है, तब आप कौन सा विचार करते हैं?'

स्वामीश्री ने कहा, 'सम्मान तो भगवान का होता है। हमसे तो सेंका हुआ पापड़ तक नहीं टूटता। हमारा जो कुछ गौरव बढ़ता है, भगवान के सम्बंध के कारण ही बढ़ता है। लोग हमें उनके भक्त मानकर बुलाते हैं, पूजते हैं, नहीं तो हमारी क्या कीमत? हमें तो भगवान स्वामिनारायण की आज्ञा का पालन कैसे कर सकें तथा उनको किस प्रकार प्रसन्न किया जा सकता है, यही भावना रखते हुए सदा सेवक बनकर सेवा करते रहना है।'

ह्युस्टन में प्रवीणभाई ने स्वामीश्री से पूछा, 'जब बड़े-बड़े संत आपकी उपस्थिति में आपकी भूरी-भूरी प्रशंसा करते हैं, तब भी आप अहंशून्य कैसे रह सकते हैं?'

स्वामीश्री ने कहा, 'प्रशंसा भगवान की होती है। उन्हीं का किया सबकुछ संभव होता है। हमने किया हो, तभी अहंकार सताएगा न?'

प्रवीणभाई ने कहा, 'ऐसा विचार कब आता है?'

स्वामीश्री ने तुरन्त कहा, 'ऐसा विचार मिटता ही नहीं!'

जहाँ ऐसी अहंशून्यता हो, वहाँ ईर्ष्या या स्पर्धा कैसे टिकेगी? दूसरों को हीन दिखाने की वृत्ति कैसे होगी? वहाँ तो सहज प्रफुल्लितता और निरा आनंद ही मिलेगा! इसीलिए -

वे हमेशा सभी को नमन कर सकते हैं, अपने शिष्यों को भी!

वे सभी को हृदयपूर्वक आदर-सम्मान दे सकते हैं, अपने द्वेषी को भी!

वे शुद्ध हृदय से हर किसी की महिमा गा सकते हैं, छोटे युवक या बालक की भी!

वे स्वयं का उपहास सह सकते हैं, सार्वजनिक माहौल में भी!

वे सरल से सरल रह सकते हैं, छोटे बालक के साथ भी!

वे सदा प्रफुल्लित रह सकते हैं, विपरीत परिस्थितियों तथा निंदा-अपमान के बीच भी!

यही है उनकी अनहंकृति। जहाँ विनम्रता से भी आगे एक उच्च आध्यात्मिक अनुभूति है, जहाँ अहंकार से परे भगवान के अनन्य कतृत्व की प्रतीति है, जहाँ 'मैं' भाव का आत्यंतिक प्रलय हो गया है।

सद्‌गुरु मुक्तानंद स्वामी ने कहा है,

'हुं टळ्ये हरि ढूंकड़ा, ते टळाय दासे रे; मुक्तानंद महासंतने प्रभु प्रकट पासे रे... '

अर्थात् जब अहंकार मिट जाता है, वहाँ भगवान प्रकट होते हैं। अहंभाव दासभाव से ही मिटेगा। भगवान ऐसे निरहंकारी महासंत के साथ में ही निरंतर रहते हैं।'

स्वामीश्री से मिलने पर अनुभव होता है कि यहाँ 'मैं' नहीं है, इसीलिए इस महान संत में भगवान अखण्ड प्रकट हैं! ◆

कृतज्ञता

परब्रह्म पुरुषोत्तम भगवान श्रीस्वामिनारायण,
अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी,
ब्रह्मस्वरूप प्रागजी भक्त,
ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज,
ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज,
प्रकट गुरुहरि प्रमुखस्वामी महाराज के प्रति...
जिन्होंने इन दिव्य कल्याणकारी गुणों को धारण किया तथा
अनेक मुमुक्षुओं के कल्याण हेतु उन गुणों का दिव्य दर्शन कराया...

पूज्य ईश्वरचरण स्वामी, जिनके प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन के कारण इस पुस्तक की रचना संभव हुई...

पूज्य विवेकसागर स्वामी, पूज्य प्रियदर्शन स्वामी, पूज्य परमानंद स्वामी तथा स्वामीश्री की विदेशयात्रा का विवरण लिखनेवाले अन्य संतगण - जिन्होंने परम पूज्य स्वामीश्री की दिनचर्या में उनके दिव्य व्यक्तित्व को अद्‌भुत एवं ऐतिहासिक रूप से संचय किया है,
उसी में से एक अल्पांश इस पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया गया है...

पूज्य योगीचरण स्वामी तथा बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण मंदिर लंदन का फोटोग्राफी विभाग, जिनकी छविकला ने इस ग्रंथ को अत्यधिक गरिमा प्रदान की है...

पूज्य श्रीजीस्वरूप स्वामी, जिन्होंने छविकला के मुद्रण में गहरी रुचि लेकर कला-निर्देशन किया...

पूज्य मुनिवत्सल स्वामी तथा श्री शरदकुमार शर्मा, जिन्होंने इस ग्रंथ का अनुवाद करके हिन्दीभाषी मुमुक्षुओं तक पहुँचाया...

पूज्य अक्षरजीवन स्वामी, जिन्होंने इस ग्रंथ को आदि से अंत तक पढ़कर त्रुटियाँ सुधारने में योगदान किया एवं स्वामिनारायण अक्षरपीठ के सभी सहयोगियों, जिन्होंने टाईपसेटिंग से लेकर अन्य रचनात्मक सेवाएँ प्रदान करके अति पुरुषार्थ किया है...

श्री स्वामिनारायण अक्षरधाम, नई दिल्ली

बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था

पवित्र और नैतिक जीवन के लिए कटिबद्ध यह संस्था एक विश्वव्यापी आध्यात्मिक एवं शांतिचाहक समाज है। जीवन के सच्चे मर्म को उजागर करनेवाली, शाश्वत शांति की ओर समाज को अग्रसर करती इस धर्मसंस्था का लक्ष्य है : समूची मानवजाति का उत्कर्ष। भगवान श्रीस्वामिनारायण (ई.स. 1781-1830) प्रबोधित वैदिक आदर्शों को केन्द्र में रखते हुए ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज ने ई.स. 1907 में इस संस्था की स्थापना की थी।

संस्था के 17,000 से अधिक सत्संग मंडलों (बाल-युवा-महिला-वरिष्ट मंडलों) का विराट विश्वव्यापी आध्यात्मिक परिवार

मानव उत्कर्ष की अविरत गंगा बहाता है। संस्था के सैकड़ों संतों तथा 55 हज़ार युवकों का विराट स्वयंसेवक दल आध्यात्मिक अभियान के उपरांत विविध रचनात्मक प्रवृत्तियों का भी वहन करता है, चाहे वह भूकंपग्रस्त गाँवों का पुनर्निर्माण हो या अकालपीडित गाँवों में जलसंचय अभियान, छोटे छोटे गाँवों में प्राथमिक शालाओं का निर्माण हो या अद्यतन भव्य छात्रावास परिसरों का संचालन, साक्षरता अभियान जैसी अनेकविध शैक्षणिक सेवाएँ, अद्यतन सुविधासज्ज अस्पतालें, रोगनिदान यज्ञ या विक्रमसर्जक रक्तदानयज्ञ जैसी सुविधाओं तथा तबीबी सेवाओं में भी यह संस्था, सर्वदा अग्रसर रही है। व्यसनमुक्ति, एड्स जागृति, पर्यावरण समस्याओं का हल आदि के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जागृति का शंखनाद करनेवाली यह संस्था यू.एन.ओ. (UNO) द्वारा मान्य समाजसेवी संस्था है। लंदन (यू.के.), ह्युस्टन, शिकागो (यू.एस.), नैरोबी (पूर्व अफ्रीका), ओकलेण्ड (न्यूज़ीलेन्ड) सिडनी (ऑस्ट्रेलिया) आदि अनेक देशों में विश्व के आश्चर्य के समान मन्दिरों की रचना करके संस्कार-प्रवृत्ति तथा मानव सेवा की विशिष्ट ज्योति जलाई है। गांधीनगर (गुजरात) और दिल्ली में 'अक्षरधाम' के रूप में अभूतपूर्व अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक परिसरों का निर्माण संस्था की युगसिद्धि के सीमाचिह्न हैं।

हमारी सनातन संस्कृति की बुनियाद को जनहृदय में प्रस्थापित करती इस संस्था ने विश्ववंदनीय प्रमुखस्वामी महाराज की पावन निश्रा में विश्वव्यापी स्तर पर लोकहृदय में

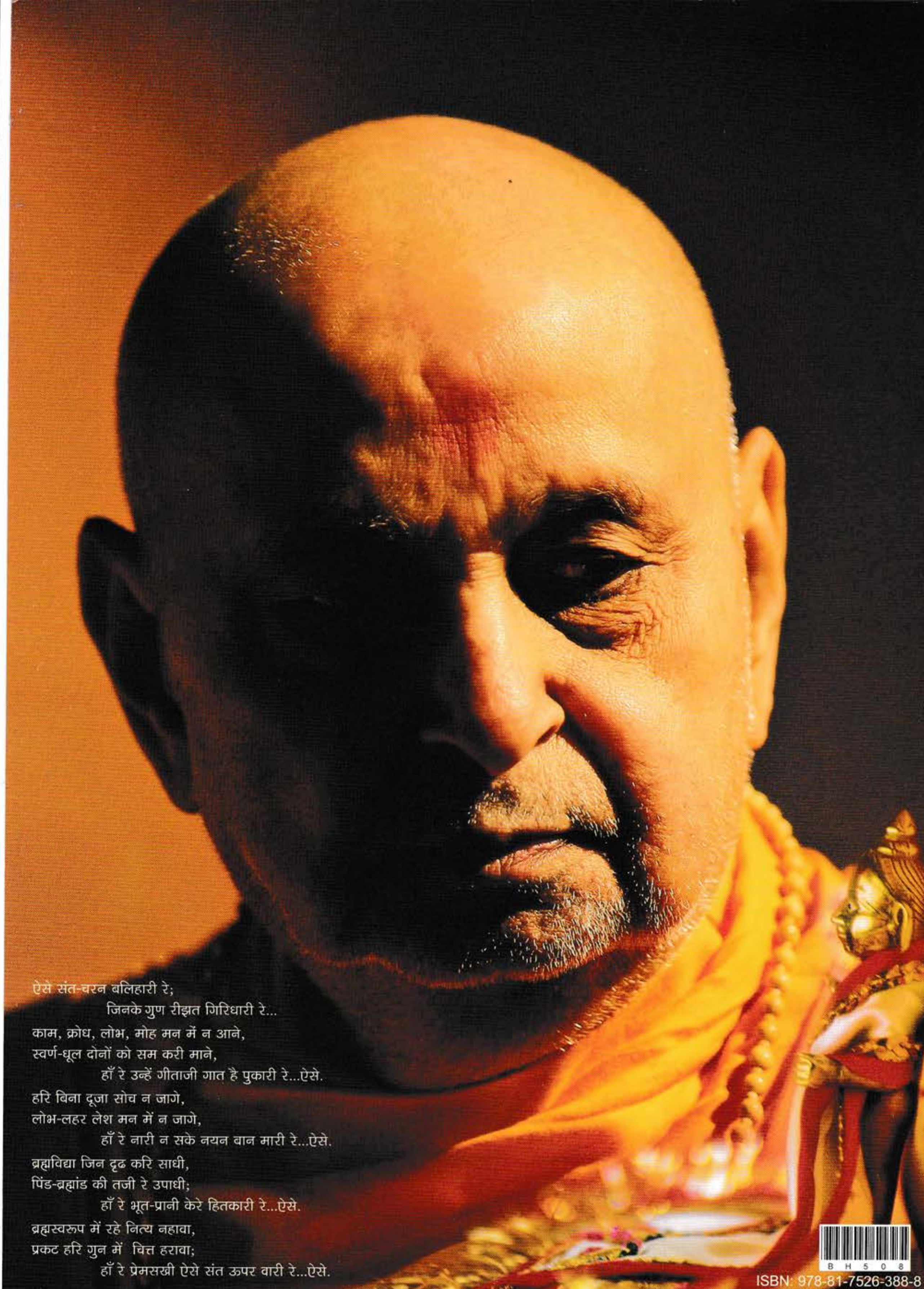

ऐसे संत-चरन बलिहारी रे;
जिनके गुण रीझत गिरिधारी रे...
काम, क्रोध, लोभ, मोह मन में न आने,
स्वर्ण-धूल दोनों को सम करी माने,
हाँ रे उन्हें गीताजी गात है पुकारी रे...ऐसे.
हरि बिना दूजा सोच न जागे,
लोभ-लहर लेश मन में न जागे,
हाँ रे नारी न सके नयन बान मारी रे...ऐसे.
ब्रह्मविद्या जिन दृढ करि साधी,
पिंड-ब्रह्मांड की तजी रे उपाधी;
हाँ रे भूत-प्रानी केरे हितकारी रे...ऐसे.
ब्रह्मस्वरूप में रहे नित्य नहावा,
प्रकट हरि गुन में चित्त हरावा;
हाँ रे प्रेमसखी ऐसे संत ऊपर वारी रे...ऐसे.

B H 5 0 8
ISBN: 978-81-7526-388-8